

॥ श्रीः ॥

सुगमकौमुद्याः

प्रथमद्वितीयखण्डात्मकः

प्रथमो भागः ।

श्रीमन्महाराजाधिराज महाराजराजेत्यादिपदार्थसमलट्ठबुन्देश्वर

श्री१०८ श्रीरामसिंहप्रसादभाजा सम्प्राप्ति सु तदात्मज-

श्रीमहाराजाधिराजमहाराजराजेत्यादिपदीपिरा-

जमानबुन्दीन्द्रश्री१०८ श्रीरघुवीरसिहा-

धितेन विदुषा क्रिकरेण गंगास-

हायशर्मणा सङ्कलितः ।

स च

श्रीरुष्णदासात्मजेन गङ्गाविष्णुना

स्वकीये " लक्ष्मीविकटेश्वर " मुद्रणागारे

मुद्रयित्वा प्रकाशितः ।

शकाब्दाः १८२४, संवत् १९५९.

कल्याण-मुंबई.

अस्य ग्रन्थस्य पुनर्मुद्रणाद्यधिकारा सन् १८६७ तमीयराज
नियमानुसारेण प्रकाशयित्वा स्वायत्तीकृता ।

व्याकरणग्रन्थाः ।

नाम.	फी.रू.आ.ट.म.रू.आ.
३२३ लघुशब्देन्दुशेखर काशीके छा.	५-० ०-८
३२४ सिद्धान्तकौमुदीअष्टाध्यायी, गणपाठ, धातुपाठ, लिङ्गानुशासन पा०अक्षर मोटाजिल्द	खे ४-० ०-१२
३२५ अष्टाध्यायी, गणपाठ, धातुपाठ आदि....	खे १-० ०-०
३२६ सिद्धान्तकौमुदी अतिउत्तम और बारीक टैपमें छपके तैयार है	खे २-० ०-४
३२७ लघुसिद्धान्तकौमुदी टिप्पणीसहित जिल्द अक्षर बडा सूत्र और वृत्ति खुलासेवार है. क	०-१२ ०-२
३२८ तथा सादा जिल्द	क ०-१० ०-१॥
३२९ लघुसिद्धान्तकौमुदी टिप्पणीसहित छोटा क	०-४ ०-१
३३० सिद्धान्तचन्द्रिका सुबोधिनीटीका और तत्त्वदीपिकासह संपूर्ण	खे ४-० ०-८
३३१ सिद्धान्तचन्द्रिका उत्तरार्द्ध सुबोधिनी और तत्त्वदीपिकासह	खे २-० ०-४
३३२ सिद्धान्तचन्द्रिका सटीक पूर्वार्द्ध सुबोधिनी और तत्त्वदीपिका टीका	खे २-० ०-४
३३३ तत्त्वबोधिनी कौमुदीके पृष्ठाङ्कसह पूर्वार्द्ध १	२-८ ०-६
३३४ रूपमालाव्याकरणका पहिलिङ्गविभाग खे	०-६ ०-॥
३३५ ” सन्धिभागः, अव्ययार्थभागः प्रयोगविधिसं- ग्रहः (कारकसमासतद्धितादिक) क्रिया- कलापः आख्यातचन्द्रिका धातुरूपभेदः श्लोकयोजनिकोपाय	खे १-४ ०-२
३३६ सन्धिविभाग	खे ०-५ ०-॥
३३७ अव्ययार्थविभाग	क ०-३ ०-॥
३३८ प्रयोगविधि	क ०-२ ०-॥
३३९ कारकसमासतद्धितादिक क्रियाकलाप आख्या- तचन्द्रिका धातुरूपभेद श्लोकयोजनिकोपाय२	०-६ ०-१
३४० सारस्वत चन्द्रकीर्ती उत्तरार्थ	२-० ०-४
३४१ सारस्वतसटीक प्रसादटीका	क ०-१२ ०-२
३४२ सारस्वतमूल पूर्वार्द्ध जिल्द टाईपका....	क ०-८ ०-१

३४३ सारस्वत तीनों वृत्ति	क	०-१२	०-२
३४४ सारस्वत चन्द्रकीर्त्तिटीकासह परमोत्तम	क	१-४	०-२
३४५ ” ” तथा रफू कागजका	क	१-०	०-२
३४६ सारस्वत भा० टी० (व्याकरण)	खे	२-०	०-४
३४७ कारकवादार्थ शब्दबोध व्याकरणन्याय	क	०-२	०-॥
३४८ सारस्वत माधवीटीकासमेत	सुं	२-०	०-३
३४९ धातुरूपावलि लघुधातुपाठसहित	क	०-३	०-॥
३५० शब्दरूपावलि एकाक्षरीकोप सहित	क	०-१॥	०-॥
३५१ समासचक्र	क	०-१	०-॥
३५२ समासकुसुमावलि	क	०-२	०-॥
३५३ लघुकौमुदी भा० टी० अतिउत्तम	क	२-०	०-४
३५४ सिद्धान्तचन्द्रिका उत्तरार्थ सुबोधिनी, तत्त्वदिपोका संस्कृत टीका और भाषाटीकासह छपती है			
३५५ बालसंस्कृतप्रभाकर नवीन संस्कृत शिखने- वालेको बहुत उपयोगी है	क	०-८	०-१
३५६ संस्कृतनामावली भाषाटीका	क	०-२	०-॥
३५७ लिङ्गबोध व्याकरण भाषाटीका	खे	०-२	०-॥
३५८ लघुभाष्य सारसतका	३-०	०-८	
३५९ कारकस्वरूप भाषाटीका सहित [व्याकरण]	खे	०-६	०-१
३६० सिद्धान्त चन्द्रिका मूल	खे	०-१०	०-१
३६१ अर्थप्रकाशिका (व्याकरण) पठनेवालोंको अती उपयोगी है भाषाभाष्यभी है	खे	०-८	०-१
३६२ शब्दरत्न मनोरमा (काशी)	५-०	०-१२	
३६३ संस्कृतारोहण भाषाटीका समेत	खे	०-६	०-१
३६४ संस्कृतप्रदीप भाषाटीका अतिउत्तम	क	०-३	०-॥
३६५ संस्कृतशिक्षामंजरी	खे	०-१॥	०-१

गोविंदराजीय भूषण, तनिश्लोकी, रामानुजी इन
तीनों टीकाओंसहित-

श्रीमद्वाल्मीकीयरामायण.

महाशयो ! देखो इस अपूर्व भूषणटीकाकी पांडित्यशैली,
मुगमता, विचारचातुर्य आदि सब अद्भुत गुण कैसे घमकते

हैं. देखो ' मूषण ' यह नामभी क्या अन्वर्थ रचना गया है जिसके श्रवणमात्रसेही कल्पना होती है कि रामायणरूपी भगवान् रामचंद्रजीकी मूर्तिको टीकारूपी अलंकारोंसे अलंकृत किया है और ऐसीही टीकाकारने कल्पना कर रचना की है, देखो-कि उक्त भगवान्के बालकांडरूपी पादको टीकारूपी मणिमंजीर (पायजेष), अयोध्याकांडरूपी जघनको पीतांबर, आरण्यकांडरूपी कटिको रत्नमेखला (कैंदनी), किष्किंधाकांडरूपी हृदय और कंठको मुक्ताहार (मोतियोंका कंठा), सुंदरकांडरूपी ललाटको शृंगारातिलक, युद्धकांडरूपी शिरको रत्नकिरीट और उत्तरकांडरूपी ऊपरके भागको मणिमुकुट. इस तरह ये गद्दने अर्पण कर रामायणरूपी भगवान्को सजाया है. तो इस व्याख्यामें क्या कम है कुछ नहीं फिर लेनेमें क्या हरजहै शट लीजिये और इसका पाठ कर अपना जन्म कृतार्थ कीजिये. यह २५ रुपये कीमतका पुस्तक लेनेवालोंको भगवद्गुणदर्पणभाष्य आदि व्याख्यात्रयसमेत विष्णुसहस्रनाम मेंट मिलेगा.

मालविकाग्निमित्रं. (नाटकम्)

बालबोधिनीटीकायुतम् ।

विदितश्चरमेव सर्वविदुषामस्मिन् मिल भारतवर्षे विविधसंस्कृतविद्या पाराधारपारीणस्य निखिलपण्डितमण्डलीमण्डनायमानस्य कविवरस्य श्रीकालिदासस्य तन्निष्ठस्यमाधिकौषम्यादिगुणगुणित सुजनमान्य सुप्रसिद्ध मालविकाग्निमित्रं नाम नाटकम् । अस्य रचनासौन्दर्यादि वर्णन तु एतत्कर्तुः कविचक्रवर्तिनः कालिदासस्य " पुरा कर्षीनां गणनाप्रसङ्गे " इत्यादिना जेगीधमानकीर्तित्वेनसर्वज्ञायमानत्वात्पौरुषत्वात्तथापि । एव निसर्गरमणयिष्यास्य नाटकस्य रुपकत्वाद्यनेकव्यवहारिरुपलक्षित्वेन एन्द्रसत्त्वात् सारलव्यायामन्ताराऽस्य यथार्थज्ञाने प्रागुलभ्यार्थमनुधावनो धामनानिव चेखिद्यमानप्रबुध्य विद्वद्वरेलंब्यविद्यावाचस्पत्युपाधिभो राशीवडेऽरोपाव्हैः श्रीयुतजापाशास्त्रिभिरिय बालबोधिनी नाम व्याख्याऽकारि । अस्यां च व्याख्यरणच्छन्दोऽलंकारादिविषयाणां यथायथ प्रतिपादनादस्यार्थज्ञाने व्याख्येयमनीषोपयोगनीति सर्वे रसज्ञा विद्वान्तोऽस्याः समुद्देण कृतार्थोऽकुर्वन्तु व्याख्याकारा

नलमानीविस्तरणेति शुभम् । विदाकुर्वन्तु पुस्तकमिदं भोहमयीसमापर्वत
 कल्याणनगरस्यसुप्रसिद्ध " लक्ष्मीवैकुण्ठेश्वर " नामक मुद्रायन्त्रतो लभ्यमत
 पत्रादिप्रेषण तत्रैव कर्तव्यमिति जिघृक्षव इति ॥ मूल्यमस्य ग्राहकसौ कर्णार्थं
 केषल सपादो रूप्यः (१ ।)

अन्वितार्थप्रकाशिकाख्यव्याख्यासहित- श्रीमद्भागवत.

(व्याख्याग्रन्थसंख्या ७००००)

यह टीका बूंदी महाराजाश्रित पं० गंगासहायजीने बनाई
 है. इसमें मछि नाथके ढंगपर अन्वयक्रमसे सरल और कठिन
 सब श्लोकोंका अर्थ सुगम रूपसे लिखा है और टीकामें जिन
 जिन बातोंका लिखना आवश्यक है वे सब संक्षेप और-
 सुगमतासे लिख दी हैं इसमें श्रीधरजीकी टीकाकी तो प्रायः
 सब बात आ गई और बहुतसी बातें तोषिणीसारार्थसंदर्शिनी
 आदिसेभी ली गई है और सुगमता अन्वयक्रम और संक्षेपपर
 पूरी दृष्टि रक्खी गई है इस टीकाके शेषमें भागवतोपयोगी वेदांत
 सांख्यादिक कितनेक मत सुगम रीतिसे लिख दिये हैं. इसमें
 किसी मतका पक्षपात अथवा खंडन नहीं किया गया है । सब
 मतोंके आचार्योंका आदरपूर्वक स्मरण किया गया है. और
 भागवतके स्कंध और प्रकरणोंका अभिप्राय और श्लोकोंके
 छन्द तथा अध्यायोंके श्लोकोंकी गणना लिख दी है औरभी
 बहुत बातें हैं. इसका मूल्य अत्यल्प केवल १२ रुपये. देखनेसे
 मालूम होमा. पुस्तक समग्र छप चुका. नमूना मंगालो. काशि-
 आदि ठिकानेके विद्वानोंकी शेंकड़ो सम्मति आई हैं.

सुगमकौमुदी.

विदेशी विद्वान्भी प्रायः इस बातको सादर स्वीकार करते हैं कि हजारसे ऊपर लोकप्रसिद्ध भाषाओंमें संस्कृत भाषा अधिक ललित, अधिक निर्दोष और अधिक प्राचीन है। व्याकरण विना उसमें पूर्ण कुशलता प्राप्त नहीं होती है। यद्यपि व्याकरण ग्रंथ अनेक हैं परंतु यह सबही लोगोंकी सम्मति है कि पाणिनि व्याकरण सबसे अधिक प्रामाणिक सर्वोपजीवी और व्यभिचारन्यूनतादि दोषरहित है। परंतु पाणिनि व्याकरण अति कठिन होनेसे बालकोंके समझमें आने योग्य नहीं है। काशिकावृत्ति यद्यपि सुगम है परंतु उसमें विस्तार बहुत है, धातुपाठ नहीं है और प्रक्रियाक्रम नहीं है इसलिये अल्पबुद्धिवालोंके अनुकूल नहीं हो सकती है। सिद्धान्तकौमुदी चाहे प्रक्रियानुकूल और निर्दोष है तथापि वह कठिन होनेसे बालकोंके उपयोगी नहीं है और उसमें विस्तारभी अधिक है। तथापि सर्वांगपूर्ण और निर्दोष सिद्धान्तकौमुदी ही जानकर बालकोंके उसमें प्रवेशके लिये वरदराजने लघुकौमुदीकी रचना की है। उसमें यद्यपि विस्तार न करनेपरभी कितनेही उपयोगी विषय लिखे गये हैं तथापि सिद्धान्तकौमुदीमें प्रवेश करनेके लिये जितने विस्तारकी अपेक्षा है उससे दुगुना विस्तार कर दिया गया है, बालकोंके उपयुक्त सुगमता उसमें नहीं है, बालकोंके अनुपयोगी बहुश्रेयासि इत्यादि शब्द, त्वै, द्वै इत्यादि अव्यय, कटे ह्व इत्यादि धातु लिखकर अनेक उपयोगी धातु तथा अव्यय छोड़ दिये गये हैं इन कारणोंसे वहभी मन्दमति लोगोंके उपयोगी नहीं है किन्तु जो कोई लघुकौमुदी पढताभी है तो उसे व्याकरणका पूर्ण ज्ञान होनेके लिये सिद्धान्तकौमुदी पढना पडता है और इस तरह अनन्य गतिसे लघुकौमुदी दुबारा पढनी पडती है। इस कारण मुझ मन्दमतिने अपने जैसे मन्दमति लोगोंके उपयोगके लिये, अपने अनुभवके अनुसार सिद्धान्तकौमुदीके लौकिक शब्दोंके प्रकरणके तीन खंड कर दिये हैं और इसका नाम सुगम-सिद्धान्तकौमुदी रक्खा है। इसमें बालबोधके लिये प्रथम सुगम फिर उत्तरोत्तर कठिन इस रीतिसे और इसी क्रमसे विषययोजना की है जिससे पढनेमें बालकोंको क्रम क्रमसे सिद्धान्तकौमुदीका पूरा पूरा ज्ञान हो जाय। इसके प्रथम खंडमें बहुत प्रसिद्ध समस्त शब्द, अव्यय और धातु हैं, लघुकौमुदीके समान प्रमाण होनेपरभी उसकी अपेक्षा चौगुने धातु हैं और जो शब्द अव्यय तथा धातु अप्रसिद्ध हैं उन्हें छोड़ दिया गया है। इतनेपरभी प्रथमखंडके दो भाग किये गये हैं। प्रथमखंडके

प्रथम भागमें बालाश्री उपयांगी सुगम आर सामान्य विषय ह जिनसे उन्हें सिद्धान्तकीमुदी तथा अन्य शास्त्रोंमें प्रवेश करनेकी योग्यता होजाय । इस छोटेसे ग्रथमें सुगमतासे सन्धि, सुप्, तिङन्त, णिच्, सन्, यद्, यद्लुट्, नामधातु भावकर्म, कृदन्त, कारक, समास, ताद्धित, स्त्रीप्रत्ययका सामान्य बोध होजाता है । प्रथम खडके द्वितीय भागमें प्रथम भागके बचे बचाये प्राय समस्त सन्धि, सुबन्त अव्यय जो लोकप्रसिद्ध ह और सब धातु है इसलिये मध्यश्रीमुदीके अध्ययनसे अधिक फल होता है । सामान्यतः प्रचारमें आनेवाले णिजन्तादि विषय जो प्रथम खडमें नहीं लिखे गये उनका मध्यखडमें उल्लेख है । इसमें समस्त बचेहए कारक, सारे बचे हुए कर्म समस्त सटीक परिभाषा, सर्वोत्तम सटीक लिंगानुशासन लिखा गया है इसलिये मध्य खडके अध्ययनसे प्राय पूरी पूरी व्युत्पत्ति होजाती है । व्युत्पत्तिके लिये तीसरे खडकी अपेक्षा नहीं रहती है । प्रथम और द्वितीय खडमें जो विषय शेष रह गये हैं जो अप्रसिद्ध हैं, जिनका प्रचार बहुत थोडा है वे तृतीयखडमें है इसमें गौणादेशब्द, अप्रसिद्ध धातु णिजन्तसे बचे हुए उणादिक, सटीक गणपाठ, सर्वशेष फाटिकादि विषय तृतीय खडमें दिये गये है । इसलिये जो केवल अन्य शास्त्रोंमें प्रवेश करनेके लिये व्याकरण पढना चाहें वे प्रथमखडका आद्य भाग अथवा समग्र प्रथमखड पढें । जो लोकप्रसिद्ध महाकाव्यादि सर्व प्रयोगोंकी व्युत्पत्ति करना चाहते हों वे दोनोंखड पढले और जिनकी इच्छा सर्वलीकिक प्रयोगोंसाहित पूर्ण व्युत्पत्तिकी हो वे तीसरे खडकाभी अभ्यास करले । यही इस सुगम सिद्धान्तकीमुदीका प्रयोजन है । श्रीकृष्ण दासजीके पुत्र सेठगगाविष्णुजीके लक्ष्मीविकटेश्वर यत्रालयमें इसके ये दो खड मुद्रित होके प्रस्तुत आपके हाथमेंही है, तृतीय खड छप रहा है तृतीय खड छपजाने पूर्व जो मूल्य देंगे उन्हें ३ रुपयेमें और छपजानेके अनन्तर ४ में मिलेगी । इति शुभम् ।

श्रीमान् बु दीनरेशका आश्रित विद्वानोका विकर

गंगासहायशर्मा.

पुस्तके मिलनेका ठिकाना—

गङ्गाविष्णु श्रीकृष्णदास,

“ लक्ष्मीविकटेश्वर ” छापाखाना.

कल्याण-मुम्बई.

श्रीः ।

श्रीपरमेश्वराय नमः ॥

अथ सुगमकौमुदीप्रारम्भः ।

श्रीशन्नत्वा त्रिभिः खण्डैर्विभज्य सुगमाध्वना ॥

भट्टोजिकृतकौमुद्याः कुर्वे सुगमकौमुदीम् ॥ १ ॥

तत्रादौ प्रायोपयोगी वार्लार्हः प्रक्रियाक्रमः ॥

अतिसंक्षेपतः प्रोक्तः शेषो विस्तरतस्ततः ॥ २ ॥

अइउण् १ ऋलृक् २ एओङ् ३ ऐऔच् ४ हयवरट्

५ लण् ६ भमङणनम् ७ झभञ् ८ घढधप् ९ जवगड-

दज्ञ् १० खफछठथचटतव् ११ कपय् १२ शपसर् १३

हल् १४ ॥

एपामन्त्या इतः । हकारादिष्वकार उच्चारणार्थः । लण्मध्ये
त्वित्संज्ञकः ॥

हलन्त्यम् १ । ३ । ३ ॥

उपदेशेऽन्त्यं हलित् । उपदेश आद्योच्चारणम् ॥

आदिरन्त्येन सहेता १ । १ । ७१ ॥

अन्त्येनेता सहित आदिर्मध्यगानां स्वस्य च मंज्ञा । यथा अण्
इति अइऊनां संज्ञा । अच् इति अइउऋलृएओऐऔ एपां संज्ञा ।
अणादयः प्रत्याहारा उच्यन्ते । तेषु इतान्तु न ग्रहणम् यथा
अचि णकडानां न ग्रहणम् ॥

उकालोज्झस्वदीर्घप्लुतः १ । २ । २७ ॥

उ १ ऊ २ ऊ ३ एपां काल इव काली यस्य सोऽच् रुमाद्दस्वदी-
र्घप्लुतसंज्ञः । यथा अ १ आ २ आ ३ इ १ ई २ ई ३ उ १ ऊ २
ऊ ३ ऋ १ ऋ २ ऋ ३ लृ १ लृ ३ अयं दीर्घो नास्ति ण २ ए ३

सुगमक्रीमुधाः ।

अर्चो न न भेदा यथासम्भयम् । अचाम्प्रत्येक यथासम्भयमष्टादश भेदाः ।

अ इ उ ऋ	ल	ए ओ ऐ औ	अ इ उ ऋ	लृ	ए औ ऐ औ
ह्रोदात्ताः	ह्रसोदात्तः		ह्रसोदात्तानुनासिकः	ह्रसोदात्तानुनासिकः	
ह्रानुदात्ताः	ह्रानुदात्तः	एर्वा ह्रसा न सन्ति	ह्रानुदात्तानुनासिकः	ह्रानुदात्तानुनासिकः	एर्वा ह्रसा न सन्ति
ह्रस्वस्वारीताः	ह्रस्वस्वारितः		ह्रस्वस्वारीतानुनासिकः	ह्रस्वस्वारीतानुनासिकः	
दीर्घोदात्ताः		दीर्घोदात्ताः	दीर्घोदात्तानुनासिकः		दीर्घोदात्तानुनासिकाः
दीर्घानुदात्ताः	अयं दीर्घो नास्ति	दीर्घानुदात्ताः	दीर्घानुदात्तानुनासिकः	अस्य दीर्घो नास्ति	दीर्घानुदात्तानुनासिकाः
दीर्घस्वारीताः		दीर्घस्वारीताः	दीर्घस्वारीतानुनासिकः		दीर्घस्वारीतानुनासिकाः
प्लुतोदात्ताः	प्लुतोदात्तः	प्लुतोदात्ताः	प्लुतोदात्तानुनासिकः	प्लुतोदात्तानुनासिकः	प्लुतोदात्तानुनासिकाः
प्लुतानुदात्ताः	प्लुतानुदात्तः	प्लुतानुदात्ताः	प्लुतानुदात्तानुनासिकः	प्लुतानुदात्तानुनासिकः	प्लुतानुदात्तानुनासिकाः
प्लुतस्वारीताः	प्लुतस्वारितः	प्लुतस्वारीताः	प्लुतस्वारीतानुनासिकः	प्लुतस्वारीतानुनासिकः	प्लुतस्वारीतानुनासिकाः

एचो ह्रस्वा न सन्ति ओ २ ओ ३ ऐ २ ऐ ३ औ २ औ ३ । एवं ह्रस्वादिभेदाभिन्नोऽच् प्रत्येकमुदात्तादिभेदेन त्रिधा । एवं स नवविधोऽपि प्रत्येकमनुनासिकाननुनासिकत्वाभ्यान्दिधा । तथाहि ॥

उच्चैरुदात्तः १ । २ । २९ ॥

ताल्वादिषु सभागेषु स्थानेषूर्ध्वभागे निष्पन्नोऽनुदात्तसंज्ञः ॥

नीचैरनुदात्तः १ । २ । ३० ॥

समाहारः स्वरितः १ । २ । ३१ ॥

उदात्तानुदात्तत्वे वर्णधर्मो समाह्वियेते यस्मिन्सोऽच् स्वरितसंज्ञः ॥

मुखनासिकावचनोऽनुनासिकः १ । १ । ८ ॥

मुखसहितनासिकयोद्यार्यमाणो वर्णोऽनुनासिकसंज्ञः यथा अँ आँ ईँ ईँ इत्यादि-तदित्यम् । अइउऋ एपां वर्णानां प्रत्येकमष्टादश भेदाः । लृवर्णस्य द्वादश तस्य दीर्घाभावात् । एचामपि द्वादश तेषां ह्रस्वाभावात् ॥

इति १ अंशः ।

अथ वर्णानां स्थानप्रयत्नाः । अकुहविसर्जनीयानां कण्ठः । इचुयशानां तालु । ऋदुरपाणां मूर्द्धा । लृतुलसानां दन्ताः । उपूष्मानीयानामोष्ठौ । अमडणनानां नासिका च । एदैतोः कण्ठतालु । ओदौतोः कण्ठोष्ठम् । वकारस्य दन्तोष्ठम् । जिह्वामूलीयस्य जिह्वामूलम् । नासिकाऽनुस्वारस्य । यत्नो द्विधा । आभ्यन्तरो बाह्यश्च । आद्यः पञ्चधा । स्पृष्टेपत्स्पृष्टेपाद्विवृतविवृतसंवृतमेदात् । तत्र स्पृष्टं प्रयतनं अयाम् । ईपत्स्पृष्टं यणाम् । ईपद्विवृतं शलाम् । विवृतमचाम् । ह्रस्वस्यावर्णस्य प्रयोगे संवृतम् । प्रक्रियादशायान्तु विवृतमेव । बाह्य एकाशधा श्वासाघोपविवारा नादघोपसंवारा उदात्तानुदात्तस्वरिताः महाप्राणोऽल्पप्राणश्चेति । क्षमघट्टधाः हकारोऽनुस्वारश्च नादघोपसंवारमहाप्राणाः । शरो विसर्ग ँ क ँ पौ खफछठयाश्च श्वासाघोपविवारमहाप्राणाः । चयः श्वासाघोपविवाराल्पप्राणाः ।

(स्थानमयत्रचक्रम् ।)

वर्णाः	स्थानानि	वर्णाः	आभ्यन्तरप्रयत्नाः	वर्णाः	चास्यमयत्रः
अत्राथा ३ कपययसिर्गाः	कण्ठः	अ	प्रयोगे सवृत्तम् प्र- क्रियायां विवृतम्	अआआ ३ इईई ३ उऊऊ ३ ऋऋ ३ एऐ ३ ओओ ३ औ औ ३	नादस्योपसंज्ञाएव- प्राणोदात्तानुदात्त- स्वरिताः
इईई ३ चउवजयदाः	तालु	आथा ३ इईई ३ उऊऊ ३ ऋऋऋ ३ लृ ३ एऐ ३ ओओ ३ औऔ ३ आँथी ३	विवृतम्	ह्रस्वभ्रमभ्रानु- स्वाराः	नादघोषसंज्ञा- महाप्राणाः
उऊऊ ३ पपयभापय्यानीया	तालुनासिसम्	कलमषड चउज शन टडडडन तथ दधन यफनभम	स्युष्टम्	खफ छठयदापस- निसर्ग २ ऋऋ	श्लासाघोषनिसा- रमहाप्राणाः
म	ओठी	यल्य	ईषस्युष्टम्	चटतकप	श्लासाघोषनिसा- रप्राणाः
न	थोठनासिसम्	राषसह	ईषद्विहृतम्	यल्लज्जननड मज्जद्वय	नादघोषसंज्ञा- रास्यप्राणाः
न	मूर्दी				
न	मूर्देनासिसम्				
न	दन्ता				
न	दन्वनासिसम्				
न	कण्ठतालु				
न	कण्ठघटम्				
न	दन्तोष्ठम्				
न	जिह्वामूलेयः				
न	नासिका				

यणो जमो जशश्च नादघोपसंवाराल्पप्राणाः । अचः श्वासाघोपवि-
वाराल्पप्राणोदात्तानुदात्तस्वरिताः । यमा वेदे एव प्रसिद्धाः ॥

तुल्यास्यप्रयत्नं सवर्णम् १ । १ । ९ ॥

ताल्वादिस्थानमाभ्यन्तरप्रयत्नश्चेत्येतद्वयं यस्य येन तुल्यं त-
न्मिथः सवर्णम् । यथा अ १ आ २ आ ३ एते, मिथः सवर्णाः ।
कत्वगघङ एते च ॥

ऋलृवर्णयोर्मिथः सावर्ण्यं वाच्यम् ॥ ❀ ॥

अणुदित्सवर्णस्य चाप्रत्ययः १ । १ । ६९ ॥

अविधीयमानोऽणु उदिच्च सवर्णस्य संज्ञा । अत्रैवाण् परेण
णकारेण । कुञ्जुटुतुषु एते उदितः । तदेवम् अ इत्यष्टादशानां संज्ञा ।
तथा इकारोकारौ । ऋकारश्चिञ्जतः एवम्लकारोऽपि । एचो द्वादशा-
नाम् । एदैतोरोदौतोश्च न मिथः सावर्ण्यम् । ऐऔचसूत्रारम्भसा-
मर्थ्यात् । अनुनासिकाननुनासिकभेदेन यवला द्विधा । तेनाननु-
नासिकास्ते द्वयोर्द्वयोः संज्ञाः ।

तपरस्तत्कालस्य १ । १ । ७० ॥

तः परो यस्मात्स च तात्परश्चोच्चार्यमाणः समकालस्यैव
संज्ञा । यथा ॥

अदेङ्गुणः १ । १ । २ ॥

अदेङ् च गुणसंज्ञः । अत्र-अत् इति तपरोऽकारः ह्रस्वानामेव
पण्णां सञ्ज्ञा एवन्तात्पर एङ् दीर्घाणामेव पण्णां पण्णां संज्ञा ॥

वृद्धिरादैच् १ । १ । १ ॥

आदैच्च वृद्धिसंज्ञः ॥

परः सन्निकर्षः संहिता १ । ४ । १०९ ॥

वर्णानामतिशयितः सन्निधिः संहितासंज्ञः ॥

सुप्तिङन्तं पदम् १ । ४ । १४ ॥

सुवन्तं तिङन्तश्च पदसंज्ञम् ॥

स्थानेऽन्तरतमः १ । १ । ५० ॥

प्रसङ्गे सति सदृशतम आदेशः ॥

इति संज्ञाप्रकरणम् । इति २ अंशौ ।

इको यणचि ६ । १ । ७७ ॥

इकः स्थाने यण् स्यादचि संहितायां विषये । सुध्युपोस्यः ।
धद्वित्वादि वक्ष्यते । मध्वरिः धात्रंशः लाकृतिः ॥

एचोऽयवायावः ६ । १ । ७८ ॥

पचः क्रमादय अच् आच् आच् एते स्युरचि ॥

यथासंख्यमनुदेशः समानाम् १ । ३ । १० ॥

समसंबंधी विधिर्यथासंख्यम् । हरये । विष्णवे । नायकः ।
पावकः ॥

आह्वणः ६ । १ । ८७ ॥

अवर्णादाचि पूर्वपरयोरेको गुणादेशः । उपेन्द्रः । रमेशः ।
गङ्गोदकम् ॥

उपदेशेऽजनुनासिक इत् १ । ३ । २ ॥

उपदेशेऽनुनासिकोऽनित्संज्ञः । प्रतिज्ञानुनासिक्याः पाणिनी-
याः । लणसूत्रस्थोऽकारोऽनुनासिकः प्रतिज्ञातः । तेन सद्विचार्य-
माणो रेफः उरण् रपर इत्यत्र रलयोः संज्ञा ॥

उरण् रपरः १ । १ । ५१ ॥

ऋ इति त्रिगतः संज्ञेत्युक्तन्दत्स्थाने योऽण् स रपरः सन्नेव प्रव-
र्त्तते । तेन कृष्णार्द्धित्प्यादावल् तवल्कार इत्यादावल् आन्तरत-
म्यात् । कृष्णार्द्धिः । दलोपादिकं वक्ष्यते । तवल्कारः ॥

वृद्धिरेचि ६ । १ । ८८ ॥

१ प्रक्रियातीतिमारम्भ एव बाला. विष्णो मा भूश्रित्यालोप्यादी एवपर रूपं
लिखितम् । ततः प्रक्रियाभ्यासदाग्नें रूपात्तागिषोद्गु शपानीनि अय लिखितम् ।

आदेचि वृद्धिरेकादेशः । गुणापवादः । कृष्णेकत्वम् । गङ्गोचः ।
देवैश्वर्यम् । कृष्णौत्कण्ठद्यम् ॥

अकः सवर्णे दीर्घः ६ । १ । १०१ ॥

अकः सवर्णेऽचि परे दीर्घ एकादेशः । देत्यारिः । रमात्र ।
श्रीशः । विष्णूदयः । होतृकारः ॥

एडः पदान्तादति ६ । १ । १०९ ॥

पदान्तादेडोऽति परे पूर्वरूपमेकादेशः । हरेऽव । विष्णोऽव ॥

अदर्शनं लोपः १ । १ । ६० ॥

प्रसक्तस्यादर्शनं लोपसंज्ञम् ॥

लोपः शाकल्यस्य ८ । ३ । १९ ॥

अवर्णपूर्वयोः पदान्तयोर्यवयोर्लोपो वाऽचि परे ।

पूर्वत्रासिद्धम् ८ । २ । १ ॥

सपादसप्ताध्यायीं प्रति त्रिपाद्यासिद्धा ।

त्रिपाद्यामपि पूर्वं प्रति परं शास्त्रमसिद्धम् । इति लोपस्यासिद्ध-
त्वान्न सन्धिः । हर इह । हरयिह । विष्ण इह । विष्णविह । श्रिया
पपः । श्रियायेपः । गुरा अयम् । गुरावयम् ॥

इति ३ अंशाः ।

पुतप्रगृह्या अचि नित्यम् ६ । १ । १२५ ॥

पुताः प्रगृह्याश्चाचि नित्यं प्रकृत्या ॥

अचोऽन्त्यादि टि १ । १ । ६४ ॥

अचाम्मध्ये योऽन्त्यः स आदिर्यस्य तट्टिसंज्ञम् ॥

दूराद्धूते च ८ । २ । ८४ ॥

दूरात्संबोधने यद्वाक्यं तस्य टेः पुतः । एहि कृष्णा ३ अत्र
गौश्वराति ॥

ईदूदेद्विवचनं प्रगृह्यम् १ । १ । ११ ॥

ईदूदेदन्तं द्विवचनं प्रगृह्यसंज्ञम् । हरी एतौ । विष्णू इमौ । गङ्गे
अमू । पचेते इमौ ॥

अदसो मात् १ । १ । १२ ॥

१ । अस्मात्परावीदूतौ प्रगृह्यौ । अमी ईशाः । अमू आसाते ॥

चादयोऽसत्वे १ । ४ । ६७ ॥

अद्रव्यार्थाश्चादयो निपातसंज्ञाः ॥

१० । ओत् १ । १ । १६ ॥

आदन्तो निपातः प्रगृह्यः । अहो ईशाः ॥

स्तोः श्रुनाश्रुः ८ । ४ । ४० ॥

सकारतवर्गयोः शकारचवर्गाभ्यां योगे शकारचवर्गौ स्तः ।
हरिश्शेते । रामश्चिनोति । सच्चित् । शार्ङ्गिञ्जय ॥

शात् ८ । ४ । ४४ ॥

शात्परस्य तोश्चुर्न । प्रश्नः । अश्नाति ॥

घुना घुः ८ । ४ । ४१ ॥

स्तोः घुना योगे घुः । रामण्षघुः । रामणीकते । पेष्टा । तटीका ।
चक्रिण्डौकसे ॥

न पदान्ताद्वोरनाम् ८ । ४ । ४२ ॥

पदान्ताद्वोरनामः स्तोः घुर्न । पट्सन्तः । पट्ट ते । नेह । पण्णाम् ॥

अनाम्रवतिनगरीणामिति वाच्यम् ॥ ❀ ॥

पण्णवतिः पण्णगर्यः ॥

तोः पि ८ । ४ । ४३ ॥

तवर्गस्य पकारे परे न एत्वम् । सन्पघुः ॥

झलाञ्जशोऽन्ते ८ । २ । ३९ ॥

पदान्ते झलां जशः । वागीशः ॥

यरोऽनुनासिकेऽनुनासिको वा ८ । ४ । ४५ ॥

यरः पदान्तस्यानुनासिके परेऽनुनासिको वा । एतन्मुरारिः ।
एतद्मुरारिः । स्पर्शस्यैव । नेह चतुर्थुखः ॥

प्रत्यये भाषायां नित्यम् ॥ ❀ ॥

चिन्मयम् ॥

तोर्लि ८ । ४ । ६० ॥

तवर्गस्य लकारे परे परसवर्णः । तल्लयः । विद्वालिखति ।
नकारस्यानुनासिको लकारः ॥

खरि च ८ । ४ । ५५ ॥

खरि झलाञ्चरः । तत्पुत्रः । पट्पदः । ककुप्प्रदेशः ॥

झयो होऽन्यतरस्याम् ८ । ४ । ६२ ॥

पदान्ताज्झयः परस्य हस्य वा पूर्वसवर्णः । घोपस्य महाभाणस्य
हस्य तादृशो वर्गचतुर्थ एव । वाग्घरिः । वाग्हरिः । तद्धविः ।
तद्दहविः ॥

इति ४ अंशाः ।

शश्छोटि ८ । ४ । ६३ ॥

पदान्ताज्झयः परस्य शस्य छौ वाऽटि दस्य जत्वे चत्वंम् । त-
च्छिवः । तच्छिवः ॥

छत्वममीति वाच्यम् ॥ ❀ ॥

तच्छ्लोकेन । तच्छ्लोकेन ॥

मोऽनुस्वारः ८ । ३ । २३ ॥

मान्तस्य पदस्यानुस्वारो हलि ॥

अलोऽन्त्यस्य १ । १ । ५२ ॥

पृष्ठीनिर्दिष्टान्त्यस्यादेशः । हरिं वन्दे ॥

अनुस्वारस्य ययि परसवर्णः ८ । ४ । ५८ ॥

अङ्कितः । अञ्चितः । कुण्ठितः । शान्तः । गुम्फितः ॥

वा पदान्तस्य ८ । ४ । ५८ ॥

पदान्तस्यानुस्वारस्य ययि परसवर्णा वा । त्वङ्करोपि त्वं करोषि ।
सय्यन्ता । संयन्ता । संव्वत्सर संवत्सरः । यल्लोकम् । यं लोकम् ॥

आद्यन्तौ टकितौ १ । १ । ४६ ॥

टित्कितौ यस्योक्तौ तस्य क्रमादाद्यन्तावयवौ स्तः ॥

डमो ह्रस्वादचि डमुण्नित्यम् ८ । ३ । ३२ ॥

ह्रस्वात्परो यो डमु तदन्तं यत्पदं ततः परस्याचो नित्यं डमुट्
आगमः । उकारोऽनुनासिकत्वादित् । इत्संज्ञालोपी च सूत्रप्रवृ-
त्तिकाले एव प्रयोगाद्बहिरेव भवत ॥

तस्य लोपः १ । ३ । ९ ॥

तस्येतो लोपः । प्रत्यङ्ङात्मा । सुगणीशः । सबच्युतः ॥

अत्रानुनासिकः पूर्वस्य तु वा ८ । ३ । २ ॥

अत्र रुप्रकरणे रोः पूर्वस्यानुनासिको वा ॥

अनुनासिकात्परोऽनुस्वारः ८ । ३ । ४ ॥

अनुनासिकं विहाय रोः पूर्वस्मात्परोऽनुस्वारागमः ॥

विरामोऽवसानम् १ । ४ । ११० ॥

वर्णानामभावोऽवसानसञ्ज्ञः ॥

खरवसानयोर्विसर्जनीयः ८ । ३ । १५ ॥

खरि अवसाने च रेफस्य विसर्गः पदान्ते ॥

नश्छव्यप्रशान् ८ । ३ । ७ ॥

अम्परे छवि नान्तस्य पदस्य रुः नतु प्रशान्शब्दस्य ॥

विसर्जनीयस्य सः ८ । ३ । ३४ ॥

खरि । चर्कित्वायस्व । राज्ञिश्चित्रम् ।

इति ५ अंशाः ।

छे च ६ । १ । ७३ ॥

ह्रस्वस्य छे परे तुक् संहितायाम् । गच्छति । स्वच्छा । जश्त्वं
चुत्वञ्चत्वम् । शिवच्छाया ॥

दीर्घात् ६ । १ । ७५ ॥

दीर्घस्य छे तुक् । चेच्छियते ॥

पदान्ताद्वा ६ । १ । ७६ ॥

दीर्घस्य पदान्तस्य छे तुग्वा । लक्ष्मीच्छाया । लक्ष्मीछाया ॥

अचो रहाभ्यां द्वे ८ । ४ । ४६ ॥

अचः पराभ्यां रेफहकाराभ्यां परस्य यरो द्वे वा । हर्यनुभावः ।
हर्यनुभावः । नह्यस्ति । नह्यस्ति ॥

अनचि च ८ । ४ । ४७ ॥

अचः परस्य यरो द्वे वा न त्वचि । धात्रंशः । धात्रंशः ॥

झलां जश् झशि ८ । ४ । ५३ ॥

इति धस्य दः ॥

हलोऽनन्तराः संयोगः १ । १ । ७ ॥

अजिभरव्यवहिता हलः संयोगसञ्ज्ञाः ॥

संयोगान्तस्य लोपः ८ । २ । २३ ॥

संयोगान्तं यत्पदं तदन्तस्य लोपः । इति प्राप्ते ॥

यणः प्रतिपेधो वाच्यः ॥ ❀ ॥

सुद्धचुपास्यः । सुध्युपास्यः ॥

झरो झरि सवर्णे ८ । ४ । ६६ ॥

हलः परस्य झरो लोपो वा सवर्णे झरि । कृष्णादिः । कृष्णार्धः ।
विसर्जनीयस्य सः । विष्णुस्त्राता ॥

वा शरि ८ । ३ । ३६ ॥

शरि विसर्गस्य विसर्गं एव वा । हरिः शेते । हरिश्शेते ॥

कुप्वो ँ क ँ पौ च ८ । ३ । ३७ ॥

कवर्गे पवर्गे च परे क्रमाद्विसर्गस्य जिह्वामूलीयोपध्मानीयौ विसर्गश्च । सत्त्वापवादः । हरि ँ करोति । हरिः करोति । हरि ँ पाति । हरिः पाति ॥

अलोऽन्त्यात्पूर्व उपधा १ । १ । ६३ ॥

अन्त्यादलः पूर्वो वर्ण उपधासंज्ञः ॥

इदुदुपधस्य चाप्रत्ययस्य ८ । ३ । ४१ ॥

इकारोकारोपधस्याप्रत्ययस्य विसर्गस्य षः कुप्वोः । निष्प्रत्यूहम् । आविष्कृतम् । दुष्कृतम् ॥

ससजुपो रुः ८ । २ । ६६ ॥

पदान्तस्य सस्य सजुपश्च रुः । जश्त्वापवादः । हरिर्वन्धः ॥

अतो रोरुतादद्भुते ६ । १ । ११३ ॥

अप्लुतादतः परस्य रोरुः स्यादद्भुतेऽति । भो भगो इति यत्त्वापवादः । शिवोऽर्च्यः । रोः किम् । प्रातरत्र ॥

हशि च ६ । १ । ११४ ॥

अप्लुतादतः परस्य रोरुर्हशि । शिवो बन्धः । रोः किम् । धातर्गच्छ ॥

भोभगोअघोअपूर्वस्य योऽशि ८ । ३ । १७ ॥

एतत्पूर्वस्य रोर्यादेशः अशि । देवा इह देवायिह ॥

हलि सर्वेषाम् ८ । ३ । २२ ॥

भोभगोअघोअपूर्वस्य यस्य लोपो हलि । भो देवाः । भगो नमस्ते । अघो याहि । देवा नम्याः ॥

रो रि ८ । ३ । १४ ॥

रेफस्य रेफे परे लोपः ॥

द्रलोपे पूर्वस्य दीर्घोऽणः ६ । ३ । १११ ॥

ढकारेफलोपनिमित्ते ढकारेफात्मके वर्णे परे पूर्वस्याणो दीर्घः ।
पुना रमते । हरी रम्यः । मनस रथ । इत्यत्र रुत्वे कृते हशि चेत्युत्वे रोरीति लोपे प्राप्ते रोरीत्यस्यासिद्धत्वादुत्वमेव । मनोरथः ॥

एतत्तदोः सुलोपोऽकोरनसमासे हलि ६।१।१३२ ॥

अककारयोरेतत्तदोर्यः सुस्तस्य लोपो हलि नतु नञ्समासे ।
एष विष्णुः । स शम्भुः ॥

इति संधयः । इति ६ अंशाः ।

पुंसि' रामो हरिः सुश्रीः प्रधीः शम्भुः स्वभूः पिता ॥ धाताऽथ
राजयज्वानौ दण्डी धीमान् मरुत् पचन् ॥ १ ॥ ददद्विद्वान् सेदि-
वांश्च वेधा अष्टादशोदिताः ॥

अर्थवदधातुरप्रत्ययः प्रातिपदिकम् १।२।४६ ॥

धातुं प्रत्ययं प्रत्ययान्तश्च वर्जयित्वाऽर्थवच्छब्दरूपं प्रातिपदिक-
संज्ञम् ॥

कृत्तद्धितसमासाश्च १।२।४६ ॥

कृत्तद्धितान्तौ समासश्च प्रातिपदिकसंज्ञाः । अत्रावयवार्थो
व्युत्पत्तिस्तद्रहिता डित्यादयः शब्दा अव्युत्पन्नाः तेषामर्थवत्सूत्रेण
प्रातिपदिकसंज्ञा व्युत्पत्तिमन्तो रक्षित्वागण्यराजपुरुषादयः
रक्षणकर्त्ता दशरथापत्यं राजसम्बन्धी पुरुष इत्येषामवयवार्थास्तेषां
कृत्तद्धितेत्यनेन संज्ञा रामशब्दे च मृगविशेषादावव्युत्पत्तिपक्षस्त-
त्रार्थवत्सूत्रेण संज्ञा । रमन्ते योगिनोऽत्रेति श्रीरामे व्युत्पत्तिपक्षस्तत्र
कृत्तद्धितेत्यनेन संज्ञा एवमग्रेऽपि यथायोग्यम् ।

**स्वौजसमौट्छष्टाभ्याम्भिस्ङेभ्याम्भ्यस्ङसिभ्यां-
भ्यस्ङसोसाम्ङ्योस्सुप् ४।१।२ ॥**

ङ्यन्तादावन्तात्प्रातिपदिकाच्च परे स्वादयः प्रत्ययाः **सु औ**

१ अत्राजन्ता इलन्ताश्च पुल्लिङ्गाः शब्दा क्रमेणैव न्यम्नाः व्ययधानेन
सङ्घेस्यस्य निष्फलत्वात् । एवं स्त्रीवियोगदि ॥

जस् प्रथमा । अम् औट् शस् द्वितीया । टा भ्याम् भिस् तृतीया ।
 ङे भ्यां भ्यस् चतुर्थी । डस्ति भ्यां भ्यस् पञ्चमी । डस् ओस्
 आम् षष्ठी । डि ओस् सुप् सप्तमी । इति प्राचां संज्ञाः ॥

बुट् १ । ३ । ७ ॥

प्रत्ययाद्यौ बुट् इतौ ॥

लशकतद्धिते १ । ३ । ८ ॥

तद्धितवर्जप्रत्ययाद्या लशकवर्गा इतः ॥

न विभक्तौ तुरुमाः १ । ३ । ४ ॥

विभक्तिस्थास्तवर्गसकारमकारा इतो न ॥

विभक्तिश्च १ । ४ । १०४ ॥

सुप्तिडौ विभक्तिसंज्ञौ ॥

सुपः १ । ४ । १०३ ॥

सुपः त्रीणि त्रीणे वचनानि प्रत्येकमेकवचनद्विवचनबहुवच-
 नसंज्ञानि ॥

द्व्येकयोर्द्विवचनैकवचने १ । ४ । २२ ॥

द्वित्वैकत्वयोरेते स्तः ॥

बहुषु बहुवचनम् १ । ४ । २१ ॥

बहुत्वे एतत्स्यात् । रुत्वविसर्गौ । रामः ॥

सरूपाणामेकशेष एकविभक्तौ १ । २ । ६४ ॥

एकविभक्तौ यानि सरूपाण्येव दृष्टानि तेषामेक एव शिष्यते ।
 एकशेषश्चायमनैमित्तिकत्वेऽन्तरङ्गत्वादिभक्त्युत्पत्तेः पूर्वमेवेति ॥

प्रथमयोः पूर्वसवर्णः ६ । १ । १०२ ॥

अकः प्रथमाद्वितीययोराचि पूर्वसवर्णदीर्घ एकादेशः ॥

नादिचि ६ । १ । १०४ ॥

अवर्णादिचि न पूर्वसवर्णदीर्घः । रामौ ॥

अतो गुणे ६ । १ । ९७ ॥

अपदान्तादतो गुणे पररूपमेकादेशः । इति 'पररूपे प्राप्ते पर-
च्चात्पूर्वसवर्णदीर्घः । रामाः ॥

एकवचनं संबुद्धिः २ । ३ । ४९ ॥

संबोधने प्रथमाया एकवचनं संबुद्धिसंज्ञम् ॥

यस्मात्प्रत्ययविधिस्तदादिप्रत्ययेऽङ्गम् १ । ४ । १३ ॥

यः प्रत्ययो यस्मात् क्रियते तदादि शब्दरूपं तस्मिन् प्रत्यये
परेऽङ्गसंज्ञम् ॥

एङ्ह्रस्वात्संबुद्धेः ६ । १ । ६९ ॥

एङन्ताद्भ्रस्वान्ताद्याङ्गाद्भ्रष्टुप्यते संबुद्धेश्चेत् । हे राम हे रामौ ।
हे रामाः ॥

अमि पूर्वः ६ । १ । १०७ ॥

अकोऽभ्याचि पूर्वरूपमेकादेशः । रामम् । रामौ ॥

इति ७ अंशाः ।

तस्माच्छसो नः पुंसि ६ । १ । १०३ ॥

पूर्वसवर्णदीर्घात्परो यः शसः सस्तस्य नः पुंसि ॥

अट्रकुष्वाङ्नुम्व्यवायेऽपि ८ । ४ । २ ॥

अट्रकवर्गपवर्गआङ्नुम् एतैर्व्यस्तैर्यथासम्भवं मिलितैश्च व्यव-
धानेऽपि रपाभ्यां परस्य नस्य णः समानपदे । इति प्राप्ते ॥

पदान्तस्य ८ । ४ । ३७ ॥

पदान्तस्य नस्य णो न । रामान् ॥

टाङ्सिङ्सामिनात्स्याः ७ । १ । १२ ॥

अदन्तादङ्गाद्यादीनामिनादयः । रामेण ॥

सुपि च ७ । ३ । १०२ ॥

यवादी सुप्यतोऽङ्गस्य दीर्घः । रामाभ्याम् ॥

अतो भिस ऐस् ७ । १ । ९ ॥

अदन्तादङ्गादिस ऐस् ॥

अनेकाल्शित्सर्वस्य १ । १ । ५५ ॥

अलोऽन्त्यस्येत्यस्यापवादः । रामैः ॥

डेर्यः ७ । १ । १३ ॥

अतोऽङ्गात्परस्य डे इत्यस्य यः ॥

स्थानिवदादेशोऽनल्विधौ १ । १ । ५६ ॥

आदेशः स्थानिवत्स्यान्न तु स्थान्यलाश्रयाविधौ तेन डेर्यस्य
सुप्त्वात्सुपि चोति दीर्घः । रामाय । रामाभ्याम् ॥

बहुवचने झल्येत् ७ । ३ । १०३ ॥

झलादौ बहुवचने सुप्यतोऽङ्गस्यैकारः । रामेभ्यः । जश्वं वाधित्वा ॥

वावसाने ८ । ४ । ५६ ॥

अवसाने झलाञ्चरो वा । रामात् । पक्षे जश्त्वम् । रामाद् । रामा-
भ्याम् । रामेभ्यः । रामस्य ॥

ओसि च ७ । ३ । १०४ ॥

ओसि परेऽतोऽङ्गस्य एकारः । रामयोः ॥

ह्रस्वनद्यापो नुद् ७ । १ । ५४ ॥

ह्रस्वान्तान्नघन्तादावन्ताद्याङ्गात्परस्यामो नुद् ॥

नामि ६ । ४ । ३ ॥

अजन्ताङ्गस्य दीर्घः । रामाणाम् । रामे । रामयोः ॥

आदेशप्रत्यययोः ८ । ३ । ५९ ॥

इण्कुभ्यां परस्यापदान्तस्यादेशः प्रत्ययावयवश्च यः सस्तस्य
मूर्द्धन्यः । रामेषु । एवं कृष्णादयोऽप्यदन्ताः ॥

जसि च ७ । ३ । १०९ ॥

ह्रस्वान्तस्याङ्गस्य गुणः । हरिः । हरी । हर्यः ॥

ह्रस्वस्य गुणः ७ । ३ । १०८ ॥

संबुद्धौ । हे हरे ॥

शोपो घ्यसखि १ । ४ । ७ ॥

अनदीसंज्ञौ ह्रस्वौ याविदुतौ तदन्तं सखिवर्जं घिसंज्ञम् ॥

आडो नाऽस्त्रियाम् ७ । ३ । १२० ॥

घेः परस्याडो ना स्यादस्त्रियाम् । हरिणा ॥

घेडिति ७ । ३ । १११ ॥

घिसंज्ञकस्य डिति सुपि गुणः । हरये ॥

डसिडसोश्च ६ । १ । ११० ॥

एडो डसिडसोरति पूर्वरूपमेकादेशः । हरेः ॥

अच्च घेः ७ । ३ । ११९ ॥

इदुद्भ्यां परस्य डेरौत् घेरन्तादेशश्चाकारः । हरो । एवं कव्या-
दयः ॥

भूवादयो धातवः १ । ३ । १ ॥

क्रियावाचिनो भ्वादयो धातुसंज्ञाः ॥

अचि श्नुधातुभ्रुवां योरियडुवडौ ६ । ४ । ७७ ॥

श्रुप्रत्ययान्तस्य इवर्णोवर्णान्तस्य धातोर्भू इत्येतस्य चाङ्गस्ये-
यहुवडावजादौ प्रत्यये ॥

डिच्च १ । १ । ५३ ॥

डिःदनेकालप्यन्त्यस्यादेशः । सुश्रीः । सुश्रियौ ॥ एवं यवक्रीप्र-
भृतयः ॥

एरनेकाचोऽसंयोगपूर्वस्य ६ । ४ । ८२ ॥

धात्ववयवसंयोगपूर्वो न भवति य इवर्णस्तदन्तो यो धातुस्तद-
न्तस्याऽनेकाचोऽङ्गस्य यणजादौ प्रत्यये । प्रधीः । प्रघ्यौ । प्रघ्यः ।
शम्भुर्हरिवत् । एवं भान्वादयः । स्वभूः । स्वभुवौ ॥

सुडनपुंसकस्य १ । १ । ४३ ॥

स्वादिपञ्चवचनानि सर्वनामस्थानसंज्ञानि स्युरङ्गीवस्य ॥

ऋतो ङिसर्वनामस्थानयोः ७ । ३ । ११० ॥

गुणः । इति प्राप्ते ॥

ऋदुशनस्पुरुदंसोनेहसां च ७ । १ । ९४ ॥

ऋदन्तानामुशनसादीनाञ्च अनडसंबुद्धौ सौ ॥

सर्वनामस्थाने चासंबुद्धौ ६ । ४ । ८ ॥

नान्तस्थोपधाया दीर्घः असंबुद्धौ सर्वनामस्थाने ॥

अपृक्त एकाल् प्रत्ययः १ । २ । ४१ ॥

हल्ङ्याभ्यो दीर्घात्सुतिस्यपृक्तं हल् ६ । १ । ६८ ॥

हलन्तादीर्घो यौ ङ्यापौ तदन्ताच्च परं सुतितीत्येतदपृक्तं हलु-
प्यते ॥

प्रत्ययलोपे प्रत्ययलक्षणम् १ । १ । ६२ ॥

प्रत्यये लुप्तेऽपि तदाश्रितं कार्यं स्यात् ।

नलोपः प्रातिपदिकान्तस्य ८ । २ । ७ ॥

प्रातिपदिकसंज्ञकं यत्पदन्तदन्तस्य नस्य लोपः । पिता ।
पितरौ ॥

ऋत उत् ६ । १ । १११ ॥

ऋदन्तादङ्गात् ङसिङसोरति उदेकादेशः । रपरत्वम् ॥

रात्सस्य ८ । २ । २४ ॥

रात्संयोगान्तस्य सस्यैव लोपो नान्यस्य । पितुः ॥

ऋवर्णान्नस्य णत्वं वाच्यम् ॐ ॥

पितृणाम् । ण्वं भ्रात्रादयः ॥

अपृक्तत्त्वं स्वप्नपृत्नेष्ट्वपृक्षत्त्वं होत्पोत्प्रशास्तृ-
णाम् ६ । ४ । ११ ॥

अवादीनामुपधाया दीर्घोऽसंबुद्धौ सर्वनामस्थाने । धाता ।
धातारो इत्यादि । शेषं पितृवत् । गजा । राजानो ॥

स्वादिष्वसर्वनामस्थाने १ । ४ । १७ ॥

कप्प्रत्ययावाधिषु स्वादिष्वसर्वनामस्थानेषु पूर्व पदसंज्ञम् ॥

यच्चि भम् १ । ४ । १८ ॥

यकारादिष्वजादिषु च कप्प्रत्ययावाधिषु स्वादिष्वसर्वनामस्था-
नेषु पूर्व भसंज्ञम् ॥

आकडारादेका संज्ञा १ । ४ । १ ॥

इत ऊर्ध्वं कडाराः कर्मधारय इत्यतः प्रागेकस्यैवैव संज्ञा । या
पराऽनवकाशा च । तेन शसादावाचि भसंज्ञा नतु पदसंज्ञा ॥

इति ९ अंशाः ।

न डिसम्बुद्धयोः ८ । २ । ८ ॥

नस्य लोपो न डौ संबुद्धौ च । हे राजन् ॥

अलोपोऽनः ६ । ४ । १३४ ॥

अङ्गावयवोऽसर्वस्थानयजादिस्वादिपरो योऽन् तस्याकारस्य
लोपः । जजोर्ज्ञः । राज्ञः । राज्ञा । पदत्वान्नलोपः । राजभ्याम् ॥

नलोपः सुप्स्वरसंज्ञातुग्विधिषु कृति ८ । २ । २ ॥

सुवादिविधौ कृति तुग्विधौ च नलोपोऽसिद्धो नान्यत्र राजाश्वः ॥

विभाषा डिश्योः ६ । ४ । १३६ ॥

अङ्गावयवोऽसर्वनामस्थानयजादिस्वादिपरो योऽन् तस्याकारस्य
लोपो वा डिश्योः । राज्ञि । राजनि । गजसु । यज्वा ॥

न संयोगाद्धमन्तात् ६ । ४ । १३७ ॥

वकारमकारान्तसंयोगात्परस्यानोऽकारलोपो न । यज्वनः । ब्र-
ह्मणः ॥

इन्इन्पूर्पार्य्यम्णां शौ ६ । ४ । १२ ॥

१ एषां शब्वोपधाया दीर्घो नान्यत्र ॥

सौ च ६ । ४ । १३ ॥

इनादीनामुपधाया दीर्घः असंबुद्धौ सौ । दण्डी दण्डिनौ ॥

अत्वसंतस्य चाधातोः ६ । ४ । १४ ॥

अत्वन्तस्य धातुभिन्नासन्तस्य च उपधाया दीर्घोऽसंबुद्धौ सौ ॥

उगिदचां सर्वनामस्थानेऽधातोः ७ । १ । ७० ॥

अधातोः उगितो नलोपिनोऽञ्चतेश्च नुम् सर्वनामस्थाने ॥

मिदचोऽन्त्यात्परः १ । १ । ४७ ॥

अचाम्मध्ये योऽन्त्यस्तस्मात्परस्तस्यैवान्त्यावयवो मित्तस्यात् ॥

संयोगान्तस्य लोपः

धीमान् । धीमन्तौ । हे धीमन् । धीमतः इत्यादि । मरुत् । मरुतौ । पचन् । पचन्तौ । एवं शत्रन्तभवच्छब्दस्य भवन् । सन् ॥

उभे अभ्यस्तम् ६ । १ । ५ ॥

पाठद्वित्वप्रकरणे ये द्वे विहिते ते उभे समुदिते अभ्यस्तसंज्ञे ॥

नाभ्यस्ताच्छतुः ७ । १ । ७८ ॥

१ अभ्यस्तात्परस्य शतुर्बुध्न । ददत् । ददतौ ॥

सान्तमहतः संयोगस्य ६ । ४ । १० ॥

सान्तसंयोगस्य महतश्च यो नकारस्तस्योपधाया दीर्घोऽसंबुद्धौ सर्वनामस्थाने । विद्वान् ॥

नश्चापदान्तस्य झलि ८ । ३ । २४ ॥

नस्य मस्य चापदान्तस्य झल्यनुस्वारः । विद्वांसौ ॥

वसोः संप्रसारणम् ६ । ४ । १३१ ॥

वस्वन्तस्य मस्य संप्रसारणम् ॥

इग्यणः संप्रसारणम् १ । १ । ४५ ॥ १

यणः स्थाने प्रयुज्यमानो य इक् स संप्रसारणसंज्ञः ॥

संप्रसारणाच्च ६ । १ । १०८ ॥

संप्रसारणादचि पूर्वरूपमेकादेशः । निदुपः ॥

वसुस्रंसुध्वंस्वनडुहां दः ८ । २ । ७२ ॥

सान्तवस्वन्तस्य संसादेश्च दः पदान्ते । विद्वद्भ्याम् । निपेदि-
वान् ॥

अकृतव्यूहाः पाणिनीयाः ❀ ॥

निमित्तं विनाशोन्मुखं दृष्ट्वा तत्रयुक्तं कार्यं न कुर्वन्तीत्यर्थः । तेन
बलादित्वं नाशोन्मुखं दृष्ट्वा इदमेव न कुर्वन्ति । निपेदुपः । निपेदि-
वद्भ्याम् । वेधाः । हे वेधः । वेधोभ्याम् ॥

इति पुल्लिङ्गाः ॥

इति १० अंगाः इति प्रथमाध्यायस्य प्रथमः पादः ।

स्त्रिया रमा मतिर्गारी श्रीर्धनुर्भूचमृद्युधः ॥ शरदाक् च सारि-
त्रावृडिति द्वादश कीर्तिताः ॥

अजाद्यतष्टाप् ४ । १ । ४ ॥

अजादीनामदन्तस्य च वाच्यं यत् स्त्रीत्वं तत्र द्योत्ये टाप् ।
अजा । रमा ॥

पिद्गौरादिभ्यश्च ४ । १ । ४१ ॥

पिद्भ्यो गौरादिभ्यश्च स्त्रिया ङीप् ॥

यस्येति च ६ । ४ । १४८ ॥

मस्येवर्णावर्णयोर्लापस्तद्धिते ईति च । नर्त्तकी । गौरी इत्यादि ।
रमा ॥

औड आपः ७ । १ । १८ ॥

आवन्तादङ्गात्परस्याड' शी । ग्मे । रमा ॥

संबुद्धौ च ७ । ३ । १०६ ॥

आप एकारः संबुद्धौ । हे रमे ॥

आडि चापः ७ । ३ । १०५ ॥

आडचोसि चावन्ताङ्गस्य एकारः । रमया ॥

याडापः ७ । ३ । ११३ ॥

आपः परस्य डिद्वचनस्य याडागमः । रमायै । रमायाः २ ।
रमाणाम् ॥

डेराम्नद्याम्नीभ्यः ७ । ३ । ११६ ॥

नद्यन्तादावन्तान्नीशब्दाच्च डेराम् । रमायाम् । एवं दुर्गादयः ।
मतीः । मत्या ॥

डिति ह्रस्वश्च १ । ४ । ६ ॥

इयडुवडस्थानौ स्त्रीशब्दभिन्नौ नित्यस्त्रीलिङ्गावीदृती ह्रस्वौ चव-
र्णौवर्णौ स्त्रिया वा नदीसंज्ञौ डिति ॥

आण् नद्याः ७ । ३ । ११२ ॥

नद्यन्तात्परेषां डितामाद् ॥

आटश्च ६ । १ । ९० ॥

आटोऽचि वृद्धिरेकादेशः । मत्यै । मतये । मत्याः । मतेः ।
नदीत्वे औदिति डेरौत्वे प्राप्ते ॥

इदुड्याम् ७ । ३ । ११७ ॥

नदीसंज्ञकाभ्यामिदुड्भ्या डेराम् पक्षेऽच्च घेः । मत्याम् । मती ।
शेषं हरिवत् । एवं बुद्ध्यादयः । गौरी ॥

दीर्घाजसि च ६ । १ । १०५ ॥

दीर्घाजसि इचि च न पूर्वसवर्णदीर्घः । गौर्यौ ॥

यू ह्याख्यौ नदी १ । ४ । ३ ॥

इदृदन्तौ नित्यस्त्रीलिङ्गौ नदीसंज्ञौ ॥

अम्बार्थनद्योर्ह्रस्वः ७ । ३ । १०७ ॥

अम्बार्थाना नद्यन्ताना च ह्रस्वः संबुद्धौ । हे गौरि । गौर्याः ।
एवं नद्यादयः । श्रीः । श्रियौ ॥

नेयडुवड्स्थानावस्त्री १ । ४ । ४ ॥

इयडुवडोः स्थितिर्ययोस्तावीदृती नदीसंज्ञी न स्तः । स्त्रीशब्द-
स्तु स्यात् । हे श्रीः । श्रिये । श्रिये ॥

वामि १ । ४ । ५ ॥

इयडुवड्स्थानौ स्याख्यौ ईदृती आमि वा नदीसंज्ञी स्त्री तु नि-
त्यम् । श्रीणाम् । श्रियाम् । धेनुर्मतिवत् । भूः श्रीवत् । चम् ।
घम्वे । युत् । युद् । युधौ । युधः । शरत् । शरद् । शरदौ ॥

चोः कुः ८ । २ । ३० ॥

शलि पदान्ते च । वाक् । वाग् । वाचौ । सरित् । सरिद् ।
सरितौ । प्रावृद् । प्रावृद् । प्रावृषौ ॥

इति स्त्रीलिङ्गाः ॥ इति ११ अंशाः ।

स्त्रीवे ज्ञानं वारि मधु नाम ब्रह्म च दण्डि च ॥ जगत्तुदत्पचक्षुः
पय एकादशोदिताः ॥ १ ॥

अतोऽम् ७ । १ । २४ ॥

अतोऽङ्गात् स्त्रीवात्स्वमोरम् । ज्ञानम् ॥

नपुंसकाच्च १७ । १ । १९ ॥

स्त्रीवात् परस्य औडः शी । यस्येति लोपे प्राप्ते ॥

औडः श्यां प्रतिषेधः ॥

ज्ञाने ॥

जशशसोः शिः ७ । १ । २० ॥

स्त्रीवादनयोः शिः ॥

शि सर्वनामस्थानम् १ । १ । ४१ ॥

नपुंसकस्य झलचः ७ । १ । ७२ ॥

झलन्तस्याजन्तस्य च स्त्रीवस्य तुम् सर्वनामस्थाने । ज्ञानानि ।
पुनस्तद्वत् । शेषं रामवत् । एवं फलादयः ॥

प्रत्ययस्य लृक्-लुलुपः १ । १ । ६१ ॥

एतैः शब्दैः कृतं प्रत्ययादर्शनं क्रमादेतत्संज्ञम् ॥

स्वमोर्नपुंसकात् ७ । १ । २३ ॥

ह्रीवाद्ङात्स्वमोर्लृक् । वारि ॥

इकोऽचि विभक्तौ ७ । १ । १३ ॥

इगन्तस्य ह्रीवस्य नुम् अचि विभक्तौ । वारिणी ॥

वृद्धचौत्वतृज्वद्भावगुणेभ्यो नुम् पूर्वविप्रतिषेधेन ॥

वारीणि ॥

न लुमताङ्गस्य १ । १ । ६३ ॥

लृक्-लुलुप-शब्दैर्लृप्ते तन्निमित्तमङ्गकार्यं न तेन सम्बुद्धिनिमित्तौ गुणो न । हे वारि । अस्यानित्यत्वात्पक्षे गुणः । हे वारे । आजो ना । वारिणा ॥

नुमचिरतृज्वद्भावेभ्यो नुद् पूर्वविप्रतिषेधेन ॥

वारीणाम् । मधु । मधुनी । नाम । नाम्नी । नामानि ॥

सम्बुद्धौ नपुंसकानां नलोपो वा ॥

हे नाम । हे नामन् । ब्रह्म । ब्रह्मणी । ब्रह्माणि । हे ब्रह्मन् । हे ब्रह्म । दण्डि । दण्डिनी । दण्डिनि । जगत् । जगती । जगन्ति ॥

आच्छीनद्योर्नुम् ७ । १ । ८० ॥

अवर्णान्ताद्ङात्परो यः शतुरव्यवस्तदन्तस्याङ्गस्य नुम् वा शीनद्योः । हुदन्ती । हुदती । माती । मान्ती ॥

शप्रश्यनोर्नित्यम् ७ । १ । ८१ ॥

शप्रश्यनोरात्परो यः शतुरव्यवस्तदन्तस्याङ्गस्य नित्यं नुम् शीनद्योः । पचन्ती । दीव्यन्ती । ददत् । ददती ॥

वा नपुंसकस्य ७ । १ । ७९ ॥

अभ्यस्तात्परो यश्शता तदन्तस्य ह्रीवस्य नुम् वा सर्वनामस्थाने ददन्ति । ददति । अथ नुम्सङ्ग्रहपद्यम् । शतुरह्रीवमुटि शी

शीनयोरापि शप्श्यनः ॥ अन्यावर्णात्तयोर्वा नुम्नाभ्यस्तादेपु शी
तु वा ॥ १ ॥ धनुः । धनुर्षी ॥

नुम्विसर्जनीयज्ञव्यवायेऽपि ८ । ३ । ५८ ॥

एतैः प्रत्येकं व्यवधानेऽपि इणकुभ्यां परस्य सस्य पः । धनुषि ।
धनुर्भ्याम् । धनुःपु । धनुष्पु । एवं चतुर्दिविरादयः । पयः ।
पयांसि । पयोभ्याम् ॥

इति नपुंसकलिङ्गाः ॥ इति १२ अंशाः ॥

अथ सर्वादयस्त्रिलिङ्गाः ।

सर्वादीनि सर्वनामानि १ । १ । २७ ॥

सर्वादीनि शब्दरूपाणि सर्वनामसंज्ञानि । सर्व, विश्व, उभ, उ-
भय, इतर, इतम, अन्य, अन्यतर, इतर, त्वत्, त्व, नेम, सम,
सिम, पूर्वपरावरदक्षिणोत्तरापराधराणि व्यवस्थायामसंज्ञायाम् ।
स्वमज्ञातिधनाख्यायाम् । अन्तरं वहिर्योगोपसंव्यानयोः । त्यद्,
तद्, यद्, एतद्, इदम्, अदस्, एक, द्वि, युष्मद्, अस्मद्, मवत्,
किम् ॥ तत्र पुंसि ॥

जसः शी ७ । १ । १७ ॥

अदन्तात्सर्वनाम्नो जसः शी । सर्वे ॥

सर्वनाम्नः स्मै ७ । १ । १४ ॥

अतः सर्वनाम्नो डेः स्मै । सर्वस्मै ॥

ङसिङ्योः स्मात्स्मिन् ७ । १ । १५ ॥

अतः सर्वनाम्नः । सर्वस्मात् ॥

आमि सर्वनाम्नः सुद् ७ । १ । ५२ ॥

अवर्णान्तात्सर्वनाम्नो विहितस्यामः सुद् । सर्वेषाम् । सर्वस्मिन्
शेषे रामवत् । एवं विश्वादयः ॥ उभशब्दो नित्यं द्विवचनान्तः ।
उभौ उभौ इत्यादि । इतरइतमौ प्रत्ययौ । ततस्तदन्ता ग्राह्याः ॥

१ सर्वादीनी त्रिलिङ्गत्वाद्दृष्टव्याश्च सुप्तेन बोधाय त्रिलिङ्गीतः पृथङ्स्यासः ॥

पूर्वपरावरदक्षिणोत्तरापराधराणि व्यवस्थायामसंज्ञा-
याम् १ । १ । ३४ ॥

एतेषां व्यवस्थायामसंज्ञायां सर्वनामसंज्ञा गणपाठात्सर्वत्र या
प्राप्ता सा जसि वा । पूर्वं पूर्वाः । स्वाभिधेयापेक्षावधिनियमो व्य-
वस्था । दक्षिणाः गायकाः कुशला इत्यर्थः । संज्ञायान्तु उत्तराः
कुरवः ॥

पूर्वादिभ्यो नवभ्यो वा ७ । १ । १६ ॥

एभ्यो ङसिङचोः स्मात्स्मिनौ वा । पूर्वस्मात् पूर्वस्माद् ।
पूर्वात् पूर्वाद् । पूर्वस्मिन् । पूर्वं । एवं परादीनामपि शेषं सर्ववत् ॥

स्वमज्ञातिधनारुघायाम् १ । १ । ३५ ॥

ज्ञातिधनान्यवाचिनः स्वशब्दस्य प्राप्ता संज्ञा जसि वा । स्वे
स्वाः आत्मीया इत्यर्थः । आत्मान इति वा । अन्यत्र स्वाः ज्ञात-
योऽर्था वा ॥

अन्तरं बाहिर्योगोपसंव्यानयोः १ । १ । ३६ ॥

बाह्ये परिधानीये चार्थेऽन्तरशब्दस्य प्राप्ता संज्ञा जसि वा । अन्तरे
अन्तराः वा गृहाः शाटका वा । बाह्याः परिधानीया वा इत्यर्थः ॥

त्यदादीनामः ७ । २ । १०२ ॥

एषामकारोऽन्तादेशो विभक्तौ ॥

द्विपर्यन्तानामेवेष्टिः ॥

त्यदादेः संबोधनं नास्तीत्युत्सर्गः ॥

तदोः सः सावनन्त्ययोः ७ । २ । १०६ ॥

त्यदादीनां द्विपर्यन्तानां तदयोऽनन्त्ययोः सः सौ । स्यः ।
त्यौ । सः । तौ । ते । एषः । एतौ । एते ॥

इदमो मः ७ । २ । १०८ ॥

सौ । अत्वापवादः ॥

इदोऽय् पुंसि ७ । २ । १११ ॥

इदम इदः अय् सौ धुंति । अयम् ॥

दश्च ७ । २ । १०९ ॥

इदमो दस्य मः विभक्तौ । इमौ ॥

अनाप्यकः ७ । २ । ११२ ॥

अककारस्येदम इदोऽन् आपि विभक्तौ । अनेन ॥

इदमोऽन्वादेशोऽशनुदात्तस्तृतीयादौ २ । ४ । ३२ ॥

अन्वादेशविषयस्येदमोऽनुदात्तोऽश् आदेशस्तृतीयादौ । अश् साकच्कार्यः ॥

इति १३ अंशाः ॥

द्वितीयादौस्वेनः २ । ४ । ३४ ॥

द्वितीयायां टौसोश्च परतः इदमेतदोरेनादेशोऽन्वादेशे । किञ्चित्कार्यं विधातुमुपात्तस्य कार्यान्तरं विधातुं पुनरुपादानमन्वादेशः । यथाऽनेन व्याकरणमधीतम् एनञ्छन्दोऽध्यापयेति । अनयोः प-वित्रं कुलम् एनयोः प्रभूतं स्वम् । एनम् ॥

हलि लोपः ७ । २ । ११३ ॥

अककारस्य इदम इदो लोप आपि हलादौ विभक्तौ ॥

नानर्थकेऽलोन्त्यविधिरनभ्यासविकारे ❀ ॥

आद्यन्तवदेकस्मिन् १ । १ । २१ ॥

एकस्मिन् क्रियमाणं कार्यमादाविवान्त इव स्यात् । आभ्याम् ॥

नेदमदसोरकोः ७ । १ । ११ ॥

अककारयोरिदमदसोर्भिस ऐस न । एभिः । अस्मै । एभ्यः । अस्मात् । अनयोः । एपाम् । अस्मिन् । एपु ॥

अदस औ सुलोपश्च ७ । २ । १०७ ॥

अदस औकारोन्तादेशः सौ परे सुलोपश्च । असौ ॥

अदसोऽसेर्दादुदोमः ८ । २ । ८० ॥

असान्तस्यादसो दात्परस्य उदूतौ दस्य मश्च । ह्रस्वव्यञ्जनयो-
र्ह्रस्वो दीर्घस्य दीर्घः । अमू । जसः शी । गुणः ॥

एत ईद्वहुवचने ८ । २ । ८१ ॥

अदसो दादेत ईद्वस्य मश्च बहुथोक्तौ । अमी । पूर्वत्रासिद्धमिति
विभक्तिकार्यं प्राक् पश्चादुत्वमत्वे । अमुम् । अमू । अमूत् ॥

न मु ने ८ । २ । ३ ॥

नाभावे कर्त्तव्ये कृते च मुभावो नासिद्धः । घिसंज्ञा । अमुना ।
अमूभ्याम् । अमीभिः । अमुष्मै । अमुष्मात् । द्विशब्देो द्विवचना-
न्तः । द्वौ । द्वौ । द्वाभ्याम् । द्वयोः ॥

किमः कः ७ । २ । १०३ ॥

विभक्तौ । अकचसहितस्यापि कः । कौ ॥

अथ स्त्रियाम् ॥

टाप् । सर्वा । सर्वे ॥

सर्वनाम्नः स्याद्भ्रूस्वश्च ७ । ३ । ११४ ॥

आवन्तान्तात्सर्वनाम्नो ङितः स्याडापश्च ह्रस्वः । सर्वस्यै । सर्व-
स्याः । सर्वाप्ताम् । सर्वस्याम् ॥ शेषं रमावत् ॥ एवं विश्वादयः ॥
उभयी । उभय्यौ । स्या । त्ये । सा । ते । या । ये । एषा । एते ॥

यः सौ ७ । २ । ११० ॥

इदमो दस्य यः सौ । इयम् । इमे । इमाः । अनया । आभ्याम् ।
असौ । अमू । अमूः । अमुया । अमुष्यै । अमुष्याः । एका । एके ।
द्वे । द्वे । भवती । भवत्या । का । के । ह्रीवे । सर्वम् । सर्वे । सर्वा-
णि । पुनस्तद्वत् । शेषं पुंवत् । एवं विश्वादयः ॥

अद्भुतरादिभ्यः पञ्चभ्यः ७ । १ । २५ ॥

एभ्यः ह्रीवेभ्यः स्वमोर्द्द् आदेशः ॥

टेः ६ । ४ । १४३ ॥

डिति परे भस्य डेलोपः । डित्वसामर्थ्यात् अभस्यापि । कतरत्
कतरद् । कतरे । कतराणि । हे कतरत् । शेषं पुंवत् । एवं कतमत् ।
इतरत् । अन्यत् । अन्यतरत् । अन्यतमस्य तु अन्यतममित्येव ॥

एकतरात्प्रतिषेधः ॥ ❀ ॥

एकतरम् ॥

इति १४ अंशाः ॥

त्यद् । त्ये । त्यानि । तत् । यद् । एतद् । इदम् । इमे ।
इमानि ॥

अन्वादेशे नपुंसके एनद्वक्तव्यः ॥ ❀ ॥

एनद् । एने । एनानि । एनेन । एनयोः । अदः । अमू । अ-
मूनि । एकम् । एके । द्वे । द्वे । भवत् । भवती । भवन्ति । सोर्लुका
लुप्तत्वात्कादेशो न । किम् । के । कानि । अय युष्मदस्मदौ ॥

डेःप्रथमयोरम् ७ । १ । २८ ॥

युष्मदस्मद्भ्यां डे इत्यस्य प्रथमा द्वितीययोश्चाम् ॥

त्वाहौ सौ ७ । २ । ९४ ॥

अनयोर्मपर्यन्तस्य त्व अह इत्यादेशौ सौ ॥

शेषे लोपः ७ । २ । ९० ॥

आत्वयत्वनिमित्तेतरविभक्तावनयोरन्त्यलोपः । त्वम् । अहम् ॥

युवावौ द्विवचने ७ । २ । ९२ ॥

द्वयोरुक्तावनयोर्मपर्यन्तस्य युवावौ विभक्तौ ॥

प्रथमायाश्च द्विवचने भापायाम् ७ । २ । ८८ ॥

इहानयोराकारोऽन्तादेशः । युवाम् । आवाम् ॥

यूयवयौ जसि ७ । २ । ९३ ॥

मपर्यन्तस्य । यूयम् । वयम् ॥

त्वमावेकवचने ७ । २ । ९७ ॥

एकस्योक्तौ अनयोर्मपर्यन्तस्य त्वमौ विभक्तौ ॥

द्वितीयायाञ्च ७ । २ । ८७ ॥

अनयोः आकारः । त्वाम् । माम् । युवाम् । आवाम् ॥

शसो न ७ । १ । २९ ॥

आभ्यां परस्य शसो नकारः ॥

आदेः परस्य १ । १ । ५४ ॥

परस्य यद्विहितन्तत्तस्यादेः स्यात् । अलोन्त्यापवादः । इति शसोऽकारस्य नकारः । संयोगान्तस्य लोपः । युष्मात् । अस्मात् ॥

योऽचि ७ । २ । ८९ ॥

अनयोर्यकारादेशोऽजादौ विभक्तौ । त्वया । मया ॥

युष्मदस्मदोरनादेशे ७ । २ । ८६ ॥

अनयोः आकारादेशे हलादौ विभक्तौ । युवाभ्याम् । आवाभ्याम् । युष्माभिः । अस्माभिः ॥

तुभ्यमहौ ङयि ७ । २ । ९५ ॥

अनयोर्मपर्यन्तस्य तुभ्यमहौ ङयि । शेषे लोपः । तुभ्यम् । मह्यम् । युवाभ्याम् । आवाभ्याम् ॥

भ्यसो भ्यम् ७ । १ । ३० ॥

आभ्यां भ्यसो भ्यम् अभ्यम् वाऽऽदेशः । युष्मभ्यम् । अस्मभ्यम् ॥

एकवचनस्य च ७ । १ । ३२ ॥

आभ्यां ङसेः अत् । त्वत् । मत् । युवाभ्याम् । आवाभ्याम् ॥

पञ्चम्या अत् ७ । १ । ३१ ॥

आभ्यां पञ्चम्या भ्यसोऽत् । युष्मत् । अस्मत् ॥

युष्मदस्मद्भ्यां ङसोऽञ् ७ । १ । २७ ॥

तवममौ ङसि ७ । २ । ९६ ॥

अनयोर्मपर्यन्तस्य तवममौ ङसि । तव । मम । युवयोः । आव-
योः । त्वयि । मयि । युवयोः । आवयोः ॥

साम आकम् ७ । १ । ३३ ॥

आभ्यां परस्य आम आकं स्यात् । सुट तु न स्यात् । युष्माकम् ।
अस्माकम् । त्वयि । मयि । युवयोः । आवयोः । युष्मासु ।
अस्मासु ॥

इति १५ अंशः ।

युष्मदस्मदोः पष्ठीचतुर्थीद्वितीयास्थयोर्वात्रावौ ८ । १ । २०
पदात्परयोः पादादादी स्थितयोः पष्ठ्यादिविशिष्टयोस्तयोर्वात्रावौ
तौ चानुदात्तौ ॥

बहुवचनस्य वस्नसौ ८ । १ । २१ ॥

उक्तविधयोस्तयोः पष्ठ्यादिवबहुवचनान्तयोर्वस्नसौ । वात्रावोर-
पवादः ॥

तेमयावेकवचनस्य ८ । १ । २२ ॥

उक्तविधयोस्तयोष्पष्ठीचतुर्थ्यैकवचनान्तयोस्ते मे ॥

त्वमौ द्वितीयायाः ८ । १ । २३ ॥

उक्तविधयोस्तयोर्द्वितीयैकवचनान्तयोस्त्वा मा । श्रीशस्त्वावतु
मापीह दत्तात्ते मेऽपि शर्म सः ॥ स्वामी ते मेऽपि स हरिः पातु
वामपि नौ विभुः ॥ १ ॥ सुखं वान्नी ददात्वीशः पतिर्वामपि नौ
हरिः ॥ सोऽव्याद्धो नः सुखं वो नो देवात्सेव्योऽन्न वः स नः ॥ २ ॥
नेह त्वाम्पातु । वेदैरशेषैः संवेद्योऽस्मान् कृष्णः सर्वदाऽवतु । एते
आदेशा अनन्वादेशे वा । अन्वादेशे नित्यम् । धाता ते भक्तोऽस्ति
तव वा । तस्मै ते नम इत्येव । विभक्तिसत्त्वे एव नेह इति युष्म-
त्पुत्रो ब्रवीति ॥ इति सर्वादयः ॥

१ अत्र साम इति भाविनः सुटो निवृत्त्यर्थं समुदादिदेश इति व्याख्यानार ।
सदेव स्पष्टमुक्तं सुट तु न स्यादिति ।

स्वरादिनिपातमव्ययम् १ । १ । ३७ ॥

स्वरादयो निपाताश्चाव्ययसंज्ञाः । स्वर अन्तरं प्रातरं पुनरं
इत्यादयोऽग्रे बोध्याः ॥

अव्ययादाप्सुपः २ । ४ । ८२ ॥

अव्ययाद्दिहितस्यापः सुपश्च लुक् । स्वः । अन्तः । चादयोऽन्त-
त्वे । च वा ह अह एव इत्यादयोऽपि अग्रे बोध्याः ॥

प्रादयः १ । ४ । ५८ ॥

अद्रव्यार्थाः प्रादयो निपातसंज्ञाः । प्र परा अप सम अनु अव
निम् निर् दुम् दुर वि आइ नि अधि अपि अति सु उद् अभि
प्रति परि उप एते प्रादयः ॥

उपसर्गाः क्रियायोगे १ । ४ । ५९ ॥

गतिश्च १ । ४ । ६० ॥

प्रादयः क्रियायोगे उपसर्गसंज्ञा गतिसंज्ञाश्च स्युः ॥

तद्धितश्चासर्वविभक्तिः १ । १ । ३९ ॥

यस्मात् सर्वा विभक्तिर्नोत्पद्यते स तद्धितान्तोऽव्ययसंज्ञः ।
सर्वतः । सर्वत्र । तत्र शालायाम् । परिगणनं करिष्यते ॥

कृन्मेजन्तः १ । १ । ३९ ॥

कृद्यो मान्त एजन्तश्च एतदन्तमव्ययम् । स्मारम् । स्मारम् ।
जीवसे । पिवध्वै ॥

त्त्वातोसुन्कसुनः १ । १ । ४० ॥

एतदन्तमव्ययम् । कृत्वा । प्रणम्य । उदैतोः । विसृपः इत्यादि ॥

अव्ययीभावश्च १ । १ । ४१ ॥

अधिहरि । अव्ययानां लिङ्गकारकसंख्याभावादकैरूप्यम् ।
वापि भागुरिरहोपमवाप्योरुपसर्गयोः ॥ आपश्चैव इलन्त्वानां यथा
वाचा निशा दिशा । अवगाहः । वगाहः । अपिधानम् । पिधानम् ॥

इत्यव्ययानि । इति १६ अंशाः ।

अथाख्यातम्

तत्र धातुभ्यो लकाराः धातवस्तु द्विविधाः । अकर्मकाः सकर्म-
काश्च । तत्राद्या यथा । सत्तायामुदये स्नेहे मोहस्नानविशुद्धिषु ।
शयनासनलज्जासु जीवने मरणे क्रुधि ॥ १ ॥ त्वरायां क्रीडने नृत्ये
रोदनस्थितिदीप्तिषु ॥ भये स्यन्दे च सन्देहे स्वेदस्पर्द्धाक्षयेष्वपि
॥ २ ॥ मदोद्वेगप्रकम्पेषु व्यथाजागरवृद्धिषु ॥ जरायां स्वदनोत्प-
त्योर्मूर्च्छने हृदने तथा ॥ ३ ॥ विकासे मीलने हासे नाशस्फूर्तिस-
मृद्धिषु । तोषे दोषे विरागे च विपादोन्मादसिद्धिषु ॥४॥ प्रभातोद्धी-
तिदम्भेषु शुक्लिमादिगुणेषु च ॥ ध्वाने क्लेब्ये दरिद्रत्वे ग्लानिगर्वश्रमे-
ष्वपि ॥५॥ क्षोभप्रस्रवणाद्यर्थे धातवः स्युरकर्मकाः ॥ अन्ये सकर्मकाः
शेषो विषयोऽग्रेऽभिधास्यते ॥६॥ भू सत्तायाम् लकारास्तु लट् लिट् लुट्
लृट् लोट् लोङ् लङ् लिङ् लुङ् लृङ् इति दश एषु लेट् छन्दस्येव ॥

लः कर्मणि च भावे चाकर्मकेभ्यः ३ । ४ । ६९ ॥

लकाराः सकर्मकेभ्यः कर्मकर्त्रोरकर्मकेभ्यो भावकर्त्रोः स्युः ॥

वर्तमाने लट् ३ । २ । १२३ ॥

वर्तमानक्रियावृत्तेर्धातोर्लट् । अटावितौ । उच्चारणसामर्थ्याल्ल-
स्य न इत्त्वम् । कर्तृविवक्षायां भू ल इति स्थिते ॥

तिप्तस्त्रिंशसिप्यस्थमिष्वस्मस्रतातांशथासाथांध्व-
मिड्वहिमहिङ् ३ । ४ । ७८ ॥

एतेऽष्टादश लस्यादेशाः ॥

लः परस्मैपदम् १ । ४ । ९९ ॥

लादेशा एतत्संज्ञाः ।

तङानावात्मनेपदम् १ । ४ । १०० ॥

तद्भ्रशानच्कानचौ चैतत्संज्ञाः ॥ पूर्वसंज्ञापवादः ।

१ यद्यपि लकाराणामय क्रमः पाणिनिना न प्रोक्तः नापि प्रक्रियानुगुणः किन्तु
बालानां मुखेन बोधाय. लट् लृट् लोट् लिङ् लृङ् लृट् लृङ् लृङ् लिङ् इति क्रमो
योग्यस्तथापी टिट् डिट् लकारभेदमात्रफलकोषं क्रमः प्राचामनुरोधादाहत् ।

अनुदात्तङित आत्मनेपदम् १ । ३ । १२ ॥

अनुदात्ते उपदेशे यो ङित्तदन्ताच्च धातोर्लस्यात्मनेपदम् ॥

स्वरितभित्तः कर्त्रभिप्राये क्रियाफले १ । ३ । ७२ ॥

स्वरितैतो जितश्च धातोर्लस्य आत्मनेपदम् कर्तृगामिनि क्रियाफले ॥

शेषात्कर्त्तरि परस्मैपदम् १ । ३ । ७८ ॥

आत्मनेपदानेमिच्छीनाद्धातोः कर्त्तरि परस्मैपदम् ॥

तिङ्स्त्रीणि त्रीणि प्रथममध्यमोत्तमाः १ । ४ । १०१ ॥

तिङ उभयोः पदयोस्त्रयस्त्रिकाः क्रमादेतत्संज्ञाः ॥

तान्येकवचनद्विवचनत्रहुवचनान्येकशः १ । ४ । १०२ ॥

लब्धप्रथमादिसंज्ञानि तिङ्स्त्रीणि त्रीणि क्रमादेतत्संज्ञानि ॥

युष्मद्युपपदे समानाधिकरणे स्थानिन्यपि मध्यमः

१ । ४ । १०६ ॥

तिङ्वाच्यकारकवाचिनि युष्मदि प्रयुज्यमानेऽप्रयुज्यमाने च मध्यमः ॥

अस्मद्युत्तमः १ । ४ । १०७ ॥

तथाभूते अस्मादे उत्तमः ॥

शेषे प्रथमः १ । ४ । १०८ ॥

मध्यमोत्तमयोरविषये प्रथमः ॥

इति १७ अंशाः ॥

भू ति इति स्थिते ॥

तिङ्शित्सार्वधातुकम् ३ । ४ । ११३ ॥

तिङः शितश्च धात्वाधिकारोक्ता एतत्संज्ञाः ॥

आर्द्धधातुकं शेषः ३ । ४ । ११४ ॥

तिङ्शित्शित्म्योऽभ्यो धातोरिति विहित एतत्संज्ञः ॥

लिट् च ३ । ४ । ११५ ॥

लिङादेशस्तिङार्द्धधातुकसंज्ञ एव स्यात् ॥

लिङाशिपि ३ । ४ । ११६ ॥

आशिपि लिङस्तिङार्द्धधातुकसंज्ञ एव ॥

कर्त्तरि शप् ३ । १ । ६८ ॥

कर्त्रर्थे सार्वधातुके परे धातोः शप् । शपावितौ ॥

सार्वधातुकार्द्धधातुकयोः ७ । ३ । ८४ ॥

अनयोः परयोः इगन्ताङ्गस्य गुणः । भवति । भवतः ॥

झोऽन्तः ७ । १ । ३ ॥

प्रत्ययावयवस्य झस्यान्तादेशः । भवन्ति । भवसि । भवथः । भवथ ॥

अतो दीर्घो यञि ७ । ३ । १०१ ॥

अतोऽङ्गस्य दीर्घो यजादौ सार्वधातुके । भवामि । भवावः । भवामः । सः भवति । तौ भवतः । ते भवन्ति । त्वं भवसि इत्यादि योज्यम् ॥

परोक्षे लिट् ३ । २ । ११५ ॥

भूतानद्यतनपरोक्षार्थवृत्तेर्धातोर्लिट् । लस्य तिवादयः ॥

परस्मैपदानां णलतुसुस्थलथुसणल्वमाः ३ । ४ । ८२ ॥

लिट्स्तिङादीनां क्रमाण्णलादयो नव स्यु ॥

भुवो बुक् लुङ्लिटोः ६ । ४ । ८८ ॥

भुवो बुक् लुङ्लिटोराचि । गुणवृद्धचोर्वाधकः ॥

लिटि धातोरनभ्यासस्य ६ । १ । ८ ॥

लिटि परे अनभ्यासधात्ववयवस्यैकाचः प्रथमस्य द्वे स्तः आदिभूतादचः परस्य तु द्वितीयस्य । भूव् भूव् अ इति स्थिते ॥

पूर्वोऽभ्यासः ६ । १ । ४ ॥

षाष्ठद्वित्वप्रकरणे ये द्वे विहिते तयोः पूर्वोऽभ्याससंज्ञः ॥

हलादिः शेषः ७ । ४ । ६० ॥

अभ्यासस्यादिर्हल् शिष्यते । अन्ये हलो लुप्यन्ते । इति बलोपः ॥

ह्रस्वः ७ । ४ । ५९ ॥

अभ्यासस्याचो ह्रस्वः ॥

भवतेरः ७ । ४ । ७३ ॥

भवतेरभ्यासोकारस्य अः स्याल्लिटि ॥

अभ्यासे चर्च ८ । ४ । ५४ ॥

अभ्यासे झलाञ्चरः स्युर्जशश्च झशा जशः खयाञ्चरः । तत्रापि प्रकृतिजशा प्रकृतिजशः प्रकृतिचरा प्रकृतिचरः ॥

असिद्धवदत्राभात् ६ । ४ । २२ ॥

इत उर्द्धमापादसमाप्तेराभीयम् । समानाश्रये तस्मिन् कर्तव्ये तदसिद्धम् । इति चुकोऽसिद्धत्वादुवडि प्राप्ते ॥

बुग्बुटाबुवड्यणोः सिद्धौ वक्तव्यौ ॥ ❀ ॥

बभूव । बभूवतुः । बभूवुः ॥

आर्द्धधातुकस्येड् वलादेः ७ । २ । ३५ ॥

वलादेरार्द्धधातुकस्येडागमः । बभूविथ । बभूवथुः । बभूव । बभूव । बभूविथ । बभूविम ॥

इति १८ अंशाः ॥

अनद्यतने लुट् ३ । ३ । १५ ॥

भविष्यति अनद्यतने धातोरुर्द्ध ॥

स्यतासी लृलुटोः ३ । १ । ३३ ॥

धातोः स्यतासी एतो स्तः लृलुटोः परतः । शवाद्यपवादः । इद् ॥

लुटः प्रथमस्य डारौरसः २ । ४ । ८५ ॥

अस्य डारौरस् एते ऋमात्स्युः । डेलोपः ॥

ह्रस्वं लघु १ । ४ । १० ॥

पुगन्तलघूपधस्य च ७ । ३ । ८६ ॥

पुगन्तस्य लघूपधस्य च अङ्गस्वेको गुणः सार्वधातुकार्द्धधातु-
कयोः । भवित् आ अत्रेको गुणे प्राप्ते ॥

दीधीवेवीटाम् १ । १ । ६ ॥

दीधीवेव्योरिट्श्च गुणवृद्धी न । भविता ॥

तासस्त्योर्लोपः ७ । ४ । ५० ॥

तासेरस्तेश्च लोपः सादौ प्रत्यये ॥

रि च ७ । ४ । ५१ ॥

रादौ प्रत्यये प्राग्वत् । भवितारौ । भवितारः । भवितासि ।
भवितास्यः । भवितास्य । भवितास्मि । भवितास्वः । भवितास्मः ॥

लृट् शेषे च ३ । ३ । १३ ॥

भविष्यदर्थ्याद् धातोर्लृट् । भविष्यति । भविष्यतः । भविष्य-
न्ति । भविष्यसि । भविष्यथः । भविष्यथ । भविष्यामि ।
भविष्यावः । भविष्यामः ॥

लोट् च ३ । ३ । १६२ ॥

विध्यादिष्वर्थेषु ॥

आशिपि लिङ्गलोटौ ३ । ३ । १७३ ॥

एरुः ३ । ४ । ८६ ॥

लोट इकारस्य उः । भवतु ॥

तुह्योस्तातङ्गाशिष्यन्यतरस्याम् ७ । १ । ३५ ॥

आशिपि तुह्योस्तातङ्ग वा परत्वात्सर्वादेशः । भवतात् ॥

लोटो लङ्घत् ३ । ४ । ८५ ॥

लोटो लङ् इव कार्यन्तेन तामादयः सलोपश्च ॥

तस्थस्थमिपान्तान्तन्तामः ३ । ४ । १०१ ॥

डितो लस्य तसादिचतुर्णां तामादयः ॥

नित्यङितः ३ । ४ । ९९ ॥

सकारान्तस्य ङिदुत्तमस्य नित्यं लोपः । अलौङ्ग्यस्य । भव-
ताम् । भवन्तु ॥

सेर्ह्यपिच्च ३ । ४ । ८७ ॥

लोटः सेर्हिः सोऽपिच्च ॥

अतो हेः ६ । ४ । १०५ ॥

अतः परस्य हेर्लृक् भव । भवतात् । भवतम् । भवत ॥

मेर्निः ३ । ४ । ८९ ॥

लोटो मेर्निः ॥

आङुत्तमस्य पिच्च ३ । ४ । ९२ ॥

लोट उत्तमस्य आङ् स पिच्च । भवानि । भवाव । भवाम ॥

अनद्यतने लङ् ३ । २ । १११ ॥

अनद्यतनभूतार्थवृत्तेर्धातोर्लङ् ॥

लुङ्लृङ्लृङ्क्ष्वडुदात्तः ६ । ४ । ७१ ॥

एषु परेष्वङ्गस्याद् स चोदात्तः ॥

इतश्च ३ । ४ । १०० ॥

ङितो लस्य परस्मैपदमिदन्तं यत्तस्य लोपः । अभवत् । अभ-
वताम् । अभवन् । अभवः । अभवतम् । अभवत । अभवम् । अभ-
वाव । अभवाम ॥

इति १९ अंशाः ।

विधिनिमन्त्रणामन्त्रणाधीष्टसंप्रश्नप्रार्थनेषु लिङ् ३ ।

३ । १६१ ॥

एष्वर्येषु योत्येषु वाच्येषु वा लिङ् ॥

यासुद् परस्मैपदेपूदात्तो ङिच्च ३ । ४ । १०३ ॥

लिङः परस्मैपदानां यासुद् स चोदात्तो ङिच्च ॥

सुदतियोः ३ । ४ । १०७ ॥

लिङस्तथयोः सुद् ॥

लिङः सलोपोऽनन्त्यस्य ७ । २ । ७९ ॥

सार्वधातुकलिङोऽनन्त्यस्य सस्य लोपः । इति सुदो लोपः ।
यासुदः सस्यापि लोपे प्राप्ते ॥

अतो येयः ७ । २ । ८० ॥

अतः परस्य सार्वधातुकलिङो यास इय् ॥

लोपो व्योर्वालि ६ । १ । ६६ ॥

वकारयकारयोर्लोपो वलि । भवेत् । भवेताम् ॥

झेर्जुस् ३ । ४ । १०८ ॥

लिङो ज्ञेर्जुस् । भवेयुः । भवेः । भवेतम् । भवेत । भवेयम् ।
भवेव । भवेम ॥

किदाशिपि ३ । ४ । १०४ ॥

आशिपि लिङो यासुद् कित् ॥

स्कोस्संयोगाद्योरन्ते च ८ । २ । २९ ॥

पदान्ते झलि परे च यः संयोगस्तदाद्योः सकारककारयोर्लोप
इति सलोपः ॥

कृति च १ । १ । ५ ॥

गित्कित्किङिन्निमित्ते इगूलक्षणे गुणवृद्धी न स्तः । भूयात् ।
भूयास्ताम् । भूयासुः । भूयाः । भूयास्तम् । भूयास्त । भूयासम् ।
भूयास्व । भूयास्म ॥

लुङ् ३ । २ । ११० ॥

भूतार्थवृत्तेर्धातोर्लुङ् ॥

माङि लुङ् ३ । ३ । १७५ ॥

सर्वलकारापवादः ॥

स्मोत्तरे लुङ् च ३ । ३ । १७६ ॥

स्मोत्तरे माडि लड् लुड् च ॥

च्चि लुडि ३ । १ । ४३ ॥

शवाद्यपवादः ॥

च्लेः सिच् ३ । १ । ४४ ॥

इचावितौ ॥

गातिस्थाघुपाभूभ्यः सिचः परस्मैपदेषु २ । ४ । ७७ ॥

इणादेशगातेः स्थाघुपिवतिभूभ्यश्च सिचो लुक् परस्मैपदे ॥

भूसुवोस्तिडि ७ । ३ । ८८ ॥

भूसू एतयोः सार्वधातुके तिडि गुणो न ॥

अस्तिसिचोऽपृक्ते ७ । ३ । ९६ ॥

विद्यमानात्सिचोऽस्तेश्चापृक्तहल ईत् सिचो लुप्तत्वान्नेट् । अभूत् ।

अभूताम् ॥

सिजभ्यस्तविदिभ्यश्च ३ । ४ । १०९ ॥

सिचोऽभ्यस्ताद्विदेश्च परस्य डितो ज्ञेर्जुस् । इति प्राप्ते ॥

आतः ३ । ४ । ११० ॥

सिजलुक्यादन्तादेव ज्ञेर्जुस् । अभूवन् । अभूः । अभूतम् ।

अभूत । अभूवम् । अभूव । अभूम ॥

न माङ्योगे ६ । ४ । ७४ ॥

अडादौ न । मा भवान् भूत् । मा स्म भवत् भूद्वा ॥

लिङ्निमित्ते लृड् क्रियातिपत्तौ ३ । ३ । १३९ ॥

हेतुहेतुमद्भावादि लिङ्निमित्तं तत्र भविष्यत्यर्थे लृड् स्यात्

क्रियाया अनिष्पत्तौ । अभविष्यत् । अभविष्यताम् । अभविष्यन् ।

अभविष्यः । अभविष्यतम् । अभविष्यत । अभविष्यम् । अभ-

विष्याव । अभविष्याम् ॥

इति २० अंशाः । इति प्रथमाध्यायस्य द्वितीयः पादः ।

भू प्राप्तावात्मनेपदी ॥

दित् आत्मनेपदानां टेरे ३ । ४ । ७९ ॥

दितो लस्यात्मनेपदाना टेरेत्वं स्यात् । भवते ॥

सार्वधातुकमपित् १ । २ । ४ ॥

अपित् सार्वधातुकं डिट् ॥

आतो डित् ७ । २ । ८१ ॥

अतः परस्य डितामात इय् ॥

थासस्से ३ । ४ । ८० ॥

दितो लस्य थासः से । भवेते । भवन्ते । भवसे । भवेथे ।

भवध्वे । अतो गुणे भवे । भवावहे । भवामहे ॥

लिट्स्तझयोरेशिरेच् ३ । ४ । ८१ ॥

लिडादेशयोस्तझयोरेशिरेच् एतो स्तः ॥

इणः पीध्वंलुङ्लिटां धोऽङ्गात् ८ । ३ । ७८ ॥

इणन्तादङ्गात्परेषामेपा धस्य मूर्धन्यः ॥

विभापेटः ८ । ३ । ७९ ॥

इणः परस्मादितः परेषामेपा धस्य वा मूर्धन्यः । वभूवे । वभू-
वाते । वभूविरे । वभूविषे । वभूवाथे । वभूविद्धे । वभूविध्वे ।

वभूवे । वभूविवहे वभूविमहे ॥

धि च ८ । २ । २५ ॥

धादौ प्रत्यये सलोपः ॥

ह एति ७ । ४ । ५२ ॥

तासस्त्योः सस्य ह एति परे । भविता । भवितारौ । भवि-
तारः । भवितासे । भवितासाये । भविताध्वे । भविताहे । भविता

स्वहे । भवितास्महे । भविष्यते । भविष्येते । भविष्यन्ते । भविष्यसे ।
भविष्येथे । भविष्यध्वे । भविष्ये । भविष्यावहे । भविष्यामहे ॥

आमेतः ३ । ४ । ९० ॥

लोट एकारस्याम् ॥

सवाभ्यां वामौ ३ । ४ । ९१ ॥

सवाभ्यां परस्य लोट एतः क्रमात् व अम् एतौ स्तः ॥

एत ऐ ३ । ४ । ९३ ॥

लोडुत्तमस्य एत ऐ । भवताम् । भवेताम् । भवन्ताम् । भवस्व ।
भवेयाम् । भवध्वम् । भवै । भवावहै । भवामहै । अभवत ।
अभवेताम् । अभवन्त । अभवथाः । अभवेयाम् । अभवध्वम् ।
अभवे । अभवावहि । अभवामहि ॥

लिङः सीयुट् ३ । ४ । १०२ ॥

ज्ञस्य रन् ३ । ४ । १०५ ॥

लिङो ज्ञस्य रन् ॥

इटोऽत् ३ । ४ । १०६ ॥

लिङादेशस्येटोऽत् । भवेत् । भवेयाताम् । भवेरन् । भवेथाः ।
भवेयाथाम् । भवेध्वम् । भवेय । भवेवहि । भवेमहि । भविपीष्ट ।
भविपीयास्ताम् । भविपीरन् । भविपीष्ठाः । भविपीयास्थाम् ।
भविपीड्मम् । भविपीध्वम् । भविपीय । भविपीवहि । भविपीमहि ॥

आत्मनेपदेष्वनतः ७ । १ । ५ ॥

अनकारात्परस्य आत्मनेपदेषु ज्ञस्यात् । अभविष्ट । अभवि-
पाताम् । अभविपत । अभविष्ठाः । अभविपाथाम् । अभवि-
ड्मम् । अभविध्वम् । अभविपि । अभविष्वहि । अभविष्महि ।
अभविष्यत । अभविष्येताम् । अभविष्यंत । अभविष्यथाः ।
अभविष्येथाम् । अभविष्यध्वम् । अभविष्ये अभविष्यावहि ।
अभविष्यमहि ।

ते प्राग्धातोः १ । ४ । ८० ॥

ते गत्युपसर्गसंज्ञका धातोः प्राक् प्रयोज्याः । प्रभवतीत्यादि ॥

इति २१ अंशाः ।

रक्ष पालने । रक्षति । ररक्ष । रक्षिता । रक्षिष्यति । रक्षतु ।
अरक्षत् । रक्षेत् । रक्ष्यात् । अस्तिसिच इति ईद ॥

वद्व्रजहलन्तस्याचः ७ । २ । ३ ॥

वदेव्रजेर्हलन्तस्य चाङ्गस्याचो वृद्धिः सिचि परस्मैपदेषु । इति
प्राप्ते ॥

नेटि ७ । २ । ४ ॥

इडादौ सिचि उक्तन्न ॥

इट ईटि ॥ ८ । २ । २८ ॥

इटः परस्य सस्य लोप ईटि ॥

सिज्जलोप एकादेशे सिद्धो वाच्यः ❀ ॥

अरक्षीत् । अरक्षिष्टाम् । सिज्जभ्यस्तेति क्षेर्जुम् । अरक्षिपुः ।
अरक्षीः । अरक्षिष्टम् । अरक्षिष्ट । अरक्षिपम् । अरक्षिष्व । अरक्षिष्म ।
अरक्षिष्यत् । चर्च अदने । जल्प व्यक्तायां वाचि । पस्ज गतौ ॥

धात्वादेः पः सः ६ । १ । ६४ ॥

सज्जति । अयमात्मनेपद्यपि । सज्जते । गर्ज शब्दे ॥

कुहोश्चुः ७ । ४ । ६२ ॥

अभ्यासस्य कवर्गहकारयोश्चवर्गः । जगर्ज । मन्य विलोडने ॥

अनिदितां हल उपधायाः झिति ६ । ४ । २४ ॥

हलन्तानामनिदितामङ्गानामुपधाया नस्य लोपः किति डिति
च । मथ्यात् । मथ्यास्ताम् । खाह भक्षणे । चखाद् । जीव प्राणधा-
रणे । जिजीव । बुक् भरणे । फुल विकसने । टुओस्फुर्जा वज्र-
निघोषे ॥

आदिर्भिडुडवः १ । ३ । ५ ॥

उपदेशे धातोरद्या एते इतः ॥

उपधायां च ८ । २ । ७८ ॥

धातोरुपधाभूतयो रेफवकारयोर्हलपरयोः परत इको दीर्घः ॥

शर्पूर्वाः खयः ७ । ४ । ६१ ॥

अभ्यासस्य शर्पूर्वाः खयः शिष्यन्तेऽन्ये हलो लुप्यन्ते । हलादि-
रित्यस्यापवादः । स्फूर्जति । पुस्फूर्ज । मुच्छा मोहसमुच्छाययोः ।
मृच्छति । कूज अव्यक्ते शब्दे । खेल चलने ॥

एच इग्घ्रस्वादेशे १ । १ । ४८ ॥

आदिश्यमानेषु ह्रस्वेषु एच इगेव स्यात् । चिखेल । दुनदि
समृद्धौ ॥

इदितो नुम् धातोः ७ । १ । ५८ ॥

नन्दति । इदित्वान्नलोपो न । नन्द्यात् । रगि रहि लगि गती ।
क्रदि आह्वाने रोदने च । खाजि गतिवैकल्ये । णिदि कुत्सायाम् ॥

णो नः ६ । १ । ६५ ॥

धात्वादेः । निंदति । वृहि वृद्धौ शब्दे च ॥

उरत् ७ । ४ । ६६ ॥

अभ्यास ऋकारस्य अत् प्रत्यये । रपरत्वम् । हलादिः शेषः ।
वृंह । एन शब्दे । स्तनति ॥

अत उपधायाः ७ । २ । ११६ ॥

उपधाया अतो वृद्धिर्जिति णिति च प्रत्यये ॥

णलुत्तमो वा ७ । १ । ९१ ॥

उत्तमो णल् वा णित् । तस्तान् । तस्तनतुः । तस्तान् । तस्तन ॥

अतो हलादेर्लघोः ७ । २ । ७ ॥

हलादेर्लघोर्कारस्य वा वृद्धिरिडादां सिचि परस्मैपदे । अस्ता-
नीत् । अस्तनीत् ॥

इति २२ अंशाः ।

गद् व्यक्तायां वाचि । व्रज गर्ता । व्रजेः पृथग्ग्रहणात् । नित्यं
वृद्धेः । अव्राजीत् । शल आशुगमने ॥

अतो लान्तस्य ७ । २ । २ ॥

अत्समीपौ यौ ल्रौ तदन्तस्याङ्गस्यातो वृद्धिः परस्मैपदे सिचि
 णि अतो हलादेरनयोरपवादः । अश्वालीत् । स्वल संचलने । गल
 श्रदने दल विशरणे । ददाल ॥

असंयोगालिट् कित् १ । २ । ५ ॥

असंयोगात्परोऽपिलिट् कित् ॥

अत एकहल्मध्येऽनादेशादेर्लिटि ६ । ४ । १२० ॥

लिङ्निमित्तादेशादिकं न भवति यदङ्गन्तदवयवस्यासंयुक्तहल्-
 मध्यस्थस्यात एत्वमभ्यासलोपश्च किति लिटि ॥

थलि च सेटि ६ । ४ । १२१ ॥

प्रागुक्तम् । आदेशश्चेह वैरूप्यकृदेव गृह्यते । तेन दहचरादौ
 प्रकृतिजश्चरांतेषु सत्स्वपि एत्वादि स्यादेव । देलतुः । देलिथ ।
 अदालीत् । मह पूजायाम् ॥

ह्यन्तक्षणश्वसजागृणिश्च्येदिताम् ७ । २ । ५ ॥

हमयान्तस्य क्षणादेर्ष्यन्तस्य श्वयतेरोदितश्च वृद्धिर्नेडादौ पर-
 स्मैपदे सिचि । अमहीत् । हसे हसने अहसीत् । चिती संज्ञाने ।
 पुगन्तेति गुणः । चेतति । चिचेत् ॥ कृिति चेति गुणनिषेधः ।
 चिचिततुः । चित्यात् । अचेतीत् । जिमु अदने । शुच शोके ।
 वृषु सेचनहिंसासंश्लेशनेषु । वर्षति । उरत् । वर्ष ॥

ऋदुपधेभ्यो लिटः कित्वं गुणात् पूर्वविप्रतिषेधेन ❀ ॥

ववृपतुः । घुपिर् विशब्दने ॥

इर इत्संज्ञा वाच्या ❀ ॥

इरितो वा ३ । १ । ५७ ॥

इरितो धातोः च्लेरड् वा परस्मैपदे । अघुपत् । अघोपीत् ।
 च्युतिर् आसेचने श्र्युतिर् श्रुतिर् क्षरणे । अट गतौ ॥

अत आदेः ७ । ४ । ७० ॥

अभ्यासस्यादेरतो दीर्घः । पररूपापवादः । आट ॥

। आडजादीनाम् ६ । ४ । ७२ ॥

लुङादौ । आटश्च । आटत् । आटीत् । मा भवानटीत् । अत
सातत्यगमने । अर्च पूजायाम् ॥

तस्मान्नुद् द्विहलः ७ । ४ । ७१ ॥

अनेकहलो धातोर्दीर्घाभूताकारात्परस्य नुद् । आनर्च । आर्चत् ।
अर्ज अर्जने । अर्द गतौ याचने च ॥

इति २३ अंशाः ।

ईर्ष्य ईर्ष्यायाम् ॥

संयोगे गुरु १ । ४ । ११ ॥

संयोगे, परे ह्रस्वं गुरुसंज्ञम् ॥

दीर्घं च १ । ४ । १२ ॥

गुरुसंज्ञम् ॥

इजादेश्च गुरुमतोऽनृच्छः ३ । १ । ३६ ॥

। इजादिर्यो गुरुमान् ऋच्छत्यन्यस्तत आम् लिटि ॥

। आमः २ । ४ । ८१ ॥

आमः परस्य लुक् । लिङादेशापवादत्वाद्भावस्थायामेव लुक् ॥

कृदतिङ् ३ । १ । ९३ ॥

सन्निहिते धात्वाधिकारे तिङ्भिन्नः प्रत्ययः कृतसंज्ञः । इति
लिटः कृत्वात् कृत्तद्धितेति प्रातिपदिकत्वे सुबुत्पत्तिः कृन्मेजन्त
इत्यामन्तस्याव्ययत्वात् सुपो लुक् ॥

कृञ्चानुप्रयुज्यते लिटि ३ । १ । ४० ॥

आमन्तालिदपराः कृम्बस्तयोऽनुप्रयुज्यन्ते ॥

अचो ङिति ७ । २ । ११५ ॥

ङिति ङिति च परेऽजन्ताङ्गस्य वृद्धिः । ईर्ष्याश्चकार । द्वित्वा-
त्परत्वाद्यणि प्राप्ते ॥

द्विर्वचनेऽचि १ । १ । ५९ ॥

द्वित्वनिमित्तेऽचि पठेऽच आदेशो न स्याद् द्वित्वे कर्तव्ये यणि कृते
तु अनच्कत्वाद्द्वित्वं न स्यात् । ईर्ष्याश्चक्रतुः ॥

एकाच उपदेशेऽनुदात्तात् ७ । २ । १० ॥

उपदेशे यो धातुरेकाजनुदात्तश्च ततः परस्य बलाद्यार्द्धधातुकस्येद्
न । ईर्ष्याश्चकार्य । ईर्ष्याश्चकृव । कृञः कर्तृगे फले आत्मनेपदे प्राप्ते ॥

आम्प्रत्ययवत् कृभोऽनुप्रयोगस्य १ । ३ । ६३ ॥

आम्प्रकृत्या तुल्यमनुप्रयुज्यमानात् कृञोऽप्यात्मनेपदम् । तच्च
पूर्ववदेव नतु ततो विपरीतम् । तेन एधाश्चक्रे इत्यादौ परस्मैपदं न ।
ईर्ष्याश्चकारेत्यादौ तद् न । भ्वसोस्तु कर्तृप्रत्यये तद् पृथगस्तिग्रहण-
सामर्थ्यान्नास्तेर्भूभावः । ईर्ष्यामास । ईर्ष्यावभूव । अनुदात्ता वक्ष्यन्ते ।
उक्ष सेचने उक्षाश्चकार । एजृ कम्पने । इखि इगि गतौ । इङ्घांचकार ।
उछि उञ्छे । अथ वेदः । ते च स्यसिचूसीयुद्तासिपु यथासम्भव-
मिद्भ्रविकल्पवन्तः । त्वक्षू तनूकरणे ॥

स्वरतिसूतिसूयतिधूजूदितो वा ७ । २ । ४४ ॥

स्वरत्यादेरुदितश्च परस्य बलाद्यार्द्धधातुकस्येद् वा । तत्वक्षिथ ।
स्कोरिति कलोपः । तत्वष्ट । तत्वक्षिव । तत्वक्ष्व । वक्ष्यमाणवयादि-
नियमाङ्घ्रिडि नित्यमेवेडिति परे । एवं रधादिष्वपि । त्वाक्षिता ।
त्वष्ट । त्वाक्षिष्यति ॥

पठोः कः सि ८ । २ । ४१ ॥

त्वक्ष्यति । इडि अत्वक्षीत् । इडभावे वदत्रजेति वृद्धिः । अत्वा-
क्षीत् ॥

झलो झलि ८ । २ । २६ ॥

झलः परस्य सस्य लोपो झलि । अत्वाष्टाम् । पिधू शास्त्रे माङ्गल्ये
च । स्वरतीति वेद् । सित्सेधिय ॥

झपस्तथोर्द्धो धः ८ । २ । ४० ॥

ज्ञपः परयोस्तथयोर्धो नतु दधातेः । सिपेद्ध । सिषिधिव । सि-
पिध्व । मतान्तरे तु लिटि नित्यमिट् । सेधिता । सेद्धा । सेधिष्यति
सेत्स्यति असेधीत् । वदन्नजेति वृद्धिः । असैत्सीत् । असैद्धामि-
त्यादि ॥

इति २४ अंशाः ॥

अनुदात्ताश्च-

ऊदन्तरुदन्तरुणुक्षुणुयौतिस्तुक्षुश्चिडीशीश्रि च वृड्वृजौ च ॥ स्यु-
र्द्धातवः सेट इमेऽथ चान्ये एकाजजन्ता अनिटोऽनुदात्ताः ॥ १ ॥
कान्तेषु शकृ एकः ॥१॥ चान्तेषु पच् मुच् रिच् वच् विच् सिच्
पट् ६ ॥ छान्तेषु प्रच्छेकः १ ॥ जान्तेषु त्यज् निजिर् भज भञ्ज
भुज् भ्रस्ज मस्ज यज् युज् रुज् रञ्ज विजिर् स्वञ्ज सञ्ज स्तजः पंच-
दश १५ ॥ दान्तेषु अद् क्षुद् खिद् छिद् तुद् नुद् पद्य भिद् विद्य
विन्द् शद सद स्विद्य स्कन्द हदः पंचदश १५ ॥ धान्तेषु कृध क्षुध
बुध्य वन्ध युध् रुध् राध् व्यध शुध साध सिध्या एकादश ११ ॥
नान्तेषु मन्यहनौ द्वौ २ ॥ पान्तेषु आप् क्षिप् छुप् तप् तिप् तृप्य-
दृप्य लिप् लुप् वप् शप् स्वप् सृपस्त्रयोदश १३ ॥ भान्तेषु यम रभ
लभस्त्रयः ३ ॥ मान्तेषु गम् नम् यमरमश्चत्वारः ४ ॥ शान्तेषु कृश्
दंश् दिश् दृश् मृश् रिश् रुश् लिश् विशस्पृशी दश १० ॥
पान्तेषु कृप् त्विप् तुप् द्विप् दुप् पिप् पुष्य विप् शिप् शुप श्लिष्या
एकादश ११ ॥ सान्तेषु घसवसती द्वौ २ ॥ हान्तेषु दह दिह दुह
नह मिह रुह लिह वहोऽष्टौ ८ ॥ अनुदान्ता हलन्तेषु धातवो
द्वाधिकं शतम् ॥ सरूपधातुव्यावृत्तयै युक्ता इत्संज्ञका इह ॥ १ ॥

अथानिटः ॥

त्यज हानौ । थलि एकाच इति इण्निषेधे प्राप्ते ॥

कृसृभृवृस्तुद्रुसृश्रुवो लिटि ७ । २ । १३ ॥

क्रादिभ्य एव लिटि इण् न स्यादन्यस्मादनिटोऽपि न निषेधः ॥

अचस्तास्वत्यल्यनिटो नित्यम् ७ । २ । ६१ ॥

उपदेशेऽजन्तात्तासौ नित्यानिटो धातोः थल इण्ण ॥

ऋतो भारद्वाजस्य ७ । २ । ६३ ॥

तासौ नित्यानिट ऋदन्तादेव थलो नेङ् ऋदन्तभिन्नात्परस्य न निषेधः भारद्वाजस्य मते ॥

अयमत्र संग्रहः ॥

अजन्तोऽकारवान्वा यस्तास्यनिट् थलि वेडयम् ॥ ऋदन्त ईदृङ् नित्यानिट् क्राद्यन्यो लिटि सेङ् भवेत् ॥ १ ॥ तत्यजिथ । तत्य-
कथ । त्यक्ष्यति । वदव्रजेति वृद्धिः । अत्याक्षीत् । अत्याक्ताम् ।
अत्याक्षुः । तप संतापे । तेषिथ । ततप्य । तप्ता । अताप्सीत् । णम
प्रह्वत्वे शब्दे च । नमति । नेमतुः । नेमिथ । ननन्थ । वदव्रजेति
वृद्धिं वाधित्वा ॥

यमरमनमातां सक् च ७ । २ । ७३ ॥

एपां सक् एभ्यः सिच इद् च परस्मैपदे । अनंसीत् । अनंसि-
ष्टाम् । अनंसिपुः । क्षि क्षये । चिक्षाय । चिक्षयिथ । चिक्षेथ ।
चिक्षियिव । क्षेता ॥

अकृत्सार्वधातुकयोर्दीर्घः ७ । ४ । २५ ॥

अजन्ताङ्गस्य दीर्घः यादौ प्रत्यये नतु कृत्सार्वधातुकयोः ।
क्षीयात् ॥

सिचि वृद्धिः परस्मैपदेषु ७ । २ । १ ॥

इगन्ताङ्गस्य वृद्धिः परस्मैपदे सिचि । अक्षेपीत् । अक्षेष्टाम् ।
ऽत्यादि ॥

इति २५ अंशाः ।

घृ सेचने । घरति । जघार । जघ्रथुः । जघर्थ । जघ्रिव । घर्त्ता ॥

ऋद्वनोः स्ये ७ । २ । ७० ॥

आभ्यां स्यस्येद् । घरिष्यति ॥

रिङ् शयग्लिङ्पु ७ । ४ । २८ ॥

शे यकि यादावार्द्धधातुके लिङि च ऋतो रिङ् । रीङि प्रकृते रिङ्गविधिसामर्थ्यात् । दीर्घो न । घ्रियात् । अघार्षीत् इत्यादि । स्मृ चिन्तायाम् ॥

ऋतश्च संयोगादेर्गुणः ७ । ४ । १० ॥

ऋदन्तस्य संयोगादेरङ्गस्य गुणः लिटि । परत्वाण्यल्यप्ययम् । रपरत्वम् । उपधावृद्धिः । सस्मार । सस्मारतुः । स्मरिष्यति ॥

गुणोऽर्त्तिसंयोगाद्योः ७ । ४ । २९ ॥

अर्त्तः संयोगादेर्ऋदन्तस्य च गुणः यकि यादावार्द्धधातुके लिङि च । स्मर्यात् । अस्मार्षीत् । सन्नन्तादात्मनेपदं वक्ष्यते । द्वैप्र शोधने । दायति ॥

आदेच उपदेशे शिति ६ । १ । ४५ ॥

उपदेश एजन्तस्य धातोरात्वं स्यान्नतु इत्संज्ञकशादौ प्रत्यये ॥

आत औ णलः ७ । १ । ३४ ॥

आदन्ताद्धातोर्णल औ । ददौ ॥

आतो लोप इटि च ६ । ४ । ६४ ॥

अजाधोराद्धधातुकयोः क्लिदिटोः परयोरातो लोपः । द्वित्वात्परत्वाल्लोपे प्राप्ते द्विर्वचनेचेति निषेधाद् द्वित्वे कृते आलोपः । ददतुः । ददुः । ददित्थ । ददाथ । ददिव । ददिम । दाता । दास्यति । दायात् । दायास्ताम् । सगिटौ । अदासीत् । अदासिष्टाम् । अदास्यत् । ग्लै म्लै हर्षक्षये । ग्लायति । जग्लौ । जग्लिथ । जग्लाय ॥

वाऽन्यस्य संयोगादेः ६ । ४ । ६८ ॥

स्थाभिन्नस्य संयोगादेर्धातोरात् एत्वं वार्द्धधातुके किति लिङि । ग्लयात् । ग्लेयात् । ध्वै चिन्तायाम् । मिह सेचने । मिमेहित्थ ॥

हो ढः ८ । २ । ३१ ॥

इस्य ढः शलि पदान्ते च ॥

ढो ढे लोपः ८ । ३ । १३ ॥

मेढा । मेक्ष्यति ॥

शल इगुपधादनिटः क्सः ३ । १ । ४५ ॥

इगुपधो यः शलन्तोऽनिडधानुस्ततः परस्ये च्लेः क्सः । अमि-
क्षत् । अमिक्षताम् ॥ इति परस्मैपदिनः ॥

काश्ट दीप्तौ । प्रकाशते । चकाशे । काशिता । काशिष्यते ।
काशताम् । अकाशत । काशेत । काशिशीष्ट । अकाशिष्ट । अका-
शिष्यत । भास्ट दीप्तौ । भाप व्यक्तायां वाचाशिक्ष विद्योपादाने ।
भिक्ष भिक्षायाम् । चेष्ट चेष्टायाम् । लोच्ट दर्शने । वदि अभिवाद-
नस्तुत्योः । वन्दते । यती प्रयत्ने । येते । येताते । मुद हर्षे । ईक्ष
दर्शने । ईक्षांचक्रे । एध वृद्धौ ॥

अथानिटः ॥

कुङ् शब्दे । धृङ् अवध्वंसने ॥

उश्च १ । २ । १२ ॥

ऋवर्णात्परौ झलादी लिङ् तङ्परः सिञ्चेत्येती कितौ । धृपीष्ट ॥
ह्रस्वादङ्गात् ८ । २ । २७ ॥

सिचो लोपो झलि । अधृत । त्रैङ् पालने । तत्रे । अत्रास्त । हृद
पुरीपोत्सर्गे । अहत्त । अहत्साताम् । रभ रामस्ये । रेभे । रप्स्यते ।
डुलभप् प्राप्तौ । इत्यात्मनेपदिनः ॥
दुयाचृ याच्ञायाम् । धावु गतिशुद्धयोः । हिक् अव्यक्ते शब्दे ॥

अथानिटः ॥

डुपचप् पाके । पेचतुः । पेचिथ । पपकथ । पक्ता । अपाक्षीत् ।
अपक्त । धृञ् धारणे । धरति । धरते । दधार । दध्रतुः । दधर्थ ।
दधिव । दधिपे । धर्ता । धरिष्यति । ध्रियात् । धृपीष्ट । अधार्षी-
त् । अधृत । भृञ् भरणे । वमर्थ । वभृव । लुडादौ भर्ता । इत्यादि
धृञ्वत् । अभृत ॥ इति उभयपदिनः ॥ इति भ्वादयः ॥

इति २६ अंशाः ।

अद् भक्षणेऽनिद् परस्मैपदी ॥

अदिप्रभृतिभ्यः शपः २ । ४ । ७२ ॥

लुक् । अत्ति ॥

लिट्यन्यतरस्याम् २ । ४ । ४० ॥

अदो घस्त्व वा लिटि । जवात् ॥

गमहनजनखनघसां लोपः कृत्यनङि ६ । ४ । ९८ ॥

एषामुपधाया लोपः कृति न त्वाङि ॥

शासिवसिघसीनाञ्च ८ । ३ । ६० ॥

इण्कुभ्यां परस्थैषां सस्य पः । जक्षतुः । घसेस्तासावमावात्
थलि नित्यमिद् । जघसिथ ॥

इडत्यर्तिव्ययतीनाम् ७ । २ । ६६ ॥

एभ्यस्थलो नित्यमिद् । आदिय । अत्ता ॥

हुङ्गल्भ्यो हेर्धिः ६ । ४ । १०१ ॥

होर्ङ्गलन्तेभ्यश्च हेर्धिः । अद्धि ॥

अदः सर्वेषाम् ७ । ३ । १०० ॥

अदः परस्यापृक्तसार्वधातुकस्याद् सर्वमते । आदत् ॥

उस्यपदान्तात् ६ । १ । ९६ ॥

अपदान्तादवर्णादुक्ते पररूपमेकादेशः । अद्युः ॥

लुङ्सनोर्घस्त्व २ । ४ । ३७ ॥

अदो घस्त्व लुङि सनि च ॥

पुपादिद्युताङ्गदितः परस्मैपदेषु ३ । १ । ५६ ॥

दिवादिस्थपुपादेर्द्युतादेर्द्वेदितश्च च्लेर्ङ् परस्मैपदे । अवसत् ।
अस् मुवि ॥

शसोरञ्छोपः ६ । ४ । १११ ॥

शस्यास्तेश्चाकारस्य लोपः सार्वधातुके कृति । स्तः । संति ।
असि ॥

अस्तेभूः २ । ४ । ५२ ॥

आर्द्धधातुके । वभूव । भविता । इत्यादि ॥

घसोरेद्धावभ्यासलोपश्च ६ । ४ । ११९ ॥

घोरस्तेश्चैत्वं स्याद्धौ परे । अभ्यासलोपश्च । आभीयत्वेन एत्व-

स्यासिद्धत्वाद्धेर्धिः । एधि । स्तात् । स्तम् । लङि । अस्तिसिच

इति ईद् । आसीत् ॥

हु दानादानयोः आदाने प्रीणने च । परस्मैपद्यनिद् ॥

जुहोत्यादिभ्यः श्लुः २ । ४ । ७५ ॥

शपः ॥

श्लौ ६ । १ । १० ॥

धातोर्द्धे । जुहोति ॥

अद्भ्यस्तात् ७ । १ । ४ ॥

ज्ञस्य ॥

हुश्नुवोः सार्वधातुके ६ । ४ । ८७ ॥

जुहोतेः श्रुप्रत्ययान्तस्य चानेकाचो संयोगपूर्वोवर्णस्य यणजादौ सार्वधातुके । उवङोऽपवादः । जुहति ॥

भीद्वीभृदुवां श्लुवञ्च ३ । १ । ३९ ॥

एभ्यो लिट्चाम् वाऽऽमि । श्लाविव कार्यश्च । जुहवाश्चकार । जुहाव । होता ॥

जुसि च ७ । ३ । ८३ ॥

अजादौ जुसीगन्ताङ्गस्य गुणः । अजुहवुः । जुहुयात् । इह गुणो न । भाष्ये पिच्च डिन्न डिच्च पिन्न इति व्याख्यानात् विशेषविहितेन डित्त्वेन पित्त्वस्य बाधात् ह्यात् । अहौपीत् ॥

दिवु क्रीडाविजिगीषाव्यवहारद्युतिस्तुतिमोदमदस्वप्नकान्तिग-
तिषु ॥

दिवादिभ्यः श्यन् ३ । १ । ६९ ॥

कर्त्रर्थे सार्वधातुके । इदमग्रेऽप्यनुवर्त्तते । शपोऽपवादः ॥ .

स्वादिभ्यः श्नुः ३ । १ । ७३ ॥

तुदादिभ्यः शः ३ । १ । ७७ ॥

रुधादिभ्यः श्म ३ । १ । ७८ ॥

गुणं वाधते ॥

तनादिकृभ्य उः ३ । १ । ७९ ॥

त्र्यादिभ्यः श्रा ३ । १ । ८१ ॥

हलि च ८ । २ । ७७ ॥

रेफवान्तधातोरुपधाया इको दीर्घो हलि । दीव्यति । देविता ।
इत्यादि । पुञ् अभिषवेऽनिट् उभयपदी । अभिषवः स्रपनं पीडनं
ज्ञानं सुरासन्धानश्च । मुनोति । मुनुतः । मुन्वन्ति ॥

लोपश्चास्यान्यरस्यां म्वोः ६ । ४ । १०७ ॥

असंयोगपूर्वो यः प्रत्ययोकारस्तदन्ताङ्गस्य वा लोपो म्वोः ।
मुन्वः । मुनुवः । मुन्वहे । मुनुवहे ॥

उत्तश्च प्रत्ययादसंयोगपूर्वात् ६ । ४ । १०६ ॥

असंयोगपूर्वो यः प्रत्ययोकारस्तदन्तादङ्गात्परस्य देलुंक् । मुनु ॥

स्तुसुधूञ्भ्यः परस्मैपदेषु ७ । २ । ७२ ॥

सिच इट् । अमासीत् । अमासि । तुद् व्ययनेऽनिट् उभयपदी ।
तुदति । तुदते । तोत्ता ॥

लिङ्गसिचावात्मनेपदेषु १ । २ । ११ ॥

इकममीपाट्टलः परा स्यादी लिङ्गिर्चा सिचावात्मनेपदेषु ।
तुन्गीश्च । अर्तात्सीत् । अतुण । अतुणामाम् ॥ रुधिर् आररणे
उभयपदानिट् । रुणटि । श्रुगोरुलोपः । णत्वस्यागिट्त्वाद्गुणाः
परमवर्णः । रुन्टः । रुन्पः । रुन्शान्ति । रुन्धे । रुंटा । रुणधानि
अरुणत् । अरुन्धाम् । अरुन्धन ॥

दश्च ८ । २ । ७५ ॥

धातोर्दस्य पदान्तस्य सिपि रुर्गा । अरुणत् । अरुणः ।
अरुधत् । अरौत्सीत् ॥

इति २७ अंशाः ।

तनु विस्तोर उभयपदी सेद् । तनोति । तन्वः । तनुवः । तनुते ।
तनिता ॥

अनुदात्तोपदेशवनतितनोत्यादीनामनुनासिकलोपो
इलि कृिति ६ । ४ । ३७ ॥

अनुनासिकान्तानामेपां वनतेश्च लोपः इलादौ कृिति । यमिर-
मिनमिगमिहनिमन्या अनुदात्तोपदेशाः । तनु क्षणु क्षिणु ऋणु
वृणु घृणु वनु मनु तनोत्यादयः ॥

तनादिभ्यस्तथासोः २ । ४ । ७९ ॥

तनादेः सिचो वा लुक् तथासोः । अतत । अतनिष्ट । अतथाः ।
अतनिष्ठाः । डुकृञ् करणेऽनिद् उभयपदी । करोति ॥

अत उत् सार्वधातुके ६ । ४ । ११० ॥

उप्रत्ययान्तकृञोऽत उत्सार्वधातुके कृिति । कुरुतः ॥

नित्यं करोतेः ६ । ४ । १०८ ॥

करोतेः प्रत्ययोकारस्य नित्यं लोपो वमयोः । कुर्वः । कुर्मः ।
कुरुते । कर्ता । हिलुकोऽसिद्धत्वादुत्वम् । कुरु ॥

ये च ६ । ४ । १०९ ॥

कृञ् उलोपो यादौ प्रत्यये । हलि चेति दीर्घे प्राप्ते ॥

न भकुर्छुराम् ८ । २ । ७९ ॥

भस्य कुर्छुरोश्च उपधाया न दीर्घः । कुर्यात् । अकृत । अस्य
विशेषो वक्ष्यते । डुक्रीञ् द्रव्यविनिमये उभयपद्यानिद् । क्रीणाति ॥

श्राभ्यस्तयोरातः ६ । ४ । ११२ ॥

अनयोरातो लोपः कृति सार्वधातुके ॥

ई हल्यघोः ६ । ४ । ११३ ॥

श्राभ्यस्तयोरात ईत्सार्वधातुके कृति हलि न तु घुसंज्ञस्य ।
क्रीणीतः । क्रीणन्ति । क्रीणीते । क्रीणाते । क्रीणते । क्रेता ।
चुर स्तेये ॥

सत्यापपाशरूपवीणातूलश्लोकसेनालोमत्यचवर्मवर्ण
चूर्णचुरादिभ्यो णिच् ३ । १ । २५ ॥

गुणः ॥

सनाद्यन्ता धातवः ३ । १ । ३२ ॥

सनादयः कमेर्णिङन्ताः प्रत्यया अन्ते येषान्ते धातुसंज्ञाः ।
सन्नाद्याः सन् काम्याणिच् क्यचक्यपी क्यङ्काचाराकिप् यङ् यगा-
येयङी णिङ् तिप् शप् गुणायादेशाः । चोरयति ॥

णिचश्च १ । ३ । ७४ ॥

णिजन्तादात्मनेपदम् कर्तृगामिनि क्रियाफले । चोरयते ॥

कास्प्रत्ययादाममन्त्रे लिटि ३ । १ । ३५ ॥

कासृधातोः प्रत्ययान्तेभ्यश्चाम् नतु मन्त्रे ॥

कास्यनेकाज्यहणं कर्तव्यम् ❀ ॥

एवं च प्रत्ययग्रहणं सूत्रे न कार्यमित्याहुः । क्लीवाञ्चक्रेइत्या-
द्यर्थङ्कार्यमिति परे ॥

अयामन्तालवार्येत्स्विष्णुषु ६ । ४ । ५५ ॥

आमादिषु णेरय लोपापवादः । चोरयाञ्चकार । चोरयाञ्चक्रे ॥

णेरनिति ६ । ४ । ५१ ॥

अनिडादावार्द्धधातुके णेलोप' । चोर्यात् ॥

णिश्चिदुश्रुभ्यः कर्तारि चङ् ३ । १ । ४८ ॥

प्यन्तात् श्यादिभ्यश्च । च्लेश्चङ् कर्तृलुङि णिलोपात्परत्वादेरने-
काच इति यणि प्राप्ते ॥

प्यलोपावियङ्गुणवृद्धिदीर्घेभ्यः पूर्वविप्रतिपे-

धेन ❀ ॥

इयङ् । अततक्षत् । यण् । आटिट् । गुणः । कारणा । वृद्धिः ।
कारकः । दीर्घः कार्यते ॥

णौ चङ्युपधाया ह्रस्वः ७ । ४ । १ ॥

चङ्परे णौ यदङ्गं तस्योपधाया ह्रस्वः ॥

चङि ६ । १ । ११ ॥

अनभ्यासधात्ववयवस्यैकाचः प्रथमस्य द्वे अजादेस्तु द्विती-
यस्य ॥

दीर्घो लघोः ७ । ४ । ९४ ॥

चङ्परे णौ यल्लघु तत्परो योऽङ्गस्यावयवो लघुरभ्यासस्तस्य
दीर्घः स्याण्णावगलोपेऽसति । अचूचुरत् ॥
इति २८ अंशः ।

भज विश्राणने ॥

सन्वल्लघुनि चङ्परेनगलोपे ७ । ४ । ९३ ॥

चङ्परे णौ यल्लघु तत्परो योऽङ्गस्यावयवोऽभ्यासस्तस्य सनीर
कार्यं स्याण्णावगलोपेऽसति ॥

सन्यतः ७ । ४ । ७९ ॥

अभ्यासस्यात इः सनि । दीर्घो लघोः । अभीभजत् । लोकृ
दर्शने ॥

नाग्लोपिशास्वृदिताम् ७ । ४ । २ ॥

णिच्यग्लोपिनः शास्तेर्ऋदिताञ्चोपधाया ह्रस्वो न चङ्परे णौ ।
अलुलोकत् ॥

भुवोऽवकल्कने ❀ ॥

णिच् । भावयति । णिचि अच आदेशो न स्याद्वित्त्वे कर्तव्ये ॥

ओः पुयण्ज्यपरे ७ । ४ । ८० ॥

सनि परे यदङ्गं तदव्ययवाभ्यासोकारस्येत्वं पवर्गयण्जकारेष्ववर्णपरेषु परतः । अवीभवत् । अवीभवत् । अथादंताः । कथ वाक्यप्रबन्धे ॥

अतो लोपः ६ । ४ । ४८ ॥

आर्द्धधातुकोपदेशकाले यददन्तन्तस्यातो लोप आर्द्धधातुके ॥

अचः परस्मिन् पूर्वविधौ १ । १ । ५७ ॥

परानिमित्तोऽजादेशः स्थानिवत् स्थानिभूतादचः पूर्वत्वेन दृष्टस्य विधौ कर्त्तव्ये । इति अलोपस्य स्थानिवद्भावात्तन्न वृद्धिः । कथयति । अचकथत् । अग्लोपित्वान्नदीर्घसन्वद्भावौ ॥

इति भ्वादयश्चुरार्धता धातवः ।

कण्डूञ् गात्रविधर्षणे ॥

कण्डूदिभ्यो यक् ३ । १ । २७ ॥

कण्डूदयो धातवः प्रातिपदिकानि चेति द्विधा तत्र धातुभ्यः स्वार्थे यक् । कण्डूयति कण्डूयते । अकण्डूयिष्ट ॥

तत्प्रयोजको हेतुश्च १ । ४ । ५५ ॥

कर्तुः प्रयोजको हेतुसंज्ञः कर्तृसंज्ञश्च ॥

हेतुमति च ३ । १ । २६ ॥

प्रयोजकव्यापारे प्रेषणादौ वाच्ये धातोर्णिच् । भवन्तं प्रेरयति भावयति । अवीभवत् । रक्षयति । अररक्षत् । खादयति । नाग्लोपिशास्वृदिताम् । अचखादत् । ह्लादयति । अजिह्वदत् । शील-यति । अशीशिलत् । नादयति । अनीनदत् । चेतयति । अची-चितत् ॥

धातोः कर्मणः समानकर्तृकादिच्छायां वा ३ । १ । ७ ॥

इषिकर्मण इषिणैककर्तृकाद्धातोः सन् वेच्छायाम् ॥

सन्यङ्गेः ६ । १ । ९ ॥

सन्नन्तस्य यङन्तस्य च प्रथमैकाचो द्वे स्तोऽजादेस्तु द्वितीयस्य ।
इति द्वित्वम् ॥

सनि ग्रहगुहोश्च ७ । २ । १२ ॥

ग्रहेर्गुहेरुगन्ताच्च सन इण् न ॥

इको झल् १ । २ । ९ ॥

इगन्ताज्झलादिः संन् कित् । बुभूपति । जिजीविपति । सन्यतः
निनदिपति ॥

अज्झनगमां सनि ६ । ४ । १६ ॥

अजन्तानां हनः इडिणिकादेशगमेश्च झलादौ सनि दीर्घः ।
चिक्षीपति ॥

पूर्ववत्सनः १ । ३ । ६२ ॥

सनः पूर्वो यो धातुस्तेन तुल्यं सन्नन्तादप्यात्मनेपदम् । डिड-
यिपते ॥

धातोरेकाचो हलादेः क्रियासमभिहारे यङ् ३ । १ । २२ ॥

पौनःपुन्यं भृशार्थश्च क्रियासमभिहारस्तस्मिन्द्योत्ये एकाचो
हलादेर्धातोर्यङ् ॥

गुणो यङ्लुकोः ७ । ४ । ८२ ॥

अभ्यासस्य गुणः यङि यङ्लुकि च । पुनः पुनर्भृशं वा भवति
वोभूयते । वोभूयाञ्चक्रे । अबोभूयिष्ट ॥

दीर्घोऽकितः ७ । ४ । ८३ ॥

अकितोऽभ्यासस्य दीर्घो यङि यङ्लुकि च । रारक्ष्यते ॥

यस्य हलः ६ । ४ । ४९ ॥

हलः परस्य यशब्दस्य लोपः आर्द्धधातुके । आदेः परस्य । रार-
क्षाञ्चक्रे । रारक्षिता ॥

इति २९ अंशाः ।

यङोऽचि च २ । ४ । ७४ ॥

यङोऽचप्रत्यये लुक् । चान्तं विनापि बहुलं लुक् । अयमनेमित्ति-
कत्वादादौ भवति । ततः प्रत्ययलक्षणेन यङन्तत्वाद्वित्वम् । शेषा-
त्कर्त्तरि परस्मैपदम् । चर्करीतं चेत्यदादौ पाठाच्छपो लुक् ।
शितपा शपानुबन्धेन निर्दिष्टं यद्गणेन च ॥ यत्रैकाजग्रहणं चैव
पञ्चैतानि न यङ्लुकि ॥ १ ॥ इत्यपि स्मरणीयम् । इयं परिभाषा
निर्मूला इत्यप्याहुः ॥

यङो वा ७ । ३ । ९४ ॥

यङन्तात्परस्य ह्लादेः पितः सार्वधातुकस्येड् वा । भृसुवोरिति
गुणनिषेधो यङ्लुकि भाषायां न । वोभूतु तेतिक्ते इति छन्दसि
निपातनात् । वोमवीति । वोभोति । वोभूतः । वोभुवति । वोम-
वाञ्चकार । वोमविता । अवोमवीत् । अवोभोत् । अवोभूताम् ।
अवोभवुः । वोभूयात् । वोभूयाताम् । वोभूयात् । वोभूयास्ताम् ।
अवोभूवीत् । अवोभोत् । अवोभूताम् । अवोभवुः । अवोमवि-
ष्यदित्यादि । रारष्टि । रारष्टः । रारक्षति । रारक्षि । हौ । राराडि ।
अरारक्षीत् । अरारद् लुडि अरारक्षीत् ॥

सुप आत्मनः क्यच् ३ । १ । ८ ॥

इपिकर्मण एपित्संबन्धिनः सुवन्तादिच्छार्थे वा क्यच् ॥

सुपो धातुप्रातिपदिकयोः २ । ४ । ७१ ॥

एतयोखयवस्य सुपो लुक् ॥

क्यचि च ७ । ४ । ३३ ॥

अस्य ईत् । आत्मनः पुत्रमिच्छति पुत्रीयाति ॥

नः क्ये १ । ४ । १५ ॥

क्यचि क्यडि च नान्तमेव पदन्नान्यत् । समिध्यति ॥

क्यस्य विभाषा ६ । ४ । ५० ॥

हलः परयोः क्यच्क्यस्यङोर्लोपो वाऽऽर्द्धधातुके । समिधिता ।
समिध्यता ॥

काम्यञ्च ३ । १ । ९ ॥

उक्तविषये । पुत्रकाम्यति । यशस्काम्यति ॥

उपमानादाचारे ३ । १ । १० ॥

उपमानात्कर्मणः सुवन्तादाचारेऽर्थे क्यच् । पुत्रमिवाचरति पुत्री-
यति च्छात्रम् ॥

अधिकरणाच्च ❀ ॥

प्रासादीयति कुट्याम् ॥

कर्तुः क्यङ् सलोपश्च ३ । १ । ११ ॥

उपमानात्कर्तुः सुवन्तादाचारे क्यङ् वा । सान्तस्य तु कर्तृवाच-
कस्य लोपो वा क्यङ् वेत्युक्तेः । पक्षे वाक्यं कृष्ण इवाचरति
कृष्णाद्यते । औजायते । अप्सरायते ॥

सर्वप्रातिपदिकेभ्यः क्त्विवा वक्तव्यः ❀ ॥

सुप इति न संबध्यते । तेन पदकार्यं न ॥

वेरपृक्तस्य ६ । १ । ६७ ॥

अपृक्तस्य वस्य लोपः । कृष्णाति ॥

भावकर्मणोः १ । ३ । १३ ॥

लस्यात्मनेपदम् ॥

सार्वधातुके यक् ३ । १ । ६७ ॥

धातोर्यक् भावकर्मवाचिनि सार्वधातुके । भावे प्रथमेकवचनमेव ।
अनभिहिते कर्त्तारि तृतीया । त्वया मया अन्यैश्च भूयते चभूधे ॥

स्यसिचसीयुद्तासिषु भावकर्मणोरुपदेशेज्जनग्रह-
दृशां वा चिष्वदिद् च ६ । ४ । ६२ ॥

उपदेशे योश्च तदन्तानां हनादीनां च चिणीवाङ्कार्यं वा स्यात्
स्यादिषु परेषु भावकर्मणोर्गम्यमानयोः स्यादीनामिडागमश्च । अय-
मिद् चिष्वद्भावसंनियोगशिष्टत्वात्तदभावे न । भाविता । भविता ।

भाविष्यते । भविष्यते । भूयताम् । अभूयत । भूयेत । भाविषीष्ट ।
भविषीष्ट ॥

चिण् भावकर्मणोः ३ । १ । ६६ ॥

च्लेश्चिण् भावकर्मवाचिनि तशब्दे ॥

चिणो लुक् ६ । ४ । १०४ ॥

चिणः परस्य तशब्दस्य लुक् । अभावि । अभाविष्यत । अभ-
विष्यत । कर्मणि तद् । अनुभूयते आनन्दश्चैत्रेण त्वया मया च ।
अनुभूयेते । अनुभूयन्ते । त्वमनुभूयसे । अहमनुभूये । इत्यादि ।
रक्ष्यते । अरक्षि ॥ इत्याख्यातम् ।

इति ३० अंशाः ।

इति प्रथमाध्यायस्य तृतीयः पादः ।

धातोः ३ । १ । ९१ ॥

अधिकारः ॥

तत्रोपपदं सप्तमीस्थम् ३ । १ । ९२ ॥

धात्वाधिकारे सप्तम्यन्ते कर्मणीत्यादौ वाच्यत्वेन स्थितं कुम्भा-
दि तद्वाचकं पदमुपपदसंज्ञम् ॥

कृदतिङ् ॥ वाऽसरूपोऽस्त्रियाम् ३ । १ । ९४ ॥

अस्मिन्धात्वाधिकारेऽसरूपोऽपवादप्रत्ययः उत्सर्गस्य वाधको वा
स्यधिकारोक्तं विना ॥

कृत्याः ३ । १ । ९५ ॥

'तव्यत्तव्यानीयर्षण्यक्यप्रकेलिमरः कृत्यसंज्ञाः ॥

कर्त्तरि कृत् ३ । ४ । ६७ ॥

कृत्प्रत्ययः कर्त्तरि स्यात् ॥

तयोरेव कृत्यक्तस्यलर्थाः ३ । ४ । ७० ॥

एते भावकर्मणोरेव ॥

तव्यत्तव्यानीयरः ३ । १ । ९६ ॥

धातोरेते प्रत्ययाः स्युः । एधितव्यम् । एधनीयम् त्वया ।
भावे एकत्वं ह्रीबत्वञ्च । चेतव्यश्चयनीयो वा धर्मस्त्वया । चेतव्या
तम्पत्तिः । चेतव्यं धनम् ॥

केलिमर् च ❀ ॥

पचेलिमाः मापाः । कर्मणि प्रत्ययः ॥

अचो यत् ३ । १ । ९७ ॥

अजन्ताद्धातोर्प्यत् । चयम् । जेयम् ॥

वान्तो यि प्रत्यये ६ । १ । ७९ ॥

यादौ प्रत्यये ओदौतोखावौ । श्रव्यम् ॥

धातोस्तन्निमित्तस्यैव ६ । १ । ८० ॥

यादौ प्रत्यये धातोरेचश्चेदवावौ तर्हि तन्निमित्तस्यैव । भव्यम् ।
तन्निमित्तस्य किम् । औयते । औयत् ॥

ओरावश्यके ३ । १ । १२५ ॥

उवर्णान्ताद्धातोर्ण्यत् अवश्यंभावे द्योत्ये । अवश्यं भवितुं योग्यं
भाव्यम् । श्राव्यम् ॥

पोरदुपधात् ३ । १ । ९८ ॥

पवर्णान्ताददुपधाद्यत् । शप्यम् । लभ्यम् । सारूप्यान्न प्यत् ।
तव्यदादयः स्युरेव । शप्तव्यम् । शपनीयम् ॥

ऋदुपधाच्चाकृपिचृतेः ३ । १ । ११० ॥

क्यप् । वृत्यम् । वृध्यम् ॥

ऋहलोर्ण्यत् ३ । १ । १२४ ॥

ऋवर्णान्ताद्दलन्ताच्च धातोर्ण्यत् । हार्यम् । बाह्यम् ॥

चजोः कुघिण्यतोः ७ । ३ । ५२ ॥

चस्य जस्य च कुत्वं घिति ण्यति च प्रत्यये । पाक्यम् ॥

अर्हे कृत्यतृचश्च ३ । ३ । १६९ ॥

चालिद् । पाठ्य' । पठिता । त्व कन्या वहेः ॥

शकि लिङ् च ३ । ३ । १७२ ॥

शक्तौ लिङ् । चात्कृत्याः । बाह्यः । वहनीयः । त्वं मां
वहेः ॥

ण्वुल्लृचौ ३ । १ । १३३ ॥

धातोः ॥

युवोरनाकौ ७ । १ । १ ॥

युवुएतयोरनुनासिकयोः अन अक एतौ स्तः । कारकः ।
कर्त्ता ॥

नन्दिग्रहिपचादिभ्यो ल्युणिन्यचः ३ । १ । १३४ ॥

नन्द्यादेर्ल्युः ब्रह्मादेर्णिनिः पचादेरच् । नन्दनः । लवणः ।
निपातनाण्णः । ग्राही ॥

आतो युक् चिण्कृतोः ७ । ३ । ३३ ॥

आदन्तस्य युक् चिणि णिति णिति कृति च । स्थायी । पचः ।
पचादिराकृतिगणः । सर्वधातुभ्य एवाच् इति प्राहुः ॥

इगुपधज्ञाप्तीकिरः कः ३ । १ । १३५ ॥

एभ्यः कः । क्षिपः । कृशः । ज्ञः । मियः ॥

ऋत इद्धातोः ७ । १ । १०० ॥

रपरत्वम् । किरः ॥

आतश्चोपसर्गे ३ । १ । १३६ ॥

कः । कुगतिप्रादयः इति वक्ष्यमाणेन गमात् । शुगलः । प्रतः ॥

आशिपि च ३ । १ । १५० ॥

आशीर्षिपगार्यट्तेर्धातांर्हुन् । जीवताजीवकः । नन्दकः ॥

कर्मण्यण् ३ । २ । १ ॥

कर्मण्युपपदे धातोण् ॥

उपपदमतिद् २ । २ । १९ ॥

उपपदं समर्थेन नित्यं समस्यते अतिङन्तश्चायं समासः। प्राति-
पादिकत्वम् । सुपो लुक् । कुम्भं करोतीति कुम्भकारः ॥

आतोऽनुपसर्गे कः ३ । २ । ३ ॥

आदन्ताद्धातोरनुपसर्गात् कर्मण्युपपदे कः स्यात् । गोदः । पा-
र्षिणत्रम् । नेह । गोसंदायः ॥

क्विप् च ३ । २ । ७६ ॥

अयमापि दृश्यते ॥

ह्रस्वस्य पिति कृति तुक् ६ । १ । ७१ ॥

कृत् ॥

इति ३१ अंशः ।

सुप्यजातौ णिनिस्ताच्छील्ये ३ । २ । ७८ ॥

अजात्यर्थे सुपि धातोर्णिनिः ताच्छील्ये द्योत्ये । उष्णमोजी ।
उपजीवी ॥

कर्तर्युपमाने ३ । २ । ७९ ॥

णिनिः । उष्ट्रक्रोशी ॥

व्रते ३ । २ । ८० ॥

णिनिः । स्थण्डिलशायी ॥

बहुलमाभीक्ष्ये ३ । २ । ८१ ॥

पौनःपुन्ये द्योत्ये सुप्युपपदे णिनिः । क्षीरपायिण उशीनराः ।

भूते इत्याधिकृत्य ॥

अन्येष्वपि दृश्यते ३ । २ । १०१ ॥

सप्तमीपञ्चमीभिन्नेऽपि उपपदे जनेर्डः । अजः । द्विजः । जनि-
भिन्नादपि कारकान्तरेऽपि क्वचित् । परिता ॥

क्तवतू निष्ठा १ । १ । २६ ॥

एतौ निष्ठासंज्ञौ ॥

निष्ठा ३ । २ । १०२ ॥

भूतार्थवृत्तेर्द्वातोर्निष्ठा स्यात् । स्नातं मया । स्तुतस्त्वया विष्णुः ।
विष्णुर्विश्वं कृतवान् ॥

श्रुकः किति ७ । २ । ११ ॥

श्रिञ् एकाजुगन्ताच्च गित्कितोरिण् । न श्रितः भूतम् भूतवान् ॥
गत्यर्थाकर्मकश्चिपशीङ्स्थासवस जनरुहजीर्यतिभ्यश्च
३ । ४ । ७२ ॥

कर्तरि क्तः स्याद्भावकर्मणोश्च । गङ्गाङ्गतः । गङ्गां प्राप्तः । स्नातः
सः । पक्षे प्राप्ता गङ्गा तेनेत्यादि । शेषं वक्ष्यते ॥

मतिबुद्धिपूजार्थेभ्यश्च ३ । २ । १८८ ॥

वर्तमाने क्तः । राज्ञां मतः । इष्यमाण इत्यर्थः । बुद्धः पूजितः ।
चात् शीलितो रक्षितः क्षान्त आक्रुष्टो जुष्ट इत्यादि ॥

लटः शतृशानचावप्रथमासमानाधिकरणे ३ । २ । १२४ ॥

पचन्तं चैत्रम्पश्य ॥

आने मुक् ७ । २ । ८२ ॥

अदन्ताङ्गस्यातो मुक् आने परे । पचमानं चैत्रं पश्य । प्रथमा-
समानाधिकरणेऽपि क्वचित् । सन् ब्राह्मणः ॥

तौ सत् ३ । २ । १२७ ॥

शतृशानचौ सत्संज्ञौ ॥

लटः सद्वा ३ । ३ । १४ ॥

करिष्यन्तं करिष्यमाणं पश्य । प्रथमासमानाधिकरणेऽपि
क्वचित् । करिष्यतीति करिष्यन् ॥

आक्वेस्तच्छीलतद्धर्मतत्साधुकारिषु ३ । २ । १३४ ॥

क्विपमभिव्याप्य वक्ष्यमाणाः प्रत्ययास्तच्छीलादिषु कर्तृषु
बोध्याः ॥

तृन् ३ । २ । १३५ ॥

कर्ता कटम् ॥

चलनशब्दार्थादकर्मकाद्युच्च ३ । २ । १४८ ॥

चलनार्थाच्छब्दार्थाच्चकर्मकाद्युच्च । चलनः । शब्दनः । इत्यादि ॥

अनुदात्तेतश्च हलादेः ३ । २ । १४९ ॥

अकर्मकाद्युच्च । वर्तनः । वर्द्धनः ॥

क्रोधमण्डार्थेभ्यश्च ३ । २ । १५१ ॥

क्रोधनः । मण्डनः ॥

सनाशंसभिक्ष उः ३ । २ । १६८ ॥

षिकीर्षुः । आशंसुः । भिक्षुः ॥

अन्येभ्योऽपि दृश्यते ३ । २ । १७८ ॥

किप् । छिद् । भिद् । मितद्वादिभ्यः डुः । मितद्दुः । शतद्दुः ।

शम्मुः ॥

तुमुन्णुलौ क्रियायां क्रियार्थायाम् ३ । ३ । १० ॥

क्रियार्थायां क्रियायामुपपदे भविष्यदर्थे धातोरेतौ स्तः । अव्य-
यक्तो भावे । घटं कर्तुं याति । घटं कारको याति ॥

समानकर्तृकेषु तुमुन् ३ । ३ । ५८ ॥

इच्छार्थेष्वेककर्तृकेषूपपदेषु धातोस्तुमुन् । इच्छति मोक्तुम् ॥

भावे ३ । ३ । १८ ॥

सिद्धावस्थापन्ने धात्वर्थे वाच्ये धातोर्घञ् । पाकः पाकौ ॥

अकर्त्तरि च कारके संज्ञायाम् ३ । ३ । १९ ॥

कर्तृभिन्ने कारके घञ् । प्राप्तः । संज्ञायामिति प्रायिकम् । लामो
लब्धः । कृत्यल्युट इत्यतः प्राक् भावे अकर्त्तरि च कारके इति
द्वयमप्यनुवर्त्तते ॥

एरच् ३ । ३ । ५६ ॥

जयः । नयः ॥

ऋदोरप् ३ । ३ । ५७ ॥

करः । गरः । लवः । यवः । स्तवः ॥

घभर्थे कविधानम् * ॥

प्रस्थः । विघ्नः ॥

इितः क्रिः ३ । ३ । ८८ ॥

अयमथुच्च भाव एव ॥

त्केर्मम् नित्यम् ४ । ४ । २० ॥

त्क्रिप्रत्ययान्तान्नित्यं मप् निर्वृत्तेऽर्थे । पाकेन निवृत्तं पक्त्रिमम् ॥

भावप्रत्ययान्तादिमव्वक्तव्यः * ॥

निर्वृत्तेऽर्थे । त्यागिमम् । पाकिमम् ॥

टितोऽथुच्च ३ । ३ । ८९ ॥

वेपथुः । श्वयथुः ॥

इति ३२ अंशाः ।

स्त्रियां क्तिन् ३ । ३ । ९४ ॥

स्त्रीलिङ्गे भावादौ क्तिन् । घञोऽपवादः । अजपौ न्तु परत्वाद्वा-
धते । कृतिः । चितिः । स्तुतिः ॥

तितुत्रतथसिसुसरकसेपु च ७ । २ । ९ ॥

एपात्नेद् । दीप्तिः । स्फायी । स्फातिः । संपदादिभ्यः विप् ।
सम्पत् । विपत् । क्तिन्नपि । संपत्तिः । निपात्तिः ॥

अप्रत्ययात् ३ । ३ । १०२ ॥

प्रत्ययान्तेभ्यो धातुभ्यः स्त्रियामकारप्रत्ययः । चिन्नीर्णा । पुत्र-
काम्या ॥

गुरोश्च हलः ३ । ३ । १०३ ॥

गुरुमतो हलन्तात् द्वियामकारप्रत्ययः । ईहा । ऊहा ॥

पिद्भिदादिभ्योऽङ् ३ । ३ । १०४ ॥

पिद्भ्यो भिदादिभ्यश्च द्वियामङ् । जरा । त्रपा । भिदा निदारणे ।
भित्तिरन्या । छिदा । ऋपेः संप्रसारणं च । कृपा ॥

आतश्चोपसर्गे ३ । ३ । १०६ ॥

अङ् । प्रदा । उपदा । श्रदन्तरोरुपसर्गवद्धृत्तिः । श्रद्धा ।
अन्तर्द्धा ॥

प्यासश्रंथो युच् ३ । ३ । १०७ ॥

कारणा । आसना । श्रन्थना ॥

रोगारुखायां ण्वुल् बहुलम् ३ । ३ । १०८ ॥

प्रच्छर्दिका । क्वचिन्न । शिरोर्त्तिः ॥

धात्वर्थनिर्देशे ण्वुल् वक्तव्यः ❀ ॥

आसिका । शायिका । इक्श्चित्पी धातुनिर्देशे । पचिः । पचतिः ॥

वर्णात्कारः ॥

अकारः । रादिक्श्च । रेफः । रकारः । मत्वर्थ्याच्छः बाहुलकात् ।
अलोपः मत्वर्थीयः ॥

इणजादिभ्यः ॥

आजिः । आतिः ॥

इञ् वपादिभ्यः ॥

वापिः । वासिः ॥

इक् कृष्यादिभ्यः ॥

कृषिः । गिरिः ॥

आक्रोशे नञ्यनिः ३ । ३ । ११२ ॥

नञि उपपदे अनिः आक्रोशे । अजीवनिस्ते भूयात् ॥

कृत्यल्युटो बहुलम् ३ । ३ । ११३ ॥

यत्र विहितास्ततोऽन्यत्रापि स्युः । स्नात्यत्रैनेति स्नानीयं चूर्णम् ।
दीयतेऽस्मै दानीयो विप्रः । राज्ञा भुज्यन्ते राजभोजनाः शालयः ॥

नपुंसके भावे क्तः ३ । ३ । ११४ ॥

कालसामान्ये ॥

ल्युट् च ३ । ३ । ११५ ॥

हसितम् । हसनम् ॥

करणाधिकरणयोश्च ३ । ३ । ११७ ॥

ल्युट् । इध्मप्रव्रश्चनः । गोदोहनी । खलः । प्राक्करणाधिकरण-
योरित्यधिकारः ॥

पुंसि संज्ञायां घः प्रायेण ३ । ३ । ११८ ॥

आकुर्वन्त्यस्मिन् आकर. ॥

हलश्च ३ । ३ । १२१ ॥

घञ् । रमन्ते योगिनोऽत्रेति रामः ॥

ईपट्टुःसुषु कृच्छाकृच्छ्रार्थेषु खल् ३ । ३ । १२६ ॥

एषु दुःखसुखार्थेषूपपदेषु खल् । दुष्करः कटो भवता । सुकरः ।
ईपत्करः ॥

आतो युच् ३ । ३ । १२८ ॥

खलोऽपवादः । ईपत्पानः सोम इत्यादि ॥

आवश्यकाधमर्ण्ययोर्णिनिः ३ । ३ । १७० ॥ ॥

अवश्यकारी । शतन्दायी ॥

कृत्याश्च ३ । ३ । १७१ ॥

आवश्यकाधमर्ण्ययोः । अवश्यं हरिः सेव्यः । शतन्देयम् ॥

क्तिच्वत्तौ च संज्ञायाम् ३ । ३ । १७४ ॥

धातोः क्तिच क्तश्चाशिपि संज्ञायाम् । मृत्वात् । मृतिः । दे-
वदत्तः ॥

अलंखल्योः प्रतिपेधयोः प्राचां क्त्वा ३ । ४ । १८ ॥

प्रतिपेधार्थयोरलंखल्वोरुपपदयोः क्त्वा । अलं दत्त्वा । पीत्वा
खलु ॥

समानकर्तृकयोः पूर्वकाले ३ । ४ । २१ ॥

समानकर्तृकयोर्द्वात्वर्थयोः पूर्वकाले विद्यमानाद्घातोः क्त्वा ।
भुक्त्वा व्रजति । भुक्त्वा पीत्वा व्रजति ॥

समासे नञ्पूर्वे क्त्वो ल्यप् ७ । १ । ३७ ॥

अज्ययपूर्वपदेऽनञ्समासे क्त्वो ल्यप् । प्रकृत्य ॥

आभीक्ष्ण्ये णमुल् च ३ । ४ । २२ ॥

पौनःपुन्ये द्योत्ये पूर्वविषये णमुल् । चात् क्त्वा । द्वित्वम् ।
स्मारं स्मारं नमति शिवम् । स्मृत्वा स्मृत्वा ॥

उपमाने कर्मणि च ३ । ४ । ४५ ॥

कर्मणि कर्त्तरि चोपमाने उपपदे धातोर्णमुल् ॥

कपादिषु यथाविध्यनुप्रयोगः ३ । ४ । ४६ ॥

घृतनिधायन्निहितं जलम् । अजनाशं नष्टः ॥

इति कृत् । इति ३३ अंशाः ।

प्रातिपदिकार्थलिङ्गपरिमाणवचनमात्रे प्रथमा २ । ३ । ४६ ॥

प्रातिपदिकार्थमात्रे लिङ्गमात्राद्याधिक्ये संख्यामात्रे च प्रथमा
स्यात् । उच्चैः । नीचैः । कृष्णः । श्रीः । ज्ञानम् । अलिङ्गा निय-
तलिङ्गाश्च । प्रातिपदिकार्यमात्र इत्यस्योदाहरणम् । अनियतलि-
ङ्गास्तु लिङ्गमात्राद्याधिक्यस्य । तटः । तटी । तटम् । परिमाण-
मात्रे द्रोणो व्रीहिः । द्रोणरूपं यत्परिमाणं तत्परिच्छिन्नो व्रीहि-
रित्यर्थः । वचनं संख्या । एकः । द्वौ । बहवः ॥

सम्बोधने च २ । ३ । ४७ ॥

इह प्रथमा । हे राम ॥

कारके १ । ४ । २३ ॥

इत्याधिकृत्य ॥

कर्तुरीप्सिततमं कर्म १ । ४ । ४९ ॥

कर्तुः क्रियया आमुभिष्टतमं कारक कर्मसंज्ञम् ॥

अनभिहिते २ । ३ । १ ॥

इत्याधिकृत्य ॥

कर्मणि द्वितीया २ । ३ । २ ॥

अनुक्ते कर्मणि द्वितीया । हरिं भजति ॥

उभसर्वतसोः कार्याधिगुपर्यादिषु त्रिषु ॥

द्वितीयोप्रेडितान्तेषु ततोऽन्यत्रापि दृश्यते ॥

उभयतः कृष्णम् । सर्वतः कृष्णम् । उपर्युपरि लोकम् । इत्यादि ॥

स्वतन्त्रः कर्ता १ । ४ । ५४ ॥

क्रियाया स्वातन्त्र्येण विवक्षितोऽर्थः कर्तृसंज्ञः ॥

साधकतमं करणम् १ । ४ । ४२ ॥

क्रियासिद्धौ प्रकृतोपकारकं करणसंज्ञम् ॥

कर्तृकरणयोस्तृतीया २ । ३ । १८ ॥

अनभिहिते कर्तारि करणे च तृतीया । रामेण वागेन हतो वाली ।

प्रकृत्यादिभ्य उपसंख्यानम् ॐ ॥

प्रकृत्या चारुः । प्रायेण याज्ञिकः । इत्यादि ॥

सहयुक्तेऽप्रधाने २ । ३ । १९ ॥

सहायेन युक्ते अप्रधाने तृतीया । पुत्रेण सहागतः पिता । एवं

साक्षं प्रभृतियोगेऽपि ॥

विनापि तद्योगं तृतीया ॐ ॥

पुत्रेणागत ॥

कर्मणा यमभिप्रैति स सम्प्रदानम् १ । ४ । ३२ ॥

दानस्य कर्मणा यमभिप्रैति स संप्रदानसंज्ञः ॥

चतुर्थी सम्प्रदाने २ । ३ । १३ ॥

विप्राय गां ददाति ॥

तादर्थ्ये चतुर्थी वाच्या ❀

मुक्तये हरिं भजति ॥

नमःस्वतिस्वाहास्वधालंबपडयोगाच्च २ । ३ । १६ ॥

एभिर्योगे चतुर्थी । हरये नमः । इत्यादि ॥

ध्रुवमपायेऽपादानम् १ । ४ । २४ ॥

अपायो विश्लेषस्तस्मिन् साध्ये ध्रुवमधिभूतं कारकमपादानसंज्ञम् ॥

अपादाने पञ्चमी २ । ३ । २८ ॥

ग्रामादायाति । धावतोऽश्वात्पतति ॥

अन्यारादितरैर्दिवच्छब्दाऽञ्चूत्तरपदाजाहियुक्ते २ । ३ । २९

एभिर्योगे पञ्चमी । अन्यः भिन्नः आरात् इतरः ऋते वा

कृष्णात् । चैत्रात्पूर्वः फाल्गुनः । प्राक् प्रत्यक् दक्षिणा । दक्षणाहि

वा ग्रामात् ॥

इति ३४ अंशाः ।

दूरान्तिकार्थेभ्यो द्वितीया च २ । ३ । ३५ ॥

प्रातिपदिकार्थमात्रे एभ्यो द्वितीया चात्पञ्चमीतृतीये । ग्रामस्य

दूरं दूरात् दूरेण वा । एवमन्तिकयोगे । असत्त्ववचनस्यैव । नेह ।

दूरः पन्थाः ॥

पष्ठी शेषे २ । ३ । ५० ॥

कारकप्रातिपदिकार्थव्यतिरिक्तः स्वस्वामिभावादिः शेषस्तत्र

पष्ठी । सज्ञः पुरुषः । कर्मादीनामपि सम्बन्धमात्रविवक्षायां पष्ठचेव ।

सतां गतम् । सर्पिषो जानीते । मातुः स्मरति । इत्यादि ॥

कर्तृकर्मणोः कृति २ । ३ । ६५ ॥

कृद्योगे कर्त्तरि कर्मणि च षष्ठी । कृष्णस्य कृतिः । जगतः कर्त्ता
कृष्णः ॥

न लोकाव्ययनिष्ठाखलर्थतृनाम् २ । ३ । ६९ ॥

एषा प्रयोगे षष्ठी न । कुर्वन् कुर्वाणो वा सृष्टि हरिः । हरिं
दिदृक्षुः । अलंकरिष्णुर्वा दैत्यान् घातुको हरिः ॥

कमेरनिषेधः ❀ ॥

लक्ष्म्याः कामुको हरिः । जगत्स्रष्टा मुखं कर्तुम् । विष्णुना हता
दैत्याः । दैत्यान् हतवान् हरिः । ईपत्करः प्रपञ्चो हरिणा । तृन्निति
प्रत्याहारः । शानन् । सोमं पवमानः । चानञ् । आत्मानं मण्डयमान ।
शतृ । वेदमधीयन् । तृन् । कर्त्ता लोकान् ॥

द्विपः शतुर्वा ❀ ॥

मुरस्य मुरं वा द्विपन् । सर्वोऽयं कारकपष्टयाः प्रतिषेधः । शेषे
षष्ठी तु स्यादेव । ब्राह्मणस्य कुर्वन् । नरकस्य जिष्णुः ॥

आधारोऽधिकरणम् १ । ४ । ४५ ॥

कर्तृकर्मद्राग तन्निष्क्रियाया आधारः कारकमाधिकरणसंज्ञम् ॥

सप्तम्यधिकरणे च २ । ३ । ३६ ॥

अधिकरणं सप्तमी । चादृगन्तिकार्येभ्यः । औपश्रेयिको वैपयि-
कोऽभिव्यापकश्चेत्चाधारसिद्धिः । कटे आस्ते । म्याल्या पचति । मोक्षं
इच्छास्ति । सर्वस्मिन्नान्मास्ति । वनस्य दूरे अन्तिके वा । दृगन्तिक-
कार्येभ्य इति विभक्तित्रयेण सह चतस्रोऽत्र विभक्तयः षष्पिनाः ॥

यस्य च भावेन भावलक्षणम् २ । ३ । ३७ ॥

यस्य क्रियया क्रियान्तरं लक्ष्यते ततः सप्तमी । गोषु दृश्यमा-
नामु गतः ॥

यतश्च निर्धारणम् २ । ३ । ४१ ॥

जातिगुणक्रियार्थताभिः समुदायदिग्दृग्मस्य पृथक्करणं निर्धारणं
ततः षष्ठीसप्तमी । वृणा वृषु वा ब्राह्मणः श्रेष्ठः । गवां गोषु

वा कृष्णा बहुक्षीरा । गच्छतां गच्छत्सु वा धावञ्छीघ्रः । छात्रा-
णां छात्रेषु वा भैत्रः पटुः ॥ इति कारकप्रकरणम् ॥

इति ३५ अंशाः ।

अव्ययीभावः २ । १ । ५ ॥

अधिकारोऽयम् ॥

अव्ययं विभक्तिसमीपसमृद्धिवृद्धयर्थाभावात्ययासं-
प्रतिशब्दप्रादुर्भावपश्चाद्यथानुपूर्व्ययौगपद्यसादृश्य-
संपत्तिसाकल्यान्तवचनेषु २ । १ । ६ ॥

विभक्त्यर्थादिषु वर्तमानमव्ययं समर्थेन सुवन्तेन मह समस्यते
सोऽव्ययीभावः ॥

प्रथमानिर्दिष्टं समास उपसर्जनम् १ । २ । ४३ ॥

समासशास्त्रे प्रथमानिर्दिष्टमुपसर्जनसंज्ञम् ॥

उपसर्जनं पूर्वम् २ । २ । ३० ॥

समासे उपसर्जनं प्राक् प्रयोज्यम् । अव्ययीभावश्चेत्यव्ययत्वम् ।
हरौ इति अधिहरि । अत्र हरि ङि अधि इत्यलौकिकं विग्रहवा-
क्यम् ॥

अव्ययीभावश्च २ । ४ । १८ ॥

अयं नपुंसकम् ॥

ह्रस्वो नपुंसके प्रातिपदिकस्य १ । २ । ४७ ॥

अजन्तस्य । गाः पातीति गोपास्तस्मिन्नित्यधिगोपम् ॥

नाव्ययीभावादतोऽम् त्वपञ्चम्याः २ । ४ । ८३ ॥

अदन्तादव्ययीभावात् सुपो न लुक् । तस्य पञ्चमीं विना अमा-
देशः । कृष्णस्य समीपम् उपकृष्णम् ॥

तृतीयासप्तम्योर्वहुलम् २ । ४ । ८४ ॥

अम् उपकृष्णम् उपकृष्णेन उपकृष्णम् उपकृष्णे । मक्षिका-

णामभावः निर्माक्षिकम् । विष्णोः पश्चाद् अनुविष्णु । योग्यतावी-
प्सापदार्यानतिवृत्तिसादृश्यानि यथार्थास्तेषु । रूपस्य योग्यम् अनुरू-
पम् । वीप्सायां विकल्पः । अर्थमर्थं प्रति प्रत्यर्थम् । शक्तिमनति-
क्रम्य यथाशक्ति ॥ इत्यव्ययीभावः ॥

तत्पुरुषः २ । १ । २२ ॥

अधिकारोऽयम् ॥

द्विगुश्च २ । १ । २३ ॥

तत्पुरुषसंज्ञः ॥

कर्तृकरणे कृता बहुलम् २ । १ । ३२ ॥

कर्तारि करणे च तृतीया कृदन्तेन बहुलं समस्यते।हरिणा त्रातः
हरित्रातः । नखनिभिन्नः ॥

षष्ठी २ । २ । ८ ॥

सुबन्तेन । लोकस्य पतिः लोकपतिः ॥

विशेषणं विशेष्येण बहुलम् २ । १ । ५७ ॥

भेदकं समानाधिकरणेन भेदेन बहुलं समस्यते ॥

तत्पुरुषः समानाधिकरणः कर्मधारयः १ । २ । ४२ ॥

वृद्धश्चासौ पुरुषश्च वृद्धः पुरुष इति वा वृद्धपुरुषः । वृद्धौ च तौ
पुरुषौ च वृद्धपुरुषौ । वृद्धाश्च ते पुरुषाश्च वृद्धपुरुषाः । एवमग्रेऽपि
द्विवचन बहुवचने ज्ञेये । नीलोत्पलम् । नीलोत्पले नीलोत्पलानि ॥

पुंवत्कर्मधारयजातीयदेशीयेषु ६ । ३ । ४२ ॥

कर्मधारये जातीयदेशीययोश्च परतो भाषितपुंस्कात्पर ऊडभावो
यस्मिन् तथाभूतं पूर्वं पुंवत् । फुल्लता । फुल्लते । फुल्लताः ॥

उपमानानि सामान्यवचनैः २ । १ । ५५ ॥

समानाधिकरणैः । धन इव श्यामः धनश्यामः ॥

उपमितं व्याघ्रादिभिः सामान्याप्रयोगे २ । १ । ५६ ॥

उपमेयं व्याघ्रादिभिः समानाधिकरणैः समस्यते साधारणधर्म-
स्याप्रयोगे । पुरुषो व्याघ्र इव पुरुषव्याघ्रः । आकृतिगणोज्यम् ॥

तद्धितार्थोत्तरपदसमाहारे च २ । १ । ५१ ॥

तद्धितार्थे विषये उत्तरपदे परे समाहारे च वाच्ये दिक्संख्ये
समानाधिकरणे न समस्येते ॥

संख्यापूर्वो द्विगुः २ । १ । ५२ ॥

तद्धितार्थेत्यत्रोक्तः संख्यापूर्वो द्विगुः स्यात् ॥

द्विगुरेकवचनम् २ । ४ । १ ॥

द्विग्वर्थः समाहारः एकवत् ॥

स नपुंसकम् २ । ४ । १७ ॥

समाहारे द्विगुर्द्वयश्च नपुंसकम् । परबलिङ्गापवादः । पञ्चानां
पात्राणां समाहारः पञ्चपात्रम् । शेषो द्विगुर्वक्ष्यते ॥

इति ३६ अंशः ।

नञ् २ । २ । ६ ॥

सुपा सह समस्यते ॥

नलोपो नभः ६ । ३ । ७३ ॥

उत्तरपदे । अब्राह्मणः ॥

तस्मान्नुडचि ६ । ३ । ७४ ॥

लुप्तनकारान्नञ् उत्तरपदस्याजादेर्नुद् । अनश्वः ॥

कुगतिप्रादयः २ । २ । १८ ॥

समर्थेन नित्यं समस्यन्ते । कुत्सितः पुरुषः कुपुरुषः । ऊरी-
कृतम् । सुगलः प्रज्ञः इत्यादि तु उपपदसमासेनापि सिद्धम् ।
आदिग्रहणमगत्यर्थम् । प्रगतः आचार्यः आचार्यः । दुराचारः
पुरुषो दुष्पुरुषः । सुस्वभावः पुरुषः सुपुरुषः ॥

ऊयादिच्चिडाचश्च १ । ४ । ६१ ॥

एते क्रियायोगे गतिसंज्ञाः । ऊरीकृत्य । शुक्लीकृत्य । पट-
पटाकृत्य ॥

एकविभक्ति चापूर्वनिपाते १ । २ । ४४ ॥

विग्रहे यन्नियतविभक्तिकं तदुपसर्जनसंज्ञं स्यान्नतु तस्य पूर्व-
निपातः ॥

गोस्त्रियोरुपसर्जनस्य १ । २ । ४८ ॥

उपसर्जनं यो गोशब्दः स्त्रीप्रत्ययान्तं च तदन्तस्य प्रातिपदि-
कस्य ह्रस्वः । अतिमालः । निष्कौशाम्बिः अयमपि आदिसमासः ॥

उपपदमतिङ् २ । २ । १९ ॥

कुम्भं करोतीति कुम्भकारः । इह कुम्भ अस् कार् अ इत्यलो-
किकं प्रक्रियावाक्यम् ॥ इति तत्पुरुषः ॥

शेषो बहुव्रीहिः २ । २ । २३ ॥

अनेकमन्यपदार्थे २ । २ । २४ ॥

अनेकं प्रथमान्तमन्यस्य पदस्यार्थे वर्तमानं वा समस्यते । अप्र-
थमार्थे समानाधिकरणानां बहुव्रीहिरिति फलितम् । प्राप्तमुदकं यं
प्राप्तोदको ग्रामः । ऊढरथोऽनङ्गान् । उपहतपशू रुद्रः । उद्धृतौदना
स्थाली । पीताम्बरो हरिः । वीरपुरुषो ग्रामः ॥

स्त्रियाः पुंवद् भाषितपुंस्कादनूङ्समानाधिकरणे स्त्रि-
यामपूरणीप्रियादिषु ६ । ३ । ३४ ॥

तुल्ये प्रवृत्तिनिमित्ते यदुक्तपुंस्कं तस्मात्पर ऊङ् भावो यत्र
तथाभूतस्य स्त्रीवाचकशब्दस्य पुंवाचकस्येव रूपं समानाधिकरणे
स्त्रीलिङ्ग उत्तरपदे नतु पूरण्यां प्रियादा च परतः । गोस्त्रियोरिति
ह्रस्वः । चित्रगुः । रूपवद्भार्यः ॥

तेन सहेति तुल्ययोगे २ । २ । २८ ॥

तुल्ययोगे वर्तमानं सहेत्येतत्तृतीयान्तेन प्राग्वत् ॥

वोपसर्जनस्य ६ । ३ । ८२ ॥

। बहुव्रीहेरवयवस्य सहस्य सो वा । पुत्रेण सह सपुत्रो गतः, सह-
पुत्रो वा ॥

नद्युतश्च ५ । ४ । १५३ ॥

नद्यन्तोत्तरपदाददन्तोत्तरपदाच्च बहुव्रीहेः कप् ॥

केणः ७ । ४ । १३ ॥

के परे णो ह्रस्वः इति ह्रस्वे प्राप्ते ॥

न कपि ७ । ४ । १४ ॥

कपि परे ह्रस्वो न । सपत्नीकः । बहुकर्तृकः ॥

इति बहुव्रीहिः ॥

चार्थे द्वंद्वः २ । २ । २९ ॥

अनेकं सुवंतं चार्थे वर्तमानं वा समस्यते । स द्वंद्वः इतरेतर-
योगे । धवखदिरौ । समाहारे संज्ञापरिभाषम् । समाहारस्यैक्यादे-
कत्वम् ॥ इति द्वंद्वः ॥ इति समासाः ॥

इति ३७ अंशाः ।

तस्यापत्यम् ४ । १ । ९२ ॥

पृष्ठचन्तात्कृतसन्धेः समर्थादपत्येऽर्थे उक्ता वक्ष्यमाणाश्च अणा-
दयः प्रत्यया वा ॥

तद्धितेष्वचामादेः ७ । २ । ११७ ॥

विति णिति च तद्धिते परेऽचामादेरचो वृद्धिः ॥

किति च ७ । २ । ११८ ॥

किति तद्धिते तथा । आदिवृद्धिरन्त्योपधावृद्धी बाधते ॥

ओर्गुणः ६ । ४ । १४६ ॥

उवर्णान्तस्य भस्य गुणस्तद्धिते । उपगोरपत्यमौपगवः ॥

अत इञ् ४ । १ । ९५ ॥

अदन्तं यत्प्रातिपदिकं तत्प्रकृतिकात्पृथ्वन्तादिञ् अपत्येऽर्थे ।
दाक्षिः ॥

स्त्रीभ्यो ढक् ४ । १ । १२० ॥

स्त्रीप्रत्ययान्तेभ्यो ढक् अपत्ये ॥

आयनेयीनीयियः फढखल्लघां प्रत्ययादीनाम् ७।१।२॥

वैनतेयः ॥

इतश्चानिभः ४ । १ । १२२ ॥

इकारान्ताद्ब्रचचोऽपत्ये ढक् न त्विवन्तात् । दौलेयः । नैधेयः ।
अत्रेयः ॥

तदधीते तद्वेद ४ । २ । ५९ ॥

अत्रार्थे अणादयः ॥

नद्याभ्यां पदान्ताभ्यां पूर्वो तु ताभ्यामैच् ७।३।३ ॥

पदान्ताभ्या यकारखकाराभ्या परस्य न वृद्धिः । किंतु ताभ्या
पूर्वो क्रमादैचावागमौ । वैयाकरणः ॥

शेषे ४ । २ । ९२ ॥

अपत्यादिचतुरर्थ्यन्तादन्योऽर्थः शेषस्तत्राणादयः । चक्षुषा
गृह्यते चाक्षुषं रूपम् ॥

तत्र भवः ४ । ३ । ५३ ॥

अत्राणादयः । सृष्टे भवः सौम्यः ॥

तस्येदम् ४ । ३ । १२० ॥

अत्राणादयः । औपगवम् ॥

वृद्धिर्यस्याचामादिस्तद्वृद्धम् १ । १ । ७३ ॥

यस्य समुदायस्याचा मध्ये आदिर्वृद्धिस्तद्वृद्धसंज्ञम् ॥

त्यदादीनि च १ । १ । ७४ ॥

वृद्धसंज्ञानि ॥

वृद्धाच्छः ४ । २ । ११४ ॥

शालीयः । तदीयः ॥

वा नामधेयस्य वृद्धसंज्ञा ❀ ॥

देवदत्तः देवदत्तीयः ॥

तेन तुल्यं क्रिया चेद्वृत्तिः ५ । १ । ११५ ॥

ब्राह्मणवदधीते ॥

तस्य भावस्त्वतलौ ५ । १ । ११६ ॥

गोत्वम् गोता ॥

पः प्रत्ययस्य १ । ३ । ६ ॥

प्रत्ययस्यादिः प इत् ॥

गुणवचनब्राह्मणादिभ्यः कर्मणि च ५ । १ । १२४ ॥

प्यञ् चाद्भावे । जाड्यम् । ब्राह्मण्यम् ॥

संख्याया अवयवे तयप् ५ । २ । ४२ ॥

पञ्चतयम् ॥

द्वित्रिभ्यां तयस्यायज्वा ५ । २ । ४३ ॥

द्वयं द्वितयम् । त्रयं त्रितयम् ॥

तस्य पूरणे ङट् ५ । २ । ४८ ॥

एकादशः ॥

नान्तादसंख्यादेर्मट् ५ । २ । ४९ ॥

डटो मडागमः । पञ्चमः ॥

पट्कतिकतिपयचतुरान्ध्रुक ५ । २ । ५१ ॥

एषां शुगागमो ङटि । पष्ठः । चतुर्थः ॥

चतुरङ्गयतावाद्यक्षरलोपश्च ❀ ॥

द्वितीयः तुर्यः ॥

द्वेस्तीयः ५ । २ । ५४ ॥

द्वितीयः ॥

त्रेः संप्रसारणञ्च ५ । २ । ५५ ॥

तृतीयः ॥

विंशत्यादिभ्यस्तमडन्यतरस्याम् ५ । २ । ५६ ॥

एभ्यो डटस्तमडागमो वा ॥

तिविंशतोर्डिति ६ । ४ । १४२ ॥

विंशतेर्भस्य तिशब्दस्य लोपः डिति । विंशतितमः विंशः ।
एकविंशतितमः एकविंशः । शतादेर्नित्यं तमद् वक्ष्यते ॥

इति ३८ अंशाः ।

तदस्यास्त्यस्मिन्निति मत्तुप् ५ । २ । १४ ॥

गोमान् ॥

मादुपधायाश्च मतोर्वोयवादिभ्यः ८ । २ । ९ ॥

मवर्णाविर्णान्तान्मवर्णाविर्णोपधाच्च यवादिबर्जात्परस्य मतोर्मस्य
वः । किंवान् । ज्ञानवान् । विद्यावान् । लक्ष्मीवान् ॥

तसौ मत्वर्थे १ । ४ । १९ ॥

तान्तसान्तौ भसंज्ञौ मत्वर्थे प्रत्यये । यशस्वान् । भास्वान् ।
यवादेस्तु । यवमान् । भूमिमान् ॥

झयः ८ । २ । १० ॥

झयन्तान् मतोर्मस्य वः । विद्युत्वादे ॥

प्राणिस्थाधातोलजन्यतरस्याम् ५ । २ । १६ ॥

चूडालः चूडावान् ॥

अत इनिठनौ ५ । २ । ११५ ॥

वा । दण्डी ॥

ठस्येकः ७ । ३ । ५० ॥

अङ्गात्परस्येकादेशः । दण्डिकः दण्डवान् ॥

अस्मायामेधास्रजो विनिः ५ । २ । १२१ ॥

यशस्वी यशस्वान् । इत्यादि ॥

संख्याया विधार्थे धा ५ । ३ । ४२ ॥

क्रियामकारे वर्तमानात्संख्याशब्दात्स्वार्थे धा । चतुर्थो ॥

अतिशायने तमविष्टनौ ५ । ३ । ५५ ॥

अतिशयविशिष्टार्थवृत्तेः स्वार्थे षतो । अयमेपामतिशयेन
आढ्यः आढ्यतमः । लघुतमः ॥

टेः ६ । ४ । १५५ ॥

टेलोप इष्टमेयस्सु । लघिष्ठः ॥

तिङ्श्च ५ । ३ । ५६ ॥

तिङन्तादतिशये धोत्ये तमप ॥

तरत्तमर्षो घः १ । १ । २२ ॥

एतौ घसंज्ञी ॥

किमेत्तिङव्ययवादांश्चऽद्रव्यप्रकरणे ५ । ४ । ११ ॥

किम एदन्तात्तिङोऽव्ययाद्य यो घस्तदन्तादात्तुर्नतु द्रव्यप्रकरणे ।
किन्तमाम् । पचातितमाम् । उर्ध्वस्तमाम् । एदन्ताद्द्रव्यते । द्रव्यप्रकरणे
तु उर्ध्वस्तमस्तरुः ॥

द्विवचनविभज्योपपदे तरर्वायसुनौ ५ । ३ । ५७ ॥

द्वयोरेकस्यातिशये विभक्त्ये चोपपदे सुप्रतिङन्तात् षतो
स्तः । पूर्वयोरपवादः । अयमनयोरातिशयेन लघुर्लघुतरः लघु-
यान् । उदीच्याः प्राच्येभ्यः पटुतराः पटीयांसः । किन्तगम् ।
पचातितराम् । उर्ध्वस्तराम् । द्रव्यप्रकरणे तु उर्ध्वस्तरस्तरुः ॥

अत्यन्तस्वार्थे पिकन्तरप्रमयटः ॥

बहुतरकम् । अल्पात्तरम् । ब्रह्ममयम् ॥

संख्यायाः क्रियाभ्यावृत्तिगणने कृत्वसुत्र ५ । ४ । १७ ॥

क्रियाजन्मगणनवृत्तेः संख्याशब्दात्स्वार्थे कृत्वसुच् । पञ्चकृत्वो
भुङ्क्ते ॥

द्वित्रिचतुर्भ्यः सुच् ५ । ४ । १८ ॥

द्विर्भुङ्क्ते । त्रिः । चतुः ॥

एकस्य सकृच्च ५ । ४ । १९ ॥

सकृदित्यादेशः चात्सुच् । सकृद् भुङ्क्ते ॥

कृभ्वस्तियोगे संपद्यकर्त्तरि च्विः ५ । ४ । ५० ॥

अभूततद्भावे इति वाच्यम् ❀ ॥

विकारात्मतां प्राप्नुवत्यां प्रकृतौ वर्तमानाद्विकारशब्दात् स्वार्थे
च्विर्वा करोत्यादिभिर्योगे ॥

अस्य च्वौ ७ । ४ । ३२ ॥

अवर्णस्य ईत् च्वौ । वेरपृक्तस्य । अकृष्णः कृष्णः सम्पद्यते
तं करोति कृष्णीकरोति । ब्रह्मी भवति । गंगीस्यात् ॥

च्वौ च ७ । ४ । २६ ॥

च्वौ परे पूर्वस्य दीर्घः । शुचीभवति । पट्टस्यात् ॥

रीड् ऋतः ७ । ४ । २७ ॥

अकृद्यकारेऽसार्धधातुके यकारे च्वौ च ऋदन्ताङ्गस्य रीड् ।
मात्रीकरोति ॥ इति ताद्धिताः ॥

इति ३९ अंशाः ।

स्त्रियामित्यधिकृत्य ॥

अजाद्यतष्टाप् ॥

अजा । एडका । इत्यादि । खट्वा ॥

प्रत्ययस्थात् कात् पूर्वस्थात् इदाप्यसुपः ७।३।४४॥

प्रत्ययस्थात्कात् पूर्वस्य आत् इत् आपि परे स आप् सुपः परो
न चेत् । सर्बिका । कारिका । गङ्गाशब्दात् स्वार्थे कनि ततष्टापि च

इति ५ स्वः ॥

कृदिकारादक्तिनः ❀ ॥

रात्रिः रात्री ॥

पुंयोगादाख्यायाम् ४ । १ । ४८ ॥

या पुमाख्या पुंयोगात् स्त्रियां वर्त्तते ततो ङीप् । गोपस्य स्त्री गोपी ॥

स्वाङ्गाच्चोपसर्जनादसंयोगोपधात् ४ । १ । ५४ ॥

असंयोगोपधमुपसर्जनं यत्स्वाङ्गं तदन्तात्प्रातिपदिकाद्वा ङीप् । केशानतिक्रान्ता अतिकेशी अतिकेशा । चन्द्रमुखी चन्द्रमुखा । संयोगोपधात् । सुगुल्फा । उपसर्जनात्किम् । शिखा ॥

जातेरस्त्रीविषयादयोपधात् ४ । १ । ६३ ॥

जातिवाचि यन्न च स्त्रियान्नियतमयोपधमदन्तं ततः स्त्रिया ङीप् । तटी । घटी । औपगवी । कठी । बह्वची । स्त्रीविषयात्तु बलाका ॥ इति स्त्रीप्रत्ययाः ॥

इति ४० अंशाः ।

आद्यखण्डे पूर्वभागः पाणिनीये प्रवेशकृत् ।

वालानां बोधदः पूर्णः श्रीहेश्वरणेऽर्पितः ॥ १ ॥

इति प्रथमाध्यायस्य चतुर्थः पादः । समाप्तोऽयं प्रथमाध्यायः ।

अत्राशाः सूचिनिर्मित्यै कल्पिताः खद्विवद्वयः ।

तश्चत्वारिंशताध्यायोऽष्टाध्यायीयं भवेत्ततः ॥ १ ॥

सूच्या पादाः कादिसान्तैर्धर्णे (३२०) द्वात्रिंशदीरिताः ।

पादोऽशौर्दशभिर्ह्रस्वदीर्घाणेषु कल्पितैरिह ॥ २ ॥

पाणिनीयेऽष्टके सूत्रैर्विंशत्याशोऽसूचितैः ।

यद्वाङ्गैरेव कौमुद्यामष्टके चाशसूचनम् ॥ ३ ॥

इति श्रीमद्भट्टोजिदीक्षितकृतकौमुद्याः प्रतिबिम्बरूपायां सुगमकौमुद्यामाद्यखण्डे पूर्वभागः समाप्तः ।

सामान्ययोगी बालार्हः प्राक् प्रोक्तः प्रक्रियाक्रमः ।
तज्ज्ञानां हेतवे सोऽद्य विशेषेण निगद्यते ॥ १ ॥

यणो मयो द्वे वाच्ये ❀ ॥

मय इति पञ्चमी यण इति षष्ठीति पक्षे यस्यापि वा द्वित्वं तेन चत्वारि रूपाणि । सुद्धचुपास्यः । द्दचु ध्य्यु ध्यु । एवं मद्दुरिः । इत्यादी । हर्यनुभवः हर्यनुभवः । न ह्य्यस्ति न ह्यस्ति ॥

हलो यमां यमि लोपः ८ । ४ । ६४ ॥

हलः परस्य यमो लोपो वा यमि । लोपे द्वित्वामावे चैकयन्तु-
ल्पं रूपम् । लोपफलं तु आदित्यो देवतास्येति आदित्यं हविः ।
यमां यमीति यथासंख्यत्वान्माहात्म्यमित्यादी न । तवल्कारः ।
यण इति पञ्चमी मय इति षष्ठीति पक्षे कस्य द्वित्वम् । लस्य त्वन-
चि चोति तेन तवल्कारादौ रूपचतुष्टयम् ॥

शरः खयो द्वे ❀ ॥

त्रिस्थली त्रिस्थली । खय इति पञ्चमी शर इति षष्ठीति पक्षे
वत्सरः वत्सरः ॥

गोर्धूतौ छन्दसि । अध्वपरिमाणे च ❀ ॥

ओतोऽव् गव्यूतिः ॥

एत्येधत्यूठसु ६ । १ । ८९ ॥

- अवर्णादेजाद्योस्तेयेधत्योरूठि च वृद्धिरेकादेशः । उपैति । उपै-
धते । प्रष्टौहः ॥

अक्षादूहिन्याम् ❀ ॥

। अक्षौहिणी सेना ॥

स्वादीरोरिणोः ❀ ॥

स्वैरः । स्वैरी । स्वैरिणी ॥

प्रादूहोढोढ्यैष्येषु ❀ ॥

प्रौढः । प्रौढः । ऊढेति क्तान्तन्नतु क्तवत्वन्तस्येकदेशः अनर्थक-
त्वात् । तेन प्रौढवानित्यत्र न वृद्धिः । प्रौढिः । प्रैषः प्रैष्यः ॥

ऋते च तृतीयासमासे ❀ ॥

सुखार्तः ॥

प्रवत्सतरकम्बलवसनार्णदशानामृणे ❀ ॥

प्रार्णमित्यादि ॥

उपसर्गाद्विधातौ ६ । १ । ९१ ॥

अवर्णान्तादुपसर्गादकारादौ धातौ वृद्धिरेकादेशः । उपाच्छति ।
ऋत्यक इत्यपीह न ॥

वासुप्यापिशलेः ८ । १ । ९२ ॥

अवर्णान्तादुपसर्गाददादौ सुन्धातौ वृद्धिर्वा । प्रार्थनीयति
प्रर्थनीयति । लकारस्यापि ग्रहणात् । प्राल्कारीयति प्रल्कारीयति ।
तपरत्वाद्दीर्घे न । उपऋकारीयति उपर्कारीयति ॥

ऋत्यकः ६ । १ । ९२८ ॥

पदान्ता अक ऋति परे प्रकृत्या स्युर्ह्रस्वश्च वा । होत्ऋकारः ॥
ब्रह्म ऋषिः ब्रह्मर्षिः । होत् ऋकारः ॥

ऋति सवर्णे ऋ वा ❀ ॥

मध्ये द्वौ रेफौ अभितोज्ज्मक्तिश्च । होत्ऋकारः होत्कारः ॥

लृति सवर्णे लृ वा ❀ ॥

मध्ये द्वौ लकारौ अभितोऽज्ज्मक्तिश्च । उभयत्र पाक्षिक ऋत्यक
इति प्रकृतिभावः । होत् लृकारः होत्लृकारः होत्कारः ॥

एडिः पररूपम् ६ । १ । ९४ ॥

आदुपसर्गादेडादौ धातौ पररूपमेकादेशः । प्रेजते । उपोपति ॥

एडादौ सुन्धातौ वा ❀ ॥

उपेडकीयति उपेडकीयति ॥

एवे चानियोगे ❀ ॥

केव भोक्ष्यसे । आनेयोगे किम् । तवैव ॥

शकन्धादिषु पररूपं वाच्यम् तच्च टेः ❀ ॥

शकन्धुः । कर्कन्धुः । सीमन्तः केशवेशे । सीमान्तोऽन्यः ।
मनीषा । पतंजलिः । सारंगः पशुपक्षिणोः । साराङ्गोऽन्यः । आकृ-
तिगणोऽयम् । मार्त्तडः ॥

इति ४१ अंशाः ।

ओत्वोष्ठयोः समासे वा ❀ ॥

स्थूलोतुः स्थूलौतुः । विम्बोष्ठः विम्बौष्ठः ॥

ओमाडोश्च ६ । १ । ९५ ॥

ओमि आडि चात्परे पररूपमेकादेशः । शिवायौ नमः । शिवेहि
अव आ इहि । अवेहि अत्रैत्येधतीति वृद्धिर्नेति पुरस्तादपवादपरि-
मापाया वक्ष्यते ॥

उस्योमाङ्क्षाटः प्रतिषेधः ❀ ॥

उसि ओमाडोश्च परयोराटः पररूपं नेत्यर्थः । उस्त्रामैच्छत्
औस्त्रियत् । औकारीयत् । औढीयत् ॥

अव्यक्तानुकरणस्यात् इतौ ६ । १ । ९८ ॥

ध्वनेरनुकरणस्ययोच्छब्दस्तस्मादेती परे पररूपमेकादेशः ।
पटत् इति पटिति । एकाचो न । श्रुदिति ॥

नाम्नेडितस्यान्त्यस्य तु वा ६ । १ । ९९ ॥

आम्नेडितस्य प्रागुक्तं न । अन्त्यस्य तु तकारमात्रस्य वा डाचि
बहुलं द्वे इति बाहुलकादित्वम् ॥

तस्य पराम्नेडितम् ८ । १ । २ ॥

द्विरुक्तस्य परं रूपमाम्नेडितसंज्ञम् । पटत् पटिति, पटत् पट-
दिति ॥

सर्वत्र विभाषा गोः ६ । १ । १२२ ॥

लोके वेदे चैडन्तस्य गोरति वा प्रकृतिभावः पदान्ते । गो
अग्रम् गोऽग्रम् ॥

अवङ् स्फोटायनस्य ६ । १ । १२३ ॥

अचि परे पदान्ते एडन्तस्य गोरवङ् वा । गवाग्रम् । व्यवस्थि-
तविभापया गवाक्षः ॥

इन्द्रे च ६ । १ । १२४ ॥

गोरवङ् इन्द्रे । गवेंद्रः ॥

इकोऽसवर्णे शाकलयस्य ह्रस्वश्च ६ । १ । १२७ ॥

पदान्ता इकोऽसवर्णेऽचि परे प्रकृत्या स्युः ह्रस्वश्च वा । चक्रि
अत्र चम्पत्र । हरी एतौ इत्यादौ नास्य प्रवृत्तिः । छुतप्रगृह्या
इत्यत्र नित्यग्रहणात् ॥

न समासे ❀ ॥

वाप्यश्वः ॥

सिति च ❀ ॥

पार्श्वम् ॥

ऋत्यकः ❀ ॥

ब्रह्म ऋषिः ब्रह्मर्षिः ॥

समासेऽपि ॥ ❀ ॥

सप्त ऋषीणां सप्तर्षीणाम् ।

वाक्यस्य टेः प्लुत उदात्तः ८ । २ । ८२ ॥

इत्याधिकृत्य ॥

प्रत्यभिवादेऽशूद्रे ८ । २ । ८३ ॥

अशूद्रविषये प्रत्यभिवादे यद् वाक्य तस्य टेः प्लुतः । भो आयु-
ष्मानेधि देवदत्ता ३ ॥

स्त्रियां न ❀ ॥

मो आयुष्मती भवगार्गी । नाम गोत्रं वा यत्रान्ते प्रयुज्यते त-
त्रैव सुतः । नेह । आयुष्मानेधि ॥

भोराज्यन्यविशां वा ॐ ॥

आयुष्मानेधि मोः ३ । आयुष्मानेधीन्द्रमर्मा ३ न । आयुष्मा-
नेधीन्द्रपालिता ३ ॥

हेहेप्रयोगे हेहयोः ८ । २ । ८५ ॥

एतयोः प्रयोगे दूराद्धूते यद्वाक्यं तत्र हेहयोगेव सुतः । हे ३
राम । राम हे ३ ॥

गुरोरनृतोऽनन्त्यस्याप्येकैकस्य प्राचाम् ८ । २ । ८६ ॥

दूरात्संबोधने यद्वाक्यं तस्य ऋद्धिन्नस्यानन्त्यस्यापि गुरोर्मा
पर्यायेण प्लुतः । हे ३ वदत्त । देवता ३ त्त । देवदत्ता ३ । प्राचा-
मिति योगविभागात्सर्वप्लुतपिक्ल्पः ॥

अप्लुतवदुपस्थिते ६ । १ । १२९ ॥

उपस्थितोऽनार्थ इति शब्दस्तस्मिन् परेप्लुतोऽप्लुतवन् । अप्लु-
तकार्य यणादिकं क्वेति मुश्मेकेति ॥

ईदूदेद् द्विवचनं प्रगृह्यम्

मणीवेति तु इवाथं वशब्दो वाशब्दो वा बोध्यः ॥

निपात एकाजनाद् १ । १ । १४ ॥

एकोऽनिपात आइवर्जः प्रगृह्यः । इ इन्द्रः । अनाडित्युक्तेगडि-
दाकारः प्रगृह्य एव । आ एवं नु मन्यमे । आ एव किञ्च तत् ।
डित्तु न प्रगृह्यः । ईपदुष्णम् ओष्णम् । वाक्यस्मरणयोराडित् अन्वय
डिदिति विवेकः ॥

इति ४२ अंशाः ।

संबुद्धौ शाकल्यस्येतावनार्थे १ । १ । १६ ॥

संबुद्धिनिमित्तक ओकारो वा प्रगृह्योऽवदिक्रुतौ । विष्णो इति
विष्णविति ॥

उभः १ । १ । १७ ॥

उज इतौ वा प्रागुक्तम् । उ इति विति ॥

ऊँ १ । १ । १८ ॥

उज इतौ दीर्घोऽनुनासिकः प्रगृह्यश्च । ऊँ इत्ययमादेशो वा । ऊँ इति विति ॥

मय उभो वो वा ८ । ३ । ३३ ॥

मयः परस्य उभो वो वागचि । किमु उक्तम् किम्वुक्तम् । वस्या सिद्धत्वान्नानुस्वारः ॥

ईदूतौ च सप्तम्यर्थे १ । १ । १९ ॥

सप्तम्यर्थे पर्यवसन्नमीदूदन्तं प्रगृह्यम् । ययी आस्ते । तनू इति छन्दसि ॥

अणो प्रगृह्यस्यानुनासिकः ८ । ४ । ५७ ॥

अप्रगृह्यस्याणोऽवसानेऽनुनासिको वा । दार्धिं दधि ॥

उदः स्थास्तम्भोः पूर्वस्य ८ । ४ । ६१ ॥

उदः परयोः स्थास्तम्भोः पूर्वसवर्णः । आदेः परस्य । उत्थानम् । उत्थानम् । उत्तम्भनम् । अत्र सस्य थः । तस्य शरोश्शरीति वा लोपः । तदभावे थस्यैव श्रवणं नतु चर्त्वम् । चर्त्वं प्रति थस्यासिद्धत्वात् ॥

मो राजि समः कौ ८ । ३ । २५ ॥

किवन्ते राजतौ परे समो मस्य म एव । सम्राट् ॥

हे मपरे वा ८ । ३ । २६ ॥

मपरे हकारे परे मस्य म एव स्याद्वा । किम् हल्लयति किं हल्लयति ॥

यवलपरे यवलावेति वक्तव्यम् ❀ ॥

किञ्चः।किञ् हल्लयति । किल् ह्लादयति । पक्षे किञ्चः। इत्यादि॥

नपरे नः ८ । ३ । २७ ॥

नपरे हकारे परे मस्य नो वा । किन् हुते किं हुते ॥

ङ्णोः कुक्कुटुक् शरि ८ । ३ । २८ ॥

ङ्कारणकारयोः कुक्कुटुकावागमौ वा शरि । तयोरसिद्धत्वाज्-
इत्वन्न ॥

चयो द्वितीयाः शरि पौष्करसादेः ❀ ॥,

प्राङ् खपष्ठः प्राङ् क्षष्ठः प्राङ् पष्ठः । सुगण् द् पष्ठः सुगण् द्
पष्ठः सुगण् पष्ठः ॥

डः सिधुद् ८ । ३ । २९ ॥

डात्परस्य सस्य धुडा । पदत्सन्तः पदत्सन्तः ॥

नश्च ८ । ३ । ३० ॥

नान्तात्पदात्परस्य सस्य धुडा । सन् त्सः सन्तः ॥

शि तुक् ८ । ३ । ३१ ॥

पदान्तस्य नस्य शि परे तुग्वा । सञ्छंभुः सञ्छंभुः सञ्छंभुः
सञ्छंभुः । इह तुक्छत्वचलोपानां विकल्पात् अछौ अचछा अच-
शावशाभिति रूपचतुष्कम् ॥

आङ्माङोश्च ६ । १ । ७४ ॥

एतयोश्छे तुक् । पदान्तादिति विकल्पापवादः । आच्छादयति ।
माच्छिदत् ॥

समः सुटि ८ । ३ । ५ ॥

समो रुः सुटि।बलोन्त्यस्य अनुस्वारानुनासिकौ विसर्गः विसर्ज-
नीयस्य सः एतदपवादे वा शरीति पाक्षिके विसर्गे प्राप्ते ॥

संपुंकानां सः ❀ ॥

संस्कृता संस्कृतां समो वा लोपमेक इति भाष्यम् । लोपस्यापि
रुप्रकरणस्थत्वादननुस्वारानुनासिकाभ्यामेकसमपि रूपद्वयम् । द्विस-
न्तूक्तमेव । तत्रानचीति द्वित्वे त्रिसमपि रूपद्वयम् । अनुस्वारविसर्ग-
जिह्वामूलीयोपध्मानीययमानामकारोपरि शर्षु च पाठेनाऽनुस्वारस्या-

प्यच्त्वात् । अनुनासिकवतां त्रयाणां शरः खयः इति कद्वित्वे षट् ।
अनुस्वारवतामनुस्वारस्यापि द्वित्वे द्वादश । एषामष्टादशानां तकारस्य
द्वित्वे वचनान्तरेण पुनर्द्वित्वे एकतं द्वितं त्रितमिति चतुष्पञ्चाशत् ।
अणोऽनुनासिकत्वेऽष्टोत्तरं शतम् ॥

पुमः खय्यम्परे ८ । ३ । ६ ॥

अम्परे खयि पुम्शब्दस्य रुः । संपुंकानामिति सः । पुँस्को-
किलः पुँस्कोकिलः । पुँस्पुत्रः पुँस्पुत्रः । ख्याजादेशेन । पुँख्यानम् ॥

नृन्पे ८ । ३ । १० ॥

नृनित्यस्य रुर्वा पकारे । नृं ऽ पाहि नृं ऽ पाहि नृः पाहि
नृः पाहि नृन् पाहि ॥

कानाम्प्रेडिते ८ । ३ । १२ ॥

कान्नकारस्य रुः स्यादाम्प्रेडिते परे । संपुंकानामिति सः । यद्वा ॥

कस्कादिषु च ८ । ३ । ४८ ॥

एष्विण, उत्तरस्य विसर्गस्य षोऽन्यत्र तु सः । कुष्वोरित्यस्या-
पवादः । काँस्कान् काँस्कान् । कस्कः । कौतस्कुतः । सर्पिष्कु-
ण्डिका । आकृतिगणोऽयम् ॥

इति ४३ अंशाः ।

शर्परे विसर्जनीयः ८ । ३ । ३५ ॥

शर्परे खरि विसर्जनीयस्य विसर्जनीयो न त्वन्यत् । कः त्सरुः ।
कुष्वोरित्यस्य विषयेष्वयमेव । घनाघनः क्षोभणः । इह सत्त्वं
जिह्वामूलीयश्च न ॥

खर्परे शरि वा विसर्गलोपः ❀ ॥

रामस्थाता रामःस्थाता रामस्थाता । त्रैरूप्यम् ॥

सो पदादौ ८ । ३ । ३८ ॥

विसर्गस्य सो पदाद्योः कुष्वोः । पाशकल्पककाम्येष्विति वृत्तिः ।
यशस्कल्पम् । यशस्कम् । यशस्काम्यति ॥

अनव्ययस्येति वाच्यम् ❀ ॥

प्रातःकल्पम् । काम्ये रोरेव नेह । गीः काम्याति ॥

इणः पः ८ । ३ । ३३ ॥

इणः परस्य विसर्गस्य पः पूर्वविषये । सर्पिष्पाशम् इत्यादि ॥

नमस्पुरसोर्गत्योः ८ । ३ । ४० ॥

गतिसंज्ञयोरनयोर्विसर्गस्य सः कुष्पोः । नमस्करोति । साक्षा-
त्प्रभृतीनि चेति वा गतिसंज्ञा । तदभावे नमः करोति । पुरस्करोति ।
पुरोव्ययमिति नित्यं गतिसंज्ञा । इदुदुपधस्येत्यनेन एकादेशशास्त्र-
निमित्तकस्य न पत्वम् । मातुः कृपा ॥

मुहुसः प्रतिषेधः ❀ ॥

मुहुः कामा ॥

तिरसोऽन्यतरस्याम् ८ । ३ । ४३ ॥

सो वा कुष्पोः । तिरस्कृत्वा तिरःकर्ता ॥

द्विस्रिश्चतुरिति कृत्वोऽर्थे ८ । ३ । ४३ ॥

कृत्वोर्थे वर्तमानानाभिषां विसर्गस्य पो वा कुष्पोः । द्विष्करोति
द्विःकरोति । इत्यादि ॥

इसुसोः सामर्थ्ये ८ । ३ । ४४ ॥

एतयोर्विसर्गस्य पकारो वा कुष्पोः । सर्पिष्करोति सर्पिःकरोति
धनुष्करोति धनुःकरोति ॥

नित्यं समासेऽनुत्तरपदस्थस्य ८ । ३ । ४५ ॥

इसुसोर्विसर्गस्यानुत्तरपदस्थस्य समासे नित्यं पः कुष्पोः । सर्पि-
ष्कुण्डिका । धनुष्कपालम् ॥

अतः कृकमिकंसकुम्भपात्रकुशाकर्णीष्यनव्ययस्य

८ । ३ । ४६ ॥

अकाराद्नुत्तरस्यानव्ययस्य विसर्गस्य समासे नित्यं सकारादेशः
करोत्यादौ परे ननुत्तरपदस्थस्य । अयस्कारः । अयस्काम इत्यादि ॥

अधःशिरसी पदे ८ । ३ । ४७ ॥

समासेऽनुत्तरपदस्थस्य एतयोर्विसर्गस्य सः पदशब्दे परे । अधः
स्पदम् । शिरस्पदम् । कस्कादिषु च । भास्करः । भोस् भगोस्
अघोस् इति सान्ता निपाताः । तेषां रुत्वे यत्वे च ॥

व्योर्लघुप्रयत्नतरः शाकटायनस्य ८ । ३ । १८ ॥

पदान्तयोर्यवयोर्लघूच्चारणौ यवौ वा शि ॥

ओतो गार्ग्यस्य ८ । ३ । २० ॥

ओकारात्परस्य पदान्तस्थालघुप्रयत्नस्य यकारस्य नित्यं लोपः ।
भो अच्युत । लघुप्रयत्नपक्षे भोयच्युत ॥

उभि च पदे ८ । ३ । २३ ॥

अवर्णपूर्वयोः पदान्तयोर्यवयोर्लोप उभि परे । स उ एकाग्रिः ॥

रोऽसुपि ८ । २ । ६९ ॥

अहो रेफादेशो नतु सुपि । रोऽपवादः । अहरहः । अहर्गणः ।
सुपि तु अहोभ्याम् । अत्राहन्निति रुत्वम् ॥

रूपरात्रिरथन्तरेषु रुत्वं वाच्यम् ❀ ॥

अहोरूपम् । गतमहो रात्रिरेषा । अहोरात्रः । अहोरथन्तरम् ॥

अहरादीनां पत्यादिषु वा रेफः ❀ ॥

विसर्गापवादः । अहर्पतिः । गीर्पतिः । धूर्पतिः । पक्षे विस-
र्गोपध्मानीया ॥

सोऽचि लोपे चेत्पादपूरणम् ६ । १ । १३४ ॥

सस् इत्यस्य सोर्लोपः स्यादचि । पादश्चेत्लोपे सत्येव पूर्येत ।
शेमामविद्धिप्रभृतिम् । सैष दाशरथी रामः । लोपे चोदिति किम् ।
स एवमुक्त्वा वचनम् । अवधारणान्नेह । सोऽहमाजन्मशुद्धानाम् ॥
इति प्रायोविशेषतन्धिप्रकरणम् ॥

इति ४४ अंशाः ।

अथ पुल्लिङ्गादिषु प्रायो विशेषशब्दाः ।

प्रथमचरमतयाल्पाद्धकतिपयनेमाश्च १ । १ । ३३ ॥

जसः कार्यं प्रति सर्वनामसंज्ञा वा । प्रथमे प्रथमाः । तयः प्रत्य-
यस्ततस्तदन्ता प्राह्याः । द्वितये द्वितयाः । शेषं रामवत् । नेमं
नेमाः । शेषं सर्ववत् ॥

तीयस्य डित्सु वा ❀ ॥

द्वितीयस्मै द्वितीयायेत्यादि । निर्जरः ॥

जराया जरसन्यतरस्याम् ७ । २ । १०१ ॥

जराशब्दस्य जरस् वा अजादौ विभक्तौ । एकदेशविकृतस्यान-
न्यत्वात् जरशब्दस्य जरस् । निर्जरसां । निर्जरसः । इत्यादि । पक्षे
हलादौ च रामवत् । भिति निर्जरः । इत्येकम् ॥

पदत्रोमासह्रत्रिंशसन्यूपन्दोपन्यकञ्चक्रुदत्रासञ्च-
स्रप्रभृतिषु ६ । १ । ६३ ॥

पादादीनां शसादौ पदादय आदेशा वा ॥

मांसपृतनासानूनां मांसपृत्स्रवो वा शसादौ ❀ ॥

पादः । पादौ । पादाः । पादम् । पादौ । पदः पादान् । दतः ।
दता । दद्यामित्यादि । मासः । मासा । माभ्याम् । यूपणः । यूप-
भ्याम् । यूपिण यूपिणि । पक्षे रामवत् । एवं दन्तादीनां स्वस्वलिङ्गे
रूपाणि ज्ञेयानि । विस्तरमयान्न सर्वेषां लेखः । तत्र पुंसि पाददन्त-
मासयूपाणां पद् दत् मास् यूपन् इति । स्त्रियां नासिकानिशापृत-
नानां नस् निष् पृत् इति । ह्रींवे हृदयअसृज्यकृत्शकृत्उदकआ-
स्यमांसानां हृद् असन् चकन् शकन् उदन् आसन् मांस इति ।
पुंस्त्रीवयोः दोषसान्वोः दोपन् स्तु इति । पृहन्निति सूत्रे प्रभृतिग्र-
हणं प्रकारार्थम् । तेन शसादेरन्यत्राप्यादेशः । पदोन्निस्रणोऽस्त्रि-
याम् । पदादयः स्तुपर्यन्ताः पृथगेव शब्दा इत्येके । शमादिवि-
पयाणि प्रकृत्यन्तराण्येव पदादय इति परे । ब्रह्मः ॥

संख्याविसायपूर्वस्याहस्याहनन्यतरस्यां ङौ६।३।११०॥

संख्यादिपूर्वस्याहस्याहनादेशो वा ङौ परतः। द्वयोरहोर्भवी व्यहः ।
व्यद्वि व्यहनि । व्यद्वे । एवं विगतमहर्व्यद्वः । अद्वः सायः सायाद्वः ।
व्यद्वे इत्यादि ॥

आतो धातोः ६ । ४ । १४० ॥

आदन्तो यो धातुस्तदन्तस्य भस्याङ्गस्य लोपः । विश्वपाः ।
विश्वपौ । विश्वपः । हे विश्वपाः । एवं शंखध्मादयः । धातोः
किम् । हाहान् । हाहै । हाहाः । हाहौः । शेषं विश्वपावत् । आत
इति योगविभागादधातोरपि कचिदालोपः । क्त्वः श्रः । आतो
नाप इति वार्तिकात् आवन्तभिन्नाः सर्वे आदन्ता विश्वपावत्
इति परे ॥

अनङ् सौ ७ । १ । ९३ ॥

सख्युरङ्गस्यानङादेशोऽसम्बुद्धौ सौ । सखा । हे सखे ॥

सख्युरसम्बुद्धौ ७ । १ । ९२ ॥

सख्युरङ्गात्परं संबुद्धिवर्जं सर्वनामस्थानं णित्कार्यकृत् । अचो-
ञ्जिगति । सखायौ । सख्या । सख्ये ॥

ख्यत्यात्परस्य ६ । १ । ११२ ॥

खितिशब्दाभ्यां खीतीशब्दाभ्यां कृतयणादेशाभ्यां परस्य ङ-
सिङ्सोरत् उत् । सख्युः ॥

औत् ७ । ३ । ११८ ॥

इदुभ्यां डेरौत् । सख्यौ ॥

पतिः समास एव १ । ४ । ८ ॥

पतिशब्दः समास एव धिसंज्ञः । पत्या । पत्ये इत्यादि ।
समासे तु भूपतिना ॥

कतित्रिशब्दौ नित्यं बहुवचनान्तौ ॥

। बहुगणवतुडतिसंख्या १ । १ । २३ ॥

एते संख्यासंज्ञाः ॥

डति च १ । १ । २५ ॥

डत्यन्ता संख्या पट्संज्ञा ॥

पड्भ्यो लुक् ७ । १ । २२ ॥

पड्भ्यः परयोर्जश्शसोर्लुक् । लुका लुप्तत्वाज्जसि चेति गुणो न ।
कति । कति । इत्यादि । अस्मद्युष्मट्पट्संज्ञास्त्रिषु सरूपाः । त्रयः ॥

त्रेस्त्रयः ७ । १ । ५३ ॥

त्रिशब्दस्य त्रयादेश आमि । त्रयाणाम् । पपीः । पप्यौ ।
पपीम् । पपीन् । पप्याम् । डौ पपी । एवं ययीवातप्रम्यादयः ।
उन्नीः । धातुना संयोगस्य विशेषणघण् स्यादेव । उन्न्यौ । डौ
उन्न्याम् । एवं ग्रामणीः । सेनानीः ॥

गतिकारकेतरपूर्वपदस्य यण् नेप्यते ❀ ॥

शुद्धधियौ । परमधियौ । दुर्धियः इति तु दुस्वियता धीर्येपा-
मिति विग्रहे दुरो धीशब्दं प्रति गतित्वाभावात् । एवं वृश्चिकभिय
इति । वृश्चिकसंबन्धिनी भीरिति विग्रहात् । नीः । नियौ । नियाम् ॥

न भूसुधियोः ६ । ४ । ८५ ॥

एतयोर्घण् न आचि सुपि परे । सुधीः । सुधियौ ॥

ओः सुपि ६ । ४ । ८३ ॥

धात्ववयवसंयोगपूर्वो न भवति य उवर्णस्तदन्तो यो धातुस्तद-
न्तस्यांकाचोऽङ्गस्य यणजादौ सुपि । खलपूः । खलपूर्वा ॥

तृज्वत्क्रोष्टुः ७ । १ । ९५ ॥

क्रोष्टुशब्दस्तृजन्तेन तुल्यं भवति असंबुद्धौ सर्वनामस्थाने । क्रो-
ष्टुस्थाने क्रोष्टुशब्दः प्रयोज्य इत्यर्थः । क्रोष्टा । क्रोष्टारौ । क्रोष्टून् ॥

विभाषा तृतीयादिष्वचि ७ । १ । ९७ ॥

अजादिषु तृतीयादिषु क्रोष्ट्वा वृज्वत् । क्रोष्ट्वा । नुमचिरेति वृद् ।
क्रोष्ट्नाम् । क्रोष्ट्वा । क्रोष्ट्वाः । पक्षे हलादौ च शम्भुवत् । वृद्ः ।
वृद्धौ । वृद्धम् । स्वभूः । स्वभुवौ । सुल्वौ । परमलुवौ ॥

वर्षाभ्वश्च ६ । ४ । ८४ ॥

अस्योवर्णस्य यणचि सुपि । वर्षाभ्वौ । दम्भवतीति दम्भूः ।
उणादिषु दम्भ्वौ । द्भूवत् ॥

दन्करपुनःपूर्वस्य भुवो यण् वक्तव्यः ❀ ॥

दन्भवम् । करभ्वौ । दीर्घपाठे तु कर एव कारः । कारभ्वौ ।
पुनर्भ्वौ । दम्भूकाराभूशब्दौ तु स्वयंभूवत् । नप्नादयो धावृवत् ।
उद्गातुरपि दीर्घः । उद्गातारौ । ना । नरौ । हे नः ॥

नृ च ६ । ४ । ६ ॥

नृइत्यस्य नामि वा दीर्घः । नृणाम् नृणाम् । कृ तृ अनयोस्तु-
करणे प्रकृतिवदनुकरणामिति वैकल्पिकातिदेशादित्वे रपरत्वम् ।
कीः । किरौ । किरः । तीः । तिरौ । तिरः । इत्यादि गीर्णत् ।
इत्वाभावे तु कृः । क्रौ । क्रः । कृन् । इत्यादि । डे' । ड्यौ । एवं
सेः । स्मृतेः ॥

गोतो णित् ७ । १ । ९० ॥

गोशब्दात्परं सर्वनामस्थानं णित्कार्यकृत् ॥

औतोऽम्शसोः ६ । १ । ९३ ॥

ओकारादम्शसोरच्याकार एकादेशः । गौ' । गावौ ।
गाम् । गाः ॥

ओतो णिदिति वाच्यं विहितविशेषणं च ❀ ॥

मुद्यौः । स्मृतौः । हे मानो । इत्यादीं सारोशागन्ताद्विहित-
त्वामावात्त णिदत् ॥

रायो हलि ७ । २ । ८५ ॥

रेशब्दस्याकारोन्तादेशो ह्लादी विमक्तौ । राः । रायौ । गभ्याम् ॥
इति ४६ अंशाः ।

हो ङः

मुलोपः । लिद् लिङ् । लिर्हा । लिङ्भ्याम् । लिङ्मु लिङ्त्सु ॥

दादेर्द्धातोर्घः ८ । २ । ३२ ॥

उपदेशे दादेर्द्धातोर्हस्य घः श्लि पदान्ते च ॥

एकाचो वशो भष् झपन्तस्य र्व्योः ८ । २ । ३७ ॥

धातोख्यवो य एकाच् झपन्तस्तद्वयवस्य वशो मप मे धे
पदान्ते च । धुक् धुग् । दुहौ ॥

वा दुहमुहण्युहण्णिहाम् ८ । २ । ३३ ॥

एपां हस्य वा घो श्लि पदान्ते च । धुक्ग् धुद्द् । धृशु
धृद्सु धृद्त्सु ॥

वाह ऊङ् ६ । ४ । १३२ ॥

भस्य वाहः सम्प्रसारणमूट् । वृद्धिः । विशोहः । विशोहा ॥

चतुरङ्गनहोरामुदात्तः ७ । १ । ९८ ॥

एतयोराम् सर्वनामस्थाने स चोदात्तः ॥

सावनडुहः ७ । १ । ८२ ॥

अस्याकारात् तुम् सौ परे । संयोगान्तलोपस्यामेढ्रत्वान्तलोपो
न । अनङ्गान् ॥

अम् सम्बुद्धौ ७ । १ । ९९ ॥

चतुरङ्गनहोराम् सम्बुद्धौ । हे अनङ्गान् । वसुक्स्विति दः ।
अनङ्गान्चामित्यादि ॥

सहेः साडः सः ८ । ३ । ५६ ॥

साडरूपस्य सहेः सस्य मूर्धन्यः । तुगपाद् । तुगसाहो चत्वारः ॥

पट्चतुर्भ्यश्च ७ । १ । ५५ ॥



। पट्संज्ञकेभ्यश्चतुरश्च परस्य आमो जुडागमः । चतुर्णाम् चतुर्षु ॥

मो नो धातोः ८ । २ । ६४ ॥

धातोर्मस्य नः पदांते नत्वस्यासिद्धत्वान्नलोपो न । प्रशान् ।
प्रशान्भ्याम् । वृत्रहा । वृत्रहणौ ॥

एकाजुत्तरपदे णः ८ । ४ । १२ ॥

एकाजुत्तरपदं यस्य तस्मिन्समासे पूर्वपदस्थान्निमित्तात्परस्य
प्रातिपदिकान्तनुम्विभक्तिस्थस्य नस्य नित्यं णः ॥

हो हन्तेऽङ्गिणेषु ७ । ३ । ५४ ॥

जिति णिति च प्रत्यये नकारे च परे हन्तेर्हस्य कुत्वम् । वृत्रघ्नः ॥

हन्तेः ८ । ४ । २२ ॥

उपसर्गस्थान्निमित्ताद्धन्तेर्नस्य णः । प्रहण्यात् ॥

अत्पूर्वस्य ८ । ४ । २२ ॥

हन्तेरत्पूर्वस्यैव नस्य णः नान्यस्य । प्रघ्नन्ति । वृत्रघ्ना । एवं
शार्ङ्गिन्यशास्विन्नर्यमन् पूषन् ॥

मघवा बहुलम् ६ । ४ । १२८ ॥

मघवन्शब्दस्य वा वृ इत्यन्तादेशः । उपधादीर्घः । इह संयो-
गान्तलोपस्यासिद्धत्वं तु बाहुलकात् । मघवान् । मघवन्तौ । हे
मघवन् । मघवतः । पक्षे मघवा । सुदि राजवत् ॥

श्वयुवमघोनामतद्धिते ६ । ४ । १३३ ॥

अन्नन्तानां मसंज्ञकानामेपामतद्धिते संप्रसारणम् । मघोनः । शुनः ॥

न संप्रसारणे संप्रसारणम् ६ । १ । ३७ ॥

संप्रसारणे परतः पूर्वस्य यणः संप्रसारणं न । यूनः । यूनाः ॥

इति ४७ अंगाः ।

अर्वा ॥

अर्वणस्त्रसावनभः ६ । ४ । १२७ ॥

नत्रा रहितस्थान्नइत्यस्याङ्गस्य छ इत्यन्तादेशो नतु र्ना ।
अर्वन्ती । अर्वञ्चाम् । अनञः किम् । अनर्वाणा यञ्जयत् ॥

पथिमथ्यूक्षामात् ७ । १ । ८५ ॥

एषामाकारोन्तादेशः सां ॥

इतोत्सर्वनामस्थाने ७ । १ । ८६ ॥

पथ्यादेरिकास्स्याकारः सर्वनामस्थाने ॥

थो न्थः ७ । १ । ८७ ॥

पथिमथोस्थस्य न्थादेशः सर्वनामस्थाने । पन्थाः । पन्थानां ॥

भस्य टेल्लोपः ७ । १ । ८८ ॥

मसंज्ञकस्य पथ्यादेटेल्लोपः । पथ्यः । एवं मन्थाः । ऋमुशाः ॥

णान्ता पट् १ । १ । २४ ॥

यान्ता नान्ता च संख्या पट्संज्ञा । पञ्च । पञ्च ॥

नोपधायाः ६ । ४ । ७ ॥

नान्तस्योपधाया दीर्घो नामि । नलोपः । पञ्चानाम् । एवं

सप्तादयः ॥

अष्टन आ विभक्तौ ७ । २ । ८४ ॥

अष्टनो हलादौ विभक्ती जश्शसोश्च वा आत्वम् ॥

अष्टाभ्य औश् ७ । १ । २१ ॥

कृताकारादष्टनः पर्योर्जश्शसोरौश् । अष्टौ । अष्टौ । अष्टामिः ।

अष्टानाम् । आत्वामावे अष्ट २ । इत्यादि पंचवत् ॥

ऋत्विग्दधृक्स्त्रिगुण्णिगञ्च्युजिकृञ्चां च३।२।५९॥

एभ्यः क्तिन् । तत्र निरुपपदात् युजेः क्तिन् । कृदतिङ् । वेर-

पृक्तस्य ॥

युजेरसमाप्ते ७ । १ । ७१ ॥

युजेः सर्वनामस्थाने नुम् असमामि ॥

किन्प्रत्ययस्य कुः ८ । २ । ६२ ॥

किन्प्रत्ययो यस्मात्तस्य कवर्गोऽन्तादेशः पदान्ते । नस्य डः । युङ्।युञ्जौ । युजः । युजा । समासे तु सुयुक् । युज समाधौ इत्यस्य तु न नुम् । तेन युक् । खन् । खञ्जौ । व्रश्चभ्रस्जे । ति पत्वम् । जश्त्वेन डः । राट् राड् । सुपि पक्षे धुद् चत्वंम् । तस्यासिद्धत्वाच्चयो द्वितीया इति द्रव्योष्ठ्यौ न । न पदान्तादिति प्लुत्वन्न । राट्सु राट्सु । षढोः कः सि इति तु न जश्त्वं प्रत्यसिद्धत्वात् । विभ्राट् इ विश्वसृ-ट् इ । परिमृ-ट् इ । व्रश्चेति सूत्रे भ्राजः फणादेर्ग्रहणम् । अन्यस्य विभ्राक् ॥

परौ व्रजेः षः पदान्ते ❀ ॥

परावुपपदे व्रजेः क्तिप्दीर्घो पदान्ते पत्वं च । परिव्राट्-इ ॥

विश्वस्य वसुराटोः ६ । ३ । १२८ ॥

विश्वशब्दस्य दीर्घोऽन्तादेशो वसौ राट्शब्दे च परे । विश्वावसुः । राडिति पदान्तोपलक्षणम् । विश्वाराड् । विश्वाराड्भ्यां । नेह । विश्वराजौ । स्कोरिति सलोपः । भृट् भृड् । भृञ्जौ । ऋतावुपपदे यजेः किन् । ऋत्विक्-ग् । रात्सस्य । ऊर्क् र् । ऊर्जौ । सुपात्-ट् । सुपादौ ॥

पादः पत् ६ । ४ । १३० ॥

पाच्छब्दान्तं यदङ्गं भं तदवयवस्य पाच्छब्दस्य पदादेशः । सुपदः । सुपदा । सुपाद्ग्रामित्यादि । अग्निमत्-ट् । अग्निमर्था । अग्निमद्ग्रामित्यादि ॥

इति ४८ अंशाः ।

अञ्चेः सुप्युपपदे किन् अनिदितामिति नस्य लोपः । प्राड् । प्राञ्चौ ॥

अचः ६ । ४ । १३८ ॥

एतन्नस्याश्चतेर्भस्यातो लोपः ॥

चौ ६ । ३ । १३८ ॥

लुप्ताकारनकारेऽश्वतो परे पूर्वस्याणो दीर्घः । प्राचः । प्रत्यङ् ।
अच इति लोपस्य विषयेऽन्तरङ्गोऽपि यण् न प्रवर्त्तते । अकृतव्युहाः
इति परिभाषया । प्रतीचा । विष्वगश्वतीति विग्रहे ॥

विश्वग्देवयोश्च टेरद्रचंचतावप्रत्यये ६ । ३ । ९२ ॥

अनयोः सर्वनाम्नश्च टेरद्रच्चादेशो वप्रत्ययान्तेऽश्वतो । विश्वद्रचद्र ।
विष्वद्रीचः । एवं देवद्रचङ् । उदङ् ॥

उद ईत् ६ । ४ । १३९ ॥

उदः परस्य लुप्तनकारस्याश्वतेर्भस्याकारस्य ईत् । उदीचः ॥

समः समि ६ । ३ । ९३ ॥

वप्रत्ययान्तेऽश्वतो परे समः समिरादेशः । सम्यङ् । समीचः ॥

सहस्य सध्रिः ६ । ३ । ९५ ॥

सध्र्यङ् । सधीचः ॥

तिरसस्तिर्यलोपे ६ । ३ । ९४ ॥

अलुप्ताकारेऽश्वतो अप्रत्ययान्ते परे तिरसस्तिरिः । तिर्यङ् ।
तिरश्चः ॥

नाञ्चे पूजायाम् ६ । ४ । ३० ॥

पूजार्थस्याश्वतेः उपधाया नस्य लोपो न । नलोपाभावान्न
नुमकारलोपी । प्राङ् । प्राञ्ची । प्राञ्चः । प्राङ्भ्याम् । प्राङ्स्त्पु
प्राङ्क्षु प्राङ्पु । एवं पूजार्थे प्रत्यङ्गादयः । कुञ्चः । किनि नलोपाभा-
वोऽपि निपात्यते । कुङ् । कुञ्ची । कुङ्भ्यामित्यादि । पयोमुक्-ग् ।
सुवृद्-ङ् । सुवृश्चौ ॥

वर्तमाने पृपन्महद्गृहजगच्छतृवच्च ॥

उगित्वाक्षुम् । महान् । महान्तौ । महता ॥

जक्षित्यादयः षट् ६ । १ । ६ ॥

जक्षादयः षडन्ये जक्षितिश्च सप्तम एते अभ्यस्तसंज्ञाः । जक्ष-

त्-द् । जक्षतौ । एवं जाग्रत्-द् । दसिद्धत्-द् । शासत्-द् । चकासत्-द् ।
दीध्यत्-द् । वीव्यत् । छान्दसत्वात्परस्मैपदम् । गुप्-व् । गुप्तौ ॥

त्यदादिषु दृशोऽनालोचने कश्च ३ । २ । ६० ॥

अज्ञानार्थाद् दृशोर्दातोः कञ् चात् किन् ॥

आ सर्वनाम्नः ६ । ३ । ९१ ॥

सर्वनाम्न आकारान्तादेशो दृग्दृश्वतुषु कुत्वस्यासिद्धत्वात्पः ।
ततो ङगकाः । तादृक्-ग् । तादृशौ । विद्-ङ् । विशौ ॥

नशोर्वा ८ । २ । ६३ ॥

नशेः कवर्गोऽन्तादेशो वा पदान्ते । नक्-ग् । नट्-ङ् । नशौ ॥

स्पृशोऽनुदके किन् ३ । २ । ५८ ॥

अनुदके सुप्युपपदे स्पृशेः किन् । घृतस्पृक्-ग् । घृतस्पृशौ ।
किन्प्रत्यय इति बहुव्रीहेः किप्यापि कुत्वम् । स्पृक्-ग् । पङ्गकाः
प्राग्वत् । धृपेः किन् द्वित्वं निपात्यते दधृक्-ग् । दधृषी । रत्नमुद्-ङ्
रत्नमुषौ । पट्-ङ् । पङ्गिः ॥

प्रत्यये भाषायां नित्यम् ❀ ॥

पण्णाम् । दमेर्दोस् इत्वसामर्थ्यादमस्यापि टेलोपः । पत्वस्या-
सिद्धत्वाद्भुत्वविसर्गौ । दोः । दोषौ । पदाभिति वा दोपन् । दोष्णः ।
दोष्णा । दोषः । दोषा । सान्तमहत इत्यत्र सान्तसंयोगोऽपि
प्रातिपदिकस्यैव गृह्यते । तेन सुष्ठु हिनस्तीति सुहिन् । सुहिंसौ ।
सुहिन्भ्याम् । उगिदचामित्यत्राज्ग्रहणं नियमार्थं धातोश्चेदुगि-
त्कार्यं तर्ह्यश्चेत्तेरेवेति । तेनेह न । ध्वत्-द् । ध्वद्भ्याम् । एवं सत् ॥

पुंसोऽसुद् ७ । १ । ८९ ॥

सर्वनामस्थाने विवक्षिते पुंसोऽसुद् । पुमान् । हे पुमन् ।
पुमांसौ । पुंसः । पुंभ्याम् । उशना । उशनसौ ॥

अस्य संबुद्धावनङ् नलोपश्च वा वाच्यः ❀ ॥

हे उशनन् हे उशन हे उशनः । उशनीभ्याम् । अनेहा ।

अधातोर्ित्युक्तेर्न दीर्घः । सुप् वस्ते मुवः । सुवसाँ । पिण्डं असते
पिण्डग्रः पिण्डगलः ॥ इति पुल्लिङ्गाः ॥

इति ४९ अंशाः ।

विभाषा द्वितीयातृतीयाभ्याम् ७ । ३ । ११५ ॥

आभ्या परस्य डितः स्याद् वापश्च द्वस्वः । द्वितीयस्ये द्विती-
यायै।अम्बार्थनद्योर्द्वस्वः । हे अम्ब । हे अक् । हे अल्ल । असंयुक्त-
डलकवतान्न । हे अम्बाडे । हे अम्बाले । हे अम्बिके । जरा ।
अजादौ जरस् । जरसौ । जरसम् । पक्षे हलादौ च रमावत् । निशा-
निश् । निशः । व्रश्चेति पः । निहभ्याम् । व्रश्चेति सूत्रे धातोर्ित्यनु-
वृत्तौ तु निज्भ्याम् । श्रुत्वम् । निचशु । कुत्वं तु न जश्त्वस्यासिद्ध-
त्वात् । गोपा विश्वपावत् ॥

त्रिचतुरोः स्त्रियां तिसृचतसृ ७ । २ । ९९ ॥

स्त्रीलिङ्गयोरेतयोरेतावादेशौ विभक्तौ ॥

न पट्स्वस्त्रादिभ्यः ४ । १ । १० ॥

पट्संज्ञकेभ्यः स्वस्त्रादिभ्यश्च टाप्डिपौ न । स्वस्त्रादयः स्युः
स्वसृमातृयातृननांदातिसौ दुहिता चतस्रः ॥

अचिर ऋतः ७ । २ । १०० ॥

तिसृचतसृएतयोः ऋकारस्य रेफादेशोऽचि । गुणदीर्घोत्वानाम-
पवादः । तिस्रः ॥

न तिसृचतसृ ६ । ४ । ४ ॥

एतयोर्नामि दीर्घो न । तिसृणाम् । स्त्री । हे स्त्रि ॥

स्त्रियाः ६ । ४ । ७९ ॥

स्त्रीशब्दस्य इयडजादौ प्रत्यये । स्त्रियौ ॥

वाम्शसोः ६ । ४ । ८० ॥

अमि शसि च परे स्त्रिया इयड् वा । स्त्रियम् स्त्रीम् । स्त्रियः ।
स्त्रीः । स्त्रियै । स्त्रियाः । स्त्रीणाम् । स्त्रियाम् । प्रधीशब्दस्य वृत्तिका-

रादीनां मते लक्ष्मीवद्रूपम् । कैयटमते पुंवत् । प्रकृष्टा धीरिति विग्रहे तु लक्ष्मीवत् । अमि शसि च प्रध्यम् । प्रध्यः । सुष्टु धीर्यस्याः सा सुष्टु ध्यायति वेति विग्रहे तु वृत्तिमते सुधीः श्रीवत् । मतान्तरे पुंवत् सुष्टु धीरिति विग्रहे तु श्रीवदेव । ग्रामणीः पुंवत् । धेनुर्मतिवत् ॥

स्त्रियां च ७ । १ । ९६ ॥

स्त्रीषाची कोष्ठशब्दस्तजन्तवद्रूपं लभते । डीप् । क्रोप्री । वधू-गौरीवत् । भूः श्रीवत् । हे सुभूः । ह्रस्वस्त्वपाणिनीयः । प्राश्चः कवयस्तु सुभूशब्दे ह्रस्वं प्रयुञ्जते । खलपूः पुंवत् । पुनर्भूः । पुनर्भूः । ह्रस्वः । हे पुनर्भु । पुनर्भ्वम् । एकाजुत्तरोति णः । पुनर्भूणाम् । भेकजातौ कैयटमते हे वर्षाभूः । मतान्तरे हे वर्षाभु । पुनर्नवायां तु सर्वेषाम् । हे वर्षाभु । वर्षाभ्वी । स्वयंभूः पुंवत् । स्वसा । स्वसारौ । द्यौर्गोवत् । नौर्गौवत् ॥

नहो धः ८ । २ । ३४ ॥

नहो हस्य धः झलि पदान्ते च । उपानत्-ट् । उत्पूर्वात् षिणहः किन्निपातनात्तलोपपत्त्वे कुत्वम् । जश्त्वचत्वे उष्णिक् ग् ॥

दिव औत् ७ । १ । ८४ ॥

दिविति प्रातिपदिकस्य औत् सौ । द्यौः । दिवौ ॥

दिव उत् ६ । १ । १३१ ॥

दिवोऽन्तादेशः उकारः पदान्ते । शुभ्याम् । चतुश्चतस्र् । चतस्रः । चतसृणाम् । सृजेः षिन् अमागमश्च निपात्यते । स्रक्-ग् । अप्-शब्दो नित्यं बहुवचनान्तः । आपः । अपः ॥

अपो भि ७ । ४ । ४८ ॥

अपस्तकारो भादौ प्रत्यये । अट्टिः । दिक्-ग् । दशः षिन्विधानादन्यत्रापि कुत्वम् । दृक्-ग् । सह जुपते इति स्रज् । ससृपा । ससृभ्याम् । ससृष्पु मज्जःपु ॥ इति स्त्रीलिंगाः ॥

इति ५० अंशाः । इति द्वितीयाध्यायस्य प्रथमः पादः ।

अजरशब्दस्य सौ अजरमित्येव । सन्निपातलक्षणो विंधिरानिभित्तं
तद्विघातस्य इति परिभाषया अजरसी । अजरे । अजरांसि । अज-
राणि । अजरसम् अजरम् । श्रीर्षं ज्ञानवत् ॥

अस्थिदधिसक्थ्यक्ष्णामनङ्कुदात्तः ७ । १ । ७५ ॥

एपामनङ् टादावाचि स चोदात्तः । दध्ना । दध्नि दधनि । तद-
न्तस्याप्यनङ् । अतिदध्ना । एवमस्थ्यादि । चत्वारि । रोऽमुपि
अहर्भाति । विभाषाङ्ङिः । अह्नी । अहनी । अहानि ॥

अहन् ८ । २ । ६८ ॥

अहन्नित्यस्य रुः पदान्ते । अहोभ्यामारात्सस्याऽर्क-र्ग- । ऊर्जी ।
ऊर्जि । नरजानां संयोगः । तिर्य-क्ग् । तिरश्ची । तिर्यश्चि । पूजा-
यान्तु तिर्यङ् । तिर्यश्ची ॥ इति नपुंसकलिङ्गाः ॥

सर्वादिषु उभयशब्दस्य द्विवचनं नास्तीति कैयटः । अस्तीति
हरदत्तः । जसि स्थानिवद्भावेन तयान्तत्वात् प्रथमचरमेति विकल्पे
प्राप्तेऽन्तरङ्गत्वान्नित्यैव संज्ञा । उभये । समः सर्वपर्यायः । तुल्यप-
र्यायस्तु नेह गृह्यते । समे सर्वे । समास्तुल्याः । एकशब्दः संख्यायां
नित्यैकवचनान्तः ॥

अन्तरं वह्नियोगेति गणसूत्रेऽपुरीति वक्तव्यम् ❀ ॥

अन्तरायां पुरि । सर्वाद्यन्तस्यापि सर्वनामसंज्ञा तेन परमसर्व-
त्रेति त्रल् । परमभवकानित्यकच ॥

न बहुव्रीहौ १ । १ । २९ ॥

बहुव्रीहौ चिकीर्षिते सर्वनामसंज्ञा न । त्वकं पिता यस्य त्वत्क-
पितृकः । मत्कपितृकः । समासात्प्रागेव प्रक्रियावाक्ये संज्ञानिषेधः
अन्यथा लौकिकविग्रहवाक्य इव तत्राप्यकच् प्रवर्त्तत स च समासे-
ऽपि श्रूयेत । अतिक्रान्तो भवकन्तमतिभवकानितिबत् । भाष्यका-
रस्तु त्वकत्पितृकः मकत्पितृक इत्यङ्गीकृत्य सूत्रं प्रत्याचख्यौ ॥

यथोत्तरं मुनीनां प्रामाण्यम् ❀ ॥

संज्ञोपसर्जनीभूतास्तु न सर्वादयः । अतः संज्ञाकार्यमन्तुर्गण-

कार्यं च तेषां न भवति । सर्वो नाम कश्चित्तस्मै सर्वाय देहि । अति-
क्रान्तः सर्वमतिस्वस्तस्मै अतिसर्वाय । अतितत् ॥

तृतीयासमासे १ । १ । ३० ॥

अत्र सर्वनामता न । मासपूर्वाय । तदर्थवाक्येऽपि न । मासेन
पूर्वाय ॥

द्वन्द्वे च १ । १ । ३१ ॥

द्वन्द्वे उक्ता संज्ञा न । वर्णाश्रमेतराणाम् ॥

विभाषा जसि १ । १ । ३२ ॥

जसाधारं यत् कार्यं शीभावाख्यं तत्र कर्तव्ये द्वन्द्वे उक्ता संज्ञा
वा । वर्णाश्रमेतरे वर्णाश्रमेतराः । शीभावं प्रत्येव विभाषातो नाकच्
किन्तु क एव । वर्णाश्रमेतरकाः । स्त्रियाम् ॥

विभाषा दिक्समासे बहुव्रीहौ १ । १ । २८ ॥

अत्र सर्वनामता वा । उत्तरपूर्वस्यै उत्तरपूर्वायै । दिङ्नामा-
नीत्युक्ते प्रतिपदोक्ते समास एव । नेह । योत्तरा सा पूर्वा यस्या
मुग्धायास्तस्यै उत्तरपूर्वायै । अन्तरस्यै बाह्यायै अन्तरायै पुर्य्यै ।
ह्रीवे । कतरत् कतरद् । कतमत् । संज्ञागौणयोः । कतरम् । अति-
कतरं कुलम् । अन्यत् । अन्यतरत् । द्वौ । द्वौ । परमद्वौ । द्विर्नाम
कश्चित् । द्विः । अतिद्विः ॥

इति ५१ अंशाः ।

इदमः ककारयोगे अयकम् । इमकौ । इमकेन । परमसः ।
संज्ञाया गौणत्वे च । त्यद् । त्यदौ । अतित्यद् । अतित्यदौ । यः ।
एपः । अन्वादेशे एनमित्यादि । एनाम् ॥

अदसः सौ औत्वप्रतिषेधः साकृच्चकस्य वा वक्तव्यः
सादुत्वं च ॐ ॥

प्रतिषेधसन्नियोगाशिष्टमुत्वं तदभावे न प्रवर्त्तते । अमकौ ।
• । अमुकशब्दस्त्वव्युत्पन्नमदः पर्यायभूत शब्दान्तरम् ॥

समानवाक्ये निघातयुष्मदस्मदादेशाः ❀ ॥

एकतिङ् वाक्यम् । नेह । ओदनं पच तव भविष्यति । इह तु स्यादेव । शालीनां ते ओदनं दास्यामीति ॥

न च वाहाहैवयुक्ते ८ । १ । २४ ॥

चादिपञ्चकयुक्ते नैते आदेशाः हरिस्त्वां मां च रक्षतु । कथं त्वां मां वा न रक्षेदित्यादि साक्षाद्योगेऽयं निषेधः । परंपरासम्बन्धे स्यादेव । हरो हरिश्च मे स्वामी ॥

पश्याथैश्वानालोचने ८ । १ । २५ ॥

अचाक्षुपज्ञानार्थैर्द्वातुभिर्योगे नैते आदेशाः । चेतसा त्वां समीक्षते । परम्परासम्बन्धेऽपि न । भक्तस्तव रूपं ध्यायति । आलोचने तु भक्तस्त्वा पश्यति चक्षुषा ॥

सपूर्वायाः प्रथमाया विभाषा ८ । १ । २६ ॥

विद्यमानपूर्वात्प्रथमान्तात्परयोरनयोरन्वादेशेऽपि एते आदेशा वा स्युः । भक्तस्त्वमप्यहन्तेन हरिस्त्वां त्रायते स माम् । त्वामेति वा ॥

सामन्त्रितम् २ । ३ । ४८ ॥

सम्बोधने या प्रथमा तदन्तमामन्त्रितसंज्ञम् ॥

आमन्त्रितं पूर्वमविद्यमानवत् ८ । १ । ७२ ॥

अग्ने तव । सर्वदा रक्ष देव न इत्यत्र तु रक्षेत्याश्रित्यादेशः ॥

नामन्त्रिते समानाधिकरणे सामान्यवचनम् ८ । १ । ७३ ॥

विशेष्यं समानाधिकरणे विशेषणे आमन्त्रिते परे नाविद्यमानवत् । हरे दयालो नः पाहि ॥

विभाषितं विशेषवचने ८ । १ । ७४ ॥

बहुवचनान्तं विशेष्यं समानाधिकरणे विशेषणे आमन्त्रिते परे आविद्यमानवद्वा । सूर्यं प्रभवः । देवाः शरण्याः । युष्मान् भजे । वीं भजे इति वा । इहान्वादेशेऽपि वैकल्पिका आदेशाः ॥

इति ५२ अंशाः ।

स्वरादिनिपातमव्ययम् १ । १ । ३७ ॥

ते चादिवर्णक्रमेण लोके प्रसिद्धा लिख्यन्ते । अन्तर । अभी-
क्षणम् । अंजसा । अतीव । अद्धा । अनिशम् । अनुपदम् । अन्त-
रा । अन्वक् । अपट्ट । अमुत्र । अरम् । अर्वाक् । असांप्रतम् ।
अवश्यम् । अस्तम् । आरात् । आविस् । आशु । ईपत् । उचैस् ।
उपा । उपजोषम् । उपांशु । ऋधक् । ऋते । कामम् । कुजोषम् ।
झटिति । झगिति । तरसा । तिरस् । तिर्यक् । तूर्णम् । तूष्णीम् ।
तूष्णीकाम् । दिवा । दुष्ट । दोषा । द्राक् । धिक् । नक्तमानमस् ।
नाना । निकपा । निकामम् । नीचैस् । न्यक् । परम् । परश्वस् ।
पराक् । पुनःपुनर् । पुनर् । पुरतस । पृथक् । प्रकामम् ।
प्रत्यक् । प्रत्यहम् । प्रसह्य । प्रातर । प्रादुस् । प्रायशस् । प्रायस् ।
प्रेत्य । बलात् । भुवर् । भूयस् । भूर् । मंक्षु । मनाक् । मिथस् ।
मिथुस् । मिथ्या । मुधा । मुहुर्मुहुस् । मुहुस् । मृपा । युगपत् ।
युक्तम् । रहस् । रोदसी । वरम् । वहिस् । विहायसा । विना ।
विश्वक् । विष्वक् । वृथा । शनैस् । शम् । शान्तम् । श्वसासंबत् ।
सत्यम् । सपदि । समन्ततः । समन्तात् । सनत् । सनात् । समया ।
सना । समुपजोषम् । सह । साक्षात् । साचि । सामि । साक् ।
सायम् । सुदि । सुष्ट । स्थाने । स्वयम् । स्वर । स्वस्ति । हिरुक् ।
ह्यस् । आकृतिगणोऽयम् ॥

चादयो सत्वे ॥

अ । अकस्मात् । अत्रे । अघोस् । अङ्ग । अचिरम् । अदृष्ट ।
अथ । अथकिम् । अथवा । अथो । अन्तरेण । अपि । अपिच ।
आपितु । अभि । अमा । अयि । अये । अरे । अरे । अरेरे ।
अलम् । असकृत् । अस्ति । अस्तु । अहह । अहो । अहोवत ।
अहाय । आ । आङ् । आम् । आः । आहो । आहोस्वित् । इ ।
इति।इति हाइवाडाउताउत् । उताहो । उम् । उरु । उरी । ऊरी ।
ऋतम् । ए । एवाएवम्।एकपदे । ऐ । ओ । ओम् । औ।कचित् ।

कदाचन । कदाचित् । कम् । किंस्वित् । किंच । किंचन । किंचित् ।
 किं । किल । किन्तु । किञ्चु । किम् । किमु । किमुताकिंवा । किल ।
 कुत्रचित् । कृतम् । कचन । कचित् । खलु । चन । चित् । चिरम् ।
 चिररात्राय । चिरस्य । चिरात् । चिराय । चिरेण । चेत् । छंवद् ।
 जातु । तत् । तथा च । तथापि । तथाहि । तावत् । तु । ते । दृ ।
 दिष्ट्या । न । नञ् । ननु । ननु च । न चेत् । न वा । न वै । नहि ।
 नाम । नास्ति । नितराम् । नु । नृनम् । नो । परमम् । पाद् ।
 प्याद् । पुरा । प्रगे । प्रत्युत । प्राध्वम् । प्राह्णे । फट् । वत । वलनत् ।
 भगोस् । भवतु । भृशम् । भोस् । मम । माइ । मास्म । मोयत् ।
 यच्च । यथायथम् । यथातथम् । यथार्हम् । यथायत् । यथास्वम् ।
 यद्वा । यदि नाम । यदि । यदुत । यद्यपि । यावत् । रेवत् । यदि ।
 वरम् । वपद् । वा । वाव । विपु । वै । वीपद् । शश्वत् । शुमम् । श्रत् ।
 श्रौपद् । सत् । सकृत् । सत्रा । सह । समम् । संप्रति । सम्यक् ।
 स्म । साकम् । सांप्रतम् । सार्द्धम् । मुचिरम् । मुतराम् । स्वधा ।
 स्वाहा । स्वित् । ह । हंहो । हञ्जे । हंडे । हंत । हम् । हला । हा ।
 हि । ही । हीही । हुम् । हूम् । हे । है । हो । हौ । अयमप्याकृतिगणः ॥

इति ५३ अंशाः ।

उपसर्गविभक्तिस्वरप्रतिरूपकाश्च ❀ ॥

अवदत्तम् सुवन्तविभक्तिप्रतिरूपकाः । अहम् । अन्तरेण ।
 अन्योन्यस्य । अद्वाय । अग्रे । अक्स्मात् । एकपदे । कृतम् ।
 चिरेण । चिराय । चिररात्राय । चिरात् । चिरस्य । ते । तेन ।
 पर्याप्तम् । प्रगे । प्राह्णे । मम । मे । मात्रायाम् । येन । गत्रौ ।
 वेलायाम् । शुभम् । हेतौ । अयं तिङन्तविभक्तिप्रतिरूपकाः ।
 अस्ति । अस्ति । अस्तु । अस्मि । आस । आह । एहि । न याति ।
 न वर्तते । नास्ति । पश्यत । पश्य । पृष्यते । ब्रूहि । भवति । भवतु ।
 मन्ये । याति । वर्तते । विद्यते । शंके । स्वरप्रतिरूपकाः । अ । आ ।
 इ । ई । उ । ऊ । ऋ । ॠ । लृ । लृ । ए । ऐ । ओ । औ ।

प्रादयः । ते चोक्ताः । शेषा अव्यया गणपाठे बोध्याः । एषामर्थो
अपि तत्रैव ॥

तद्धितश्चासर्वविभक्तिः ॥

तमिल् । त्रल् । अ । अत् । दाहिंल् । अधुना । दानीम् । यस् ।
उत् । आरि । समसण् । एद्यवि । घ । एद्युस् । द्युस् । थाल् । थमु ।
अस्ताति । अस्ति । अतसुच् । रिल् । रिष्टातिल् । आति ।
एनप् । आच् । आहि । धा । ध्यमुञ् । धमुञ् । एधाच् । शस् ।
तसि । च्वि । साति । त्रा । डाच् । अम् । आम् । कृत्वसुच् । सुच् ।
धा । तसि । वति । नानाञ् । इति । तेनेह नापचतिरूपम् । तसिल् ।
कुतः । यतः । ततः । अतः । इतः । अमुतः । परतः । पूर्वतः ।
सर्वतः । परितः । अभितः । इत्यादि । त्रल् । कुत्र । यत्र । तत्र ।
अत्र । सर्वत्र । इत्यादि । ह । इह । कुह । अत् । क । दा । सर्वदा ।
सदा । एकदा । अन्यदा । कदा । यदा । तदा । हिंल् । तर्हि । यर्हि ।
एतर्हि । कर्हि । अधुना । अधुना । दानीम् । इदानीम् । तदानीम् ।
यस् । सद्यः । घ । अघ । एद्यवि । परेद्यवि । एद्युस् । पूर्वेद्युः ।
अन्येद्युः । अन्यतरेद्युः । इतरेद्युः । अपरेद्युः । अधरेद्युः । उभयेद्युः । उत्तरेद्युः ।
द्युस् । उभयद्युः । उत् । परुत् । आरि । परारि । समसण् । ऐषमः ।
थाल् । तथा । यथा । थमु । इत्थम् । अस्ताति । पुरस्तात् । अधस्तात् ।
अवस्तात् । अवरस्तात् । परस्तात् । अस्ति । पुरः । अधः । अवः ।
अतसुच् । दक्षिणतः । उत्तरतः । अस्तातेर्लुक् । प्राक् । उदक् ।
प्रत्यक् । अवाक् । इत्यादि । रिल् । उपरि । रिष्टातिल् । उपरिष्टात् ।
आति । पश्चात् । उत्तरात् । अधरात् । दक्षिणात् । एनप् । उत्तरेण ।
दक्षिणेन । अधरेण । पूर्वेण । इत्यादि । आच् । उत्तरा । दक्षिणा ।
आहि । उत्तराहि । दक्षिणाहि । धा । द्विधा । इत्यादि । ध्यमुञ् ।
ऐक्यम् । धमुञ् । द्वैधम् । त्रैधम् । एधाच् । द्वैधा । त्रैधा । शस् ।
बहुशः । अल्पशः । इत्यादि । तसि । कृष्णतः । आदितः । मध्यतः ।
उरस्तः । इत्यादि । च्वि । कृष्णीभवति । इत्यादि । साति ।
अग्निसाद्भवति । इत्यादि । त्रा । देवत्रा करोति । इत्यादि । डाच् ।

पटपटाकरोति । सपत्राकरोति । इत्यादि । एकदिक्कतसि ।
 उरस्तः । वतिः । ब्राह्मणवत् । इत्यादि । ना । मिना । नात् ।
 नाना । आम् । पचतितराम् । सुतराम् । अम् । उन्दसि । प्रतं ।
 नयप्रतरम् । कृत्वसुच् । पंचकृत्वः । इत्यादि । सुच् । द्विः । त्रिः ।
 सकृत् । धा । बहुधा । इत्यादि ॥ इत्यव्ययानि ॥

इति ५४ अंशाः ।

अथाख्यातम् । फलं व्यापारश्च धात्वर्थः । यथा पचो विक्रित्तिः
 फलं तदनुकूलोऽधिश्रयणादिव्यापारः तत्र धातुपाठे प्रायो विक्रि-
 त्त्वादिरूपस्य पाकादेः फलस्यार्थतया निर्देशः तदनुकूलो व्यापार
 एव क्रिया तद्वाचित्वं विना धातुत्वस्यैवाभावात्सर्वधातूना क्रिया
 वाच्या । व्यापारो भावना सैवोत्पादना सैव च क्रिया तत्र फल-
 व्यापारयोरेकनिष्ठतायामकर्मकः धातुस्तयोर्द्धर्मिभेदे सकर्मक उदा-
 हृतः । सकर्मकस्यापि हेतुचतुष्टयेनाकर्मकता । धातोरर्थान्तरे वृत्ते-
 र्द्धात्वर्थेनोपसंग्रहात् । प्रसिद्धेरविवक्षातः कर्मणोऽकर्मिका क्रिया ॥
 वहति भारम् । नदी वहति । स्यन्दत इत्यर्थः । जीवति । नृत्यति ।
 अत्र प्राणधारणगात्रविक्षेपार्थयोर्जीवनृत्योरर्थेन कर्मणोः प्राणगा-
 त्रयोः उपसंग्रहादकर्मकता । प्रसिद्धेर्यथा । मेघो वर्षति । कर्मणोऽ-
 विवक्षातो यथा । हितान्नयः सशृणुते स किं प्रभुः । अत एव
 आडो यमहनः समो गम्पृच्छिभ्यामित्यादौ हनिगम्यादेरपि वक्ष्य-
 माणाऽकर्मकता न विरुद्धा अत एव च यथालक्ष्यमन्तर्माहितण्यर्थ-
 तायामकर्मकोऽपि सकर्मकः । प्रेरणाशत्यागे सकर्मकोऽप्यकर्मकः ।
 यथा । गजो मदं क्षरति । गजस्य मदं क्षरति । रविस्तपति ।
 रविर्ललाट तपति । गत्युपसर्गसंज्ञा धातोः प्राक् प्रयोज्या इत्युक्त-
 म् । उपसर्गास्त्वर्थविशेषस्य द्योतकाः । प्रभवति पराभवतीत्यादौ
 विलक्षणार्थावगतेः । उक्तञ्च । उपसर्गेण धात्वर्थो बलादन्यत्र नी-
 यते । प्रहाराहारसहारविहारपरिहारवादिति ॥ धात्वर्थं बाधते प्राटिः
 कश्चित्तमनुवर्त्तते । तमेव विशिनष्ट्यन्योऽनर्थकोऽन्यः प्रयुज्यते ॥

क्रमेण यथा । प्रतिष्ठते । प्रस्मरति । प्रहरति । इत्यादि । आद्रियते । अधीते । व्याप्रियते । इत्यादि । अनुगच्छति । आगच्छति । संस्करोतीत्यादि । प्रेक्षते । वीक्षते । निहन्तीत्यादि । धातुषु सत्ताद्यर्थनिर्देशश्चोपलक्षणम् । यागात्स्वर्गो भवतीत्यादाद्युत्पद्यत इत्याद्यर्थात् । किञ्च नकारजावनुस्वारपञ्चमौ ज्ञलि धातुषु पकारजः सकारस्तु पाट्वर्गस्तवर्गजः ॥

आनि लोट् ८ । ४ । १६ ॥

उपसर्गस्थान्निमित्तात्परस्य लोडादेशस्यानीत्यस्य नस्य णः । प्रभवाणि । दुरः पत्वणत्वयोरुपसर्गत्व न । दुःस्थितिः । दुर्भवानि । अन्तःशब्दस्याङ्गिविधिणत्वेपूपसर्गत्वम् । अन्तर्द्धा । अन्तर्द्धिः । अन्तर्भवाणि ॥

नेर्गदनदपतपदघुमास्यतिहन्तियातिवातिद्रातिप्सातिवपतिवहतिशाम्यतिचिनोतिदेग्धिषु च ८ । ४ । १७ ॥

उपसर्गस्थान्निमित्तात्परस्य नेर्नस्य णः स्यात् गदादिषु । प्रणिगदति । प्राणिनदति ॥

शेषे विभाषा कखादावपान्त उपदेशे ८ । ४ । १८ ॥

उपदेशे कादिखादिपान्तवर्जे गदनदादेरन्यास्मिन् धातौ परे उपसर्गस्थान्निमित्तात्परस्य नेर्नस्य णत्वं वा । प्रणिभवाति । प्रणिभवति ॥

उपसर्गादसमासेऽपि णोपदेशस्य ८ । ४ । १४ ॥

उपसर्गस्थान्निमित्तात्परस्य णोपदेशस्य धातोर्नस्य णः समासेऽसमासेऽपि च । नाद्यानादिनृत्यनाथ्रनाधनङ्गनूनर्दानन्दं विना णोपदेशाः । प्रणिन्दति । अथ प्रसङ्गात् णोपदेशाः । स्तयैसेकसृस्तृसृजसृप्सृत्तोऽन्ये ये स्युस्तवर्गस्वरयुक्तसाद्याः । एकाच णते किल णोपदेशाः ष्वष्कष्विदष्वश्ष्वदष्वप्राष्मिडश्च ॥

सात्पदाद्योः ॥

पत्वन्न । अनुसज्जति । इहोपसर्गाणामसमस्तत्वेऽपि संहिता

नित्या तदुक्तम् । संहितैकपदे नित्या नित्या धातूपसर्गयोः ।
नित्या समासे वाक्ये तु सा विवक्षामपेक्षते ॥

कर्त्तारि कर्मव्यतिहारे १ । ३ । १४ ॥

क्रियाविनिमये द्योत्ये कर्त्तारि लस्यात्मनेपदम् । व्यतिभ्रंते ।
व्यतिरक्षन्ते । कर्मव्यतिहारविवक्षायां व्यत्युपसर्गयोगं विनाप्यात्म-
नेपदम् ॥

न गतिहिंसार्थेभ्यः १ । ३ । १५ ॥

व्यतिगच्छन्ति । व्यतिघ्नन्ति ॥

हसादीनामुपसंख्यानम् ❀ ॥

हसादयो हसप्रकाराः शब्दक्रियास्तेभ्योऽपि नात्मनेपदम् ।
व्यतिहसन्ति । व्यतिजल्पन्ति ॥

इतरेतरान्योन्योपपदाच्च १ । ३ । १६ ॥

नात्मनेपदम् । इतरेतरम् । व्यतिभवन्ति ॥

परस्परोपपदाच्च न ❀ ॥

परस्परं व्यतिभवन्ति । एवं न गतीत्यादि निषेधकं विना सर्व-
धातुभ्यः कर्मव्यतिहारे आत्मनेपदं तत्कार्यं च ज्ञेयम् । बलम् गर्ता ।
तर्जं भर्त्सने । तर्दं हिंसायाम् । गर्दं-नर्दं शब्दे । कर्दं कुत्सिते शब्दे ।
सर्वं-गर्वं गर्तौ । गर्वं हिंसायाम् । फक् न्नीचैर्गर्तौ । चञ्चु बञ्चु गर्तौ ।
आशीर्लिङ्गि कित्वात् उपधाया नस्य लोपः । चच्यात् । चच्या-
स्ताम् । शंसु स्तुतौ दुर्गतौ च । णील वर्णे । नीलति । प्रणीलति ।
मील निमेषणे । शील समाधौ । क्रीड विहारे ॥

क्रीडोर्नुसंपरिभ्यश्च १ । ३ । २१ ॥

एभ्य आडश्च । क्रीड आत्मनेपदम् । अनुक्रीडते इत्यादि ॥

अनोः कर्मप्रवचनीयान्न ❀ ॥

वालमनुक्रीडति । तृतीयार्ये इति कर्मप्रवचनीयता । समो
 कूजने । संक्रीडते । कूजने तु संक्रीडति रथचक्रम् । कील वन्धने ।
 लुध अपनयने । लुच्यात् । कुञ्च-कुञ्च कौटिल्याल्पीभावयोः ।
 कुच्यात् । कुञ्चेस्तु । उपधालोपो न अस्य ओपधत्वेनैवेष्टत्वादि-
 त्याहुः । कुञ्च्यात् । तुम्प हिंसायाम् । तुतुम्प । तुतुम्पतुः । संयो-
 गात्परस्य लिटः कित्वाभावान्नलोपो न । आशीर्लिङि तु कित्वा-
 न्नलोपः । तुप्यात् । प्रातुम्पतौ गवि कर्त्तरि इति पारस्करादिगणे
 पाठात्सुट् । प्रस्तुम्पति गौः । शितपा निर्देशाद्यद् । लुकि न प्रतोतु-
 म्पीति । चूप पाने । रूप भूपायाम् । शूल रुजाया संघोपे च ।
 कूज अव्यक्ते शब्दे । भूप अलङ्कारे । मूल प्रतिष्ठायाम् । म्लेच्छ
 अव्यक्ते शब्दे । मिम्लेच्छ । वेह-क्ष्वेल चलने । म्रेह-लोह्वाउन्मादे ।
 शोण वर्णगत्योः । शुशोण । धोर्कृ गतिचातुर्ये । शौट् गर्वे ।
 शुशौट् । त्वगि गतौ कम्पने च । काडि मदे । काक्षि काक्षायाम् ।
 ध्वाक्षि घोरवासिते च । लाच्छि लक्षणे । वाछि इच्छायाम् ।
 रीगि लिगि गतौ । शिधि आघ्राणे । लुवि अर्दने । चुवि
 वक्त्रसंयोगे । कुथि हिंसासंक्लेशनयोः । जुगि वर्जने । लुटिलुटि
 स्तेये । मुडि खण्डने । शुठि कुठि प्रतिघाते। गुजि अव्यक्ते शब्दे ॥
 इति ५५ अंशाः ।

हस शब्दे । जहास । कप हिंसायाम् । चकपतुः । कण कण
 ध्वन भण शब्दे । भप भर्त्सने । हठ प्लुति शठत्ववलात्कारेषु । खल
 संचलने । गल अदने । लल विलासे । चल कम्पने । चर गतिभक्ष-
 णयोः । चेरतुः । अचारीत् ॥

उदश्वरः सकर्मकात् १ । ३ । ५३ ॥

तडानौ । धर्ममुचरते ॥

समस्तृतीयायुक्तात् १ । ३ । ५४ ॥

रथेन संचरते । व्यवहितेऽपि । रथेन समुदाचरते । जप व्य-
 क्ताया वाचि मानसे च । अजापीत् अजपीत् । णट नृतौ । णट्

अव्यक्ते शब्दे । पठ व्यक्तायां वाचि । मण रण शब्दे । रट परि-
भाषणे । जट संघाते । पट गर्ता । रट विलेखने । रस शब्दे । लड
विलासे । लष व्यक्तायां वाचि । लस श्लेषणक्रीडनयोः । शट रुजावि-
शरणगत्यवसादनेषु । शसु हिंसायाम् । दन्त्यान्तः । शशास ॥

न शसददवादिगुणानाम् ६ । ४ । १२ ६ ॥

शसेर्देवकारादीनां गुणशब्देन भावितस्य च योष्कारस्तस्य
एत्वाभ्यासलोपा न । शशसतुः । शशसुः । योपदेवादयस्तु न
शसेति सूत्रे शश प्लुतगर्ता इति द्वितालव्यं धातुं गृह्णन्ति तेषां
मते दन्त्यान्तस्य शसतुरित्यादि द्वितालव्यस्य शशशतुरित्यादि ।
खिट त्रासे । पुप पुष्टौ । पोपति । अपोपीत् । प्लुप दाहे । लुठ
उपधाते । लुड विलोडने । लुल विमर्दने सात्रः । कुच शब्दे तारे ।
वृह वृद्धौ शब्दे च । मृपु सेचने । घृपु संघर्षे । हृपु अलीके । स्फु-
टिर् विशरणे । अव रक्षणगतिकांतिप्रीतिवृत्त्यवगमप्रवेशश्रवणस्वा-
म्यर्थयाचनक्रियेच्छादीस्यवास्यालिंगनहिंसादानभागवृद्धिषु । अर्ह
पूजायाम् । अञ्चु गतिपूजनयोः । म्लुचु गर्ता ॥

जृस्तम्भुचुम्लुचुयुचुगुचुगुलुचुश्विभ्यश्च ३ । १ । ५८ ॥

एभ्यः च्लेरङ् वा नलोपः । अम्लुचत् । अम्लोचीत् । धिवि
प्रीणने ॥

धिविकृण्व्योर च ३ । १ । ८० ॥

अनयोष्कारोन्तादेश उप्रत्ययश्च श्विषये । अतो लोपः । तस्य
स्थानिवत्त्वाल्लघूपधगुणो न । धिनोति । धिनुतः । धिन्वन्ति । धिन्वः
धिनुवः । धिन्मः धिनुमः । हेर्लृरू । धिनु । नित्यत्वादुकारलोपा-
त्पूर्वमाट् । धिनवाव । एवं कृवि हिंसाकरणयोर्गर्ता च । चमु अदने ॥

धिवुक्कमुचमां शिति ७ । ३ । ७५ ॥

एषामचो दीर्घः शिति ॥

आङि चम इति व्यक्तव्यम् ॥

आचामति । चमति । अचमीत् । कटे वर्षावरणयोः । अक-
टीत् । ष्टिवु निरसनं ॥

सुव्धातुष्टिवुप्पक्तीनां सत्वप्रतिषेधः ❀ ॥

षीवति । अस्य द्वितीयस्थष्टो वेति वृत्तिः । तिष्ठेव । तिष्ठेव ।
फल निष्पत्तौ ॥

तृफलभजत्रपश्च ६ । ४ । १२२ ॥

एषामत एत्वमभ्यासलोपश्च किति लिटि सेटि थलि च ।
फेलतुः । अफालीत् । एवं जिफला विशरणे । ईक्ष्य ईर्ष्यायाम् ।
इक्ष्याञ्चकार । उठी विवासे । प्रायेण विपूर्वः । व्युच्छति । व्युच्छा-
ञ्चकार । ऊप रुजायाम् । इदि परमैश्वर्य । कित निवासे रोगाप-
नयने च ॥

गुप्तिज्जकिद्भ्यः सन् ३ । १ । ५ ॥

मान्वधदान्शान्भ्यो दीर्घश्चाभ्यासस्य ३ । १ । ६ ॥

सूत्रद्वयोक्तभ्यः सन्मानादीनामभ्यासकारस्य दीर्घश्च । गुपेर्नि-
न्दायाम् । तिजेः क्षमायाम् । कितेर्व्याधिप्रतीकारे निग्रहे अप-
नयने संशये च । मानेर्जिज्ञासायाम् । वधेश्चित्तविकारे । दानेराज्वे ।
शानेर्निशाने । गुपिप्रभृतयः कित्भिन्ना निन्दाद्यर्थका एवानुदा-
त्ततो दानशानौ च स्वरितेत्तौ एते नित्य सन्नन्ताः । अर्थान्तरे
त्वननुवधकाश्रुरादयः धातोरित्यविहितत्वात् सनोऽत्र नार्द्धधातुक-
त्व तेनेद्गुणौ न । सन्यडोः अभ्यासकार्यम् । चिकित्साति चिकि-
त्सत इत्यपि कश्चित् । अतो लोपः । चिकित्साञ्चकार ॥

इति ५६ अंशाः ।

उप दाहे ॥

उपविद्जागृभ्योऽन्यतरस्याम् ३ । १ । ३८ ॥

एभ्यो लिट्याम्वा । ओपाञ्चकार ॥

अभ्यासस्यासवर्णे ६ । ४ । ७८ ॥

अभ्यासस्येवर्णोवर्णयोरियडुवडौ असवर्णेऽचि । उवोप । ऊ-
पतुः । ऊपुः । इह सवर्णदीर्घस्याभ्यासग्रहणेन ग्रहणाद्भ्रस्वः
प्राप्तो न भवति सकृत्प्रवृत्तत्वात् । आङ्गत्वाद्धि पर्जन्यवलक्षणप्रवृ-
त्त्या ह्रस्वे कृते ततः सवर्णदीर्घः । वार्णादाङ्गं वलीयः इति न्या-
यात् परत्वाच्च । धूप सन्तापे ॥

गुपूधूपविच्छिपणिपनिभ्य आयः ३ । १ । २८ ॥

एभ्य आयप्रत्ययः स्वार्थे । धूपायति । धूपायांचकार ॥

आयादय आर्द्धिधातुके वा ३ । १ । ३१ ॥

दुधूप । धूपायिता धूपिता । अधूपायीत् अवूपीत् । उख-उखि
गतौ । ओखति । उवोख । ऊखतुः । उङ्गति । उङ्गांचकार ॥ अथ
घटादयः ॥ ते च द्विधा । केचित् घटादिगण एवापूर्वतया प-
ठिताः । केचित्तु अन्यत्र पठिता अपि मित्कार्यार्थं घटादिष्वपि
पठिताः । तत्र घटादयस्वरत्यन्तास्त्रयोदश पितोऽपि तेभ्यः पि-
द्विदादिभ्योऽङ् । घटा । व्यथा । प्रया इत्यादिघटादयो मित इति ।
मितस्तु फणान्ताः सर्वेऽपि तेषां मित्कार्यं च णिच्येव ॥

मितां ह्रस्वः ६ । ४ । ९२ ॥

मितामुपधाया ह्रस्वो णौ परे । लगयति । णिजन्तात्कर्मणि
लुङि तस्य तादेशे च्लौ तस्य चिणि णिलोपे च ॥

चिण्णमुलोदीर्घोऽन्यतरस्याम् ६ । ४ । ९३ ॥

चिण्णपरे णमुल्लपरे च णौ मितामुपधाया दीर्घो वा । अलगि
अलगि । आमीक्ष्ये णमुलि लागं लागं लगं लगम् । एवं सर्वेषु
घटादिपूदाहार्यम् । स्वस्वगणकार्यं च । लगति । ललाग । लेगतुः ।
अलगीत् । इत्यादि ज्ञेयम् । तत्राद्याः प्रसिद्धाश्चात्र खण्डे लिख्य-
न्ते । लगे संगे । ऋय हिंसायाम् । ज्वर रोगे । हल चलने । दृ मये ।
न्यादेरनुवादोऽयम् । अपूर्वं एवेत्यन्ये । अक-अग कुटिलाया गतां ।
रगे सङ्गे । चक वृत्तौ । हेड वेष्टने । हेड्धातोऽनुवादोऽयमित्याहुः ।
परे तु असाम्प्रदायिकोऽस्य पाठः । सति पाठे त्वपूर्वं एवायं नत्वन्-

वाद इत्याहुः । णिजन्ते सर्वे घटादयो वक्ष्यन्ते । अथ फणादयः ॥
फण गतौ । अयं मतभेदेन घटादिष्वपि ॥

फणाञ्च सप्तानाम् ६ । ४ । १२५ ॥

एषां वा एत्वाभ्यासलोपा किति लिटि सेटि थलि च । फेणतुः
फफणतुः । स्वन शब्दे । स्वेनतुः सस्वनतुः । शेपा वक्ष्यन्ते ॥
अथ ज्वलादयः ॥ ज्वल दीप्ती । अज्वालीत् । बल प्राणने धान्या-
बरोधे च । बेलतुः । बेलुः । पल्ल गतौ ॥

पतः पुम् ७ । ४ । १२६ ॥

अडि । अपसत् । टल वैक्लव्ये । पुल महत्त्वे । हल विलेखने ।
टुवम् उद्दिरणे । वाङ्स्त्वान्नेत्वाभ्यासलोपा । व्वमतुः । वेमतुःस्त्रियपि
भागवृत्तौ । तद्रूमाभ्यादौ न दृष्टम् । अवमीत् । पिधु गत्याम् ।
सेधति । सात्पदाद्योरिति निषेधे प्राप्ते ॥

उपसर्गात्सुनोतिसुवतिस्यतिस्तौतिसुतोभतिस्थासे-
नयसेधसिचसञ्जस्वञ्जाम् ८ । ३ । ६५ ॥

उपसर्गादिष्णिमिच्चादेषां सस्य पः । निषेधति ॥

सदिरप्रतेः ८ । ३ । ६६ ॥

प्रतिभिन्नोपसर्गम्यादिणः सदेः सस्यः पः ॥

स्तन्भेः ८ । ३ । ६७ ॥

सौत्रस्य सस्य पः । प्रतेरपि । बाहुप्रतिष्ठम्मविवृद्धमन्युः ॥

अवाञ्चालम्बनाऽऽविदूर्ययोः ८ । ३ । ६८ ॥

अवात्स्तन्भेरेतयोरर्थयोः पः ॥

वेश्व स्वनो भोजने ८ । ३ । ६९ ॥

व्यवाभ्यां स्वनतेः सस्य पः भोजने ॥

परिनिविभ्यः सेवसितसयसिबुसहसुटस्तु स्वञ्जाम्

। ३ । ७० ॥

एभ्यः परेषामेषां सस्य पः ॥

प्राक्सिताद्द्रव्यवायेऽपि ८ । ३ । ६३ ॥

सेवसित इत्यत्र सितशब्दात्प्राग्घे सुनोत्यादशस्तेषामद्द्रव्यवाये-
ऽपि पत्वम् । न्यपेधत् । न्यपेधीत् । न्यपेधिष्यत् ॥

स्थादिष्वभ्यासेन चाभ्यासस्य ८ । ३ । ६४ ॥

प्राक्सितात्स्थादिष्वभ्यासेन व्यववायेऽपि पत्वम् एषामेव चाभ्या-
सस्य नतु सुनोत्यादीनाम् । निपिपेध । निपिपिधतुः ॥

सेधतेर्गतौ ८ । ३ । ११३ ॥

गत्यर्थस्य सेधतेः पत्वं न । गंगां विसेधति । भ्रमु चलने ॥

वा भ्राशभ्लाशभ्रमुक्रमुत्रसिञ्जटिलपः ३ । १ । ७० ॥

एभ्यः श्यन् वा कर्त्तरि सार्वधातुके । भ्रम्यति भ्रमति । दिवादी
भ्राम्यति ॥

वा जृभ्रमुत्रसाम् ६ । ४ । १२४ ॥

एषामेत्वाभ्यासलोपौ वा किति लिटि सेटि थलि च । भ्रेमतुः
वभ्रमतुः । अभ्रमीत् । कथे निष्पाके । मथे विलोडने । क्षर संच-
लने । चल कंपने । कुच संपर्चनकौटिल्यप्रतिष्ठम्भविलेखनेषु । बुध
अवगमने । कस्त गतौ । शेषा वक्ष्यन्ते ॥ अथ द्वौ यजादी ॥ वद्
व्यक्तायां वाचि ॥

वचिस्वपियजादीनां किति ६ । १ । १५ ॥

वचिस्वप्योर्यजादीनां च संप्रसारणं किति ॥

ग्रह्णिज्यावयिव्यधिवष्टिविचितिवृश्चतिपृच्छतिभृज्जती-
नां ङिति च ६ । १ । १६ ॥

एषा किति ङिति च संप्रसारणम् ॥

लित्यभ्यासस्योभयेषाम् ६ । १ । १७ ॥

वच्यादेर्ग्रहादेश्चाभ्यासस्य संप्रसारणं लिटि । उवाद् ॥

परनित्यांतरंगापवादानामुत्तरोत्तरं वलीयः । संप्र-
सारणं तदाश्रयं च बलवत् । सकृद्गतौ विप्रतिषेधे यद्वा-
धितं तद्वाधितमेव । पुनः प्रसङ्गविज्ञानात्सिद्धम् पुनः
प्रसङ्गविज्ञानाद् द्वित्वम् ❀ ॥

ऊदतुः । उद्यात् । अवादीत् ॥

भासनोपसंभापाज्ञानयत्नविमत्युपमंत्रणेषु वदः १ ।
३ । ४७ ॥

आत्मनेपदम् । शास्त्रे वदते । श्रुत्यानुपवदते । शास्त्रे वदते ।
क्षेत्रे वदते । गेहे विवदन्ते । परदारानुपवदते ॥

व्यक्तवाचां समुच्चारणे १ । ३ । ४८ ॥

संप्रवदन्ते ब्राह्मणाः । नेह । संप्रवदन्ति खगाः ॥

अनोरकर्मकात् १ । ३ । ४९ ॥

व्यक्तवाग्विपयादनुपूर्वाद्दिदेरात्मनेपदम् । अनुवदते कठः कल
पस्य ॥

विभाषा विप्रलापे १ । ३ । ५० ॥

विरुद्धोक्तिरूपे व्यक्तवाचां समुच्चारणे उक्तं वा । विप्रवदन्ते वि
वदन्ति वा वैद्याः ॥

अपाद् वदः १ । ३ । ७३ ॥

अपवदते । कर्त्रभिप्राय एव । नेह । अपवदति ॥

विभाषोपपदेन प्रतीयमाने १ । ३ । ७७ ॥

स्वरितञितः, णिचश्च, अपाद् वदः, समुदाद्भ्यः, अनुपसर्गाज्ज्ञः
इति पञ्चसूत्र्या यदात्मनेपदं विहितं तत्समीपोच्चारितेन पदेन
क्रियाफलस्य कर्तृगामित्वे द्योतिते वा । स्वं पुत्रमपवदते अपव-
दति वा ॥

इति ५७ अंशाः ।

दुओश्च गतिवृद्धयोः ॥

विभाषा श्वेः ६ । १ । ३० ॥

श्वयतेः संप्रसारणं वा लिटि यडि च । शुशाव । शुशुवतुः ॥

श्वयतेर्लिट्यभ्यासलक्षणप्रतिषेधः ❀ ॥

तेन लिट्यभ्यासस्येति संप्रसारणं न । शिश्वाय । शिश्वियतुः । शूयात् ॥

जृस्तंभ्विति ॥

च्लेरङ् वा ॥

श्वयतेरः ७ । ४ । १८ ॥

श्वयतेरिकारस्य अकारोऽडि । अश्वत् ॥

विभाषा धेऽङ्ग्योः ३ । १ । ४९ ॥

आभ्यां च्लेश्चङ् वा कर्तृलुङि।चाडि इति धित्वम् । अशिश्वियत। ह्यन्तेति न वृद्धिः। अश्वयीत् । शेपा वक्ष्यन्ते ॥ अथ वेडानिटः ॥ तत्र अनिटश्च गद्येन पूर्वमुक्ताः झटिति स्मरणार्थं श्लोकार्कशोच्यन्ते । ऊदन्तऋदन्तरुणक्षुण्यौतिस्तुभ्रुश्चिडीशीश्रिं च वृद्धवृञौ च । स्युर्द्धा- तवः सेट इमेऽथ चान्ये एकाजजन्ता अनिटोऽनुदात्ताः॥१॥ हलन्तेषु शक्नोति पञ्चच्चरिचश्च विचिर्मुञ्चतिः सिञ्चतिः पृच्छमञ्चौ । त्यजि- मर्जती रञ्जनेनेक्तिभृञ्जाः भुञ्जेः स्याद्भजिर्भृञ् भवेद्युञ्जुञ्जी च ॥१॥ स्वञ्जविजिरसञ्जिसञ्जिखिदः क्षुद्दञ्छितुदपद्यनुदोभिद्विन्ते । स्विद्यति विद्यति सीदति चात्ति स्कन्दहृदो शदशुष्यतिबुध्यौ ॥ २ ॥ रुधिः सराधिर्युधिवन्धिसाधयः ऋधिः क्षुधिः सिध्यतिविध्यती हनिः । मन्यापत्तृप्यत्यथ लिम्पलुम्पती ह्यस्यस्वपी सर्पतिवप्रापाक्षिपः ॥३॥ तेषति च्छुपति तप्र्यभी रभिर्लभ्रगमी अथ नमिर्भमी रभिः। दंशद- श्दिशतिमृशरिशीरुशिलिंशस्पृशत्यथ विशत्यतुकुशिः ॥ ४ ॥ द्वेष्टि तुष्यकृपत्वेपत्यथ दुष्यति पुष्यति । पिनाष्टे विष् ततः शुष्य- त्यथ श्लिष्यति शिष तथा ॥ ५ ॥ स्याद्भसतिश्च धसिर्दहदेग्धीदो-

ग्निधनहीवाहिलेदिरुहश्च । मेहतोरित्यनुदात्तहलन्ताः संकलिता द्यधिकं
शतमेते ॥ ६ ॥ गुपू रक्षणे । गोपायाञ्चकार । जुगोपिथ जुगो-
प्य । गोपायिता गोपिता गोप्ता । गोपाय्यात् गुप्यात् । अगो-
पायीत् अगोपीत् । अगौप्सीत् । अगौप्ताम् । अज गतिक्षेपणयोः ।
अजति ॥

अजेर्व्यघ्नपोः २ । ४ । ५६ ॥

अजेर्वा आदेश आर्द्धधातुकविषये घञमर्प च वर्जयित्वा । वला-
द्यार्द्धधातुके वेप्यते । विवाय । विव्यतुः । विव्युः । इह वकारस्य
हल्परत्वात् उपधाया च इति दीर्घे प्राप्ते अचः पररिमन्निति स्था-
निवद्भावेनाच्परत्वम् । न च न पदान्तेति निषेधः । स्वरदीर्घयलोपेषु
लोपाजादेश एव न स्थानिवादिदि वार्तिकोक्तेः । थलि एकाच इती
ग्निपेधे प्राप्ते कृस्त्रुवृ इति क्रादिनियमादिद् प्राप्नोति । अत्र हि प्रकृत्या-
श्रयः प्रत्ययाश्रयो वा यावानिदृनिषेधः स लिटि चत्तार्हे क्रादिभ्य
एव नान्येभ्य इति । ततश्चतुर्णां थलि भारद्वाजनियमप्रापितस्य वमादिषु
क्रादिनियमप्रापितस्य चेटो निषेधार्थम् । एवमिति प्राप्ते पुनरचस्ता-
स्वादित्यनेन निषेधे प्राप्ते भारद्वाजमतेन पुनर्निषेधनिवृत्त्या विकल्पः
नच स्तुद्भुश्रुवापि थलि विकल्पः शक्यः । अचस्तास्वादिति उप-
देशे त्वत इति च योगद्वयप्रापितस्यैव हि प्रतिषेधस्य भारद्वाजनि-
यमो निवर्तकः अनन्तरस्येति न्यायात् । विवयिथ विवेथ । आ-
जिथ । विव्यथुः । विव्य । विवाय विवय । विव्यिव । विव्यिम ।
आजिव । आजिम । वेता । अजिता । वेप्यति । अजिप्यति ।
अजतु । आजत् । अजेत् । वीयात् । अवैपीत् । अजीत् । अवे-
प्यत् । आजिप्यत् । रिप रूप हिंसायाम् ॥

तीपसहलुभरूपरिपः ७ । २ । ४८ ॥

इच्छत्यादेः परस्य तादेरार्द्धधातुकरथेट वा । रोपिता रोधा ।
रोपिता रोधा । तृ घुवनतरणयोः । तरति ॥

ऋच्छत्पृताम् ७ । ४ । ११ ॥

तौदादिकऋच्छेऋधातोऋता च गुणो लिटि परत्वात् णल्यपि ।
गुणः । उपधावृद्धिः । गुणशब्दभाविताकारवच्चान्निपेधे प्राप्ते तृफ-
लित्येच्चाभ्यासलोपी । तेरतुः ॥

घृतो वा ७ । २ । ३८ ॥

घृद्घृञ्भ्याम्दन्ताघेदो दीर्घो वा नतु लिटि । तरिता तरीता ॥

ऋत इद्धातोः ॥

गुणवृद्धी परत्वाद्वाधेते । तीर्यात् । सिचि वृद्धिरिति वृद्धिः ।
अतारीत् ॥

सिचि च परस्मैपदेषु ७ । २ । ४० ॥

वृत इदो दीर्घो न । अतारिष्टाम् । कर्मव्यतिहार आत्मनेपदे तु ॥

लिङ्सिचोरात्मनेपदेषु ७ । २ । ४२ ॥

वृतः परयोर्लिङ्सिचोरिङ् वा तडि ॥

न लिङि ७ । २ । ३९ ॥

वृतो लिङ इदो दीर्घो न । तरिपीष्ट । उश्चेति कित्त्वम् । ती-
पीष्ट । अतरिष्ट अतरीष्ट अतीष्ट ॥

इति ५८ अंशाः ।

तक्ष् तनूकरणे ॥

तनूकरणे तक्षः ३ । १ । ७६ ॥

शुर्वा शब्धिपये । तक्ष्णोति तक्षति वा काष्ठम् । अन्यत्र वाग्मिः
संतक्षति । भर्त्सयतीत्यर्थः । अतक्षीत् । पक्षे अताक्षीत् । अक्ष् व्याप्ती ॥

अक्षोऽन्यतरस्याम् ३ । १ । ७५ ॥

शुः शब्धिपये । अक्ष्णोति अक्षति । अक्ष्णवन्ति । आनक्षिथ
आनष्ट । अक्षिता अष्टा । अक्षिष्यति अक्षयति । अक्ष्णोतु । आक्षीत् ।
मा भवानक्षीत् । अक्षिष्टाम् । अनिद्रत्वे मा भवानाक्षीत् । आष्टाम् ।
ऋमु पादविक्षेपे । वा आशोति श्यन्वा ॥

क्रमः परस्मैपदेषु ७ । ३ । ७६ ॥

क्रमेर्दीर्घः परस्मैपदपरे शिति । क्राम्यति क्रामति ॥

स्नुक्रमोरनात्मने पदनिमित्ते ७ । २ । ३६ ॥

अत्रैवेद् । अक्रमीत् ॥

वृत्तिसर्गतायनेषु क्रमः १ । ३ । ३८ ॥

आत्मनेपदम् । ऋचि क्रमते वुद्धिः । न प्रतिहन्यत इत्यर्थः ।
क्रन्ता । क्रंस्यते । अक्रंस्त । अध्ययनाय क्रमते क्रमेतेऽस्मिन्
शाखाणि ॥

उपपराभ्याम् १ । ३ । ३९ ॥

वृत्त्यादिष्वाभ्यामेव क्रमेर्न वृपसर्गान्तपूर्वात् । उपक्रमते । परा-
क्रमते । नेह । संक्रामति ॥

आङ् उद्गमने १ । ३ । ४० ॥

आक्रमते सूर्यः ॥

ज्योतिरुद्गमन एव ❀ ॥

नेह । आक्रामति धूमो हर्म्यतलात् ॥

वेः पादविहरणे १ । ३ । ४१ ॥

साधु विक्रमते वाजी ॥

प्रोपाभ्यां समर्थाभ्याम् १ । ३ । ४२ ॥

प्रोपपूर्वादारम्भार्थात् क्रमेरात्मनेपदम् । प्रक्रमते । उपक्रमते ॥

अनुपसर्गाद्वा १ । ३ । ४३ ॥

क्रामति क्रमते । क्रन्ता । क्रंस्यते ॥ अयानिटः ॥ स्क्रन्दिद्
गतिशोषणयोः । चस्कन्दिथ चस्कन्थ । स्कन्ता । स्कन्तस्यति ।
नलोपः । स्कद्यात् । इरित्वादद् वा । अस्कदत् । अस्कान्तसीत् ।
अस्कान्ताम् । अस्कान्तसुः ॥

वेः स्कन्देरनिष्ठायाम् ८ । ३ । ७३ ॥

पत्वं वा । कृत्येवेदम् । अनिष्ठायामिति पर्युदासात् । विष्कन्ता
विस्कन्ता । निष्ठायां तु । विस्कन्नः ।

परेश्च ८ । ३ । ७४ ॥

परेः परस्य स्कन्देः सस्य पो वा । योगविभागादनिष्ठायामिति
न सम्बध्यते । परिष्कन्दानि परिस्कन्दति । परिष्कण्णः परिस्कन्नः ।
पत्वपक्षे णत्वम् । न च पदद्वयाश्रयतया बहिरङ्गत्वात्पत्वमसिद्धम् ।
धातूपसर्गयोः कार्यमन्तरङ्गमित्यभ्युपगमात् । पूर्वं धातुरुपसर्गेण
युज्यते ततः साधनेनेति भाष्यम् । पूर्वं साधनेनेति मतान्तरे तु न
णत्वम् । तप सन्तापे । तेषिथ ततप्य । तप्ता । अताप्सीत् ॥

उद्विभ्यां तपः १ । ३ । २७ ॥

अकर्मकात्तडानौ । उत्तपते । वितपते । दीप्यते इत्यर्थः ॥

स्वाङ्गकर्मकाच्च ❀ ॥

उत्तपते स्वपाणिम् । नेह । चैत्रो मैत्रस्य पाणिमुत्तपति । सृष्ट
गतौ । सर्पति ॥

अनुदात्तस्य चर्दुपधस्यान्यतरस्याम् ६ । १ । ५९ ॥

उपदेशेऽनुदात्तो य ऋदुपधस्तस्य अम् वा झलादावकिति । स्रप्ता
सर्ता । असृपत् । दह मस्मीकरणे । देहिय । दादेरिति घः । दद-
ग्ध । दग्धा । धक्ष्यति । अधाक्षीत् । अदाग्धाम् । अधाक्षुः । यम
मैथुने । येभिथ ययब्ध । अयाप्सीत् । घस्त्व अदने । शपि बला-
घार्द्धधातुके लुडि कमराचि चास्य प्रयोगो न सर्वत्र । घस्ता ॥

सः स्याद्धधातुके ७ । ४ । ४९ ॥

सस्य तः सादावार्द्धधातुके । घत्स्यति । लृदित्वात् च्लेरङ् ।
अघसत् ॥

इति ५९ अंशाः ।

वस निवासि॥अयं यजादिः । उवास । शासिवासि इति पः । ऊ-
पतुः । उष्यात् । वत्स्यति । औवै शोषणे । श्रै पाके । स्तयै शब्द-
संघातयोः । क्षै क्षये । द्वै स्वप्ने । णै वेष्टने । दाण् दाने ॥

पात्राध्मास्थाभ्रादाण्दृश्यतिर्तिशदसदां पिबजिघ्रध-
मतिष्ठमनयच्छपश्यर्द्धौशीयसीदाः ७ । ३ । ७८ ॥

पादीनां पिवादयः स्युः इत्संज्ञकशकारादी प्रत्यये । यच्छति
दाता । प्रणियच्छति । अद्ब्यवायेऽपीष्यते । प्रणययच्छत् ॥

दाधाध्वदाप् १ । १ । २० ॥

दाण्-डुदाञ-दो-देद्-डुधाञ्-धेतो घुसंज्ञाः ॥

एळिडि ६ । ४ । ६७ ॥

घुमास्थागापाजहातिसो एपामात एत्वमार्द्धधातुके किति लिडि ।
देयात् । गतिस्थेति तिचो लृक् । अदात्तात् । अस्य पदांतात् ।
अदुः ॥

दाणश्च सा चेच्चतुर्थ्यर्थे १ । ३ । ५५ ॥

सम्पूर्वादाणस्त्वृतीयान्तेन युक्तात्तडानौ तृतीया चेच्चतुर्थ्यर्थे ।
दास्या संयच्छते । व्यवधानेऽपि । दास्या सम्प्रयच्छते । सन्देदे ।
सन्दासीष्ट ॥

स्थाध्वोरिच्च १ । २ । १७ ॥

अनयोरिदादेशः सिच्च कित् तडि । ह्रस्वादङ्गात् । समदित ।
समदिपाताम् । पा पाने । पिवादेशोऽदन्तः । तेन उपधागुणो न ।
पिबति । पेयात् । अपात् । ध्मा शब्दाग्निसंयोगयोः । धमति ।
धमेयात् । धमायात् । अध्मासीत् । भ्रा अभ्यासे । मनाति । घ्रा
गन्धोपादाने । जिघ्रति । घ्रेयात् । घ्रायात् ॥

विभापा प्राधेद्दशाब्दासः २ । ४ । ७८ ॥

एभ्यः तिचो लृक् वा परस्मैपदे । अघ्रात् । अघ्रासीत् । धेद्
पाने । प्रणिधयति । दधी । दधिय दधायाधेयात् । विभापा धेडिति
चद् द्विवम् । अदधत् । अदधताम् । पक्षे अधात् । अधासीत् ॥
इति ६० अंशाः । इति द्वितीयाध्यायस्य द्वितीयः पादः ।

घा गतिनिवृत्तौ । तिष्ठति । तस्थौ । स्थेयात् । अस्थ्यात् ॥

समवप्रविभ्यः स्थः १ । ३ । २२ ॥

आत्मनेपदम् । सन्तिष्ठते । समस्थित । समस्थिपाताम् ॥

आडः प्रतिज्ञायाम् ❀ ॥

शब्दं नित्यमातिष्ठते ॥

प्रकाशनस्थेघारव्ययोश्च १ । ३ । २३ ॥

गोपी कृष्णाय तिष्ठते । आशयं प्रकाशयतीत्यर्थः । संगम्य
कर्णादिषु तिष्ठते यः । कर्णादीन्निर्णेतृत्वेनाश्रयतीत्यर्थः ॥

उदोऽनूर्द्ध्वकर्मणि १ । ३ । २४ ॥

मुक्तावुत्तिष्ठते । ऊर्ध्वकर्मणि तु पीठाद्गुत्तिष्ठति । ईहायामेव ।
नेह । ग्रामाच्छतमुत्तिष्ठति ॥

उपान्मंत्रकरणे १ । ३ । २५ ॥

आग्नेय्याग्नीध्रमुपतिष्ठते ॥

उपाद्देवपूजासंगतिकरणमित्रकरणपथिष्विति वा-
च्यम् ❀ ॥

आदित्यमुपतिष्ठते । गङ्गा यमुनामुपतिष्ठते । रथिकानुपतिष्ठते ।
पंथाः सुन्नमुपतिष्ठते ॥

वा लिप्सायाम् ❀ ॥

प्रभुमुपतिष्ठते उपतिष्ठति वा ॥

अकर्मकाच्च १ । ३ । २६ ॥

उपात्तिष्ठतेरकर्मकादात्मनेपदम् । भोजनकाले उपतिष्ठते । गे
शब्दे । गेयात् । अगासीत् । व्यतिगायति । जि जयेऽभिभवे च ॥

सँल्लिङ्गेजैः ७ । ३ । ५७ ॥

जयतेः सनि लिटि च योऽभ्यासस्ततः परस्य कुत्वम् । जिगाय ।
अजैपीत् ॥

विपराभ्यां जेः १ । ३ । १९ ॥

तडानौ । विजयते । पराजयते । व्यजेष्ट । जु रंहसि । हु गतौ ।
द्रोता । द्रूयात् । णिश्रिद्भु इति चङ् । चङि अदुद्भुवत् । व्यति-
द्रवन्ति । एवं सु गतौ । पु प्रसवैश्वर्ययोः । सवति । सोता । धु
स्थैर्ये । श्रु श्रवणे ॥

श्रुवः शृच ३ । १ । ७४ ॥

श्रुवः शृ इत्यादेशः श्नुप्रत्ययश्च कर्त्रर्थे सार्वधातुके । शपोऽप-
वादः । शृणोति । हुश्नुवोरिति यण् । शृण्वन्ति । शृण्वः शृणुवः ।
शुश्रोथ । शुश्रुव । शुश्रुम । शृणु ॥

अर्त्तिश्रुद्दिशिभ्यश्च ❀ ॥

समोऽऽर्त्तकेभ्य एभ्यस्तडानावित्यर्थः । संशृणुते । समश्रोष्ट ।
सन्नन्तादपि च तडानौ वक्ष्येते । ऋ गतिप्रापणयोः । ऋच्छति ।
उरत् । ऋच्छत्यताम् णलि गुणे उपधावृद्धिः । आर । आरतुः ।
इडत्यर्त्तिव्ययतीनाम् । आरिथ । ऋद्धनोः स्ये । अरिष्यति ।
आट् आटश्च । आच्छत् । अर्यात् ॥

सर्त्तिशास्त्यर्त्तिभ्यश्च ३ । १ । ५६ ॥

एभ्यः च्लेरङ् कर्त्तरि लुङि । इत्यङ् तु न लुप्तशपा शासिना
साहचर्यात् सत्यर्त्त्योर्जोहोत्यादिकयोरेवात्र ग्रहणात् । आपीत् ।
समृच्छते । समारे । समाराते । समारिरे । उश्च । समृषीष्ट । समार्त्त ।
समार्पाताम् । समार्पत । माङि तु मासमृत । मासमृपाताम् ।
मासमृपत । सृ गतौ । शीघ्र गतौ । धावति । अन्यत्र सरति ॥

इति ६१ जंजाः ।

पञ्च सङ्गे ॥

दंशपञ्चपञ्चां शपि ६ । ४ । २५ ॥

रञ्जेश्च ६ । ४ । २६ ॥

एषा शपि नलोपः । पजति । ससञ्जिय ससङ्ख्य । सङ्गा ।

दंश दशने । दशति । ददंशित्थ ददंष्ट । दंष्टा । दश्यात् । दंक्ष्य-
ति । अदांक्षीत् । गम्ल् गती ॥

इषुगमियमाञ्छः ७ । ३ । ७७ ॥

एषां छः शिति । गच्छति । जगाम । गमहनेत्युप्रधालोपः ।
जग्मतुः । जगमिथ जगन्थ । गन्ता ॥

गमेरिट् परस्मैपदेषु ७ । २ । ५८ ॥

गभेः परस्य सकारादेः इट् तडानयोरभावे । गमिष्यति । च्ले-
रङ् । अगमत् ॥

समोगमृच्छिभ्याम् १ । ३ । २९ ॥

अकर्मकाभ्यामात्मनेपदम् । संगच्छते । संगंस्यते ॥

वा गमः १ । २ । १३ ॥

गमः परौ झलादी लिङ्गसिच्वा वा कितौ । किञ्चे अनुदात्तोप-
देशेति मलोपः । संगसीष्ट पक्षे संगंसीष्ट । समगत समगस्त ।
यमु उपरमे । शपि यच्छति । शेषं णमवत् ॥

आङो यमहनः १ । ३ । २८ ॥

आत्मनेपदम् । आयच्छते । आयंस्त ॥

यमो गंधने १ । ३ । १५ ॥

परदोषाविष्करणे यमः सिच् कित् । उदायत् । गन्धने किम् ।
उदायंस्त पादम् । आकृष्टवानित्यर्थः ॥

उपाद्यमः स्वकरणे १ । ३ । ५६ ॥

उपाद्यमः स्वीकारे आत्मनेपदम् । भार्याशुपयच्छते ॥

विभाषोपयमने १ । २ । १६ ॥

यमः सिच् किङ्का । विवाहे रामः सीताशुपायत् उपायंस्त वा ।
उदबोद्धेत्यर्थः । गन्धनाङ्ग उपयमे तु पूर्वविप्रतिषेधान्नित्यं किञ्चम् ॥

समुदाङ्भ्यो यमोऽग्रंथे १ । ३ । ७५ ॥

अग्रंथे इति च्छेदः । व्रीहीन् संयच्छते । भारमुद्यच्छते । वस्त्रमा-

यच्छते । ग्रन्थे तु उद्यच्छति वेदम् । विभाषोपपदेनेति । स्वं व्रीहिं
संयच्छति संयच्छते वा । दृशिद् प्रेक्षणे । पश्यति ॥

विभाषा सृजिदृशोः ७ । २ । ६५ ॥

आभ्या थल इद् वा ॥

सृजिदृशोर्ज्ञल्यमकिति ६ । १ । ६८ ॥

अनयोः अमागमो झलादावकिति दद्रष्ट । ददर्शित्थ ॥

ऋदृशो ङि गुणः ७ । ४ । १६ ॥

ऋवर्णान्तानां दृशेश्च गुणो ङि । अदर्शत् । अडभावे ॥

न दृशः ३ । १ । ४७ ॥

दृशः च्लेः कसो न । अद्राक्षीत् । अद्राष्टाम् ॥

अर्तिश्रुदृशिभ्यश्च ॥

सम्पश्यते । संदृशे । संदृशीष्ट । समदृष्ट । समदृक्षाता । समदृ
क्षत । सन्नन्तादात्मनेपदं वक्ष्यते । कृप विलेखने । अनुदात्तस्ये-
त्यम् वा । ऋष्टा कर्षा ॥

स्पृशमृशकृपत्पृषां च्लेः सिज्वा ❀ ॥

अक्राक्षीत् अकाक्षीत् । अकृक्षत् । अथ ज्वलादिषु । शद्ल
शातने ॥

शदेः शितः १ । ३ । ६० ॥

शिद्भाविनोऽस्मादात्मनेपदम् । शीयते । शेदिय शशत्थ ।
शत्ता । अशदत् । पद्ल विशरणगत्यवसादनेषु । सीदति । सेदतुः ।

सदेः परस्य लिटि ८ । ३ । ११८ ॥

सदेरभ्यासात्परस्य पत्वं न लिटि । निपसाद । निपेदतुः ।
सत्ता । ऋश आह्वाने रोदने च । क्रोष्टा । कसः । अरुक्षत् । रुह
बीजजन्मनि प्रादुर्भावे च । रोद्रा । रोक्षयति । अरुक्षत् । शेषा
वक्ष्यन्ते ॥ इति परस्मैपदिनः ॥

इति ६२ अंशाः ।

वल्म भोजने । वल्मते । ववल्मे । वल्मिता । वल्मिष्यते । वल्म-
 ताम् । अवल्मत । वल्मेत । वल्मिपीष्ट । अवल्मिष्ट । अवल्मिष्यत ।
 पर्द कुत्सिते शब्दे । बर्ह परिभाषणाहिंसाच्छादनेषु । श्रम्भु-स्रम्भु
 प्रमादे । स्पर्द्ध संघर्षे । कत्य श्लाघायाम् । चकत्ये । गल्म धाष्टर्थे ।
 गर्ह कुत्सायाम् । घट्ट चलने । दक्ष वृद्धौ शीघ्राथे च । मक्ष अदने ।
 परस्मैपद्यमित्येके । नित्यचुरादिरयं नतु भ्वादिरिति परे । बाधृ
 पि लोडने । वबाधे । रासृ शब्दे । शाडृ श्लाघायाम् । लाघृ सामर्थ्ये ।
 श्लाघृ कत्यने । भाम क्रोधे । भ्राजृ दीप्तौ । ह्राद अव्यक्ते शब्दे । ह्रादी
 सुखे च । टीकृ गतौ । दीक्ष मौण्डचेज्योपनयननियमशतादेशेषु ।
 शीकृ सेचने । क्लीवृ अधाष्टर्थे । क्षीवृ मदे । कुर्द क्रीडायामेव ।
 कूर्दते । धुक्ष संदीपनक्लेशनजीवनीयेषु । पूथी विशरणे । घूद
 क्षरणे । क्यूथी शब्दे उन्दे च । घूर्ण भ्रमणे । वेष्ट वेष्टने । देवृ देवने ।
 पेवृ सेवने । टुवेष्ट कंपने । रेष्ट अव्यक्ते शब्दे । रेभृ शब्दे । हेष्ट
 अनादरे । हेष्ट-हेष्ट अव्यक्ते शब्दे । ग्लेष्ट गतौ दिन्ये कम्पने च ।
 टौकृ गतौ । चडि कोपे । पचि व्यक्तीकरणे । लधि गतौ
 भोजनानिवृत्तौ च । राभि शब्दे । लभि शब्दे अवसंसने च । शकि
 शंकायाम् । आइशसि इच्छायाम् । श्लथि शैथिल्ये । स्कामि-ष्टभि
 प्रतिबन्धे । केऽपि ष्ठभेष्टकारमौपदेशिकमाहुः । स्पदि, किंचिच्चलने ।
 काठि शोके । कापि चलने । ग्रथि कौटिल्ये । कडि मदे । भाडि
 परिभाषणे । मडि विभाजने । हिडि गत्यनादरयोः । पिडि
 संघाते । जृभि गात्रविनामे । कच बन्धने । दद दाने । ददते ।
 न शसति निषेधान्निन्वाभ्यासलोपौ । दददे । दददाते । दददिरे ।
 दध धारणे । देधे । पच सेवने सेचने च । घुव गतौ । वल संवरणे
 संचरणे च । कल शब्दसंख्यानयोः । ष्वद आस्वादने । अयमनुभवे
 सकर्मकः रुचावकर्मकः । असु अदने । एभु स्तम्भे । स्तोमते । स्फुट
 विकसने । ऋज गतिस्थानार्जनोपार्जनेषु । अर्जतो नुडविधौ
 ऋकारिकदेशो रेफो हलत्वेन गृह्यते तेनानेकहलत्वान्नुट् । आनृजे ।
 भृजी मर्जने । ईह चेष्टायाम् । ईहांचक्रे । ऊयी तन्तुसंताने । एष्ट गतौ ।

एपते । डीङ् विहायसा गतौ । डयते । डिडये । डिडिचङ्गे डि-
डिचङ्घे । पूङ् पवने । पवते । तावृ संतानपालभयोः ॥

दीपजनबुधपूरितायिप्यायिभ्योऽन्यतरस्याम् ३ । १ । ६१ ॥

एभ्यः च्लेशिष्ण वा एकवचने तशब्दे परे । घिणो लुक् । अतायि ।
अतायिष्ट । स्फायी-ओप्यायी वृद्धौ ॥

लिडचङोश्च ६ । १ । २९ ॥

लिटि याडि च प्यायः पीभावः । पिप्ये । पिप्यरे । अप्यायि ।
अप्यायिष्ट । काष्ठ शब्दकुत्सायाम् । कासते । कासाचके । कासिता ।
नाधृ-नाधृ याच्योपतापैश्वर्याशीःपु ॥

आशिपि नाथः ॥

अस्याशिष्येवात्मनेपदम् । नाथते । अन्यत्र नाथति । केचित्
नाथेर्णोपदेशतामाहुः । मान पूजायाम् । भीमासते । वध बन्धने ।
मष्ट्वम् । वीभत्सते । तिज निशाने । तितिक्षते । गुप गोपने ।
जुगुप्सते । पण व्यवहारे स्तुतौ च । पनिसाहचर्यात्पणरेपि स्तुताधि-
वायः अन्यत्र पणते इत्यादि । वणिजा पणाया इति भट्टिवर्य-
वहारेऽपि प्रायुङ्क्त । स्तुतावनुबन्धस्य केवले चरितार्थत्वात् आया-
न्तान्नात्मनेपदम् । पणायति । पणायाश्चकार । पेणे । पणायितासि
पणितासे । पगाय्यात् । जमी गात्रविनामे ॥

रधिजभोरचि ७ । १ । ६१ ॥

एतयोर्नुमागमोऽचि । जम्भते । कमु कान्ता ॥

कमेर्णिङ् ३ । १ । ३० ॥

स्वार्थे । कामयते । कामयाचके । चकमे । कामयिता कभिता ।
णिश्रीति चङ् । काम इ अत इति स्थिते । णिलोपः । उपधाह्रस्वः ।
सन्चद्भावः । सन्यतः । दीर्घो लघोः । अचीकमत । णिङ्मत्वे ॥

कमेश्चलेश्चङ्वाच्यः ❀ ॥

अचकमत ॥

इति ६३ अंशाः ॥

दय दानगतिरक्षणार्हिमादानेषु ॥

दयायासश्च ३ । १ । ३७ ॥

दय अय आग एम्य आम लिटि । दयाभक्ते । दयिपीडुम्
दयिपीघम् । अय गर्ता । अयाभक्ते ॥

उपसर्गस्यायतो ८ । २ । १९ ॥

अयतिपरस्योपसर्गस्य गो ग्फस्तस्य लः । श्रायते । पलायते ।
निसृद्दुसोरुत्वस्यासिद्धत्वान्न लत्वम् । निग्यते । दुग्यते । निर्दुगो-
स्तु । निलयते । दुलयते । प्रत्यय इति त्रिणो रूपम् ॥

अनुदात्तेत्वलक्षणमात्मनेपदमनित्यम् ॐ ॥

उदयति । ऊह वितर्कं । ऊहते ॥

उपसर्गादस्यत्पूर्वोर्वा ॐ ॥

आत्मनेपदम् । समूहति समूहते ॥

उपसर्गाद्भ्रस्व ऊहतेः ७ । ४ । २३ ॥

गादौ श्रुति । समुद्यात् । समुद्य ॥ अथ युतायाः॥ युन दीर्घा ॥

द्युतिस्वाप्योः संप्रसारणम् ७ । ४ । ६७ ॥

अनयोः अभ्यामस्य संप्रसारणम् । टिद्युते ॥

द्युज्यो लुङि १ । ३ । ९१ ॥

द्युतादिभ्यो लुङः परस्मैपदं वा । परस्मैपदेऽह । अद्युतत् ।
अद्योतिष्ट । रुच दीप्तावभिप्रीती च । घुट पग्विर्त्तने । शुभ मंच-
लने । शुभ दीर्घा । श्रिता वर्णे । संमु विश्राने । अन्नमन् । अन्नं-
भिष्ट । अंशु-संशु अवसंतने । घंशु अवसंतने गर्ता च ॥ अय
घटादयः ॥ घट चेष्टायाम् । घटते । जघटे । घटादिमित्कार्यं च
घटयति । अघाटे अघाटे । घाटं घाटम् । घटं घटम् इत्यादि ।
मय प्रख्याने । पप्रथे । व्यय मयमंचलनयोः ॥

व्ययो लिटि ७ । ४ । ६८ ॥

व्ययोऽभ्यासस्य संप्रसारणं लिटि । विव्यये । अद् मर्दने । वि-

त्वरा संभ्रमे । एते पितः ॥ अथ फणाद्याः ॥ दुभ्राजृ दीप्तौ । भ्रे-
जे । वभ्राजे । भ्राजतेरिह पाठः फणादिकार्यार्थः । पूर्वं पाठस्तु
प्रश्नादिपत्वाभावार्थः । तत्र हि राजिसाहचर्यात् फणादेरेव ग्रहणम् ॥
अथ वेदः ॥ क्षमूप् सहने ॥

म्बोश्च ८ । २ । ६५ ॥

मान्तस्य धातोर्मस्य नः वमयोः । चक्षण्वहे चक्षमिमहे । अक्ष-
मिष्ट अक्षंस्त । त्रूपूलजायाम् । त्रेपे । त्रेपाते । त्रसा त्रपिता ।
सह मर्षणेऽभिभवे च । ज्वलादिः । तीपेति वेद । सहिता ॥

सहिवहोरोदवर्णस्य ६ । ३ । ११२ ॥

अनयोरवर्णस्य ओत् ढलोपे । सोढा । गाहू विलोडने । जघाक्षे ।
जगाहिद्धे । जगाहिध्वे जगाद्धे । गाहिता । ढाढे लोपः । गाढा ।
गृह ग्रहणे ॥

लिङ्सिचावात्मनेपदेषु ॥

घृक्षीष्ट गृहिपीष्ट । च्लेः वसः । अघृक्षत ॥

वसस्याचि ७ । ३ । ७२ ॥

अजादौ ताडि । वसस्य लोपः । अघृक्षाताम् । अघृक्षन्त ॥ अथ
श्रुतादिष्वेव वृतादयः ॥ वृतु वर्त्तने ॥

वृद्ध्यः स्यसतोः १ । ३ । ९२ ॥

वृतादिभ्यः परस्मैपदं वा स्ये सानि च ॥

न वृद्ध्यश्चतुर्भ्यः ७ । २ । ६९ ॥

एभ्यः सकारादेरार्द्धधातुकस्येण तडानयोरभावे।वत्स्यति वर्ति-
ष्यते । अवृत्तत् अवर्तिष्ट । अवत्स्यत् अवर्तिष्यत् । एवं वृधु वृद्धौ ।
शृधु शब्दकुत्सायाम्।स्यन्दू प्रस्रवणे।सस्यन्दे।सस्यन्दिपे सस्यन्त्से ।
सस्यन्दिध्वे सस्यन्ध्वे । स्यन्दिता स्यन्ता । वृद्ध्यः इति परस्मैपदे
इद्विकल्पं बाधित्वा चतुर्ग्रहणसामर्थ्यात् वृद्ध्यश्च इति इदनिषेधः ।
स्यन्त्स्याति । स्यन्दिष्यते स्यन्त्स्यते । स्यन्दिपीष्ट स्यन्त्सीष्ट । पर-

स्मैपदपक्षेऽङ् नलोपः । अस्यदत् अस्यन्दिष्ट अस्यन्त । अस्य-
न्त्साताम् । अस्यन्त्सत् । अस्यन्दिष्यत् अस्यन्त्स्यत् ॥

अनुविपर्यभिनिभ्यः स्यन्दतेरप्राणिषु ८ । ३ । ७२ ॥

एभ्यः परस्याप्राणिकर्तृकस्य स्यन्दतेः सस्य पो वा । अनुष्य-
न्दते अनुस्यन्दते वा जलम् । अप्राणिषु किम् । अनुस्यन्दते हस्ती ।
अप्राणिष्वित्युक्तेः । मत्स्योदके अनुष्यन्दते इत्यत्रापि पक्षे पत्वं
भवत्येव । प्राणिषु नेत्युक्तौ तु न स्यात् । कृपू सामर्थ्ये ॥

कृपो रो लः ८ । २ । १८ ॥

कृपो रेफस्य लः । ऋकारस्य लकारः । कल्पते । चकृपे । इत्यादि
स्यंदिवत् ॥

लुटि च कृपः १ । ३ । ९३ ॥

लुटि स्यसनोश्च कृपेः परस्मैपदं वा ॥

तासि च कृपः ७ । २ । ६० ॥

कृपः परस्य तासिः सकारादेरार्द्धधातुकस्य चेण न तडानयोर-
भावे । कल्तासि कल्पितासि । कल्तासे ॥ अयानिटः ॥ ष्मिङ्
ईपद्धसने । ऋादिनियमान्नित्यमिदं ॥

विभापेटः ❀ ॥

सिष्मिदिद्दे सिष्मिदिध्वे । अस्मेष्ट । षुङ् षुङ् च्युङ् हुङ्
गतौ । श्येङ् गतौ । गाङ् गतौ । गाते । गाते । गाते । जगे ।
गातासे । इट एस्वे कृते वृद्धिः । गै । लङ् इटि । अगे । गेत । गयाता-
म् । गेरन् । गासीष्ट । गाङ्कुटादिभ्य इत्यत्र इडादेशस्यैव ग्रहणं
न त्वस्य तेनाडित्वाद् घुमास्था इतीत्वं न । अगास्त । मेङ्
प्रणिदाने । प्रणिमयते । नेर्गदेत्यत्रास्यापि ग्रहणमिष्यते । ष्वञ्ज
परिष्वङ्गे । नलोपः । स्वजते । परिष्वजते ॥

श्रंथिग्रंथिदम्भिस्वर्जानां लिटः कित्त्वं वेति ❀ ॥

व्याकरणान्तरम् । सरवजे सस्वञ्जे । सस्वजिपे सस्वञ्जिषे ।

स्वङ्गा । स्वङ्क्ष्यते । स्वजेत । स्वङ्क्षीष्ट । रमु कीडायाम् । ज्व-
लादिः । रमते ॥

व्याङ्परिभ्यो रमः १ । ३ । ८३ ॥

परस्मैपदम् । विरमतीत्यादि । व्यरंसीत् ॥

उपाच्च १ । ३ । ८४ ॥

उपरस्मति ॥

विभापाकर्मकात् १ । ३ । ८५ ॥

उपाद्गमैरकर्मकात्परस्मैपदं वा । उपरस्मति उपरमते वा । इत्यात्म-
नेपदिनः ॥

इति ६४ अंशाः ।

चायृ पृजानिशामनयोः । चायति चायते । चचाये । पच सम-
वाये । बुधिर् बुधने । अबुधत् । अबुधीत् । अबुधिष्ट । दीपज-
नेत्यत्र दिवादेरेव ग्रहणादत्र चिण् न । अस गतिदीप्त्यादानेषु ।
श्रिञ् सेवायाम् । श्रयति श्रयते । श्रयिता । चङ् अशिश्चि-
यत् । दान खण्डने । दीदासति दीदासते । एवं ज्ञान तेजने ।
शीशासति । अर्थविशेषे सन् अन्यत्र । दानयति । ज्ञानयति ।
खनु अवदारणे । जनसनेत्युपधालोपः । चरत्तु ॥

ये विभापा ६ । ४ । ४३ ॥

जनसनाखनामात्वं वा यादौ क्ति । खायात् खन्यात् । लष
कान्तौ । श्यन् वा । लपति लपते । भ्रेष्ट गतौ भ्रंशने च । मेधु मेधा
हिंसनयोः सङ्गमे च । राज् दीप्ती । फणादिः । रेजतु । रजतु ।
रेजे । राज ॥ अथ वेटः ॥ गृह सवरणे ॥

ऊदुपधाया गौहः ६ । ४ । ८९ ॥

गृह उपधाया ऊत् गुणहेतावजादौ प्रत्यये । गृहति गृहते ।
गृहिता गौहा । अगृहीत् । अगृहत् ॥

लुग्वा दुहदिहलिहगुहामात्मनेपदे दन्त्ये ७ । ३ । ७३ ॥

एपां कसस्य लुग्वा दन्त्ये तडि । अगूढ । अघुक्षत् । अघु-
क्षन्त । अगुह्महि । अघुक्षावहि ॥ अधानिटः ॥ भज सेवायाम् ।
भेजतुः । भेजे । रञ्ज रागे । रजति रजते । शप आकौशे । शोपिथ
शशप्य । शोपिपे । शप उपालम्भे । अकर्तृगेऽपि फले तडानी ।
कृष्णाय शपते । त्विप दीप्तौ । अत्विक्षत् । तडि अत्विक्षाताम् ।
अत्विक्षन्त ॥ अथ पट्ट् द्वजन्ता यजादयः ॥ यज देवपूजासंगति-
करणदानेषु । इयाज । ईजतुः । ईजुः । इयजिय इयष्ट । ईजे ।
इज्यात् । डुवप् बीजसंताने छेदने च । प्रणिवपति । उवाप ।
ऊपतुः । उप्यात् । वह प्रापणे । प्रणिवहति । उवोढ । वोढा ।
अवोद्धम् ॥

प्राद्धहः १ । ३ । ८१ ॥

परस्मैपदम् । प्रवहति । परस्मृप इत्यत्र योगविभागात्पररेपीति
केचित् । परिवहति । वेञ् तन्तुसंताने ॥

वेभो वयिः २ । ४ । ४१ ॥

वा लिटि । ग्रहिज्येति यकारस्य प्राप्ते ॥

लिटि वयो यः ६ । १ । ३८ ॥

वयो यस्य संप्रसारणं न स्याल्लिटि । ऊयतुः ॥

वश्वास्यान्यतरस्यां किति ६ । १ । ३९ ॥

वयो यस्य वो वा किति लिटि । ऊवतुः । वयस्तासावभावात् ।
थलि नित्यमिट् । उवयिथ । ऊये । ऊवे । वयादेशाभावपक्षे ॥

वेभः ६ । १ । ४० ॥

वेजो न संप्रसारणं लिटि । ववी । ववतुः । व्येञ् संवरणे ॥

न व्यो लिटि ६ । १ । ४६ ॥

व्येञ् आत्वं न स्याल्लिटि । विव्याय । विव्ययतुः । इडत्यर्त्तीति
इट् । विव्ययिथ । वीयात् । द्वेञ् स्पर्द्धायां शब्दे च ॥

अभ्यस्तस्य च ६ । १ । ३३ ॥

अभ्यस्तीमविष्यतो द्वेजः संप्रसारणम् । ततो द्वित्वम् । जुहाव ।

जुहुवतुः ॥

लिपि सिचि ह्वश्च ३ । १ । ५३ ॥

एभ्यश्चलेरड् । आतो लोपः । अहत् । अहत । अहास्त ॥

निसमुपविभ्यो ह्वः १ । ३ । ३० ॥

तडानौ । निह्वयते ॥

स्पर्द्धायामाडः १ । ३ । ३१ ॥

कृष्णश्चाणूमाह्वयते । णीञ् प्रापणे । नयति नयते । नेता ॥

सम्माननोत्सञ्जनाचार्यकरणज्ञानभृतिविगणनव्ययेषु

नियः १ । ३ । ३६ ॥

आत्मनेपदम् । शास्त्रे नयते । दण्डमुन्नयते । माणवकमुपनयते । तत्त्वं नयते । कर्मकरानुपनयते । कर विनयते । शत विनयते ॥

कर्तृस्थे चाशरीरे कर्मणि १ । ३ । ३७ ॥

नियः कर्तृस्थे कर्मणि यदात्मनेपदं प्राप्तं तच्छरीरावयवभिन्ने एव स्यात् । क्रोधं विनयते । नेह गडुं विनयति । हृञ् हरणे । हरति हरते ॥

हरतेर्गतताच्छील्ये ❀ ॥

आत्मनेपदम् । पैतृकमश्वा अनुहरन्ते । पितृ, प्रकारं अनुशीलयन्तीत्यर्थः ॥

कर्मव्यतिहारे हरतेरप्रतिषेधः ❀ ॥

संपहरन्ते राजानः ॥ इति भ्रादयः ॥

इति ६५ अशाः ।

जयादादयः ॥ दुष्पु शब्दे ॥

उतो वृद्धिर्लुकि हलि ७ । ३ । ८९ ॥

लुग्विपये उतो वृद्धिः पिति हलादा सार्वधातुके नत्वभ्यस्तस्य ।
क्षीति । क्षविता । पिघ डिन्न डिघ पिन्नोति भाष्यम् । तेन लोडि
उतो वृद्धिर्न । ध्रुयात् । यु मिश्रणे अमिश्रणे च । णु स्तुता ॥

आडि नुप्रच्छयोः ❀ ॥

तडानी । आनुते । रु शब्दे ॥

तुरुस्तुशम्यमः सार्वधातुके ७ । ३ । ९५ ॥

एभ्यः परस्य सार्वधातुकस्य हलादेस्तिङ ईडा । रीति रवीति ।
रुतः रुवीतः । रुयात् रुवीयात् । क्षु तेजने । क्ष्णीति ॥

समः क्षणुवः १ । ३ । ६५ ॥

तडानी । संक्षुते । णु प्रस्रवणे । क्षीति । स्रविता । कर्मव्य-
तिहारादावात्मनेपदे तु स्तुकमोरिति नियमान्नेट् । स्रोता । स्रो-
ष्यते । अस्रोष्ट । विद ज्ञाने ॥

विदो लटो वा ३ । ४ । ८३ ॥

वेत्तेर्लटः परस्मैपदानां णलादयो वा । वेद । विदतुः । वेत्ति ।
वित्तः । विवेद । विदाञ्चकार । विदांकुर्वन्त्वित्यामि गुणाभावनि-
पातनाल्लिट्चप्यामि न गुणः ॥

विदाङ्कुर्वन्त्वित्यन्यतरस्याम् ३ । १ । ४१ ॥

वेत्तेर्लोढ्याम् गुणाभावो लोटो लुङ् लोडन्तकृञ्नुप्रयोगश्च वा
निपात्यते । पुरुषवचनेनेह विवक्षिते । विदाङ्करोतु । विदाङ्कुरु-
तात् । इत्यादि । शेर्जुस् । अविदुः । दश्चेति सिपि र्वा । अवेः ।
अवेत् । अवेदीत् ॥

विदिप्रच्छिस्वरतीनामुपसंख्यानम् ❀ ॥

समोऽकर्मकेभ्यः एतेभ्यस्तडानी इत्यर्थः । तत्र संवित्ते ।
संविदात्ते ॥

वेत्तेर्भिभाषा ७ । १ । ७ ॥

वेत्तेः परस्य शदेशस्यातो रुडागमो वा । संवित्ते । संविदते ।

समवेदिष्ट । वश कान्तौ । वष्टि । उवाश । उघात् । अवद् । औ-
 घाम् । उश्वात् । उश्यास्ताम् । अस् भुवि । प्रागुक्तः । कर्मव्य-
 तिहारे । व्यतिस्ते । व्यतिपाते । व्यतिपते । व्यतिपे । व्यतिध्वे ।
 व्यतिहे । व्यत्यस । व्यतिपीत । व्यत्यास्त ॥

उपसर्गप्रादुर्भ्यामस्तिर्यचपरः ८ । ३ । ८७ ॥

उपसर्गोऽणः प्रादुसश्च परस्यास्तेः सस्य पः स्याद्यकारेऽचि च
 परे । निष्यात् । प्रादुष्यात् । निपान्ति । प्रादुःपान्ति । यचपरः
 किम् । अभिस्तः ॥ रुदादिषु चत्वारः स्वस्वनिद्रसु ॥ उदिर्
 अश्रुविमोचने ॥

रुदादिभ्यस्सार्वधातुके ७ । २ । ७६ ॥

एभ्यां बलादेः सार्वधातुकस्येड् । रोदिति । रुदितः । रुदिहि ॥

रुदश्च पञ्चभ्यः ७ । ३ । ९८ ॥

हलादेः पितः सार्वधातुकस्यापृक्तस्य ईट् ॥

अड् गार्ग्यगालवयोः ७ । ३ । ९९ ॥

अरोदीत् । अरोदत् । अरुदिताम् । अन्तरङ्गत्वाद्यासुट् । रुद्यात् ।
 श्वस-अन प्रोणने । श्वसिहि । अश्वसीत् ॥

अनितेः ८ । ४ । १९ ॥

उपसर्गस्थान्निमित्तात्परस्यानितेर्नस्य णः । प्राणिति ॥ अथ
 सप्त जक्षादयोऽभ्यस्तसंज्ञाः ॥ जक्ष-भक्ष हसनयोः । अयं रुदादि-
 ष्वपि । जक्षिति । हस्य अत् । जक्षति । सिजभ्यस्तेति जेर्जुम् ।
 अजक्षुः । जागृ निद्राक्षये । जागर्ति । जाग्रति । जागराञ्चकार
 जजागार ॥

जाग्रो विचिण्णलडित्सु ७ । ३ । ८६ ॥

जागर्तेर्गुणो विचिण्णलडिद्भ्योऽन्यस्मिन् वृद्धिविषये प्रतिषे-
 धविषये च । जजागरतुः । अजागः । जुसि चेति गुणः । अजागरुः ।
 जागर्यात् । अजागरीत् । दसिद्रा दुर्गती । दसिद्राति ॥

इदरिद्रस्य ६ । ४ । ११४ ॥

दरिद्रातेरकारो हलादौ कृति सार्वधातुके । दरिद्रतः । श्राभ्य-
स्तयोरातः । दरिद्रति । दरिद्राञ्चकार । ददरिद्रावित्येके ॥

दरिद्रातेरार्द्धधातुक आलोपः लुङि वा सनि ण्वुलि
ल्युटि च न ॐ ॥

दरिद्रिता । अदरिद्रात् । अदरिद्रिताम् । अदरिद्रिः । दरिद्रियात्
दरिद्रिचात् । अदरिद्रीत् । इडसकौ । अदरिद्रासीत् ॥

इति ६६ अंशाः ।

शास अनुशिष्टौ ॥

शास इदङ् हलोः ६ । ४ । ३४ ॥

शास उपाधाया इदङि हलादौ कृति च । शिष्टः । शासति ॥

शा हौ ६ । ५ । ३५ ॥

शास्तेः शादेशो हौ । तस्याभीयत्वेनासिद्धत्वाद्धेर्दिः । शाधि ॥

तिप्यनस्तेः ८ । २ । ७३ ॥

पदान्तस्य सस्य दस्तिपि न त्वस्तेः । ससजुषोरित्यस्यापवादः ।
अशात्-अशाद् ॥

सिपि धातो रूर्वा ८ । २ । ७४ ॥

पदान्तस्य धातोः सस्य रूर्वा पक्षे जश्त्वेन दः । अशाः । अशात्-द् ।
सर्तिशास्तीत्यद् । अशिपत् । अशासिष्यत् । चकासु दीप्तौ ।
चकाधि । अचकात्-अचकाद् । अचकासुः । अचकाः । अचकात् ।
दीधीवेव्यौ छान्दसौ । मृजूप् शुद्धौ ॥

मृजेर्वृद्धिः ७ । ३ । ११४ ॥

मृजेरिको मृद्धिर्धातुप्रत्यये कृत्यजादौ वेष्यते । मार्ष्टि । मृष्टः ।
मृजन्ति मार्जन्ति । मार्ष्टि । मृष्टः । मृष्ट ॥ अथानिटः ॥ दाप्
खने । दाति ॥

लडः शाकटायनस्यैव ३ । ४ । १११ ॥

आदन्तालडो शेर्जुस् वा । अदुः । अदात् । दायास्ताम् । अ-
दासीत् । पा रक्षणे । पायास्ताम् । अपासीत् । मा दीप्ती । रा
दाने । ला, आदाने च । प्रा, पूरणे । श्रा पाके । ष्णा शौचे ।
या प्रापणे । वा गतिगन्धनयोः । मा माने । नेर्गदेत्यत्रास्य न
ग्रहणम् । मेयात् । ख्या प्रकथने । अयं सार्वधातुकमात्रविषयः ।
सम्पूर्वस्य ख्यातेः प्रयोगेनेति न्यासकारः । द्रा कुत्सायाम् । प्रणि-
द्राति । प्सा भक्षणे । प्रणिप्साति । इण् गतौ ॥

इणो यण् ६ । ४ । ८१ ॥

अजादौ प्रत्यये । यन्ति । इयाय ॥

दीर्घ इणः किति ७ । ४ । ६९ ॥

इणः अभ्यासस्य दीर्घः किति लिटि । ईयतुः । ईयुः । ऐत् ।
आयन् ॥

एतेर्लिङि ७ । ४ । २४ ॥

उपसर्गात्परस्य इणोऽणो ह्रस्व आर्द्धधातुके किति लिङि । नि-
रियात् । अणः किम् । समेयात् । समीयादिति तु भ्वादिक्स्य ॥

इणो गा लुङि २ । ४ । ४५ ॥

गातिस्थेति सिचो लृक् । अगात् । इक् स्मरणे । इङिकौ नित्य-
मधिपूर्वौ ॥

इण्वदिक इति वक्तव्यम् ❀ ॥

अधियन्ति । अध्यगात् । आर्द्धधातुकाधिकारोक्तस्यैवातिदेश
इति मते यण् न । ससीतयो राघवयोऽधीयन्निति भट्टिः । कु शब्दे ।
कौति । हन् हिंसागत्योः । प्रणिहन्ति । अनुदात्तोपदेशेति नस्य
लोपः । हतः । जनहनेति उपधालोपः । हो हन्तेरिति कुत्वम् ।
घ्नन्ति ॥

वमोर्वा ८ । ४ । २३ ॥

उपसर्गस्थानिमित्तात्परस्य हन्तेर्नेस्य णो वा वमयोः । प्रहणिम
प्रहन्मि । एवं वस्मसोः । जघ्नतुः ॥

अभ्यासाच्च ७ । ३ । ५५ ॥

अभ्यासात्परस्य हन्तेर्हेस्य कुत्वम् । जघनिथ जघन्य । हनि-
प्यति । हतात् ॥

हन्तेर्जः ६ । ४ । ३६ ॥

हौ । आभीयत्वेन जस्यासिद्धत्वान्न हेर्लुक् । जहि । अहन् ॥

आर्द्धधातुके २ । ४ । ३५ ॥

इत्यधिकृत्य ॥

हनो वध लिङि २ । ४ । ४२ ॥

लुङि च २ । ४ । ४३ ॥

वधादेशोऽदन्तः । अतो लोपः । वध्यात् । अवधीत् । आडो
यमहनः इति तडानौ । तत्र आहते । आघ्राते । आघ्रते । आहसे ।
आहध्वे । आघ्रे । आहवहे । आजघ्रे । आघ्रीत । आवधिपीष्ट ॥

आत्मनेपदेष्वन्यतरस्याम् २ । ४ । ४४ ॥

हनो वधादेशो वा लुङि आत्मनेपदेषु । आवधिष्ट । आवधि-
पाताम् ॥

हनः सिच् १ । २ । १४ ॥

क्ति । आहत । आहसाताम् । वच् परिभाषणे । वक्ति । अय-
मन्तिपरो न प्रयुज्यते । बहुवचनपर इत्यन्ये । क्षिपर इत्यपरे ।
उवाच । वग्धि । उच्यात् ॥

अस्यतिवक्तिख्यातिभ्योऽङ् ३ । १ । ५२ ॥

एभ्यश्छेरङ् ॥

वच् उम् ७ । ४ । २० ॥

अङि । अवोचत् ॥

चर्करीतं च ❀ ॥

यद्बलुगन्तमदादौ परस्मैपदे बोध्यम् । जिष्वप् शये । रुदादिः ।
स्वपिति । सुष्वाप । सुपुपतुः । सुष्वपिथ सुष्वप्य । स्वप्ता । सु-
प्यात् ॥ इति परस्मैपदिनः ॥

इति ६७ अंशाः ।

आइशासु इच्छायाम् । आशास्तं । आशशासे । णिजि शुद्धी ।
निङ्के । वृजि वर्जने । वृङ्के । शिजि अव्यक्ते शब्दे । वस आच्छादने ।
ववसे । पृची संपर्चने । ईर गतौ कम्पने च । शीइ स्वप्ने ॥

शीडः सार्वधातुके गुणः ७ । ४ । २१ ॥

धिति चेत्यस्यापवादः । शेते । शयाते ॥

शीडो रुद्र ७ । १ । ६ ॥

शीडः परस्य श्देशस्यास्तो रुडागमः । शेरते । शयिता ।
आस उपवेशने । आसाश्चक्रे । आध्वम् । ईड स्तुती । ईट्टे ॥

ईशः से ७ । २ । ७७ ॥

ईडजनोर्ध्वं च ७ । २ । ७८ ॥

ईशीइजना सेध्वेशब्दयोस्सार्वधातुकयोरिट् । ईडिपे । ईडिध्वे ।
ईडिष्व । ईडिध्वम् । विकृतिग्रहणेन प्रकृतेरग्रहणात् लडि ।
ऐद्वम् । ईश पेश्वयं । ईशिपे । पूड् प्राणिगर्भविमोचने । सूते ।
सुपुवे । सोता सविता । भूसुवोस्तिडि । सुवे ॥ अथानिटः ॥ इड्
अध्ययने । अधीते ॥

गाइ लिति २ । ४ । ४९ ॥

इडो गाइ लिति लावस्थाया लिति विवक्षिते वा । अधिजगे ।
अध्येता । अध्ययै । गुणायादेशयोः कृतयोरुपसर्गस्य यण ।
पूर्वं धातुरुपसर्गणेति दर्शनेऽन्तरङ्गाहणात्पूर्वं सवर्णदीर्घः प्राप्तः ।
णेरध्ययने वृत्तमिति निर्देशान्न भवति । अध्यैत । परत्वादियद् तत
आद् वृद्धिः । अध्यैयाताम् । अध्यैयि ॥

विभाषा लुङ्लृङोः २ । ४ । ५० ॥

इडो गाङ् ॥

गाङ्कुटादिभ्योऽङ्णिञ्ङित् १ । २ । १ ॥

गाङादेशात् कुटादिभ्यश्च परे जित्णिङ्भिन्नाः प्रत्यया ङितः स्युः॥

घुमास्यागापाजहातिसां हलि ६ । ४ । ६६ ॥

एपामात ईत् हलादौ कृत्यार्द्धधातुके । अघ्यगीष्ट अघ्यैष्ट ।
अध्यगीष्यत् अघ्यैष्यत् । हुङ् अपनयने । हुते । जुहुवे । चक्षिङ्
व्यक्तायां वाचि । चष्टे । इकारोऽनुदात्तो युजर्यः । विचक्षणः । नुम्
तु न । अन्तेदित इति व्याख्यानात् ॥

चक्षिङः ख्याञ् २ । ४ । ५४ ॥

आर्द्धधातुके ॥

वा लिति २ । ४ । ५५ ॥

अत्र भाष्ये खशादिरयमादेशः । अस्तिङ्काण्डे शस्य यो वेति
स्थितम् । जित्वात् पदद्वयम् । चख्यौ चख्ये । चक्षौ चक्षे ।
अस्यतिवक्तीति स्लेरङ् । अख्यत् अख्यत् । अक्शासीत् अ-
क्शास्त । वर्जने कशाञ् नेष्यते । समचक्षिष्टेत्यादि ॥ इत्यात्मने-
पदिनः ॥ ऊर्णञ् आच्छादने ॥

ऊर्णोतेर्विभाषा ७ । ३ । ९० ॥

वा वृद्धिर्हलादौ पिति सार्वधातुके । ऊर्णोति ऊर्णोति । ऊर्णते ॥

ऊर्णोतेराम् न ❀ ॥

नन्द्राः संयोगादयः ६ । १ । ३ ॥

अचः पराः संयोगादयो नदरा द्विर्न । नुशब्दस्य द्वित्वम् ।
णत्वस्यासिद्धत्वात् । पूर्वत्रासिद्धीयमद्वित्वे इति त्वानित्यम् । उमौ
साभ्यासस्येति लिङ्गात् । ऊर्णनाव ॥

विभाषोर्णोः १ । २ । ३ ॥

इडादिः प्रत्ययो वा ङित् । ऊर्णुविथ ऊर्णुनविथ । ऊर्णविता
ऊर्णुविता ॥

गुणोऽपृक्ते ७ । ३ । ९५ ॥

ऊर्णोतेर्गुणोऽपृक्ते हलादी पिति सार्वधातुके । वृद्धचपवादः ।
और्णोत् और्णोः । ऊर्णुयात् ऊर्णुयात् । ऊर्णविपीष्ट ऊर्णुविपीष्ट ।
और्णुवीत् ॥

ऊर्णोतेर्विभाषा ७ । २ । ६ ॥

इडादी सिचि परस्मैपदे वा वृद्धिः । पक्षे गुणः । और्णावीत् ।
और्णाविषाम् । और्णवीत् ॥ अथानिटः ॥ षुञ् स्तुतौ । स्तूति ।
स्तवीति । तुष्टुव । तुष्टुम । स्तुष्टुञ्भ्यः इति इद् । अस्तावीत् । षुञ्
व्यक्तायां वाचि ॥

श्रुवः पञ्चानामादित आहो श्रुवः ३ । ४ । ४८ ॥

श्रुवो लटः परस्मैपदानामादितः पञ्चानां णलाद्याः पंच वा ।
श्रुवः आहादेशश्च । आह ॥

आहस्थः ८ । २ । ३५ ॥

हलि । आत्य ॥

श्रुव ईद् ७ । ३ । ९३ ॥

श्रुवः परस्य हलादेः पित ईद् । ब्रवीति । श्रुते ॥

श्रुवो वचिः २ । ४ । ५ ॥

आर्द्धधातुके । उवाच । ऊचतुः । ऊचे । ब्रवीतु । श्रूयात् ।
डिच्च पिन्नेत्यपित्वात् ईद् न वक्ष्यति । वच उम् । अवोचत् । द्विप
अमीती । द्विष्टि । अद्रेष्ट ॥

द्विपश्च ३ । ४ । ११२ ॥

लटो ऋजुस् वा । अदिपुः । अदिपन् । दिक्षीष्ट । दिह उपचये ।
मणिदेग्धि । दिग्धे । धोक्षि । अधेक् । अधिक्षत् । अधिक्षत ।
वसस्य लृक्पक्षे । अदिग्ध । अदिग्धाः । अदिहाहि । पर्व दुह मष्ट-

रणे । लिट् आस्वादने । लोटि । लीढः ॥ इत्युभयपदिनः ॥ इत्य-
दादयः ॥

इति ६८ अंशाः ।

पृ पालनपूरणयोः । दीर्घान्तः । ह्रस्वान्तः इति केचित् ॥

अर्तिपिपत्योश्च ७ । ४ । ७७ ॥

अभ्यासस्येकारोन्तादेशः श्लौ । पिपर्ति ॥

उदोष्ठ्यपूर्वस्य ७ । १ । ११ ॥

अङ्गावयवौष्ठ्यपूर्वो य ऋत्तदन्ताङ्गस्य उत् । गुणवृद्धी इभं
वाधेते । पिपर्ति । पिपृत्तः । पिपुरति । पपार ॥

शृट्प्रांहस्वो वा ७ । ४ । १२ ॥

एपां किति लिटि ह्रस्वो वा पक्षे गुणः । पपरतुः पप्रतुः ।
अपिपः । अपिपरुः । शेषम् आर्द्धधातुके तृषत् । इस्थले उत् ।
परीता परिता । अपारीत् । अग्रे सर्वेऽनिटः । पृ पालनपूरणयोः ।
ह्रस्वान्तः । पिपर्ति । पिपृतः । पिप्रति । प्रियात् । अपार्पात् ।
आंहाक् स्यागे । जहाति । ईहल्यघोः ॥

जहातेश्च ६ । ४ । ११६ ॥

इद्वा हलादी ऋिति सार्वधातुके । पक्षे ईः । जहितः जहीतः ॥

आ च हौ ६ । ४ । ११७ ॥

जहातेहौ परे आ स्यात् चादिदीती । जहाहि जहिहि जहीहि ॥

लोपो यि ६ । ४ । ११८ ॥

जहातेरालोपो यादौ सार्वधातुके । जहात् हेयात् । जिभीभये ॥

भियोऽन्यतरस्याम् ६ । ४ । ११९ ॥

इकारो वा हलादी ऋिति सार्वधातुके । विमितः विभीतः ।
विभयाश्चकार विभाय । ही लज्जायाम् । जिहोति । ऋ गती ।
इयर्ति । इयृतः । इयति । गुणः । आर । आरतुः । थलीद् ।

आरिथ । अर्त्ता । इयराणि । ऐयः । ऐयृताम् । ऐयरुः । इयृ-
तात् अर्यात् । अङ् गुणः । आरत् । अर्त्तिश्रु इत्यात्मनेपदम् ।
तत्र समियृते । समियाते । समियूते । समारे । समाराते । अङ्
समारत् । समारेताम् । मा समरत् । मा समरताम् । इत्यादि ।
इति परस्मैपदिनः ॥ माङ् माने शब्दे च ॥

भृभामित् ७ । ४ । ७५ ॥

भृञ् माङ् ओहाङ् एषां त्रयाणामभ्यासस्य इत् श्लौ । प्राणि-
मिमीते । मिमाते । मातासे । ओहाङ् गतौ । जिहीते ॥ इत्या-
त्मनेपदिनौ ॥ डुदाञ् दाने । प्राणिददाति । दत्तः । ददाति । दत्ते ।
दाता । देहि । देयात् । अदात् । अदित ॥

आङो दो नास्यविहरणे १ । ३ । २० ॥

आङो दाञो मुखविकसनादन्यत्र वर्त्तमानात्तडानौ । विधामा
दत्ते । नेह । मुखं व्याददाति । आस्येत्यविवक्षितम् । विपादिक
व्याददाति ॥

पराङ्कर्मकान्न निषेधः * ॥

व्यादत्ते परस्य मुखम् । डुधाञ् धारणपोषणयोः । प्राणिदधाति ।

दधस्तथोश्च ८ । २ । ३८ ॥

द्विरुक्तस्य क्षपन्तस्य धाञो वशो भप् तथयोः स्वोश्च परतः
धत्तः । दधाति । धेहि । धेयात् । अधात् । अधित । डुभृञ् धारण
पोषणयोः । विमर्ति । विभृव । णिजिर् शौचपोषणयोः ॥

णिजां त्रयाणां गुणः श्लौ ७ । ४ । ७५ ॥

णिज्विज्विषामभ्यासस्य गुणः श्लौ । नेनेक्ति ॥

नाभ्यस्तस्याचि पिति सार्वधातुके ७ । ३ । ८७ ॥

लघूपधगुणो न । नेनिजानि । विजिर् पृथग्भावे । विष्ट
व्याप्ती ॥ इति जुहोत्यादयः ॥

इति ६९ अंशाः ।

ष्टिम आर्द्रिभावे । व्रीड चोदने लज्जायां च । त्रसी उद्वेगे । वा
 भ्राशेति श्यन्वा । त्रस्यति त्रसति । त्रसतुः तत्रसतुः । पुष्प
 विकसने । पुह, चक्यर्थे । तृप्तावित्यर्थः । पुष दाहे । कुप पूती-
 भावे । पुथ हिंसायाम् । इप गतौ । इह तीपेति नेहविकल्पः ।
 जप् वयोहानौ । जीर्यति । जजरतुः । जेरतुः । जरिता जरीता ।
 जूस्तम्ब्वति वा च्लेरङ् । ऋदशोऽङि गुणः । अजरत् । अजा-
 रीत् । अजारिष्टाम् । पिवु तन्तुसंताने । सीव्यति । षिवु निर-
 सने । षीव्यति । केऽपीहेमं न पठन्ति ॥ अथ नृतेः प्राक् पुपा-
 दयः ॥ भ्रंशु अधःपतने । भ्रश्यति । पुपादीति च्लेरङ् । अभ्र-
 शत् । असु क्षेपणे ॥

अस्यतेस्थुक् ७ । ४ । १७ ॥

अङि । आस्थत् । पर्यास्थत् । उपसर्गादिति वा आत्मनेप-
 दम् । अस्यतिवक्तीत्यङ् । पर्यास्थत् । निरस्यति निरस्यते ।
 यसु प्रयत्ने ॥

यसोऽनुपसर्गात् ३ । १ । ७१ ॥

श्यन् वा ॥

संयसश्च ३ । १ । ७३ ॥

यस्यति यसति । संयस्यति संयसति । क्षुभ संचलने । पुष
 दाहे । कुप क्रोधे । गुप व्याकुलत्वे । ऋधु वृद्धौ । गृधु अभिकां-
 क्षायाम् । जितृष पिपासायाम् । हृष तुष्टौ । दसु उपक्षये । पुपा-
 दिष्वेव शमादयः । शसु उपशमे ॥

शमामघानां दीर्घः श्यनि ७ । ३ । ७४ ॥

प्रणिशाम्याति । अशमत । भ्रमु अनवस्थाने । वा भ्राशेति वा
 श्यन् तत्र दीर्घः । भ्राम्याति । अन्यत्र भ्रमति । ह्रमु ग्लानौ ।
 ह्राम्याति । श्यन्नभावे षिवुक्त्विति दीर्घः । ह्रामति । तसु कां-
 क्षायाम् । दसु उपशमे । श्रमु तपसि खेदे च । मदी हर्षे ॥ अथ
 वेदः ॥ क्षमू सहने । अपित् । क्षान्तिः । भ्वादिस्तु पित् । क्षमा ।

क्षाम्यति । चक्षण्व चक्षमिव । इति शमाद्याः । पुपादिषु क्लिद्
 आर्दीभावे । रूप हिंसायाम् । लुभ गार्ध्ये । तीपेति वेद् । रोषिता
 रोषा । लोभिता लोब्धा । अथ पुपादिष्वेव रधादयो वेदः । तृपट्पौ
 अनुदात्तौ । रध हिंसासंराध्योः ॥

रधादिभ्यश्च ७ । २ । ४५ ॥

बलाद्यार्द्धधातुकस्य वेद् । रध्यति । आचि नुम् । रन्ध । रं-
 धतुः । रन्धिय ररद्ध । रन्धिव रेध्व ॥

नेत्थलिटि रधेः ७ । १ । ६२ ॥

लिङ्बर्जे इटि रधेर्नुम् । रधिता रद्धा । अरधत् । णश अदर्शने ।
 नेशिय ॥

मस्जिनशोर्झलि ७ । १ । ६० ॥

नुम् । ननष्ट । नेशिव नेश्व ॥

नशोः पान्तस्य ८ । ४ । ३६ ॥

णत्वं न । प्रनष्टा । तृप प्रीणने । तर्पिय तत्रप्य ततर्प्य ।
 लिटि सेडेवेति परे । त्रप्ता तर्प्ता तर्पिता । स्पृशमृशेति सिञ्ज वा ।
 अताप्सीत् अतर्पीत् अत्राप्सीत् । अतृपत् । एवं टप् हर्षमोह-
 नयोः । अदाप्सीदित्यादि । दृह जिघांसायाम् । वा दृहेति वा
 घः । दृद्रोग्ध दृद्रोढ । अदृहत् । एवं मुह वैचित्ये । णिह प्रीती ।
 ण्णुह उद्गिरणे । एणु वा ढः ॥ इति रधादयः ॥ नृती गानवि-
 क्षेपे ॥

सेऽसिचि कृतचृतछृदत्तृदन्तः ७ । २ । १७ ॥

एभ्यः परस्य सिञ्जमिन्नस्य सादेरार्द्धधातुकस्येद्वा । नर्त्सिप्यति
 नत्स्यति ॥ अथानिटः ॥ क्षिप भ्ररणे । क्षिप्यति । क्षेप्ता । छो
 छेदने ॥

ओतः श्यनि ७ । २ । ७१ ॥

लोपः । उच्यति । छाता । सिचो वा लृक् । अच्छात् । अच्छा-

सीत् । दो अवखण्डने । प्रणिद्यति । देयात् । अदात् । शो तनूक-
रणे । अशासीत् । पोऽन्तकर्मणि । अभिष्यति । अभिससा । प्रणि-
ष्यति । सेयात् । असात् । असासीत् ॥

इति ७० अंशाः । इति द्वितीयाध्यायस्य तृतीयः पादः ।

राध संसिद्धौ ॥

राधोऽकर्मकाद्द्रावेव ❀ ॥

राधधातोरकर्मकादेव श्यन् । वृद्धावित्युदाहरणमात्रम् । राध्य-
ति । रराधतुः । हिंसार्थस्य सकर्मकत्वाद्त्र राधो हिंसायामित्ये-
त्वाभ्यासलोपो न । रराधिय । राद्धा । व्यध ताडने । ग्राहिज्येति
संप्रसारणम् । विध्यति । विव्याध । विविधतुः । विव्यधिय
विव्यद्ध ॥ अथ वाशृतः प्राक् पुषादयः ॥ पुष पुष्टौ । पोषा ।
पुषादीत्यद् । अपुषत् । क्षुध बुभुक्षायाम् । क्षोद्धा । क्षुधित इति
तु वसतिक्षुधोरिद् । श्लिष आलिङ्गने ॥

श्लिषः ३ । १ । ४६ ॥

अस्मार्त्परस्य अनिटश्चलेः वसः ॥

आलिङ्गने ३ । १ । ४६ ॥

श्लिषश्चलेरालिङ्गन एव वसो नान्यत्र । आश्लिक्षत् कन्यां देव-
दत्तः । नेह । समाश्लिषज्जतु काष्ठम् । अद्प्रत्यासत्ताविह श्लिषिः ।
कर्मण्यनालिङ्गने सिजेव न तु वसः । एकवचने चिष् । अश्लेषि ।
अश्लिक्षाताम् । अश्लिक्षताः । अश्लिषम् । प्विदा-जिष्विदा
गात्रप्रक्षरणे । पिधु संराद्धौ । रुध क्रोधे । शुध शौचे । तुष
प्रीतौ । दुष वैकृत्ये । शुष शोषणे ॥ इति परस्मैपदिनः ॥ वाशृ
शब्दे । काशृ दीप्तौ । वृरी गतित्वरणहिंसनयोः । क्लिश उपतापे ।
वृत्तु-वावृत्तु वरणे । वृत्यते । वावृत्यते । वावर्ताश्चक्रे । दीपी दीप्तौ ।
दीपजनेति वा चिष् । अदीपि । अदीपिष्ट । एवं पूरी आप्यायने ।
गूरी हिंसागत्योः । जनी प्रादुर्भावे ॥

ज्ञानोर्जा ७ । ३ । ७९ ॥

अनयोर्जादेशः शिति । जायते । जज्ञे ॥

जनिवध्योश्च ७ । ३ । ३५ ॥

अनयोः उपधाया न वृद्धिश्चिणि ङिणति कृति च । अजनि । अजनिष्ट । अथ स्वादिरोदित् । डीङ् विहायसा गतौ । डीयते । वृङ् परितापे । अथ स्वादिरोदित् वेद् । पूङ् प्राणिप्रसवे । सूयते । लिटि नित्यमिद् । सुपुषिपे । स्वरतीति वेद् । सांता सविता ॥ अथानिटः ॥ माङ् माने शब्दे च । ईङ् गतौ । ईयते । अयांचक्रे । प्रीङ् प्रीतौ । पिप्रिये । पीङ् पाने । मन ज्ञाने । खिद् दैन्ये । विद् सन्तायाम् । युज समाधौ । युध संप्रहारे । अनोरुध कामे । पद गतौ । प्रणिपद्यते ॥

चिष् ते पदः ३ । १ । ६० ॥

पदेश्चलेश्चिष् स्यात्तशब्दे । अपादि । तप ऐश्वर्ये वा । अयमैश्वर्ये वा तद्इश्यनौ लभते । अन्यत्र शप् परस्मैपदवान् । तप्यते । तप्ता । बुध अवगमने । भुत्सीष्ट । अबोधि । अबुद्ध । सृज विसर्गे । सृजिदशोरित्यम् । सृष्टा । सृक्षीष्ट । असृष्टा अथ स्वादिष्वोदित्सु । दीङ् क्षये ॥

दीङो युडचि ङिति ६ । ४ । ३६ ॥

दीङः परस्याजादेः ङितः आर्द्धधातुकस्य युट् ॥

बुग्युटाबुवङ्यणोः सिद्धौ ॥

दिदीये ॥

मीनातिमिनोतिदीङं ल्यपि च ६ । ४ । ५० ॥

एयामात्वं ल्यपि चकारात् अशित्येज्ञनिमित्ते । दाता । दास्यते । धीङ् आधारे । मीङ् हिंसायाम् । रीङ् स्रवणे । लीङ् श्लेषणे ॥

विभाषा लीयतेः ६ । १ । ५१ ॥

लीलीङोरात्वं वा अशित्येज्ञविषये ल्यपि च । लेता । लाता ॥

इत्यात्मनेपदिनः । पुयादिः । शक विभाषितोऽमर्षणे । उभय-
पदीत्यर्थः । अयं सेद् इत्येके । शोक्थि । अनिद् इत्यन्ये । शोक्थि
शशक्य । मृप तितिक्षायाम् ॥

परस्मैपदम् १ । ३ । ८२ ॥

परस्मैपदम् । परिमृष्यति ॥ अथानिटौ ॥ रञ्ज रागे । नलोपः ।
रज्यति रज्यते । रञ्जा । जप आक्रोशे । णह बन्धने । नहो धः ।
नेहिथ ननद्ध । दिवादिराकृतिगणः । तेन क्षीयते मृग्यतीत्यादि ॥
इति दिवादयः ॥

इति ७१ अंशः ।

जिधृषा प्रागल्भ्ये । परस्मैपदी सेद् । धृष्णोति । धृष्णुवन्ति ।
ऋधु वृद्धौ । आनर्द्ध । तुड्विधौ ऋकारिकदेशो रेफो हल्त्वेन
गृद्यते तेनानेकहलत्वाल्लुट् । दम्भु दम्भने । दभ्नोति । ददम्भ ।
लिटौ वा कित्त्वं नलोपः । तस्याभीयत्वेनासिद्धौ ॥

दम्भेश्च एत्वाभ्यासलोपौ वाच्यौ ॐ ॥

देभतुः ददम्भतुः । इदं कित्त्वं पिदापिद्विपयकमित्येके । अपिद्विपक
मित्यन्ये । दम्भिता । वृष प्रीणने । धुभ्रादित्वाण्णत्वन्न । वभ्रोति ॥
अथानिटः ॥ क्षि हिंसायाम् । डुडु उपतापे । पृ प्रीतौ । साध
संसिद्धौ । शकल शक्तौ । आप्ल व्याप्तौ । हि गर्तौ वृद्धौ च ॥

हेरचडि ७ । ३ । ५६ ॥

अभ्यासात्परस्य हिनोतेर्हस्य कुत्वं नतु चडि । जिघाय ॥

हिनुमीना ८ । ४ । १५ ॥

उपसर्गस्थान्निमित्तात्परस्य एतयोर्नस्य णः । प्राहिणोति । राध
संसिद्धौ ॥

राधो हिंसायाम् ६ । ४ । १२३ ॥

एत्वाभ्यासलोपौ किति लिटि सेटि यलि च । अपरेधतुः । अप-
रेधुः ॥ इति परस्मैपदिनः ॥ अशू व्याप्तौ संवाते ॥

अश्रोतेश्च ७ । ४ । ७२ ॥

दीर्घाभृतादभ्यासावर्णात्परस्य नुद् । आनशे । अशिता अष्टा ॥
इत्यात्मनेपदी ॥ सुञ् प्रागुक्तः ॥

सुनोतेः स्यसनोः ८ । ३ । ११७ ॥

स्ये सनि च सुजः पो नाविसोभ्यति । अभिपुणोति । अभ्यपुणोत् ।
अभिसुपाव । स्तृञ् आच्छादने । ऋतश्च संयोगादेः । स्तारि-
पीष्ट स्तृपीष्ट । अस्तारिष्ट अस्तृत । धूञ् कम्पने । वेद् । दुधविय
दुधोय । वमयोस्तु परमपि स्वरत्यादिविकल्पं बाधित्वा पुरस्तात्प्र-
तिपेधकाण्डारंभसामर्थ्यात् श्युकः कितीति निपेधे प्राप्ते ऋादिनि-
यमान्नित्यमिद् । दुधुविव । धोता धविता । स्तुसुधूञ्भ्य इतीद् ।
अधावीत् । वृञ् वरणे ॥

वभूयात्ततंथजगृम्भववर्थेति निगमे ७ । २ । ४६ ॥

एषां वेदे इडभावो निपात्यते । तेन भाषायां थलीद् । ववरिया
ववृव । वृती वा । वरिता वरीता । लिङ्गसिचोरात्मनेपदेषु न
लिङि । वरिपीष्ट वृपीष्ट । अवारीत् । सिचि च परस्मैपदेषु । अवा-
रिष्टाम् । अवरिष्ट अवरीष्ट अवृत ॥ अथानिडः ॥ चिञ् चयने ।
प्राणिचिनोति ॥

विभाषा चेः ७ । ३ । ५८ ॥

अभ्यासात्परस्य चिजः कुत्वं वा सनि लिटि च । चिकाय
चिचाय । शिञ् निशाने । पिञ् बन्धने । घुञ् कम्पने । कृञ् हिंसा-
याम् । हुमिञ् प्रक्षेपणे । आत्वम् । ममौ । मिम्यतुः ॥ इत्युभयप-
दिनः ॥ इति सुनोत्यादयः ॥

इति ७२ अंशाः ।

चर्च परिभाषणमर्त्सनयोः । घूर्ण भ्रमणे । चल विलसने । मिप
स्पर्द्धायाम् । हिल भावकरणे । शिल उञ्छे । मिल श्लेषणे । लिख
अक्षरविन्यासे । पुण कर्मणि शुभे । शुभ शोभार्थे । घुर भीमार्थ-
शब्दयोः । पुर अग्रगमने । दृमी ग्रन्थे । वृप वृषौ । दृप उत्कलेशे ।
पृण प्रीणने । मृड सुखने । उञ्ज आर्जवे । उञ्ज उत्सर्गे । उच्छी

विवासे । उच्छि उञ्छे । विच्छ गती । विच्छायति । विच्छायां-
 चकार । विविच्छ । स्पृशभृशेति सिञ्जविकल्पः पुपादेरेव । अत्र
 तु नित्यं सिञ्च । अतर्पीत् । ऋच्छ गतीन्द्रियमलयमूर्तिभावेषु ।
 ऋच्छत्यताम् । आनच्छेत्तुः । समो गमृच्छिभ्याम् । समृ-
 च्छते । समृच्छिष्यते । व्यच व्याजीकरणे । ग्रहिज्या । वि-
 चति । विव्याच । विविचतुः । अव्याचीत् अव्यचीत् । व्यचेः
 कुटादित्वमनासे इति तु कृत्येव न त्विह ॥ अथ तुम्फात्माक् कुटा-
 दयः ॥ कुट कौटिल्ये । कुटति । गाङ्कुटादिभ्य इति डित्वम् ।
 चुकुटिथ चुकोट । चुकुट । कुटिता । अकुटीत् । खुड-भुड संवरणे ॥
 मुट छेदने । वा भ्राशेति श्यन् वा । मुटति मुटयति । छुर छेदने ।
 नमकुर्त्तराम् । छुर्यात् । स्फुर संचलने । कुच संकोचने । मुट छेदने ।
 पुट संश्लेषणे । मुट आक्षेपप्रमर्दनयोः । स्फुट विकसने । ध्रुव गतिस्थै-
 र्ययोः । णू स्तवने । नुवति । अनुवीत् । ध्रू विधूनने । ध्रुवति । अधुमी-
 त् । अथ तुम्फादी । तुम्फ हिंसायाम् । अनिदिताभिति नलोपे ॥

शे तुम्फादीनाञ्चुम् वाच्यः ॐ ॥

येऽत्र नकारानुपक्तास्ते तुम्फादयः । तुंफति । आशिपे । तु-
 पयात् । तुम्फ तृप्ती । गुम्फ ग्रन्थने । उम्म पूरणे । अथ द्वौ किगादिषु ।
 कृ विक्षेपे । किरति । चकार । चकरतुः । करिता करीता । कीर्यात् ।
 अकारीत् ॥

किरतौ लवने ६ । १ । १४० ॥

उपात् किरतेः सुट् छेदेऽर्थे । उपास्किरति ॥

अडभ्यासव्यवायेऽपि सुट् कात्पूर्वं इति वक्तव्यम् ॐ ॥

उपास्किरत् । उपचस्कार ॥

हिंसायां प्रतेश्च ६ । १ । १४१ ॥

उपात् प्रतेश्च किरतेः सुट् हिंसायाम् । अपस्किगति । प्रतिस्किगति ॥

किरतेर्हर्षजीविकाकुलायककरणेष्व्वात्मनेपदमिति

वाच्यम् ॐ ॥

हर्षादयो विषयाः । तत्र हर्षो विक्षेपस्य कारणम् । इतरे फले॥

अपाच्चतुष्पाच्छकुनिष्वालेखने ६ । १ । १४२ ॥

अपात् किरतेः सुट् ॥

सुडपि हर्षादिष्वेव वक्तव्यः ॐ ॥

अपास्किरते वृषो हृष्टः । कुकुटो मक्षार्यो । श्वा आश्रपार्यो ।
हर्षादिषु किम् । अपकिरति कुसुमम् । इह तद्सुटो न । हर्षादि-
मात्रविवक्षायां यद्यपि तद् प्राप्तस्तथापि सुडभावे नेष्यते इत्याहुः ।
गजोऽपकिरति । गृ निगरणे ॥

अचि विभापा ८ । २ । २१ ॥

गिरते रेफस्य लृत्वं वाऽजादौ । गिरति गिलति ॥

अवाद् अः १ । ३ । ५१ ॥

आत्मनेपदम् । अवगिरते । गृणातिस्त्ववपूर्वो न प्रयुज्यते ॥

समः प्रतिज्ञाने १ । ३ । ५२ ॥

शब्दं नित्यं सङ्गिरते ॥ अथ वेदः ॥ ओत्रश्चु च्छेदने । वृश्चति ।
वत्रश्च । वत्रश्चतुः । वत्रश्चिथ वत्रष्ट । लिट्चभ्यासस्येति संप्रसारणे
न रेफस्य ऋकारः । उरत् । तस्याचः परस्मिन्निति स्थानिवद्भा-
वान्न संप्रसारण इति वस्योत्वन्न । व्रश्चिता व्रष्ट । व्रश्चिष्यति व्र-
क्ष्यति । वृश्चयात् । अव्रश्चीत् । अत्राक्षीत् । वृह् वृह्-स्वृह् हिंसायाम् ।
तार्हिता तर्हा । अतृंह्रीत् । अतार्द्धीक्षीत् । अतार्दाम् । स्तार्हिता
स्तर्हा । इषु इच्छायाम् । इच्छति । एपिता एष्टा । कृती छेदने ।
मुचादिः ॥

शे मुचादीनाम् ७ । १ । ५९ ॥

नुम् । कृन्तति । सेऽसिचीति वेद । कर्तिष्यति कत्स्यति । अ-
कर्त्ति ॥

इति ७३ अंशाः ।

अथानिटः ॥ भुजो कीटिल्ये । रुजो मङ्गे । छुप स्पशे । टुम-
स्जो शुद्धौ । मस्जिनशोरिति नुम् । मस्जेरन्त्यात्पूर्वो नुम् । ममंक्थ

ममज्जिथ । मङ्गा । पट्टस्य विशरणगत्यवसादनेषु । शद्व्य शातने ।
द्वी भ्यादिवत् । विश प्रवेशने । विशति ॥

नेर्विशः १ । ३ । १७ ॥

आत्मनेपदम् । निविशते । स्पृश संस्पर्शने । स्पष्टा स्पर्शा । अ-
स्पर्शात् अस्पर्शादित्यादि । अस्पृक्षत् । मृश आमर्शने । अम्रा-
क्षीत् अमार्क्षीत् । अमृक्षत् । मृज विसर्गे । थलि वेद अम् । गग-
र्जिथ सप्तष्ट । सष्टा । प्रच्छ झीप्सायाम् । किग्दिः । पृच्छति ।
पप्रच्छतुः । प्रष्टा । अप्राक्षीत् । आङि नुपृच्छयोः । आपृच्छते ।
विदिप्रच्छि इति तडानी । तत्र संपृच्छते । समप्रष्ट । समप्रक्षाताम् ।
खिद् परिघाते मुचादिः । सिन्दति ॥ अय द्वी कुटादी ॥ गु पुरीपो-
त्सर्गे । जुगुविथ जुगुथ । गुता । गुप्यति । अगुपीन् । अगुताम् ।
अगुपुः ॥ इति परस्मैपदिनः ॥ गुरी उद्यमने । ओलमनी धीडने ।
लज्जते । जुपी प्रीतिसेवनयोः । ओविजी मयचलनयोः । उद्विजते ॥

विज इट् १ । २ । २ ॥

विजेरिडादिः प्रत्ययो ङिद्वत् । उद्विजिता । कृद् शब्दे । कुटादिः ।
कुविता ॥ अथानिटः ॥ पृद् व्यायामे । व्यापियते । व्यापता ।
मृद् प्राणत्यागे ॥

धियतेलुङ्लिङोश्च १ । ३ । ६१ ॥

लुङ्लिङोः शितश्च मरुतिभूतान् मृदस्नद नान्यत्र । ङित्वं स्व-
रार्थम् । धियते । ममार । द्वी किरादी । इद् आद्रे । आद्रियते ।
धृद् अवस्थाने । धियते । कुद् शब्दे । कुटादिः । कुता ॥ इत्या-
त्मनेपदिनः ॥ मिल मङ्गमे । मिलति मिलते ॥ अथानिटः ॥ दिग्
अतिसर्जने । देशाद्देश्याति । पुद् मेरणे । भ्रस्ज पाके । मृजानि मृजते ॥

भ्रस्जोरोपधयोरमन्यतरस्याम् ६ । ४ । ४१ ॥

भ्रस्जे रेफस्योपधायाश्च स्थाने रमागमो वा आर्द्धधातुके । रो-
पधयोर्निवृत्तिः । वमर्ज । वमर्जवुः । वभ्रज्ज । भ्रष्टा मर्ष्टा ॥
क्लिति रमागमं बाधित्वा संप्रसारणं पूर्वविप्रतिषेधेन ॥

मृज्ज्यात् । क्षिप मेरणे । क्षिपति क्षिपते ॥

अभिप्रत्यतिभ्यः क्षिपः १ । ३ । ८० ॥

परस्मैपदम् । अभिक्षिपति । इत्यादि । कृप विलेखने । भ्वादि-
वत् कसः अम् च वा । तडि तु लिङ् सिचाविति कित्वादम् न । अ-
कृष्ट । अकृक्षाताम् । अकृक्षन्त । हिसितः प्राक् मुचादयः ॥ मुच्ल
मोक्षणे । मुश्चति मुश्चते । मोक्ता । विट् लभे । व्याघ्रभृत्यादिमते
सेङ्कः । वेदिता । भाष्यादिमतेऽनिङ्कः । परिवेत्ता । लुप्ल छेदने ।
लिप उपदेहे । लिपि सिचीत्यङ् तडि तु वा । अलिपत् अलिपत
अलिप्त । एवं पिच क्षरणे । सिंचति ॥ इति तुदादयः ॥

इति ७४ अंशाः ।

अथ रुधादयः ॥ हिसि हिंसायाम् ॥

श्रात्रलोपः ६ । १ । १२३ ॥

श्रमः परस्य नस्य लोपः । हिनस्ति । जिहिंस । तिप्यनस्तेः ।
अहिनत्-अहिनद् । सिपि धातो र्वा पक्षे जश्त्वेन दः । आहिनः
अहिनत् । पृची संपर्के । पृणक्ति । परिंता । अपृणक् । वृजी
वर्जने । ओविजी मयचलनयोः । विज इट् । विविजिथ । विजिता ।
अविनक् । अविजीत् । तृह हिंसायाम् ॥

तृणह इम् ७ । ३ । १२ ॥

तृहः श्रमि कृते इमागमः हलादौ पिति । तृणेढि । तृण्डः ।
अतृणेट् । उन्दी क्लेदने । उन्दाश्चकार । औनत् ॥ अथ वेदः ॥ अञ्जू
व्यक्तिप्रक्षणकान्तिगतिषु । अनक्ति । अनजानि । आनक् ॥

अञ्जेः सिचि ७ । २ । ७१ ॥

अञ्जेः सिचो नित्यमिट् । आञ्जीत् । कृती वेष्टने । आर्द्धधातुके
तुदादिवत् ॥ अथानिटः ॥ भंजी आमर्दने । मनोक्ति । भङ्गा ।
पिण्ड संचूर्णने । पिनाष्टि । हेर्दिः । जश्त्वम् । शरी शरीति वा
दलोपः । पिण्डि पिण्डि । अपिनट् । न्नेरङ् । अपिपत् । एवं शिण्ड
विशेषणे । भुज पालनाभ्यवहारयोः । मुनक्ति ॥

भुजोऽनवने १ । ३ । ३६ ॥

आत्मनेपदम् । ओदनं भुंक्ते ॥ इति परस्मैपदिनः ॥ जिङ्न्धी
दीप्तौ । इन्धे । इन्त्से । इन्धितासे ॥ अथानिटौ ॥ खिद् दैन्ये ।
खिन्ते । विद् विचारणे ॥ इत्यात्मनेपदिनः ॥ अथोभयपदिनोऽनिटः ॥
युजिर् योगे । युनक्ति । युङ्क्ते ॥

प्रोपाभ्यां युजेरयज्ञपात्रेषु १ । ३ । ६४ ॥

तडानी ॥

स्वराद्यन्तोपसर्गादिति वाच्यम् ❀ ॥

प्रयुंक्ते । उपयुंक्ते । उद्युङ्क्ते । छिदिर् द्वैधीकरणे । भिदिर्
विदारणे । विचिर् पृथग्भावे । रिचिर् विरेचने । क्षुदिर् संपेषणे ॥
इत्युभयपदिनः ॥ इति रुधादयः ॥ तनाद्याः कृञं विना सर्वे सेटः ।
वनु याचने । वनुते । अयं चान्द्रमते परस्मैपदी । वनोति । मनु
अवबोधने । मनुते ॥ इत्यात्मनेपदी ॥ अथोभयपदिनः ॥ पणु
दाने । ये विभाषा । सायात् सन्यात् ॥

जनसनखनां सन्झलोः ६ । ४ । ४२ ॥

एषामाकारोन्तादेशो झलादौ सनि झलादौ कृिति च । असात् ।
असनिष्ठाक्षणु-क्षिणु हिंसायाम् । ह्यन्तेति न वृद्धिः । अक्षणीत् ।
क्षेणोति । संज्ञापूर्वकत्वात् उप्रत्ययनिमित्त उपधागुणो न भवती-
त्यात्रेयादयः । भवतीत्यन्ये । क्षिणोति । एवमग्रेऽपि । तृणु अदने ।
डुवृञ् करणे । प्रागुक्तः ॥

संपरिभ्यां करोतौ भूपणे ६ । १ । १३७ ॥

समवाये च ६ । १ । १३८ ॥

संपरिपूर्वस्य करोतेः सुट् भूपणे संघे चार्थे । संस्कुर्वन्ति । अलं-
कुर्वन्ति । संघीभवन्ति वा । संपूर्वस्य कचिदभूपणेऽपि सुट् । संस्कृतं
भक्षा इति ज्ञापकात् ॥

उपात् प्रतियत्नवैकृतवाक्याध्याहारेषु च ६ । १ । ३९ ॥

उपात् कृजः सुद् एष्वर्थेषु चात् पूर्वोक्तार्थयोः । उपस्कृता
कन्या । भूपिता उपस्कृताः समुदिताः एधोदकस्योपस्कुरुते । उप-
स्कृतं भुंक्ते । विकृतमित्यर्थः । उपस्कृतं ब्रूते । वाक्याध्याहारे-
णेत्यर्थः ॥

सुद् कात् पूर्वः ६ । १ । ३५ ॥

अडभ्यासव्यवायेऽपि इत्युक्तम् । संचस्कार । संचस्करतुः ।
कृष्टभृष्ट्रे ऋतो भारद्वाजस्येति सूत्रे च ॥

कृभोऽसुट इति वक्तव्यम् ❀ ॥

तेन समुदकात्परस्येद् । संचस्कारिथ । सुटि गुणोर्तीति गुणः ।
ऋतश्च संयोगादेरिति इद् च न । संस्क्रियात् । संस्कृपीष्ट ।
समस्कृत ॥

गन्धनावक्षेपणसेवनसाहसिक्यप्रतियत्नप्रकथनोपयोगेषु
कृजः १ । ३ । ३२ ॥

आत्मनेपदम् । उत्कुरुते । सूचयतीत्यर्थः । श्येनो वार्तिकामु-
दाकुरुते । हरिसुपकुरुते । परदारान् प्रकुरुते । एधोदकस्योपस्कुरु-
रुते । गाथाः प्रकुरुते । शतं प्रकुरुते ॥

अधेः प्रसहने १ । ३ । ३३ ॥

शत्रुमधिकुरुते । क्षमतेऽभिभवति वा ॥

वेः शब्दकर्मणः १ । ३ । ३४ ॥

स्वरान् विकुरुते । नेह । चित्तं विकरोति कामः ॥

अकर्मकाञ्च १ । ३ । ३५ ॥

वेः कृज इत्येव । छात्रा विकुर्वते ॥

अनुपराभ्यां कृजः १ । ३ । ७९ ॥

परस्मैपदम् । अनुकरोति । पराकरोति । भावकर्मणोः कर्मकर्त्तरि
च न ॥ इति तनादयः ॥

इति ७५ अंशाः ।

डुक्तीञ् द्रव्यविनिमये । प्रागुक्तः ॥

परिव्यवेभ्यः क्रियः १ । ३ । १८ ॥

अकर्त्रभिप्रायेऽप्यात्मनेपदम् । परिक्रीणीते इत्यादि । मन्य
विलोडने ॥

हलः श्रः शानज्झौ ३ । १ । ८२ ॥

हलः परस्य श्रः शानच् आदेशः ही । मथान । खच भृ-
तप्रादुर्भावे । अतिक्रान्तोत्पत्तावित्यर्थः । खच्चाति । वान्तोऽप्य-
मित्येके ॥

च्छोः शूडनुनासिके च ६ । ४ । १९ ॥

सतुक्कस्य छस्य वस्य च क्रमात् छा ऊरु एतौ स्तः अनुनासिके
कौ झलादौ च कृति । खौनाति । चखाव । खविता । शानचः पर-
त्वादूठि कृते हलन्तत्वाभावान्न शानच् । खौनीहि । कुन्थ-कुथ
संश्लेषणे संश्लेशे च । पुप पुष्टौ । मुप स्तेये । मृद क्षोदे । अश
भोजने । ग्रन्थ सन्दर्भे । नलोपः । ग्रथ्नाति । श्रन्थिग्रन्थीत्यादिना
कित्वपक्षे ॥

एत्वाभ्यासलोपावप्यत्र वक्तव्यो ❀ ॥

इति हरदत्तादयः । अथतुः । अथुः । इदं कित्वं पितामपि इति
सुधाकरपक्षे । अथिय । अथिता । एवं अथ विमोचनप्रतिहर्षणसं-
दर्भेषु । क्षुभ संचलने ॥

क्षुभ्नादिषु च ८ । ४ । ३९ ॥

णत्वन्न । क्षुभ्नाति । स्तम्भु रोधने स्तम्भे च । स्तुम्भु रोधने
निष्कोपणे च । स्कुम्भु रोधने स्तम्भे च । स्कुम्भु रोधने धारणे च ॥

स्तम्भुस्तुम्भुस्कम्भुस्कुम्भुस्कुम्भ्यः अनुश्च ३ । १ । ८२ ॥

चात् श्रा । आद्याश्चत्वारः सौत्राः परस्मैपदिनः । विष्टभ्नोति
विष्टभ्नाति । अवष्टभ्नोति अवष्टभ्नाति । अवतष्टम् । जृस्तम्भु इत्यङ् वा ।
अस्तमत् । अस्तम्भीत् । व्यष्टमत् । व्यष्टम्भीत् । स्तुभ्नोति स्तुभ्नाति ॥

वेः स्कुभ्र त्तेर्नित्यम् ८ । ३ । ७७ ॥

सस्य षः । विष्कभ्रोति विष्कभ्राति । स्कुभ्रोति । स्कुभ्राति ।
अथ क्लिशः प्राक् प्वादयः॥ कृ हिंसायाम् ॥

प्वादीनां ह्रस्वः ७ । ३ । ८० ॥

शिति । कृणाति । ऋच्छत्यृताम् । चकार । चकारतुः । श्युकः
कितीत्यस्य ऋादिनियमेन वाधः । चकारिव । लिटं विनार्द्धधातुके
तृवत् । एवमन्येऽपि ऋदन्ताः । गृ शब्दे । जृ वयोहानौ । वृ वरणे
मरणे च । शृ हिंसायाम् । अस्य किति लिटि शृदृप्रामिति ह्रस्वपक्षे
यण् । अन्यत्र गुणः । शशरतुः शश्रतुः । शशरिव शश्रिव । एवं
दृ विदारणे ॥ अथ वेटः ॥ क्लिशु विवाधने । कुप निष्कोपणे ॥

निरः कुपः ७ । २ । ४६ ॥

निरः परस्य कुपो बलाद्यार्द्धधातुकस्येद् वा । निष्कोपिता
निष्कोष्टा । निरकोपीत् । निररुक्षत् । इष आभीक्ष्ये । तीपेत्यत्र
अस्य इपेर्न ग्रहणमिति केचित् । ग्रहणमिति परे । एपिता एष्टा ॥
अथानिटः ॥ बन्ध बन्धने । घघ्नाति । मन्त्स्यति । अमान्त्सीत् ।
पूर्वप्रासिद्धमिति मष्मावात्पूर्वं श्लो श्लीति सिञ्जलोपः । प्रत्य-
यलक्षणेन सादिप्रत्ययमाश्रित्य मष्भावो न प्रत्ययलक्षणं प्रति सिञ्ज-
लोपस्यासिद्धत्वात् । अवान्धाम् । अमान्तमुः ॥ अथ द्वा प्वादी
त्वादी च । ज्या वयोहानौ । ग्रहिज्येति कृते ॥

हलः ६ । ४ । २ ॥

अद्भाववाद्दलः परं यत् संप्रसारणं तदन्ताङ्गस्य दीर्घः । इति
दीर्घं कृते प्वादीनामिति ह्रस्वः । जिनाति । जज्या । ज्ञा अवबो-
धने । जानाति । अतो दीर्घो यनीति सिद्धावपि जादेश्च दीर्घनि-
र्देशसामर्थ्यान्न ह्रस्वः ॥

अपह्रवे ज्ञः १ । ३ । ४४ ॥

आत्मनपदम् । शतमपजानीते ॥

अकर्मकाच्च १ । ३ । ४५ ॥

सर्पिषो जानीते ॥

संप्रतिभ्यामनाध्याने १ । ३ । ४६ ॥

शतं संजानीते । प्रतिजानीते । अनाध्याने इति योगो विभ-
ज्यते । तेन अकर्मकाद्येत्यस्य प्राप्तिरपि वार्यते । मातरं मातुर्वा
संजानाति । शेषत्वविवक्षायां पष्ठी ॥

अनुपसर्गाञ्जः १ । ३ । ७६ ॥

आत्मनेपदम् । गां जानीते । विभाषोपपदेन प्रतीयमाने । स्व
यज्ञं जानीते जानाति वा । सन्नन्तादात्मनेपदं वक्ष्यते । इति पर-
स्मैपदिनः ॥ वृद्ध् सम्भक्तौ । वृणीते । वत्रे । ववृषे । ववृष्टे । वरिता
वरीता । अवरीष्ट । अवरीष्ट । अवृत ॥ इत्यात्मनेपदी ॥ कृञ् शब्दे ।
ग्रह उपादाने । गृह्णाति गृह्णीते ॥

ग्रहो लिटि दीर्घः ७ । २ । ३७ ॥

एकाचो ग्रहेर्विहितस्येटो दीर्घः नहु लिटि । ग्रहीता । लिटि ।
जग्रहिय । गृह्णात् । ग्रहीषीष्ट । ह्यंतेति न वृद्धिः । अग्रहीत् । अग्रही-
ष्टाम् ॥ अथ पट् प्वादयः । पश्च ल्वादयः ॥ पूञ् पवने । पुनाति ।
लूञ् छेदने । कृञ् हिंसायाम् । धूञ् कम्पने । आर्द्धधातुके धूनो-
तिवत् । एवं स्तृञ् आच्छादने । तथा वृञ् वरणे । आशिषि वृ-
र्यात् । वरिषीष्ट ॥ अथानिटः ॥ पिञ् बन्धने । प्रीञ् तर्पणे कान्तौ
च । श्रीञ् पाके । मीञ् हिंसायाम् । मीनाति । प्रमीणाति । मी-
नातीत्येज्जविषयमात्वम् । ममौ । मिम्यतुः ॥ इत्युभयपदिनः ॥
इति न्यादयः ॥

इति ७६ अंशाः ।

पुल महत्त्वे संघाते च । चुर्वत् । दुल उत्क्षेपे । मुद संसर्गे ।
चुद संचोदने । पुथ भाषायाम् । मुट संचूर्णने । चुट छेदने । तिज्
निशाने । अतीतिजत् । टकि बन्धने । टङ्केति पाठश्चे इदित्करणं
सर्वचुरादीर्णचः पाक्षिकत्वे लिङ्गम् । तेन चिन्त्यात् । चिन्त्यते

इत्यादौ नलोपो नेत्याहुः । असंयोगोपधस्य इदितौ णिज्जिक्के-
 संपार्थमित्येके । तेषामपि नित्यं णिजिति परे । एव इरित उदित
 ईदित ऋकारान्ताश्च पाक्षिकाणिच इत्याहुः । पृ पूरणे । पारयति
 परति । टङ्कयति । टङ्क्यात् । पचि विस्तारवचने । मडि भूपायां
 हर्षे च । खडि-कडि भेदने । वटि विभाजने । छदि संवरणे ।
 तसि अलङ्करणे । चिति स्मृत्याम् । पिडि संघाते । कुठि-गुठि
 वेष्टने । यत्रि संकोचे । यन्त्रेति पाठ्यम् । एवन्तत्रिमत्रिमभृतौ ।
 लक्ष दर्शनाङ्कनयोः । घट संघाते । नट अवस्यन्दने । पट भाषा-
 याम् । तड आघाते । लड उपसेवायाम् । यत निकारोपस्का-
 रयोः । बंध संयमने । कल क्षेपे । पश बंधने । वस स्नेहच्छेदाप-
 हरणेषु । चर संशये । पाल रक्षणे । अपीपलत् । क्षल शौच-
 कर्मणि । अचिक्षलत् । श्लिप श्लेषणे । अशिश्लिपत् । स्फुट भेदने ।
 अपुस्फुटत् । चर्च अध्ययने । अचचर्चत् । गर्ज शब्दे । घट्ट चलने ।
 वर्ण प्रेरणे वर्णने च । छर्द वमने । गर्द्ध अभिकांक्षायाम् । वर्ध
 छेदनपूरणयोः । भक्ष अदने । वर्ह भाषार्थे हिंसायां च । मार्ज
 शब्दे । साम-पान्त्व सामप्रयोगे । बुक्क भ्रमणे । कुट्ट छेदनभर्त्स-
 नपूरणेषु । लुण्ठ स्तेये । भूप अलंकरणे । मूल रोहणे । शब्द
 उपसर्गादाविष्कारे । प्रतिशब्दयति । प्रतिश्रुतमाविष्करोतीत्यर्थः ।
 अनुपसर्गाच्च । शब्दयति । पूद् क्षरणे । चूर्ण संकोचने प्रेरणे
 च । पूज पूजायाम् । म्लेच्छ अव्यक्ताया वाचि । ऊर्ज बलप्रा-
 णनयोः । और्जिजत् । नन्द्राः संयोगादयः । ईड स्तुतौ । ऐडि-
 डत् । तुल उन्माने । तोलयति । तुलयति इति तु अतुलोपमाभ्या-
 भिति निपातनसिद्धान्तुलाशब्दात् तत्करोतीति णौ । श्रण दाने ।
 प्रायेणाद्यं विपूर्वः । विश्राणयति ॥

काण्यादीनां वा उपधाया ह्रस्वः ॐ ॥

प्यन्ताः कणरणभणश्रणलुपहैठद्वायिवाणिलोटिलोपयः चाणि-
 लोठी चेति द्वादश काण्यादयः । व्यशश्राणत् । व्यशिश्रणत् ।
 जमु हिंसायाम् । उदित्सामर्थ्यात्पात्तिको णिच् । जासयति

जसति । एवमग्रेऽपि । घुपिर् विशब्दने । वा णिच् । घोपयति घो-
षति । अङ् वा । अघुपत् । अधोपीत् । ज्ञा नियोगे ॥

अर्त्तिहीर्षीरीक्यूयीक्ष्माय्यातां पुगणौ ७ । ३ । ३६ ॥

ज्ञापयति । अजिज्ञपत् । पू पूरणे । पारयति । वा णिच् ।
परति । नित्यमिति परे । ज्ञप ज्ञानज्ञापनयोः । ज्ञपमिच्च ॥

मितां ह्रस्वः ॥

ज्ञपयति । अजिज्ञपत् । तज्ज्ञापयत्याचार्य इति तु ज्ञा नियोग
इति प्रागुक्तस्य । यम च परिवेषणे । चान्मिन् । परिवेषणमिह वेष्ट-
नम् । नतु भोजना नापि वेष्टना । यमयति चन्द्रम् । परिवेष्टत इत्यर्थः ।
चह परिकल्कने । चहयति । अचीचहत् । अदन्तस्य तु अचचहत् ।
चपेत्येके । चपयति । बल प्राणने । बलयति । रह त्यागे । रह-
यति । अरीरहत् । अदन्तस्य अररहत् । चिञ् चयने ॥

चिस्फुरोर्णौ ६ । १ । ५४ ॥

आत्वं वा । अर्त्तिहीति पुरु । चपयति । चययति । चित्त्वसाम-
थ्याणिज् वा । प्रणिचयति प्रनिचयति । इति ज्ञपादयः । नान्ये
मितोऽहेतौ स्वार्थाणिचि ज्ञपादिभ्योऽन्ये मितो नेत्यर्थः । घटादयो-
ऽपि मितः । ते च केचित्पूर्वमुक्ताः । घटयति । विघटयति ।
उद्धाटनमिति तु घट संघाते इत्यस्य घाटं घाटं घटं घटम् । एवं
प्रथम्यथन्नदञित्वरादयः ॥

जनीजूषूक्तसुरजोमन्ताश्च ❀ ॥

मितः । जूप् जरयति । जृणातेस्तु जारयति ॥

न कर्म्यमिचमाम् ❀ ॥

मित्त्वम् । कामयते इत्यादि । अम रोगे । आमयति । एवं
शमादीनाममन्तत्वादिप्रत्युक्तं मित्वन्न । अम भ्वादी तस्माद्धेतु-
मण्णौ न कर्म्यमिचमामिति निषेधः । आमयति । सर्वं मित्प्ररुग्णं
णिजन्तेषु वक्ष्यते ॥

इति ७७ अंशाः ।

पीड अवगाहने ॥

भ्राजभासभापदीपजीवमीलपीडामन्यतरस्याम् ७।४।३॥

एषामुपधाया ह्रस्वो वा चङ्परि णौ । अपीपिडत् । अपिपी
डत् । कृत संशब्दने ॥

उपधायाश्च ७ । १ । १०१ ॥

धातोरुपधाभूतस्य ऋत् इत् रपरत्वम् । कीर्तयति ॥

उर्ऋत् ७ । ४ । ७ ॥

उपधाया ऋवर्णस्य स्थाने ऋद्वा चङ्परि णौ । इररारामपवादः ।
अचीकृतत् अचिकीर्तत् । प्रथ प्रख्याने । मित्त्वन्न । प्राथयति ॥

अत्स्मृद्वत्वरप्रथम्रदस्त्वृस्पशाम् ७ । ४ । ९५ ॥

एषामभ्यासस्याकारोन्तादेशश्चङ्परि णौ इत्वापवादः । अपप्र-
थत् । पृथ प्रक्षेपे । अपीपृथत् अपपर्यत् । भुवोऽवकल्कने । णिच् ।
मिश्रणे चिन्तने चेत्यर्थः । कृपू अवकल्कने । कल्पयति । अर्ज
प्रतियत्ने द्रव्यार्जने च । अर्ह पूजायाम् ॥ आकुस्मादात्मनेपदिनः ॥
मान स्तम्भे । मानयते । तर्ज-भर्त्स तर्जने । वञ्च प्रलंभने । गूर उद्य-
मने । मत्रि गुप्तपरिभाषणे । शम आलोचने । शामयते । दर्शि
दंशने । दंशयते । इदिस्वाण्णिजभावे । दंशति । आकुस्मीयमात्म-
नेपदं णिच्सन्नियोगेनैव । नलोपे तु भ्वादे रेव ग्रहणम् । गल स्रवणे ।
भल आमंडने । लल ईप्तायाम् । मद तृप्तियोगे । चित संचेतने ।
विद चेतनारख्यानविवासेषु । चुट छेदने । कूट आपदानेऽवसादने
च । कुत्स अवक्षेपणे ॥

कुस्मनाम्नो वा ❀ ॥

कुस्मेति प्रातिपदिकं तस्माद्वात्वर्थे णिच् वा । यद्वा कुस्म कुत्सि-
तस्मयने । इति धातोर्वा णिच् । कुस्मयते । अचुकुस्मत । शेषा
आकुस्मीया वक्ष्यन्ते ॥ इत्याकुस्मीयाः ॥ आस्वदः सकर्मकात्
णिच् । लोऋ-लोच् भाषायाम् । लोकयति ग्रंथम् । नाग्लोपिशास्व-
दिताम् । अलुलोकत् । तर्क भाषायाम् । वहर् भाषार्थे हिंसाया च ।

स्वाद आस्वादेने । पृरी आप्यायने । धूप मापार्थः । दल विदारणे ।
 इद आस्वादेने । असिष्वदत् । शेषा आस्वदीया वक्ष्यन्ते ॥
 इत्यास्वदीयाः । आधृपाद्वा णिच् । प्रीच् तर्पणे । प्रीणयति ।
 धृञ्प्रीणोरिति हरदत्तपाठे तु प्राययति । प्रयति प्रयते । भृ प्राप्ता-
 वात्मनेपदी उदाहृतः । णिच् सन्नियोग एवात्मनेपदमित्याहुः । वृञ्
 आवरणे । धृञ् धारणे । जृ वयोहानौ । अर्च पूजायाम् । आधृ-
 पीयपाठेनैव गतार्थत्वात् अर्च अर्ह इत्यादीनां भ्वादिषु पाठोऽसा-
 म्प्रदायिक इति परे । अर्ह हिंसायाम् । स्वरितेत् । अर्हयति अर्हति
 अर्हते । अर्ह पूजायाम् । ईर क्षेपे । मान पूजायाम् । गर्ह निंदने ।
 मार्ग अन्वेषणे । ग्रंथ संदर्भ वंधने च । हिंसि हिंसायाम् । छद्
 अपवारणे । स्वरितेत् । वच परिभाषणे । वद संदेशवचने । स्वरितेत् ।
 वादयति वदति वदते । अनुदात्तेदित्येके । ववदे । पह मर्पणे । युज
 संयमने । मृञ् शौचालंकारयोः । वृजी वर्जने । आङ्पद पदर्थे ।
 आसादयति आसीदति । असात्सीत् । तनु श्राद्धोपकरणयोः
 इत्येके । तानयति । उपसर्गाच्च देष्ट्ये । वितानयति । तनति ।
 वितनति । शिष असर्वोपयोगे । शेषयति । शेषति । शेषा ।
 अशिक्षत् । अयं विपूर्वोऽतिशये । धूप प्रसहने । शेषा आधृपीया
 वक्ष्यन्ते ॥ इत्याधृपीयाः । हन्त्यर्थाश्च । नवगण्यामुक्ता अपि
 हन्त्यर्थाः स्वार्थे णिचं लभन्ते ॥

इति ७८ अंशाः ।

अथादन्ताः ॥ कल गतौ संख्याने च । अचकलत् । स्तन-गद
 देवशब्दे । छद् अपवारणे । मह पूजायाम् । रह त्यागे । रस आ-
 स्वादनस्नेहनयोः । रच प्रतियत्ने । वस निवासे । वर ईप्सायाम् । कर्ण
 भेदने । वर्ण वर्णक्रियाविस्तारगुणवर्चनषु । ध्वन शब्दे । व्यय वित्तम-
 मुत्सर्गे । त्रण गात्रविचूर्णने । श्रथ दौर्बल्ये । दण्ड दण्डनिपातने । पा
 कर्मसमाप्तौ । माज पृथक्कर्मणि । माम क्रोधे । वास उपसेवायाम् ।
 चित्र चित्रीकरणे । छिद्र कर्णभेदने करणभेदने च । मिश्र संपर्के ।
 शील उपधारणे । सुख-दुःख तत्क्रियायाम् । गुण आमंत्रणे केतने च ।

कूट परितापे परिदाहे च । कूण संकोचने आमंत्रणे केतने च । मूत्र
 प्रस्रवणे । रूप रूपक्रियायाम् । सूत्र वेष्टने । सूच पैशुन्ये । स्पृह
 ईप्सायाम् । केत श्रावणे निमन्त्रणे च । स्तेन चौर्ये । गवेष मार्गणे ।
 सभाज प्रीतिदर्शनसेवनेषु । कुमार क्रीडायाम् । सङ्केत आमन्त्रणे ।
 निवास आच्छादने । मल धारणे । लल ईप्सायाम् । विडम्ब अनुकर-
 णतिरस्कारयोः । अत्र अदन्तेष्वपठित्वा डम्बेति डवि इति च
 चान्तेषु वा पठ्यते । स्वन शब्दे । वीज व्यजने । स्फुट विशरणे ।
 रूप विच्छुरणे । मृष सहने । प्रेङ्गोल चापले । आन्दोल दील
 दीलायाम् । गौम उपलेपने । छेद द्वैधीकरणे । अवधीर अव-
 ज्ञायाम् । गण संख्याने । गणयति ॥

ई च गणः ७ । ४ । ९७ ॥

गणेरभ्यासस्य ई अच चङ्परे णौ । अजगणत् । अजी-
 गणत् । सङ्ग्राम युद्धे । अयमनुदात्तेत् अकारप्रक्षेपात् ।
 सङ्ग्रामयते । अससङ्ग्रामत ॥ आगर्वादात्मनेपदिनः ॥ अर्थ
 याच्नायाम् । अर्थयते । ओः पुयण्ज्यपरे इत्यत्र पद्ययोरिति
 वक्तव्ये वर्गप्रत्याहारजकारग्रहो लिङ्गम् । णिचि अच आदेशो
 न स्याद् द्वित्वे कर्त्तव्ये । यत्र द्विरुक्तावभ्यासोत्तरखण्डस्या-
 धोच्प्रक्रियायां परिनिष्ठिते रूपे वा अवर्णो लभ्यते तत्रैवायं निषेधः ।
 ज्ञापकस्य सजातीयापेक्षत्वात् । तेन अचिकीर्त्त इति सिद्धम् । प्रकृते
 तु अलोपात् प्राक् थदाब्दस्य द्वित्वम् । तत् उत्तरखण्डेऽलोपः आ-
 र्त्तयत । एवमङ्गान्धोनादिधातुष्वपि अलोपित्वान्न दीर्घसन्वद्भा-
 वी । द्वित्वप्रवृत्तिवेलायामवर्णपरत्वसम्पादकादेशस्थानिनोऽचो णिच्-
 निमित्तक आदेशो न स्याद् द्वित्वे कर्त्तव्ये इति ज्ञाप्यस्वरूपं वद-
 तात्मते तु अर्त्तयत इत्येव ॥

इति ७९ अंशाः ।

वीर विरान्तौ । वृह विस्मापने । शूर विरान्तौ । स्थूल परिबृं-
 जे । गृह ग्रहणे । मृग अन्वेषणे । सत्र संतानक्रियायाम् । गर्व

माने। गर्भव्यते । अदन्तत्वसामर्थ्याणि ज्वधिकल्पः । धातोरेन्त उदात्तो
लिटि आम् च फलम् । एवमन्यत्रापि ॥ इत्यागर्वाग्याः ॥ अद् पदे
लक्षणे च । अन्ध दृष्ट्युपघाते । ऊन परिहाणे । अंग विमाजने ।
अघ पापकरणे । लजि प्रकाशने । लंजयति । अदन्तेषु पाठवला-
ददन्तत्वे वृद्धिरित्यन्ये लङ्नापयति । एवं वटि विमाजने इत्यत्रापि ।
शाकटायनस्तु अदन्तानां सर्वेषां पुक्माह । कथापयति । गणा-
पयति । इत्यादि ॥

बहुलमेतन्निदर्शनम् ❀ ॥

अदन्तधातुनिदर्शनमित्यर्थः । तेनान्ये पर्णादयोऽपि बोध्याः ।
अन्ये तु दशगणीपाठो बहुलम् । तेनापठिता अपि सौत्रलौकिक-
र्षदिका बोध्याः । अपरे तु नवगणीपाठो बहुलं तेनापठितेभ्यांऽपि
क्वचित्स्वार्थं णिच् । रामो राज्यमचीकरादिति यथा इत्याहुः चुग-
दिभ्य एव बहुलं णिजित्यर्थः इत्यन्ये ॥ इति चुरादयः ॥ मन्तु
अपराधे । मन्तुञ् इत्येके । मन्तूयति मन्तूयते । अस्ञ् उपतापे ।
वल्गु पूजामाधुर्ययोः । केला-सेला विलासे । लेला दीप्ती । मिपञ्
चिकित्सायाम् । महीङ् पूजायाम् । हृणीङ् लजायाम् । अगद नी-
रोगत्वे । गद्गद वाक्स्खलने । उपस् प्रमातीभावे । सपर पूजायाम् ।
आकृतिगणोऽपम् ॥ इति कण्ठादयः ॥ लोकप्रसिद्धाः भुवन्ताः
शब्दाः कर्तृलकारान्ताः तादृशाः पाठपठिता धातवश्च समाप्ताः ।
अथ तेभ्यो भावकर्मणोर्लकारा द्वितीयखण्डे वक्ष्यन्ते ॥

इति ८० अंगाः ।

इति द्वितीयाध्यायस्य चतुर्थः पादः ।

द्वितीयोऽध्यायः समाप्तः ॥ २ ॥

खण्डः सुगमकौमुद्याः प्रथमः पूर्णतां गतः ॥

एतत्पाठेन बालानां व्युत्पत्तिं कुरुताद्धरिः ॥ १ ॥

इति श्रीमद्भट्टोजिकृतकौमुद्याः प्रतिविम्बरूपायां सुगमकौमुद्यां
प्रथमः खण्डः समाप्तः ॥ १ ॥

अथ द्वितीयः खण्डः ।

श्रीशं नत्वा मध्यखण्डे भावादौ लानथो कृतः ॥

कारकाणि समासादीन् शेषार्थानभिदध्महे ॥ १ ॥

व्युत्पत्तिः पूर्णकल्पा स्यान्मध्यखण्डान्तपाठिनाम् ॥

ततोऽप्यधिकमिच्छद्भिस्तृतीयः खण्ड ईक्ष्यताम् ॥ २ ॥

अथ द्वितीयखण्डस्य प्रथमो भागः । तत्र यद्यपि प्राचा क्रमेण णिजन्तादयो योग्यास्तथापि अत्र बहूपयोगिन एव विषयाः प्रथममुच्यन्त इति कर्तृलान्तप्रकरणानन्तरं भावादिलान्ताना भूयानुपयोगः । प्रसङ्गश्च ततो बहूपयोगित्वात्कृतः । कारकाणि चेत्यादिक्रम उक्त अतो भावकर्मणोर्लडादयः भावकर्मणोरिति तद् सार्वधातुके यक् । भावो भावना व्यापारो भावना सैवोत्पादना सैव च क्रिया । सा च धातुत्वेन सकलधातुवाच्या भावार्थकलकारेणानूद्यते । युष्मदस्मद्भ्या सामानाधिकरण्याभावात् प्रथमपुरुषः । तिङ्वाच्यभावनाया असत्त्वरूपत्वेन द्वित्वाद्यप्रतीतेर्न द्विवचनादि । किं त्वेकवचनमेव । तस्यौत्सर्गिकत्वेन संख्यानपेक्षत्वात् । अनभिहिते कर्त्तरि तृतीया । त्वया मयाऽन्यैश्च भूयते । वभूवे । स्यसिचत्सीयुद् तासिपु इत्यादिना स्यादिपु चिष्वद्भाव इडागमश्च । अयमित् चिष्वद्भावसन्निभयोगशिष्टत्वात्तदभावे न।इहार्धधातुक इत्यधिकृतं सीयुटो विशेषणं नेतरेषामव्यभिचारात् । चिष्वद्भावाद्द्विः।भाविता भविता इत्यादि । अनुपूर्वा भूः सकर्मकस्तस्मात्कर्मणि लकाराः । तिङोक्तत्वात्कर्मणि न द्वितीया । अनुभूयते आनन्दश्चैत्रेण त्वया मया च । अनुभूयते । अनुभूयते । त्वमनुभूयसे । अहमनुभूये । अन्वभावि । अन्वभाविपाताम् अन्वभाविपाताम् । णिजन्तस्य तु णिलोपः । भावयते । भावयाचन्ने । भावयावभूवे । भावयामासे । इह तदशब्दस्य णशि इट एत्वे च कृते ह एतीति हत्वं न । तासि साहचर्यादस्तेरपि व्यतिहे इत्यादौ सार्वधातुके एति हत्वप्रवृत्तेरित्याहुः।भाविता । चिष्वदिट आभीयत्वेनासिद्धत्वाणिलोपः । पक्षे भावयिता । भावि-

ष्यते भावयिष्यते । भाव्यताम् । अभाव्यत । भाव्येत । भाविपी-
ष्ट भावयिपीष्ट । अभावि । अभाविपातां अभावयिपाताम् । बुभृ-
ष्यते । बुभृपांचक्रे । बुभृपिता । बुभृपिष्यते । बोभूष्यते । यद्बुलुगंतात्तु ।
बोभूयते । बोभवांचक्रे । बोभविता बोभाविता । अकृत्सार्वेति दीर्घः ।
स्तूयते विष्णुः । तुष्टुवे । स्ताविता स्तोता । स्ताविष्यते स्तो-
ष्यते । अस्तावि । अस्ताविपातां अस्तोपाताम् । गुणोर्तीति गुणः ।
अर्यते । स्मर्यते । सस्मरे । परत्वान्नित्यत्वाच्च गुणे रपरे कृतेऽजंतत्वा-
भावेऽप्युपदेशग्रहणाच्चिष्वदिद् । आरिता अर्त्ता । स्मारिता स्मर्त्ता ।
गुणोर्त्तीत्यत्र नित्यग्रहणानुवृत्तेरुक्तत्वान्नेह गुणः । संस्क्रियते । अ-
निदितामिति नलोपः । स्रस्यते । इदितस्तु नंद्यते । संप्रसारणम् ।
इज्यते । अयडि ऋिति । शय्यते ॥

तनोतेर्यकि ६ । ४ । ४४ ॥

आकारोत्तादेशो वा । तायते तन्यते । ये विभापा । जायते
जन्यते ॥

तपोऽनुपतापे च ३ । १ । ६४ ॥

तपश्चलेश्चिणन स्यात्कर्मकर्त्तरि अनुपतापे च । अन्वतप्त पापेन ।
पापं कर्तुं । तेनाभ्याहत इत्यर्थः । कर्मणि लुङ् । यद्वा पापेन पुंसा
कर्त्रा अशोचि । घुमास्थेतीत्वम् । दीयते । धीयते । आदिच इत्य-
त्राशितीति कर्मधारयादित्संज्ञकशकारादौ निषेधः । एश आदिशि-
च्चाभावात्तस्मिन्नात्वम् । जग्ले । आतो युक् चिण्कृतोः । दायिता
दाता । दायिपीष्ट दासीष्ट । अदायि । अदायिपाताम् अदिपाताम् ।
अधायिपाताम् अधिपाताम् । अग्लायिपाताम् अग्लासाताम् ।
हन्यते । अचिण्णलोरित्युक्तेर्हनस्तो न । हो हंतेरिति कुत्वम् । घानि-
ता हंता । घानिष्यते हनिष्यते । आशीर्लिङ् । वधादेशस्यापवाद-
श्चिष्वद्भावः । आर्द्धघातुके सीयुटीति विशेषविहितत्वात् । घानिपीष्ट ।
पक्षे वधिपीष्ट । अधानि । अधानिपाताम् अहसाताम् । पक्षे
वधादेशः । अवधि । अवधिपाताम् । आघनिष्यत अहनिष्यत ।

नच स्वादिषु चिण्वदित्यतिदेशाद्ग्राह्यादेशः स्यादिति वाच्यम् ।
अंगस्येत्यधिकारादांगस्यैवातिदेशात् ॥

इति ८१ अंशाः ।

गृह्यते । चिण्वदितो न दीर्घत्वम् । प्रकृतस्य वलादिलक्षणस्यैवेदो
ग्रहो छिदीत्यनेन दीर्घविधानात् । ग्राहिता ग्रहीता । ग्राहिष्यते
ग्रहीष्यते । ग्राहिपीष्ट ग्रहीपीष्ट । अग्राहि । अग्राहिपाताम् अग्रही-
पाताम् । दृश्यते । अर्दाशि । अर्दाशिपानाम् । सिचः कित्त्वादन्न ।
अदृक्षाताम् । गिस्तेर्लुङि ध्वमि चतुरधिकं शतम् । तथा हि चिण्व-
दितो दीर्घो नेत्युक्तम् । अगारिध्वम् । द्वितीये त्विटि वृत्तो वेति वा
दीर्घः । अगरीध्वम् अगारिध्वम् । एपां त्रयाणां लृत्वं ढृत्वं द्वित्व-
त्रयं चेति पंच वैकल्पिकानि । इत्थं पण्णवतिः । लिङ्सिचोरिति
विकल्पादिडभावे उश्चेति कित्त्वम् इत्त्वं रपरत्वं हलि चेति दीर्घः ।
इणः पीध्वमिति नित्यं ढृत्वम् । अगीर्द्धम् । ढवमानां द्वित्वविकल्पे
अष्टौ । उक्तपण्णवत्या सह संकलने उक्ता संख्येति । इङ् दीर्घ-
श्चिण्वदिद् लृत्वे ढृत्वे द्वित्वत्रिकं तथा । इत्यष्टानां विकल्पेन
चतुर्भिरधिकं शतम् ॥ हेतुमण्ण्यतात्कर्माणि लः यक् णिलोपः ।
शम्यते मोही मुकुंदेन । चिण्वदिति मित्त्वात् चिण्णमुलोदीर्घोऽ-
न्यतरस्याम् प्रकृतो मित्तां ह्रस्व एव तु न विकल्पितः । ण्यंताण्णौ
ह्रस्वविकल्पासिद्धेः । दीर्घविधौ हि णिचो लोपी न स्थानिवदिति
दीर्घः सिद्धयति । ह्रस्वविधौ तु स्थानिवत्त्वं दुर्वारम् । भाष्ये तु पूर्व-
त्रासिद्धे न स्थानिवदित्यवष्टभ्य द्विर्वचनसवर्णानुस्वारदीर्घजश्चरः
प्रत्याख्याताः । णाविति जातिपरो निर्देशः । दीर्घग्रहणं च
मास्त्विति तदाशयः । शमिता शामिता शमयिता । शमिष्यते
शामिष्यते शमयिष्यते । यडंताण्णिञ्च । शंशम्यते । शंशामिता
२१ ॥ शंशमयिता । यङ्लुगन्ताण्णिञ्च्यप्येवम् । भाष्यमते
यडंताश्चिण्वदिति दीर्घो नास्तीति विशेषः । ण्यंतत्वाभावे । श-
० मुनिना ॥

नोदात्तोपदेशस्य मांतस्यानाचमेः ७ । ३ । ३४ ॥

उपधाया वृद्धिर्न स्याच्चिणि ङिणति कृति च । अशमि । उदा-
त्तोपदेशस्येति किम् । अगामि । मान्तस्य किम् । अवादि । अना-
चमेः किम् । आचामि ॥

अनाचमिकमिवमीनामिति वक्तव्यम् ❀ ॥

चिणि आयादय इति णिडभावे अकामि ॥

णिङ्णिचोरप्येवम् ❀ ॥

अवामि । वध्र हिंसायां हलंतः । जनिवध्योरिति न वृद्धिः । अ-
वधि । जाग्रो विचिण्णलडित्स्वित्युक्तेर्न गुणः । अजागारि ॥

भंजेश्च चिणि ६ । ४ । ३३ ॥

नलोपो वा । अमाजि अभंजि ॥

विभाषा चिण्णमुलोः ७ । १ । ६९ ॥

लभेर्नुमागमो वा । अलंभि अलाभि । व्यवस्थितविकल्पत्वात्
प्रादेर्नित्यं नुम् । प्रालंभि । द्विकर्मकाणां तु । गौणे कर्माणि दुह्यादेः
प्रधाने नीहकृष्वहाम् । बुद्धिभक्षार्थयोः शब्दकर्मकाणां निजेच्छया ॥
प्रयोज्यकर्मण्यन्येषां ण्यंतानां लादयो मताः ॥ गौर्दुहते पयः ।
अजा ग्रामं नीयते । हियते । कृष्यते । उह्यते । बोध्यते माणवकं
धर्मः । माणवको धर्ममिति वा । देवदत्तो ग्रामं गम्यते । अकर्म-
काणां कालादिकर्मकाणां कर्माणि भावे च लकार इष्यते । मासो
मासं वा आस्यते देवदत्तेन । णिजंतानु प्रयोज्ये प्रत्ययः । मास-
मास्यते माणवकः ॥ इति भावकर्मप्रक्रिया ॥

इति ८२ अंशाः ।

यदा सौकर्यातिशयं द्योतयितुं कर्तृव्यापारो न विवक्ष्यते तदा
कारकांतराण्यपि कर्तृसंज्ञा लभंते स्वव्यापारे स्वतंत्रत्वात् । तेन
पूर्व करणत्वादिसत्त्वेऽपि संप्रति कर्तृत्वात्कर्त्तरि लकारः । साध्वसि-
श्छिनत्ति । काष्ठानि पचंति । स्थाली पचति । कर्मणस्तु कर्तृत्व-

विवक्षायां प्राक् सकर्मका अपि प्रायेणाकर्मकाः । तेभ्यो भावे कर्त्तरि
च लकाराः । पच्यते ओदनेन । भिद्यते काष्ठेन । कर्त्तरि तु ॥

कर्मवत् कर्मणा तुल्यक्रियः ३ । १ । ८७ ॥

कर्मस्थया क्रियया तुल्यक्रियः कर्त्ता कर्मवत् । कार्यातिदेशोऽ-
यमृतेन यगात्मनेपदचिण्विण्वदिटः स्युः ; कर्त्तरिभिहितत्वात्प्रथमा ।
पच्यते ओदनः । भिद्यते काष्ठम् । अपाचि । अभेदि । ननु भावे
लकारे कर्त्तृद्वितीया स्यात् । अस्मादतिदेशादिति चेन्न । लकारवाच्य
एव कर्त्ता कर्मवत् । लिङ्याशिष्यडिति द्विलकारकात् ल इत्यनु-
वृत्तेः भावे प्रत्यये च कर्त्तृलकारेणानुपस्थितेः अत एव कृत्यक्तख-
लर्थाः कर्मकर्त्तरि न भवन्ति किंतु भावे एव । पक्तव्यमोदनेन । भे-
त्तव्यं कुसूलेन । ननु पचिभिद्योः कर्मस्था क्रिया विच्छित्तिर्द्विधा भवन्
च । सैवेदानीं कर्त्तृस्था नतु तत्तुल्या । सत्यम् । कर्मत्वकर्त्तृ-
त्वावस्थाभेदोपाधिकं तत्समानाधिकरणक्रियाया भेदमाश्रित्य
व्यवहारः । कर्मणेति किम् । करणाधिकरणाभ्यां तुल्यक्रिये
पूर्वाक्ते साध्वसिरित्यादौ मा भूत् । किंच । कर्त्तृस्थक्रियेभ्यो मा
भूत् । गच्छति ग्रामः । आरोहति हस्ती । अधिगच्छति शास्त्रार्थः
स्मरति श्रद्धधाति च । यत्र कर्मणि क्रियाकृतो विशेषो दृश्यते । यथा
पक्केषु तंडुलेषु । यथा वा छिन्नेषु काष्ठेषु । तत्र कर्मस्था क्रिया नेतरत्र ।
नाहि पक्कापक्ततंडुलेष्विव गतागतग्रामेषु वैलक्षण्यमुपलभ्यते ।
करोतिरुत्पादनार्थः । उत्पत्तिश्च कर्मस्था । तेन कारिष्यते घट
इत्यादि । यत्नार्थत्वे तु नैतत् सिद्धचेत् । ज्ञानेच्छादिवद्यत्नस्य
कर्त्तृस्थत्वात् । एतेनानुव्यवस्यमानेऽर्थे इति व्याख्यातम् । कर्त्तृस्थ-
त्वेन यगभावाच्छचनि कृते ओलोपे च रूपसिद्धेः ताच्छील्यदा-
वयं चानश् नत्वात्मनेपदम् इति ॥

सकर्मकाणां प्रतिषेधो वक्तव्यः * ॥

अन्योऽन्यं स्पृशतः । अजा ग्रामं नयति ॥

दुहिपच्योर्बहुलं सकर्मकयोरिति वाच्यम् * ॥

न दुहस्तुनमां यक्चिणौ ३ । १ । ८९ ॥

एषां कर्मकर्त्तारि यक्चिणौ न स्तः । दुहेरनेन यक् एव निषेधः ।
चिण् तु विकल्पिष्यते । शप् । लुक् । गौः पयो दुग्धे ॥

अचः कर्मकर्त्तारि ३ । १ । ६२ ॥

अजंतात् च्लेश्चिण्वा कर्मकर्त्तारि तशब्दे परे । अकारि अकृत ॥

दुहश्च ३ । १ । ६३ ॥

अदोहि । पक्षे क्सः । लुग्वेति पक्षे लुक् । अदुग्ध अधुक्षत ।
उदुंवरः फलं पच्यते । सृजियुज्योः श्यंस्तु अनयोः सकर्मकयोः ।
कर्त्ता बहुलं कर्मवत् यगपवाद्श्च श्यन्वाच्य इत्यर्थः ॥

सृजेः श्रद्धोपपन्ने कर्त्तर्य्येवेति वाच्यम् ❀ ॥

सृज्यते स्रजं भक्तः । श्रद्धया निष्पादयतीत्यर्थः । असृजि ।
युज्यते ब्रह्मचारी योगम् ॥

भूपाकर्मकिरादिसनां चान्यत्रात्मनेपदात् ❀ ॥

भूपावाचिनां किरादीनां सन्नन्तानां च यक्चिणौ चिण्वदिट्
च नेति वाच्यमित्यर्थः । अलंकुरुते कन्या । अलमकृत । अवकिरते
हस्ती । अवाकीर्षे । गिरते । अगीर्षे । आद्रियते । आहत । किरा-
दिस्तुदाद्यन्तर्गणः । चिकीर्षते कटः । अचिकीर्षिष्ट । इच्छायाः
कर्तृस्थत्वेऽपि करोतिक्रियापेक्षामिह कर्मस्थक्रियत्वम् ॥

न रुधः ३ । १ । ६४ ॥

अस्माच्च्लेश्चिण्ण । अवारुद्ध गौः । कर्मकर्त्तारित्येव । अवारोधि
गौर्गोपेन ॥

तपस्तपःकर्मकस्यैव ३ । १ । ८८ ॥

कर्त्ता कर्मवत् । विध्यर्थमिदम् । एवकारस्तु व्यर्थ एवेति वृत्त्य-
नुसारिणः । तप्यते तपस्तापसः । अर्जयतीत्यर्थः । तपोऽनुतापे
च इति चिण्निषेधात्सिच् । अतप्त । तपःकर्मकस्य इति किम् । उत्त-
पति सुवर्णं सुवर्णकारः । न दुहस्तुनमां यक्चिणौ । मस्तुते । प्राप्ता-

विष्ट प्राप्तोष्ट । नमते दण्डः । अनस्त । अन्तर्भावितण्यर्थोऽत्र नमिः ॥

यक्चिणोः प्रतिपेधे हेतुमणिश्रिन्नूभामुपसंख्या-
नम् ॐ ॥

कारयते । अचीकरत । उच्चयते दण्डः । उदशिश्चियत । चि-
ष्वदिद् तु स्यादेव । कारिष्यते । उच्चयिष्यते । ब्रूते कथा । अबो-
चत । मारद्वाजीयाः पठन्ति ॥

णिश्रन्थिग्रन्थिन्नूभात्मनेपदाकर्मकाणामुपसंख्या-
नम् ॐ ॥

पुच्छमुदस्याति । उत्पुच्छयते गौः । अन्तर्भावितण्यर्थतायाम् ।
उत्पुच्छयते गाम् । पुनः कर्तृत्वविवक्षायाम् । उत्पुच्छयते गौः ।
उदपुच्छत । यक्चिणोः प्रतिपेधाच्छप्चडौ । श्रन्थिग्रन्थयोराधृपी-
यत्वाणिजभावपक्षे ग्रहणम् । ग्रन्थति ग्रन्थम् । श्रन्थति मेखलां
देवदत्तः । ग्रन्थते ग्रंथः । अग्रंथिष्ट । श्रन्थते । अश्रन्थिष्ट । क्रियादि-
कयोस्तु श्रन्थीते । ग्रन्थीते स्वयमेव । विकुर्वते सैन्धवाः । वल्गंती-
त्यर्थः । वेः शब्दकर्मणः अकर्मकाच्च इति तद्ध् । अन्तर्भावित-
ण्यर्थस्य पुनः प्रेषणत्यागे । विकुर्वते सैन्धवाः । व्यकारिष्ट । व्यका-
रिपाताम् । व्यकारिपत । व्यकृत । व्यकृपाताम् । व्यकृपत ॥

कुपिरञ्जोः प्राचां श्यन् परस्मैपदं च ३ । १ । ९० ॥

अनयोः कर्मकर्तारि न यक् किंतु श्यन् परस्मैपदं च । आत्मनेप-
दापवादः । कुप्यति कुप्यते पादः । रज्यति रज्यते वस्त्रम् । यग-
विषये तु नास्य प्रवृत्तिः । कोपिपीष्ट । रङ्गीष्ट ॥

इति ८३ अंशाः । इति कर्मकर्तृप्रकरणम् ॥

अथ कृतां शेषः । वसेस्तव्यकर्तारि णिच् । वसतीति वास्तव्यः ।
पचेलिमा भाषाः पक्तव्याः । भिदेलिमाः सरलाः भेत्तव्याः । कर्मणि
केलिमर् प्रत्ययः । वृत्तिकारस्तु कर्मकर्तारि चायमिष्यते इत्याह
तद्भाष्याविरुद्धम् ॥

कृत्यचः ८ । ४ । २९ ॥

उपसर्गस्थान्निमित्तात्परस्याच उत्तरस्य कृत्यस्य नस्य णत्वम्
प्रयाणीयम् । अचः किम् । प्रमन्नः ॥

निर्विण्णस्योपसंख्यानम् ❀ ॥

अचः परत्वाभावान्नकारेण व्यवधानाद्यप्राप्ते वचनम् । परस्
णत्वम् । पूर्वस्य घृत्वम् । निर्विण्णः ॥

णेर्विभाषा ८ । ४ । ३० ॥

उपसर्गस्थान्निमित्तात्परस्य ण्यन्तादिहिंसा यः कृत्यस्य
नस्य णो वा । प्रयापणीयम् प्रयापनीयम् । रिहितविशेषणं किम्
यका व्यवधाने यथा स्यात् । प्रयाप्यमाणं षड्य । णत्वे हु उपा
गत्वं न इत्युक्तम् । दुर्यान्म् । दुर्यापनम् ॥

हलश्चेजुपधात् ८ । ४ । ३१ ॥

हलादेरिजुपधात्कृत्स्नस्याचः परस्य णो वा । प्रकोपणीयम् प्रकोप-
नीयम् । हलः किम् । प्रोहणीयम् । इजुपधात् किम् । प्रपणीयम् ॥

इजादेः सनुमः ८ । ४ । ३२ ॥

सनुमश्चेद् भवति तर्हि इजादेर्हलन्तादिहिंसा यः कृत्यस्यैव ।
प्रेङ्गणीयम् । इजादेः किम् । मगि समर्पणं । प्रमङ्गनीयम् । नुम-
ग्रहणमनुस्वारोपलक्षणम् । अट्कुप्वाद् इति सूत्रेऽप्येवम् । तेनेह न ।
प्रेन्वनम् । इह तु स्यादेव । प्रोम्भणम् ॥

वा निसनिक्षनिन्दाम् ८ । ४ । ३३ ॥

एपां नस्य णो वा कृति परे । प्रणिमितव्यम् प्रनिमितव्यम् ॥

न भाभूपूकमिगमिप्यायीवेपाम् ८ । ४ । ३४ ॥

एभ्यः कृत्स्नस्य णो न । प्रभार्नीयम् प्रभर्नीयम् । पृत्र एवेह
ग्रहणमिष्यते । पृडस्तु प्रवपणीयः सोमः ॥

ण्यन्तभादीनामुपसंख्यानम् ❀ ॥

प्रभापनीयम् । कशानः शस्य यो वा इत्युक्तम् । णत्वप्रकर्णोपरि

तद्बोधयम् । यत्त्वस्यासिद्धत्वेन शकारव्यवधानान्न णत्वम् । प्रख्यानी-
यम् । कृत्यल्युटो बहुलम् । स्नान्त्यनेन स्नानीयं चूर्णम् । दीयतेऽस्मै
दानीयो विप्रः । अचो यत् । चेयम् । जेयम् । अजग्रहणं शक्यम-
कर्तुम् । योगविभागोऽप्येवम् । तव्यदादिष्वेव यतोऽपि सुपठत्वात् ॥

ईद्यति ६ । ४ । ६५ ॥

यति पर आत ईत् । गुणः । देयम् ॥

क्षय्यजय्यौ शक्यार्थे ६ । १ । ९१ ॥

निपात्येते । अन्यत्र । क्षेयम् । जेयम् ॥

क्रय्यस्तदर्थे ३ । १ । ८२ ॥

क्रेतारः क्रीणीयुरिति बुद्ध्या आपणे प्रसारितं क्रय्यम् क्रेयमन्यत् ।
ग्लेयम् ॥

तकिशसिचतियतिजनिभ्यो यद्वाच्यः ❀ ॥

तक्यम् । शस्यम् । चत्यम् । यत्यम् । जन्यम् । जनेर्यद्विधिः
स्वार्थः । ण्यताऽपि रूपसिद्धेः । नच वृद्धिप्रसङ्गः । जनिवध्योश्च
इति निषेधात् ॥

हनो वा यद्धश्च वक्तव्यः ❀ ॥

वध्यः । पक्षे वक्ष्यमाणो ण्यत् । घात्यः । पोरदुपधात् । शप्यम् ।
लभ्यम् ॥

नानुबन्धकृतमसारूप्यम् ॥

अतो न ण्यत् । तव्यदादयस्तु स्युरेव ॥

आडो यि ७ । १ । ६५ ॥

आडः परस्य लभेर्नुम् यादौ प्रत्यये विवक्षिते । नुमि कृतेऽदुप-
धत्वाभावात् ण्यदेव । आलम्भ्यो गौः ॥

उपात्प्रशंसायाम् ७ । १ । ६६ ॥

उपलम्भ्यः साधुः । स्तुतौ किम् । उपलब्धुं शक्य उपलम्भ्यः ॥

शकिसहोश्च ३ । १ । ८८ ॥

शक्यम् । सह्यम् ॥

गदमदचरयमश्चानुपसर्गे ३ । १ । १०० ॥

गद्यम् । मद्यम् । चर्यम् ॥

चरेराडिः चागुरौ ❀ ॥

आचार्यो देशः । गन्तव्य इत्यर्थः । अगुरौ किम् । आचार्यो गुरुः । यमेर्नियमार्थम् । सोपसर्गान्मा भूदिति । प्रयाम्यम् । निपूर्वात्स्या-
देव । तेन न तत्र भवेद्विनियम्यम् इति वार्तिकप्रयोगात् । एतेन
अनियम्यस्य नायुक्तिः । त्वया नियम्या ननु दिव्यचक्षुषा इत्यादि
व्याख्यातम् । नियमे साधुरिति वा ॥

अवद्यपण्यवर्यागर्ह्यपणितव्या निरोधेषु ३ । १ । १०१ ॥

वदेर्नञ्युपपदे वदः सुपि इति यत्क्यपोः प्राप्तयोर्यदेव सोऽपि
गर्हायामेवेत्युभयार्थं निपातनम् । अवद्यं पापम् । गर्ह्यं किम् ।
अनुद्यं गुरुनाम । तद्धि न गर्ह्यं वचनानर्हं च । आत्मनाम गुरोर्नाम
नामातिकृपणस्य च । श्रेयस्कामी न गृह्णीयाज्ज्येष्ठापत्यकलत्रयोः ॥
इति स्मृतेः । पण्या गौः । व्यवहर्तव्येत्यर्थः । पाण्यमन्यत् । स्तुत्य-
र्हमित्यर्थः । अनिरोधोऽप्रतिबन्धस्तस्मिन्विषये वृडो यत् । शतेन
वर्या कन्या । वृत्याऽन्या ॥

वह्यं करणम् ३ । १ । १०२ ॥

वहन्त्यनेनेति वह्यं शकटम् । करणं किम् । बाह्यम् । वोढव्यम् ॥

अर्यः स्वामिवैश्ययोः ३ । १ । १०३ ॥

ऋ गतो अस्माद्यत् । ण्यतोऽपवादः । अर्यः स्वामी वैश्यो वा ।
अनयोः किम् । आर्यो ब्राह्मणः । प्राप्तव्य इत्यर्थः ॥

उपसर्या काल्याप्रजने ३ । १ । १०४ ॥

गर्मग्रहणे प्राप्तकाला चेदित्यर्थः । उपसर्या गौः । गर्माधानार्थं
वृषभेणोपगन्तुं योग्येत्यर्थः । प्रजने काल्या इति किम् । उपसर्या
काशी । प्राप्तव्येत्यर्थः ॥

अजर्य संगतम् ३ । १ । १०६ ॥

नञ्पूर्वाज्जीर्यतेः कर्त्तरि यत्संगतं चेद्विशेष्यम् । न जीर्यतीत्यज-
र्यम् । तेन संगतमार्येण रामाजर्यं कुरु द्रुतम् । इति भट्टिः ।
मृगैरजर्यं जरसोपदिष्टमदेहवन्धाय पुनर्वबन्ध । इत्यत्र तु संगतामिति
विशेष्यमध्याहार्यम् । संगतं किम् । अजरीता कम्बलः । भावे तु
संगतकर्तृकेऽपि ण्यदेव । अजार्य संगतेन ॥

वदः सुपि क्यप् च ३ । १ । १०६ ॥

उत्तरसूत्रादिह भाव इत्यपकृष्यते । वदेर्भावे क्यस्याच्चाद्यदनु-
पसर्गे सुप्युपपदे । ब्रह्मोद्यम् । ब्रह्मवद्यम् । ब्रह्म वेदः तस्य वदनमि-
त्यर्थः । कर्मणि प्रत्ययावित्येके । उपसर्गे तु ण्यदेव । अनुवाद्यम् ।
अपवाद्यम् ॥

भुवो भावे ३ । १ । १०० ॥

क्यप् स्यात् । ब्रह्मणो भावो ब्रह्मभूयम् । सुपीत्येव । भव्यम् ।
अनुपसर्गे इत्येव । प्रभव्यम् ॥

हनस्त च ३ । १ । १०८ ॥

अनुपसर्गे सुप्युपपदे हन्तेर्भावे क्यप् स्यात्कारश्चान्तादेशः ।
ब्रह्मणो हननं ब्रह्महत्या । स्त्रीत्वं लोकात् ॥

एतिस्तुशास्वृहृजुपः क्यप् ३ । १ । १०९ ॥

एभ्यः क्यप् । ह्रस्वस्य पिति कृति तुक् । इत्यः । स्तुत्यः । शास
इदङ्गहलोः । शिष्यः । वृ इति वृञो ग्रहणं न वृङ् । वृत्यः ।
वृङ्स्तु वार्या ऋत्विजः । आहत्यः । जुष्यः । पुनः क्यवुक्तिः
परस्यापि ण्यतो वाधनार्था । अबश्यस्तुत्यः । शंसिदुहिगुहिभ्यो
वा इति काशिका । शस्यं शंस्यम् । दुह्यं दोह्यम् । गुह्यं गोह्यम् ।
मशस्यस्य श्रः । ईडवन्दवृशंसदुहां ण्यतः इति सूत्रद्वयवलाच्छंसेः
सिद्धम् । इतरयोस्तु मूलं मृग्यम् ॥

आङ्पूर्वादेशैः संज्ञायामुपसंख्यानम् ❀ ॥

अञ्जू व्यक्तिप्रक्षणादिषु । बाहुलफात्करणे क्यप् । आनिदि-
ताम् इति नलोपः । आज्यम् । ऋदुपधाच्चाहूपिचृतेः । वृत् वृत्यम् ।
वृध् वृध्यम् । क्लृपिचृत्योस्तु । कल्प्यम् । चर्त्यम् । तपरकरणं किम् ।
कृत् कीर्त्यम् । अनित्यण्यन्ताश्चरादय इति णिजभावे ण्यत् ।
णिजन्तात्तु यदेव ॥

ई च खनः ३ । १ । १११ ॥

चात्क्यप् । आह्वणः । खेयम् । इ च इति ह्रस्वः सुपठः ॥

भृभोऽसंज्ञायाम् ३ । १ । ११२ ॥

भृत्याः कर्मकराः । भर्तव्या इत्यर्थः । क्रियाशब्दोऽयं नतु संज्ञा ।
समश्च बहुलम् । संभृत्याः संभार्याः । असंज्ञायामेव विकल्पार्थमिदं
वार्तिकम् । असंज्ञायां किम् । भार्या नाम क्षत्रियाः । अथ कथं
भार्या बधूरिति । इह हि संज्ञार्यां समज इति क्यपा भाव्यम् । संज्ञा-
पर्युदासस्तु पुंसि चरितार्थः । सत्यम् । विभर्तः भू इति दीर्घान्तात्प्रचा-
देर्वा ण्यत् । क्यप् तु भरतेरेव । तदनुबन्धकग्रहणे इति परिभाषया ॥

मृजेर्विभाषा ३ । १ । ११३ ॥

मृजेः क्यच्चा । पक्षे ण्यत् । मृज्यः । चजोः कुधिण्यतोः ॥

निष्ठायामनिट इति वक्तव्यम् ❀ ॥

तेनेह न । गर्ज्यम् । मृजेर्वृद्धिः । मार्ग्यः ॥

न्यङ्कादीनां च ७ । ३ । ५३ ॥

कुत्वम् । न्यङ्कुः । नावञ्चैः इत्युप्रत्ययः ॥

राजसूयसूर्यमृषोद्यरुच्यकुप्यकृष्टपच्याव्यथ्याः

३ । १ । ११४ ॥

एते सप्त क्यवन्ता निपात्यन्ते । राज्ञा सोतव्योऽभिषवद्वारा
निष्पादायितव्यः । यद्वा । लतात्मकः सोमो राजा । स सूयते क-
ण्डचतेऽत्रेत्यधिकरणे क्यन्निपातनादीर्घः । राजसूयः राजसूयम् ।
अर्धर्चादिः । सरत्याकाशे सूर्यः । कर्त्तारि क्यन्निपातनादुत्वम् ।

यद्वा । पू भ्रैरणे । हुदादिः । सुवति । कर्मणि लोकं भ्रैरयति ।
 क्यपो रुद्र । मृषोपपदाद्देः कर्मणि नित्यं क्यप् । मृषोद्यम् ।
 विशेष्यनिघ्नोऽयम् । उच्छ्रायसौन्दर्यगुणा मृषोद्याः । रोचते रु-
 च्यः । गुपेरादेः कुत्वं च संज्ञायाम् । सुवर्णरजतमित्रं धनं कुप्यम् ।
 गोप्यमन्यत् । कृष्टे स्वयमेव पच्यन्ते कृष्टपच्याः कर्मकर्त्तरि । शुद्धे
 तु कर्मणि कृष्टपाक्याः । न व्यथतेऽव्यथ्यः ॥

भिव्योद्धयौ नदे ३ । १ । ११५ ॥

भिवेरुज्जेश्च क्यप् उज्जेश्चर्त्वं च । भिनत्ति कूलं भियः । उज्ज-
 त्पुदकमुद्धयः । नदे किम् । भेत्ता । उज्जिता ॥

पुष्यसिध्यौ नक्षत्रे ३ । १ । ११६ ॥

अधिकरणे क्यन्निपात्यते । पुष्यन्त्यस्मिन्नर्थाः पुष्यः । सिध्य-
 न्त्यस्मिन्सिध्यः ॥

इति ८४ अंशाः ।

विपूयविनीयजित्या मुञ्जकल्कहलिषु ३ । १ । ११७ ॥

पृञ्जनीञ्जिभ्यः क्यप् । विपूयो मुञ्जः । रज्ज्वादिकरणाय शो-
 धयितव्य इत्यर्थः । विनीयः कल्कः । पिष्ट औषधविशेष इत्यर्थः ।
 पापमिति वा । जित्यो हलिः । बलेन क्रष्टव्य इत्यर्थः । कृष्टसमी-
 करणार्थं स्थूलकाष्ठम् । अन्यत्तु । विपव्यम् । विनेयम् । जेयम् ॥

प्रत्यपिभ्यां ग्रहेः ३ । १ । ११८ ॥

छन्दसीति वक्तव्यम् ❀ ॥

प्रतिगृह्यम् । अपिगृह्यम् । लोके तु । प्रतिग्राह्यम् । अपिग्राह्यम् ॥

पदास्वैरिवाद्यापक्ष्येषु च ३ । १ । ११९ ॥

अवगृह्यम् । प्रगृह्यं पदम् । अस्वैरी परतन्त्रः । गृह्यकाः शुकाः ।
 पञ्जरादिबन्धनेन परतन्त्रीकृता इत्यर्थः । वाद्यायाम् । ग्रामगृह्या
 सेना । ग्रामवाहिर्भूतेत्यर्थः । स्त्रीलिङ्गनिर्देशात्पुत्रपुंसकयोर्न । पक्षे

भवः पक्ष्यः । दिगादित्वाद्यत् । आर्यैर्गृह्यत आर्यगृह्यः । तत्पक्षा-
श्रित इत्यर्थः ॥

विभाषा कृवृपोः ३ । १ । १२० ॥

क्यप् । कृत्यम् । वृष्यम् । पक्षे ऋहलोर्ण्यत् । कार्यम् । वर्ण्यम् ॥

युग्यं च पत्रे ३ । १ । १२१ ॥

पत्रं बाहनम् । युग्यो गौः । अत्र क्यप् कुत्वं च निपात्यते ॥

अमावस्यदन्यतरस्याम् ३ । १ । १२२ ॥

अमोपपदाद्दसेराधिकरणे ण्यत् । वृद्धौ सत्यां पाक्षिको ह्रस्वश्च
निपात्यते । अमा सह वसतोऽस्यां चन्द्रार्कविभाषास्या अमावस्या ।
ऋहलोर्ण्यत् । चजोः इति कुत्वम् । पाक्यम् ॥

पाणौ सृजेर्ण्यद्वाच्यः ❀ ॥

ऋदुपधलक्षणस्य क्यपोऽपवादः । पाणिभ्यां सृज्यते पाणिस-
र्ग्या रज्जुः ॥

समवपूर्वाच्च ❀ ॥

समवसर्ग्या ॥

न षादेः ७ । ३ । ६९ ॥

षादेर्धातोश्चजोः कुत्वं न । गर्ज्यम् । वार्तिककारस्तु चजोः इति
सूत्रे निष्ठायां निटः इति पूरयित्वा न षादेः इत्यादि प्रत्याचर्या ।
तेन अर्जितर्जिप्रभृतीनां न कुत्वं निष्ठायां सेदत्वात् । गृचुग्लुचुप्र-
भृतीनां तु षादित्वेऽपि कुत्वं स्यादेव । सूत्रमते तु यद्यपि विपरीतं
मासं तथापि यथोत्तरं मुनीनां प्रामाण्यम् ॥

अजिवृज्योश्च ७ । ३ । ६० ॥

न कुत्वम् । समाजः । परिव्राजः ॥

भुजन्वुञ्जौ पाण्युपतापयोः ७ । ३ । ६१ ॥

एतयोरेतौ निपात्यौ । भुज्यतेऽनेनेति भुजः पाणिः । इलश्च

इति घञ् । न्युब्जन्त्यस्मिन्निति न्युब्जः । उपतापो रोगः । पाण्यु-
पतापयोः किम् । भोगः समुद्रः ॥

प्रयाजानुयाजौ यज्ञाङ्गे ७ । ३ । ६२ ॥

एतौ निपात्यौ यज्ञाङ्गे । पञ्च प्रयाजाः । त्रयोऽनुयाजाः । यज्ञाङ्गे
किम् । प्रयागः । अनुयागः ॥

वश्वेर्गतौ ७ । ३ । ६३ ॥

कुत्वं न । वश्यम् । गतौ किम् । वङ्ग्यं काष्ठम् । कुटिलीकृत-
मित्यर्थः ॥

ओक उचः के ७ । ३ । ६४ ॥

उचेर्गुणकृत्वे निपात्येते के परे । ओक' शकुन्तवृपलौ । इगुप-
धलक्षणः कः । घञा सिद्धे अन्तोदात्तार्थमिदम् ॥

प्य आवश्यके ७ । ३ । ६५ ॥

कुत्वं न । अवश्यपाच्यम् । लुम्पेदवश्यमः । कृत्ये तुं काममनसो-
रपि । समो वा हितततयोर्मासस्य पचि युद्धघ्नोः । कर्तुकामः ।
कर्तुमनाः । सहितं संहितम् । मास्पचनी मास्पाकः ॥

यज्याचरुचप्रवचर्चश्च ७ । ३ । ६६ ॥

प्ये कुत्वं न । चाज्यम् । याच्यम् । रोच्यम् । प्रवाच्यं ग्रन्थ-
विशेषः । ऋच अर्च्यम् । ऋद्धुपधत्वेऽप्यत एव ज्ञापकाण्यत् । त्य-
जेश्च त्याज्यम् । त्यजिपूज्योश्च इति काशिका । तत्र पूजेर्ग्रहणं
चिन्त्यं भाष्यानुक्तत्वात् ॥

प्यत्प्रकरणे त्यजेरुपसंख्यानम् ॐ ॥

इति हि भाष्यम् ॥

वचोऽशब्दसंज्ञायाम् ७ । ३ । ६७ ॥

वाच्यम् । शब्दाख्याया तु वाक्यम् ॥

प्रयोज्यनियोज्यौ शक्यार्थे ७ । ३ । ६८ ॥

प्रयोक्तुं शक्यः प्रयोज्यः । नियोक्तुं शक्यो नियोज्यो भृत्यः ॥

भोज्यं भक्ष्ये ७ । ३ । ६९ ॥

भोग्यमन्यत् ॥

ण्यत्प्रकरणे लपिदभिभ्यां चेति वक्तव्यम् ❀ ॥

लाप्यम् । दभिर्धातुष्वपठितोऽपि वार्तिकबलात् स्वीकार्यः ।
दाभ्यः । ओरावश्यके । लाप्यम् । पाप्यम् ॥

आसुयुवपिरपित्रपिचमश्च ३ । १ । १२६ ॥

पुञ् । आसाप्यम् । यु मिश्रणे । याप्यम् । वाप्यम् । राप्यम् ।
त्राप्यम् । चाप्यम् ॥

आनाय्योऽनित्ये ३ । १ । १२७ ॥

आङ्पूर्वात्प्रयतेर्ण्यदायादेशश्च निपात्यते । दक्षिणाग्निविशेष
एवेदम् । स हि गार्हपत्यादानीयतेऽनित्यश्च सततमप्रज्वलनात् ।
आनियोऽन्यः घटादिः । वैश्यकुलादेरानीतो दक्षिणाग्निश्च ॥

प्रणाय्योऽसंमतौ ३ । १ । १२८ ॥

संमतिः प्रीतिविपर्ययभवनं कर्म व्यापारः । तथा भोगेष्वदरोऽपि
संमतिः । प्रणाय्यश्चोरः । प्रीत्यनर्ह इत्यर्थः । प्रणाय्योऽन्तेवासी ।
विरक्त इत्यर्थः । प्रणयोऽन्यः ॥

पाय्यसांनाय्यनिकाय्यधाय्या मानहविर्निवाससामिधे-
नीषु ३ । १ । १२९ ॥

मीयतेऽनेन पाय्यं मानम् । ण्यद्धात्वादेः पत्वं च । आतो युक्
इति युक् । सम्यक् नीयते होमार्थमग्निं प्रतीति सांनाय्यं हविर्विशेषः ।
ण्यदायादेशः समो दीर्घश्च निपात्यते । निचीयतेऽस्मिन्धान्यादिकं
निकाय्यो निवासः । अधिकरणे ण्यत् आयो धात्वादेः कुत्वं च
निपात्यते । धीयतेऽनया समिदिति धाय्या ऋक् ॥

ऋतौ कुण्डपाय्यसंचाय्यौ ३ । १ । १३० ॥

कुण्डेन पीयतेऽस्मिन्सोमः कुण्डपाय्यः ऋतुः । संचीयतेऽसौ
संचाय्यः ॥

अग्नौ परिचाय्योपचाय्यसमूह्याः ३ । १ । १३१ ॥

अग्निधारणार्थं स्थलविशेष एते साधवः । अन्यत्र तु । परिचेयम् । उपचेयम् । संवाद्यम् ॥

चित्याग्निचित्ये च ३ । १ । १३२ ॥

चीयतेऽसौ चित्योऽग्निः । अग्नेश्चयनमग्निचित्या ॥

प्रैपातिसर्गप्राप्तकालेषु कृत्याश्च ❀ ॥

त्वया गन्तव्यं गमनीयं गम्यम् । इह लाटा वाधा मा भूदिति पुनः कृत्याविधिः । स्याधिकारादूर्ध्वं वासरूपविधिः । कचिन्न इति ज्ञापयति । तेन क्तल्युद्गतुमुत्त्वलथेषु न इति सिद्धम् । अहं कृत्यवचश्च । स्तोतुमर्हः स्तुत्यः । स्तुतिकर्मस्तोता स्तुतिकर्ता । लिङा वाधा मा भूदिति कृत्यवचोर्विधिः ॥

भव्यगेयप्रवचनीयोपस्थानीयजन्याप्लाव्यापात्या वा ३ । ४ । ६८ ॥

एते कृत्यान्ताः कर्तरि वा निपात्यन्ते । पक्षे तयोरेवेति सकर्मकात्कर्माणि अकर्मकात्तु भावे ज्ञेयाः । भवतीति भव्यः भव्यमनेन वा । गायतीति गेयः साम्नामयं गेयं सामानेन वा इत्यादि । शक्ति लिङ् च । चात्कृत्याः । वोढुं शक्यो वोढव्यः । वहनीयो वाह्यः । लिङा वाधा मा भूदिति कृत्योक्तिः । लाघवाद्देनेनैव ज्ञापनसंभवे प्रैपादिसूत्रे कृत्याश्च इति सुत्यजम् । अहं कृत्यवचोर्ग्रहणं च इति कृत्यप्रकरणम् । ष्वुल्वचौ कर्तरि कृत् इति कर्त्रर्थे । युवोरनाकौ । कारकः कर्ता । वोढुमर्हो वोढा । कारिका कर्त्रा । गांकुटा इति डिच्च्म् । कुटिता । अङ्गिणदित्युक्तेर्न डिच्च्म् । कोटकः । विज इद् । विजिता । हनस्तोऽचिष्णलोः । घातकः । आतो युक् । दायकः । नोदात्तोपदेशस्य इति न वृद्धिः । शमकः । दमकः । अनिटस्तु नियामकः । जनिवध्योश्च । जनकः । वध हिंसायाम् । वधकः । रधिजमोरधि । रंधकः । जम्भकः । नेटचलिटि रधेः । रधिता रद्धा । मस्तिजनशोः इति तुम् । मङ्गा । नंष्टा नाशिता । रभेरशब्दिलोः । रम्भकः रब्धा । लभेश्च ।

लम्भकः लब्धा । तीपसह । एपिता एष्टा । सहिता सोढा । दरि-
द्रातेरालोपः । दरिद्रिता । ण्युलि न । दरिद्रायकः । कृत्यल्युटः इत्येव
सूत्रमस्तु । यत्र विहितास्ततोऽन्यत्रापि स्युरित्यर्थात् । एवं च षड्-
लग्नहणं योगविभागेन कृन्मात्रस्यार्थव्यभिचारार्थम् । पादाभ्यां
ह्रियते पादहारकः । कर्मणि ण्युल् ॥

क्रमेः कर्तर्यात्मनेपदविपयात्कृत इण्निपेधो वाच्यः ॥

प्रकन्ता । कर्तरि इति किम् । प्रक्रमितव्यम् । आत्मनेपद इति
किम् । संक्रमिता । अनन्यभावो विषयशब्दः । तेन अनुपसर्गाद्वा
इति विकल्पाहस्य न निपेधः । क्रमिता । तदर्हत्वमेव तद्विषय-
त्वम् । तेन क्रन्तेत्यपीति केचित् । गमेरिद् इत्यत्र परस्मैपदग्रहणं
तडानयोरभावं लक्षयति । संजिगमिपिता । एवं न वृद्धचश्चतुर्भ्यः ।
विवृत्सिता । तडन्ताण्युल् । अलोपस्य स्थानिवत्त्वान्न वृद्धिः ।
पापचकः । यद्भ्रुगन्तात्तु । पापाचकः ॥

इति ८५ अंशाः ।

नन्दिग्राहिपचादिभ्यो ल्युणिन्यचः । नन्दयतीति नन्दनः ।
जनमर्दयतीति जनार्दनः मधुसूदनः । विशेषेण भीषयतीति विभी-
षणः । लवणः । नन्द्यादिगणे निपातनाण्णत्वम् । ग्राही । स्थायी ।
मन्त्री । विशयी । वृद्धचभावो निपातनात् । विषयी । इह पत्व-
मपि । परिभावी परिभवी । पाक्षिको वृद्धचभावो निपात्यते । पचा-
दिराकृतिगणः । शिवशमरिष्टस्य करे, कर्मणि घटो ठच् इति सूत्रयोः
करोतेर्घटेश्चाच्चयोगात् । अच्प्रत्यये परे यद्भ्रुग्विधानाच्च । अतः
सर्वधातुभ्योऽच् । केपांचित् पाठस्त्वनुबन्धासंजनार्थः । केपांचित्प्र-
पञ्चार्थः । केपांचिद्वाधकवाधनार्थः । पचतीति पचः । नदद् चोर्द्
देवद् इत्यादयष्टितः । नदी । चोरी । देवी । दीव्यतेः इगुपध इति कः
प्राप्तः । जारभरा । श्वपचा । अनयोः कर्मण्यण् प्राप्तः । न्यङ्कादिपु
पाठाच्चुपाकोऽपि । यडोऽचि च इति लुक् न धातुलोपः इति
गुणवृद्धिनिपेधः । चेक्रियः । नेन्यः । लोलुवः । पोषुवः । मरीसृजः ॥

चरिचलिपतिवदीनां वा द्वित्वमच्याक्चाभ्यासस्येति
वक्तव्यम् ❀ ॥

आगमस्य दीर्घत्वसामर्थ्यादभ्यासह्रस्वो हलादिः शेषश्च न ।
चराचरः । चलाचलः । पतापतः । वदावदः । हन्तेर्घत्वं च । घत्वम-
भ्यासस्योत्तरस्य तु अभ्यासाच्च इति कुत्वम् । घनाघनः । पाटेर्णिलु-
क्चोक्च दीर्घश्चाभ्यासस्य । पाटूपटः । पक्षे चरः । चलः । पतः ।
वदः । हनः । पाटः । रात्रेः कृति इति वा मुमु । रात्रिचरो रात्रि-
चरः । इगुपधज्ञामीक्रिः कः । क्षिपः । लिखः । बुधः । कृञः । ज्ञः ।
प्रीणातीति प्रियः । किरतीति किरः । वासरूपविधिना ण्वुल्लुच्चारणि ।
क्षेपकः । क्षेप्ता । आतश्चोपसर्गे श्याद्वधा इति ण्यम्यापवादः ।
सुगलः । प्रज्ञः ॥

पात्राध्माघेद्दृशः शः ३ । १ । १३७ ॥

पिवतीति पिवः । जिघ्रः । धमः । धयः । धया कन्या । धेद-
ष्टित्वास्तनंधयी इति खशीव डीप्पाप्तः । खशीञ्चन नेप्पते इति
हरदत्तः । पश्यतीति पश्यः । घ्नः संज्ञायां न । व्याघ्रादिभिः इति
निर्देशात् ॥

अनुपसर्गाल्लिम्पविन्दधारिपारिवेद्युदेजिचेतिसाति-
साहिभ्यश्च ३ । १ । १३८ ॥

शः । लिम्पः । विन्दः । धारयः । पारयः । वेदयः । उदेजयः ।
चेतयः । सातिः सुखार्थः । सौत्रो हेतुमण्यतः । सातयः । वासरूपन्या-
येन क्तिणि सात्परमात्मा । सात्वन्तो भक्ताः । पह मर्षणे । चुरादिः
हेतुमण्यन्तो वा । साहयः । अनुपसर्गात् किम् । प्रलिपः ॥

नौ लिम्पेर्वाच्यः ❀ ॥

निलिम्पा देवाः । गवादिषु विन्देः संज्ञायाम् । गोविन्दः ।
अरविन्दः ॥

ददातिदधात्योर्विभाषा ३ । १ । १३९ ॥

शः । ददः । दधः । पक्षे वक्ष्यमाणो णः । अनुपसर्गादित्येव ।
प्रदः । प्रधः ॥

ज्वलितिकसन्तेभ्यो णः ३ । १ । १४० ॥

इतिशब्दः आद्यर्थः । ज्वलादिभ्यः कसन्तेभ्यो णः वा पक्षेऽ-
च् । ज्वालः ज्वलः । चालः चलः । अनुपसर्गादित्येव । उज्ज्वलः ॥

तनोतेरुपसंख्यानम् ❀ ॥

इहानुपसर्गादिति विभाषेति च न संबध्यते । अवतनोतीत्य-
वतानः ॥

श्याद्यधाद्यसंज्ञवतीणवसावह्लिहश्लिपश्वसश्च ३ । १ ।

१४१ ॥

श्यैद्रमभृतिभ्यो नित्यं णः । श्यैडोऽश्वस्यतेश्चादन्तत्वात्सिद्धे
पृथग्रहणमुपसर्गेकं याधितुम् । अवश्यायः । प्रातिश्यायः । आत्
दायः । धायः । व्याधः । छु गती । आद् पूर्वः मंपूर्वश्च । आस्त्रावः ।
संस्त्रावः । अत्यायः । अवसायः । अवहारः । लेहः । श्लेषः । श्वासः ॥

दुन्योरनुपसर्गे ३ । १ । १४२ ॥

णः । दुनोतीति दावः । नीसाहचर्यात्सानुबन्धकाद् दुनोतेरेव
णः । दवतेस्तु पचाद्यच् । दवः । नयतीति नायः । उपसर्गे तु ।
प्रदवः । प्रणयः ॥

विभाषा ग्रहः ३ । १ । १४३ ॥

णो वा पक्षेऽच् । व्यवस्थितविभाषेयम् । तेन जलचरे ग्राहः ।
ज्योतिषि ग्रहः । भवतेश्च इति काशिका । भवो देवः संस्त्राश्च ।
भावाः पदार्थाः । भाष्यमते तु प्राप्त्यर्थोऽपुनरादिष्यन्तादच् । भावः ॥

गेहे कः ३ । १ । १४४ ॥

गेहे कर्तरि ग्रहेः कः । गृह्णाति धान्यादिकमिति गृहम् । ता-
त्स्थ्याद्गृहा दाराः ॥

शिल्पिनि ष्वुन् ३ । १ । १४५ ॥

क्रियाकौशलं शिल्पं तद्वति कर्तारि षुन् । नृतिखनिराङ्गिभ्य
एव । नर्तकः नर्तकी । खनकः खनकी ॥

असि अकेऽने च रञ्जेर्नलोपो वाच्यः ❀ ॥

रजकः रजकी । भाष्यमते तु नृतिखनिभ्यामेव षुन् । रञ्जेस्तु
कुनिशलिपसंज्ञयोः इति कुन् । टाप् । रजिका । पुंयोगे तु । रजकी ॥

गस्थकन् ३ । १ । १४६ ॥

गायतेस्थकन् शिल्पिनि कर्तारि । गायकः ॥

ण्युट् च ३ । १ । १४७ ॥

गायनः । टित्त्वाद्गायनी ॥

हंश्च व्रीहिकालयोः ३ । १ । १४८ ॥

हाको हाडश्च ण्युट् व्रीहौ काले च कर्तारि । जहात्युदकमिति
हायनो व्रीहिः । जहाति भाषानिति हायनो वर्षम् । जिहीति
प्राप्नोतीति वा ॥

प्रसृत्वः समभिहारे वुन् ३ । १ । १४९ ॥

समभिहारग्रहणेन साधुकारित्वं लक्ष्यते । प्रवकः । सरकः । लवकः ।
आशिपि च । जीवतात् जीवकः । नन्दतात् नन्दकः । आशीः प्रयो-
क्तुर्धर्मः आशासितुः । पित्रादेरियमुक्तिः । कर्मण्यण् । कुम्भकारः ।
आदित्यं पश्यतीत्यादावनभिधानान्न । गङ्गाधरभूधरादौ तु कर्मणः
शेषत्वाविवक्षाया पचाद्यच् । एवं च धरतीति धरः । ततो गङ्गाया धर
इति पथीसमास इत्याहुः । परे तु लक्ष्यानुरोधेन पचादिषु विशि-
ष्टपाठकल्पनसामर्थ्यात् 'अणो बाधस्तेन गङ्गा धरतीत्येव विग्रह
इत्याहुः ॥

शीलिकामिभक्ष्याचरिभ्यो णः ❀ ॥

अणोऽपवादार्थं वार्तिकम् । मासशीला । मांसकामा । मासभक्षा ।
कल्याणाचारा ॥

ईक्षिभ्यो च ❀ ॥

मुखप्रतीक्षा । बहुक्षमा ॥

ह्वावामश्च ३ । २ । २ ॥

अण् कापवादः । स्वर्गद्वायः । तन्तुवायः । धान्यमायः ।
आतोऽनुपसर्गे कः । गोदः पार्ष्णित्रम् ॥

कविधौ सर्वत्र संप्रसारणिभ्यो डः ❀ ॥

ब्रह्म जिनाति ब्रह्मज्यः । सर्वत्रग्रहणादातश्चोपसर्गे । आहः । प्रहः ॥

सुपि स्थः ३ । २ । ४ ॥

सुपीति योगो विभज्यते । सुप्युपपदे आदन्तात्कः । दाभ्या
पिबतीति द्विषः । समस्थः । विषमस्थः । ततस्थः । सुपि ति-
ष्ठतेः कः । आरम्भसामर्थ्याद् भावे । आखुनामुत्थानमाखूत्यः ॥

प्रष्टोऽग्रगामिनि ८ । ३ । ९२ ॥

प्रतिष्ठत इति प्रष्टो गौः । अग्रतो गच्छतीत्यर्थः । अग्र इति
किम् । प्रस्थः ॥

अम्बाम्बगोभूमिसव्यापद्वित्रिकुशेकुशङ्कडुमञ्जिपु-
ञ्जिपरमेवर्हिर्दिव्यग्निभ्यः स्थः ८ । ३ । ९७ ॥

स्थः इति कप्रत्ययान्तस्यानुकरणम् । पष्ठचर्थे प्रथमा । एभ्यः
स्थस्य सस्य पः । द्विष्टः । त्रिष्टः । इत ऊर्ध्वं कर्मणि सुपीति द्वयमप्य-
नुवर्तते । तत्राकर्मकेषु सुपीत्यस्य संबन्धः ॥

तुन्दशोकयोः परिमृजापनुदोः ३ । २ । ५ ॥

तुन्दशोकयोः कर्मणोरुपपदयोराम्ब्या कः ॥

आलस्यमुखाहरणयोरिति वक्तव्यम् ❀ ॥

तुन्दं परिमार्ष्टीति तुन्दपरिमृजोऽलसः । शोकापनुदः । मुख-
स्याहर्ता । अलसादन्यत्र तुन्दपरिमार्ज एव । यश्च संसारासार-
त्वोपदेशेन शोकमपनुदति स शोकापनुदः ॥

कप्रकरणे मूलविभुजादिभ्य उपसंख्यानम् ❀ ॥

मूलानि विभुजति मूलविभुजो रथः । आकृतिगणोऽयम् ।
महीध्रः । कुध्रः । गिलतीति गिलः ॥

प्रे दाज्ञः ३ । २ । ६ ॥

दारूपाज्ञानातेश्च प्रोपसृष्टात्कर्मण्युपपदे कः । अणोऽपवादः ।
सर्वप्रदः । पथिप्रज्ञः । अनुपसर्ग इत्युक्तेः प्रादन्यस्मिन्सुपि न कः ।
गोसंप्रदायः ॥

समि रथः ३ । २ । ७ ॥

गोसंख्यः ॥

इति ८६ अंशाः ।

गापोष्टक् ३ । २ । ८ ॥

अनुपसृष्टाभ्यामाभ्या टक् कर्मण्युपपदे । सामगः सामगी ।
उपसर्गे तु सामसङ्गायः ॥

पित्रतेः सुराशीध्वोरिति वाच्यम् ❀ ॥

सुरापी । शीधुपी । अन्यत्र क्षीरपा ब्राह्मणी । सुरा पाति रक्ष-
तीति सुरापा ॥

हरतेरनुद्यमनेऽच् ३ । २ । ९ ॥

अंशहरः । अनुद्यमने किम् भारहारः ॥

शक्तिलाङ्गलाङ्कुशतोमरयष्टिषट्घटीधनुःषु ग्रहेरुप-
संख्यानम् ❀ ॥

शक्तिग्रहः । लाङ्गलग्रहः । सूत्रे च धार्यर्ष्ये । सूत्रग्रहः । यस्तु
सूत्र केवलमुपादत्ते नतु धारयति तत्राणिव । सूत्रग्राहः ॥

वयसि च ३ । २ । १० ॥

उद्यमनार्थं सूत्रम् । कवचहरः कुमारः ॥

आडिः ताच्छील्ये ३ । २ । ११ ॥

पुष्पाण्याहरति तच्छीलः पुष्पाहरः । ताच्छील्ये किम् ।
भाराहारः ॥

अर्हः ३ । २ । १२ ॥

अर्हतेरच् कर्मण्युपपदेऽणोऽपवादः । पृजार्हा ब्राह्मणी ॥

स्तम्बकर्णयो रमिजपोः ३ । २ । १३ ॥

हस्तिसूचकयोरिति वक्तव्यम् ❀ ॥

स्तम्बे रमते स्तम्बेरमो हस्ती । तत्पुरुषे कृति इति हलदन्तात्
इति वा डेरलुक् । कर्णेजपः सूचकः ॥

शमिधातोः संज्ञायाम् ३ । २ । १४ ॥

शम्भवः । शम्बदः । पुनर्धातुग्रहणं बाधकविषयेऽपि प्रवृत्त्य-
र्थम् । कृञो हेत्वादिषु टो भाभृत् । शङ्करा नाम परित्राजिका
तच्छीला ॥

अधिकरणे शेतेः ३ । २ । १५ ॥

खे शेते खशयः ॥

पार्श्वादिषूपसंख्यानम् ❀ ॥

पार्श्वाभ्या शेते पार्श्वशयः । पृष्ठशयः । उदरेण शेते उदरशयः ।
उत्तानादिषु कर्तृषु । उत्तानः शेते उत्तानशयः । अवमूर्धशयः ।
अवनतो मूर्धा यस्य सोऽवमूर्धा । अधोमुखः शेत इत्यर्थः ॥

गिरौ डङ्छन्दसि ❀ ॥

गिरौ शेते गिरिशः । कथं तर्हि, गिरिशमुपचचार प्रत्यहं सा
सुकेशी इति । गिरिरस्यास्तीति विग्रहे लोमादित्वाच्छः ॥

चरेष्टः ३ । २ । १६ ॥

अधिकरण उपपदे । कुरुचरः कुरुचरी ॥

भिक्षासेनादायेषु च ३ । २ । १७ ॥

भिक्षा चरतीति भिक्षाचरः । सेनाचरः । जादायेति ल्यबन्तम् ।

आदायचरः । कथम्, प्रेक्ष्य स्थिता सहचरीम् इति । पचादिषु चर-
डिति पाठात् ॥

पुरोऽग्रतोऽग्रेषु सर्तः ३ । २ । १८ ॥

पुरःसरः । अग्रतःसरः । अग्रमग्रेणाग्रे वा सरतीत्यग्रेसरः ।
सूत्रेऽग्र इत्येदन्तत्वमपि निपात्यते । कथं तर्हि, यूयं तदग्रसरगर्वित-
कृष्णसारम् इति । बाहुलकादिति हरदत्तः ॥

पूर्वे कर्त्तरि ३ । २ । १९ ॥

कर्त्तृवाचिनि पूर्वशब्द उपपदे सर्तेष्टः । पूर्वः सरतीति पूर्वसरः ।
कर्त्तरि किम् । पूर्व देशं सरतीति पूर्वसारः ॥

कृभो हेतुताच्छील्यानुलोम्येषु ३ । २ । २० ॥

एषु द्योत्येषु करोतेष्टः । अतः कृकामि इति सः । यशस्करी
विद्या । श्राद्धकरः । वचनकरः ॥

**दिवाविभानिशाप्रभाभास्करान्तानन्तादिवहुनान्दी-
किंलिपिलिविबलिभक्तिकर्त्तृचित्रक्षेत्रसंख्याजङ्घावाह्वह्य
तद्धनुररुःषु ३ । २ । २१ ॥**

एषु कृलष्टः अहेत्वादावापि । दिवाकरः । विभाकरः । निशाकरः ।
कस्कादित्वात्सः । भास्करः । बहुकरः । बहुशब्दस्य वैपुल्यार्थ
संख्यापेक्षया पृथग्रहणम् । लिपि-लिविशब्दौ पर्यायी । संख्या-
या एककरः । द्विकरः । कस्कादित्वादहस्करः । नित्यं समासेऽनुत्त-
रपदस्थस्य इति पत्वम् । धनुष्करः । अरुष्करः ॥

कियत्तद्बहुषु कृभोऽज्विधानम् ❀ ॥

इति वार्तिकम् । किंनरा । यत्करा । तत्करा । हेत्वादी ढ वाधि-
त्वा परत्वादच् । पुयोगे ङीप् । किंनरी ॥

कर्मणि भृतौ ३ । २ । २२ ॥

कर्मशब्द उपपदे करोतेष्टः भृतौ । कर्मकरो भृतकः । कर्म-
कारोऽन्यः ॥

न शब्दश्लोककलहगाथावैरचाटुसूत्रमन्त्रपदेषु ३।२।२३॥

एषु कृञ्ठो न । हेत्वादिषु प्राप्तः प्रतिपिध्यते । शब्दकार
इत्यादि ॥

स्तम्बशकृतोरिन् ३ । २ । २४ ॥

ब्रीहिवत्सयोरिति वक्तव्यम् ❀ ॥

स्तम्बकरिर्व्रीहिः । शकृत्करिर्वत्सः । ब्रीहिवत्सयोः किम् ।
स्तम्बकारः । शकृत्कारः ॥

हरतेर्दतिनाथयोः पशौ ३ । २ । २५ ॥

दतिनाथयोरुपपदयोर्हञ् इन् पशौ कर्तरि । दतिं हरतीति दति-
हरिः । नाथं नासारज्जुं हरतीति नाथहरिः । पशौ किम् । दति-
हारः । नाथहारः ॥

फलेग्रहिरात्मम्भरिश्च ३ । २ । २६ ॥

फलानि गृह्णाति फलेग्रहिः । उपपदस्य एदन्तत्वं ग्रहेरिन्प्रत्य-
पश्च निपात्यते । आत्मानं विभर्तीति आत्मम्भरिः । आत्मनो मुमा-
गमः । भृञ् इन् । चात्कुक्षिम्भरिः । चान्द्रास्तु आत्मोदरकुक्षिष्विति
पेटुः । ज्योत्स्नाकरम्भमुदरंभरयश्चक्रोराः इति मुरारिः ॥

एजेः खश् ३ । २ । २८ ॥

ण्यन्तादेजेः खश् ॥

अरुर्द्विपदजन्तस्य मुम् ६ । ३ । ६७ ॥

अरुपो द्विपतः अजन्तस्य च मुमागमः खिदन्त उत्तरपदे न
त्वव्ययस्य । शित्वाच्छवादिः । जनमेजयतीति जनमेजयः ॥

वातशुनीतिलशर्षेण्वजधेट्टुदजहातिभ्यः खश् उप-
संख्यानम् ❀ ॥

वातमजा मृगाः ॥

खित्यनव्ययस्य ६ । ३ । ६६ ॥

खिदन्ते परे पूर्वपदस्य ह्रस्वः । ततो मुम् । शुनिंधयः । तिलतुदः ।
शर्धजहा माषाः । शर्धोऽपानशब्दस्तं जहातीति विग्रहः । जहातिर-
न्तर्भावितण्यर्थः ॥

नासिकास्तनयोध्माधेदोः ३ । २ । २९ ॥

अत्र वार्तिकम् ॥

स्तने धेदो नासिकायां ध्मश्चेति वाच्यम् ❀ ॥

स्तनं धयतीति स्तनंधयः । धेदष्टित्वात्स्तनंधयी । नासिकंधमः ।
नासिकंधयः ॥

नाडीमुष्टयोश्च ३ । २ । ३० ॥

एतयोरुपपदयोः कर्मणोध्माधेदोः खश् । यथासंख्यं नेष्यते ।
नाडिंधमः नाडिंधयः । मुष्टिंधमः मुष्टिंधयः ॥

घटीखारीखरीपूपसंख्यानम् ❀ ॥

घटींधमः घटींधय इत्यादि । खारी परिमाणविशेषः । खरी
गर्दभी ॥

उदिकूले रुजिवहोः ३ । २ । ३१ ॥

उत्पूर्वाभ्यां रुजिवहिभ्यां कूले कर्मण्युपपदे खश् । कूलमुद्गज-
तीति कूलमुद्गजः । कूलमुद्ग्रहः ॥

वहाभ्रे लिहः ३ । २ । ३२ ॥

वहः स्कन्धस्तं लेढीति वहंलिहो गौः । अदादित्वाच्छपो लुक ।
खशो ङित्त्वान्न गुणः । अभ्रंलिहो वायुः ॥

परिमाणे पचः ३ । २ । ३३ ॥

प्रस्थंपचा स्थाली । खारीपचः कटाहः ॥

मितनखे च ३ । २ । ३४ ॥

मितंपचा ब्राह्मणी । नखंपचा यवागूः । पचिरत्र तापवाची ॥

विध्वरूपोस्तुदः ३ । २ । ३५ ॥

विधुंतुदः । मुमि कृते संयोगान्तस्य लोपः । अरुंतुदः ॥

असूर्यललाटयोर्दक्षितपोः ३ । २ । ३६ ॥

असूर्यमित्यसमर्थगमासः । दक्षिणा नमः संबंधार् । सूर्य न प-
श्यन्तीत्यसूर्यपश्या राजदाराः । ललाटंतपः सूर्यः ॥

उग्रंपश्येरंमदपाणिधमाश्च ३ । २ । ३७ ॥

एते निपात्यन्ते । उग्रमिति क्रियाप्रियेपणं तस्मिन्नुपपदे दृशेः
खश् । उग्रं पश्यतीत्युग्रंपश्यः । इरोदकं तेन माघति दीप्यतेऽग्नि-
न्धनत्वादिति इरम्मदो मेघज्योतिः । इह निपातनात् श्यन्न । पाणयो
ध्मायंतेऽस्मिन्निति पाणिधमोऽध्वा । अन्धकाराद्यापृत इत्यर्थः ।
तत्र हि सर्पाद्यपनोदनाय पाणयः शब्दन्ते ॥

प्रियवशो वदः खच्च ३ । २ । ३८ ॥

प्रियंवदः । वशंवदः ॥

गमेः सुपि वाच्यः ❀ ॥

असंज्ञार्थमिदम् । मितंगमो हस्ती ॥

विहायसो विह इति वाच्यम् । खच्च डिद्धा वाच्यः ❀ ॥

विहंगमः विहंगः । भुजंगमः भुजंगः ॥

द्विपत्परयोस्तापेः ३ । २ । ३९ ॥

खच्च ॥

खचि ह्रस्वः ६ । ४ । ९४ ॥

खचूपरे णौ उपधाया ह्रस्वः । द्विपन्तं परं वा तापयतीति द्विपं-
तपः । परंतपः । घटघटीग्रहणाद्विद्वविशिष्टपरिभाषाऽनित्या । तेनेह
न । द्विपतीं तापयतीति द्विपतीतापः ॥

इति ८७ अंशाः ।

वाचि यमो व्रते ३ । २ । ४० ॥

वाक्शब्द उपपदे यमेः खच्च व्रते गम्ये ॥

वाचंयमपुरंदरो च ६ । ३ । ६९ ॥

वायपुरोरमन्तत्वं निपात्यते । वाचंयमो मौनव्रती । व्रते किम् ।
अशक्त्यादिना वाचं यच्छतीति वाग्यामः ॥

पूःसर्वयोर्दारिसहोः ३ । २ । ४१ ॥

पुरं दारयतीति पुरंदरः । सर्वसहः । सद्दिग्रहणमसंज्ञार्थम् । भगे
च दारेः इति काशिका । बाहुलकेन लब्धमिदमित्याहुः । भगं
दारयतीति भगंदरः ॥

सर्वकूलाभ्रकरीषेषु कपः ३ । २ । ४२ ॥

सर्वकपः खलः । कूलंकपा नदी । अभ्रंकपो वायुः । करीषंकपा
वात्या ॥

मेघर्तिभयेषु कृभः ३ । २ । ४३ ॥

मेघंकरः । ऋतिकरः । भयंकरः । भयशब्देन तदन्तविधिः ।
अभयंकरः ।

क्षेमप्रियमद्रेऽण् च ३ । २ । ४४ ॥

एषु कृञोऽण् चात् खच् । क्षेमंकरः क्षेमकारः । प्रियंकरः प्रिय-
कारः । मद्रंकरः मद्रकारः । वेति वाच्येऽणग्रहणं हेत्वादि पुटो मा भू-
दिति । कथं तर्हि, अल्पारम्भा क्षेमकरा इति । कर्मणः शेषत्व-
विवक्षायां पचाद्यच् ॥

आशिते भुवः करणभावयोः ३ । २ । ४५ ॥

आशितशब्द उपपदे भवतेः खच् । आशितो भवत्यनेनाशितं-
भव ओटनः । आशितस्य भवनमाशितंभवः ॥

संज्ञायां भृवृजिधारिसहितपिदमः ३ । २ । ४६ ॥

विश्वं विमर्तीति विश्वंभरः विश्वंभरा । रथंतरं साम । इह रथेन
तरतीति व्युत्पत्तिमात्रं न त्ववयवार्थानुगमः । पतिवरा कन्या ।
शत्रुंजयो हस्ती । युगंधरः पर्वतः । शत्रुंतपः । शत्रुंसहः । अरिंदमः ।
दमिः शमनायां तेन सकर्मक इत्युक्तम् । मतांतरे तु अन्तर्भा-
वित्पण्यर्थोऽत्र दमिः ॥

गमश्च ३ । २ । ४७ ॥

सुतंगमः ॥

अन्तात्यन्ताध्वदूरपारसर्वानन्तेषु ङः ३ । २ । ४८ ॥

संज्ञायामिति निवृत्तम् । एषु गमेर्ङः । डित्त्वसामर्थ्यादभ-
स्यापि टेलोपः । अन्तं गच्छतीत्यन्तग इत्यादि ॥

सर्वत्र पन्नयोरुपसंख्यानम् ❀ ॥

सर्वत्रगः । पन्नं पतितं गच्छतीति पन्नगः । पन्नमिति पद्यतेः
क्तान्तं क्रियाविशेषणम् ॥

उरसो लोपश्च ❀ ॥

उरसा गच्छतीत्युरगः ॥

सुदुरोरधिकरणे ❀ ॥

सुखेन गच्छत्यत्र सुगः । दुर्गः ॥

अन्यत्रापि दृश्यत इति वक्तव्यम् ❀ ॥

ग्रामगः ॥

डे च विहायसो विहादेशो वक्तव्यः ❀ ॥

विहगः ॥

आशिपि ह्नः ३ । २ । ४९ ॥

शत्रुं वध्याच्छत्रुहः । आशिपि किम् । शत्रुघातः ॥

दारावाहनोऽणन्तस्य च टः संज्ञायाम् ❀ ॥

दारुशब्द उपपदे आङ्पूर्वाद्धन्तेरण्टकारश्चान्तादेशो वक्तव्य
इत्यर्थः । दारवाघाटः ॥

चारौ वा ❀ ॥

चारवाघाटः चारवाघातः ॥

कर्मणि समि च ❀ ॥

कर्मण्युपपदे संपूर्वाद्धन्तेरुक्तं वेत्यर्थः । वर्णान्संहंतीति वर्णसं-
घाटः । पदसंघाटः । वर्णसंघातः । पदसंघातः ॥

अपे क्लेशतमसोः ३ । २ । ५० ॥

अपपूर्वाद्धन्तेर्डः । अनाशीरर्थमिदम् । क्लेशापहः पुत्रः ।
तमोपहः सूर्यः ॥

कुमारशीर्षयोर्णिनिः ३ । २ । ५१ ॥

कुमारघाती । शिरसः शीर्षभावो निपात्यते । शीर्षघाती ॥

लक्षणे जायापत्योष्टक् ३ । २ । ५२ ॥

हन्तेष्ट्लक्षणवति कर्त्तरि । जायाघ्नो ना । पतिघ्नी स्त्री ॥

अमनुष्यकर्तृके च ३ । २ । ५३ ॥

जायाघ्नस्तिलकालकः । पतिघ्नी पाण्डिरेखा । पित्तघ्नं घृतम् ।
अमनुष्य इति किम् । आखुघातः शूद्रः । अय कथं बलभद्रः
प्रलम्बघ्नः शत्रुघ्नः कृतघ्न इत्यादि मूलविभुजादित्वात्सिद्धम् । चोर-
घातो नगरघातो हस्तीति तु बाहुलकादपि ॥

शक्तौ हस्तिकवाटयोः ३ । २ । ५४ ॥

हन्तेष्टक् शक्तौ द्योत्यायाम् । मनुष्यकर्तृकार्थमिदम् । हस्तिघ्नी
ना । कवाटघ्नश्चोरः । कपाटेति पाठान्तरम् ॥

पाणिघताड्यौ शिल्पिनि ३ । २ । ५५ ॥

हन्तेष्टक् टिलोपो घत्वं च निपात्यते । पाणिताड्योरुपपदयोः ।
पाणिघः । ताडघः । शिल्पिनि किम् । पाणिघातः । ताडघातः ॥

राजघ उपसंख्यानम् ॐ ॥

राजानं हन्ति राजघः ॥

आढ्यसुभगस्थूलपलितनग्नान्धप्रियेषु च्यवर्थेष्वर्च्यौ
कृभः करणे ख्युन् ३ । २ । ५६ ॥

एषु च्यवर्थेष्वर्च्यन्तेषु कर्मसूपपदेषु कृजः ख्युन् । अनाढ्य-

माढ्यं कुर्वन्त्यनेन आढ्यंकरणम् । अच्चौ किम् । आढ्यीकुर्वन्त्यनेन । इह प्रतिषेधसामर्थ्याल्ल्युडपि नेति काशिका । माप्यमते तु ल्युट् स्यादेव । अच्चावित्युत्तरार्थम् ॥

कर्तरि भुवः खिष्णुच्छुक्रभौ ३ । २ । ५७ ॥

आढ्यादिषु च्व्यर्थेष्वच्व्यन्तेषु भवतेरेतौ स्तः।अनाढ्य आढ्यो भवतीति आढ्यंभविष्णुः । आढ्यंभावुकः । स्पृशोऽनुदके किन् । घृतस्पृक् । कर्मणीति निवृत्तम् । मन्त्रेण स्पृशतीति मन्त्रस्पृक् । ऋत्विग्दधृक्स्त्रिदगुष्णिगञ्चुयुजिक्रुश्चां च । व्याख्यातम् । त्यदादिषु दशोरनालोचने कश्च ॥

समानान्ययोश्चेति वाच्यम् ❀ ॥

सदृक् । सदृशः । अन्यादृक् । अन्यादृशः ॥

क्सोऽपि वाच्यः ❀ ॥

तादृक्षः । सदृक्षः । अन्यादृक्षः ॥

**सत्सूद्विपद्बुद्बुद्बुजविदभिदच्छिदजिनीराजामुपस-
गेंऽपि क्विप् ३ । २ । ६१ ॥**

एभ्यः क्विप् उपसर्गे सत्यसति च सुप्युपपदे । द्यसत् । उपनिपत् । अण्डसूः । प्रसूः । मित्रद्विद् । प्रद्विद् । मित्रधुक् । प्रधुक् । गोधुक् । प्रधुक् । अश्वयुक् । प्रयुक् । वेदवित् । निविदित्यादि ॥

अग्रग्रामाभ्यां नयतेर्णो वाच्यः ❀ ॥

अग्रणीः । ग्रामणीः ॥

भजो ण्विः ३ । २ । ६२ ॥

सुप्युपसर्गे चोपपदे भजेर्ण्विः । अंशमाक् । प्रमाक् ॥

अदोऽनन्ने ३ । २ । ६८ ॥

विद् । आममत्ति आमात् । सस्यात् । अनन्ने किम् । अन्नादः॥

ऋव्ये च ३ । २ । ६९ ॥

अदेर्विद् । पूर्वेण सिद्धे वचनमणवाधनार्थम् । ऋव्यात् आममा-
सभक्षकः । कथं तर्हि, ऋव्यादोऽस्यप आशरः इति । पक्वमासशब्द
उपपदेऽण् । उपपदस्य ऋव्यादेशः पृषोदरादित्वात् ॥

दुहः क्वश्च ३ । २ । ७० ॥

कामदुघा ॥

अन्येभ्योऽपि दृश्यन्ते ३ । २ । ७५ ॥

उन्दसीति निवृत्तम् । मनिन्कनिव्वनिव्विच एते प्रत्यया धातोः ॥

नेङ्गशि कृति ७ । २ । ८ ॥

वशादेः कृत इण् । श्च सुशर्मा । प्रातारित्वा ॥

विङ्गनोरनुनासिकस्यात् ६ । ४ । ४१ ॥

विजायत इति विजावा । ओण् अवावा । विच् । रोद्, रेद्,
सुगण् ॥

किप् च ३ । २ । ७६ ॥

अयमपि दृश्यते । सत्सद्विप इति त्वस्यैव प्रपञ्चः । उखास्रत् ।
पर्णध्वत् । बाहभ्रद् ॥

इति ८८ अंशाः ।

अन्तः ८ । ४ । २० ॥

पदान्तस्यानितेर्नस्य णत्वं स्यादुपसर्गस्थानिमित्तात्परश्चेत् ।
हे प्राण् । शास इत् इतीच्वम् । मित्राणि शास्ति मित्रशीः ॥

आशासः कौ उपधाया इत्वं वाच्यम् ❀ ॥

आशीः । इच्वीच्वे । गीः । पूः ॥

इस्मन्त्रन्किपु च ६ । ४ । ९७ ॥

एषु उदेर्देस्वः । तनुच्छत् । अनुनासिकस्य कि इति दीर्घः ।
मोनो धातोः । प्रतान् । प्रशान् । च्चोः इत्यृट् । अक्षशूः । ज्वर-
त्वद् इत्यृट् । जूः । जुशो । जुः । वृः । सूः । ऊट् वृद्धिः । जना-

नवतीति जनौ । जनावी । जनावः । मूः । मुवी । मुवः । सुमूः ।
सुम्बौ । सुम्बः । राह्योपः । मृच्छा । मृः । मुरौ । मुरः । धुर्वा धूः ॥

गमः कौ ६ । ४ । ४० ॥

अनुनासिकलोपः । अङ्गत् ॥

गमादीनामिति वक्तव्यम् ❀ ॥

परीतत् । संयत् । सुनत् ॥

ऊङ् च गमादीनामिति वक्तव्यं लोपश्च ❀ ॥

अग्रेगूः । अग्रेभूः ॥

स्थः क च ३ । २ । ७७ ॥

चात्किप् । संस्थः । संस्थाः । शमिधातोः इत्यचं वाधितुं सूत्रम् ।
सुप्यजातौ णिनिस्ताच्छील्ये । उष्णभोजी । शीतभोजी । अजातौ
किम् । ब्राह्मणानामन्त्रयिता । ताच्छील्ये किम् । उष्णं भुङ्के
कदाचित् । इह वृत्तिकारेणोपसर्गभिन्न एव सुपि णिनिरिति व्याख्याय
उत्प्रतिभ्यामाङ्ङि सतेरुपसंख्यानमिति पठितम् । हरदत्तमाधवादि-
भिश्च तदेवानुसृतम् । एतच्च भाष्यविरोधाद्दुपेक्ष्यम् । प्रसिद्धश्चो
पसर्गोऽपि णिनिः । स वभूवोपजीविनाम् । अनुयायिवर्गः । पतत्यधो
धाम विसारि । न वञ्चनीयाः प्रभवोऽनुजीविभिः इत्यादी ॥

साधुकारिण्युपसंख्यानम् ❀ ॥

ब्रह्मणि वदः ❀ ॥

अताच्छील्यार्थं वार्तिकद्वयम् । साधुदायी । ब्रह्मवादी । कर्त-
र्युपमाने । उपपदार्थः कर्ता प्रत्ययार्थस्य कर्तुरुपमानम् । उप्
इव क्रोशति उप्क्रोशी । ध्वाङ्गरावी । अताच्छील्यार्थं जात्यर्थं
च सूत्रम् । कर्तरि किम् । अपूपानिव भक्षयति मापान् । उपमाने
किम् । उप्ः क्रोशति । व्रते । स्थण्डिलशायी । बहुलमाभीक्ष्ये ।
क्षीरपायिण उशीनराः ॥

मनः ३ । २ । ८२ ॥

सुपि मन्यतेर्णिनिः । दर्शनीयमानी ॥

आत्ममाने खश्च ३ । २ । ८३ ॥

स्वकर्मके मनने वर्तमानान्मन्यतेः सुपि खश् चाणिनिः। पण्डित-
तमात्मानं मन्यते पण्डितमन्यः । पण्डितमानी । खित्यनव्ययस्या
कालिमन्या । अनव्ययस्य किम् । दिवामन्या ॥

इच एकाचोऽम्प्रत्ययवञ्च ६ । ३ । ६८ ॥

इजन्तादेकाचोऽम्स च स्वाद्यम्बतिवदन्ते परे । औतोम्शसोः ।
गांमन्यः । वाम्शसोः । त्रियंमन्यः । स्त्रीमन्यः । नृ । नरंमन्यः ।
भुवंमन्यः । श्रियमात्मानं मन्यते श्रिमन्यं कुलम् । भाष्यका-
खचनाच्छ्रीशब्दस्य ह्रस्वो मुममोरभावश्च ॥

भूते ३ । २ । ८४ ॥

अधिकारोऽयम् । वर्तमाने लट् इति यावत् ॥

करणे यजः ३ । २ । ८५ ॥

करण उपपदे भृतार्याद्यर्जेर्णिनिः कर्त्तरि । सोमेनेष्ट्वान्सोमयाजी ।
अग्निष्टोमयाजी ॥

कर्मणि हनः ३ । २ । ८६ ॥

पितृव्यघाती । कर्मणीत्येतत् सहे च इति यावदधिक्रियते ॥

ब्रह्मभूणवृत्रेषु क्विप् ३ । २ । ८७ ॥

एषु कर्मसूपपदेषु हन्तेर्भूते क्विप् । ब्रह्महा । भूणहा । वृत्रहा । क्विप्
च इत्येव सिद्धे नियमार्थमिदम् । ब्रह्मादिष्वेव हन्तेरेव भूत एव
क्विवेवेति चतुर्विधोऽत्र नियम इति काशिका । ब्रह्मादिष्वेव क्विवे-
वेति द्विविधो नियम इति भाष्यम् ॥

सुकर्मपापमन्त्रपुण्येषु कृञः ३ । २ । ८९ ॥

सुकर्मादिषु च कृञः क्विप् । त्रिविधोऽत्र नियम इति काशिका ।
सुकृत् । कर्मकृत् । पापकृत् । मन्त्रकृत् । पुण्यकृत् । क्विवेवेति
नियमात्कर्म कृतवानित्यत्राण् । कृञ एवेति नियमान्मन्त्रमधीत-

वान्मन्त्राध्यायः अत्र न किप् । भृत एयेति नियमान्मन्त्रं करोति
करिष्यति वेति विवक्षायां न किप् । स्वादिष्वेवेति नियमाभावाद-
म्यस्मिन्नप्युपपदे किप् । शास्त्रकृत् । भाष्यकृत् ॥

सोमे सुभः ३ । २ । ९० ॥

सोमसुत । चतुर्विधोऽत्र नियम इति काशिका । एवमुत्तरसूत्रेऽपि ॥

अग्नौ चेः ३ । २ । ९१ ॥

आग्नाचित् ॥

कर्मण्यग्न्याख्यायाम् ३ । २ । ९२ ॥

कर्मण्युपपदे कर्मण्येव कारकेचिनोतेः किप् अग्न्याधारस्थलविशे-
पस्याख्यायाम् । श्येन इव चितः श्येनचित् ॥

कर्मणीनिर्विक्रियः ३ । २ । ९३ ॥

कर्मण्युपपदे विपूर्वात् क्रीणातेरिनिः ॥

कुत्सितग्रहणं कर्तव्यम् ❀ ॥

सोमविक्रयी । घृतविक्रयी ॥

दृशेः क्निप् ३ । २ । ९४ ॥

कर्मणि भृत इत्येव । पारं दृष्टवान् पारदृष्ट्वा ॥

राजनि युधि कृभः ३ । २ । ९५ ॥

कानेप् । युधिरन्तर्भावितण्यर्थः । राजानं योधितवान् राजयुध्वा ।
राजकृत्वा ॥

सहे च ३ । २ । ९६ ॥

कर्मणीति निवृत्तम् । सहयुध्वा । सहकृत्वा ॥

सप्तम्यां जनेर्डः ३ । २ । ९७ ॥

सरसिजम् । मन्दुरायां जातो मन्दुरजः । डच्चापोः इति ह्रस्वः ॥

पञ्चम्यामजातौ ३ । २ । ९८ ॥

जातिवाचिशब्दवर्जिते पञ्चम्यन्त उपपदे जनेर्डः । संस्कारजः ।
अदृष्टजः ॥

उपसर्गे च संज्ञायाम् ३ । २ । ९९ ॥

प्रजा स्यात्संततौ जने ॥

अनौ कर्मणि ३ । २ । १०० ॥

अनुपूर्वाजनेः कर्मण्युपपदे डः । पुमासमनुरुध्य जाता पुमनुजा ॥

अन्येष्वपि दृश्यते ३ । २ । १०१ ॥

अन्येष्वप्युपपदेषु जनेर्डः । अजः । द्विजः । ब्राह्मणजः । अपि-
शब्दः सर्वोपाधिव्यभिचारार्थः । तेन धात्वन्तरादपि कारकान्तरे-
ष्वपि क्वचित् । परितः खाता परिखा । क्तक्तवृत् निष्ठा । निष्ठा ।
स्नातं मया । स्तुतस्त्वया विष्णुः । विष्णुर्विश्व कृतवान् ॥

निष्ठायामण्यदर्थे ६ । ४ । ६० ॥

ण्यदर्थो भावकर्मणी ततोऽन्यत्र निष्ठायाम् क्षियो दीर्घः ॥

क्षियो दीर्घात् ८ । २ । ४६ ॥

दीर्घात् क्षियो निष्ठातस्य नः । क्षीणवान् । भावकर्मणोस्त
क्षितः कामो मया । श्युकः किति । श्रितः । श्रितवान् । भृत
भृतवान् । क्षुतः ॥

ऊर्णोर्णुवद्भावो वाच्यः ❀ ॥

तेन एकाचत्वात्नेद् । ऊर्णुतः । नुतः । वृतः ॥

रदाभ्यां निष्ठातो नः पूर्वस्य च दः ८ । २ । ४२ ॥

रेफदकाराभ्यां परस्य निष्ठातस्य नः निष्ठापेक्षया पूर्वस्य धा-
तोर्दकारस्य च । शृ ऋत् इत् स्परः णत्वम् । शीर्णः । बहिरग-
त्वेन वृद्धेरसिद्धत्वात्नेह । कृतस्यापत्यं कार्तिः । भिन्नः । छिन्नः ॥

संयोगादेरातो धातोर्यण्वतः ८ । २ । ४३ ॥

निष्ठातस्य नः । द्राणः । स्त्यानः । श्यानः ॥

ल्वादिभ्यः ८ । २ । ४४ ॥

ण्वर्णितेर्लृजादिभ्यः प्राग्वत् । लूनः । ज्या । ग्रहिज्या । जीनः ।

दुग्धोर्दीर्घश्च । दु गतौ । दूनः । दुदु उपताप इत्ययं तु न गृह्यते ।
सानुबन्धकत्वात् । मृदुतया दुतया इति माघः । गूनः । पूजो
विनाशे । पूना यवाः । विनष्टा इत्यर्थः । पृतमन्यत् । सिनोतेर्ग्रा-
सकर्मकर्तृकस्य । सिनो ग्रासः । ग्रास इति किम् । सिता
पाशेन सूकरी । कर्मकर्तृक इति किम् । सितो ग्रासो देवदत्तेन ॥

ओदितश्च ८ । २ । ४५ ॥

भुजो भुजः । दुओश्चि उच्छूनः । ओहाक् प्रहीणः । स्वादय
ओदितः इत्युक्तम् । सूनः सूनवान् । दूनः दूनवान् । ओदिन्मध्ये
डीडः पाठसामर्थ्याच्चेद् । उड्डीनः ॥

द्रवमूर्तिस्पर्शयोः श्यः ६ । १ । २४ ॥

द्रवस्य मूर्तो काठिन्ये स्पर्शे चार्थे श्यैडः संप्रसारणं निष्ठायाम् ॥

श्योऽस्पर्शे ८ । २ । ४७ ॥

श्यैडो निष्ठातस्य नः स्यादस्पर्शेऽर्थे । हल इति दीर्घः । शीनं
घृतम् । अस्पर्शे किम् । शीतं जलम् । द्रवमूर्तिस्पर्शयोः किम् ।
संश्यानो वृश्चिकः । शीतात्संकुचित इत्यर्थः ॥

प्रतेश्च ६ । १ । २५ ॥

प्रतिपूर्वस्य श्यः संप्रसारणं निष्ठायाम् । प्रतिशीनः ॥

विभापाऽभ्यवपूर्वस्य ६ । १ । २६ ॥

श्यः संप्रसारणं वा । अभिश्यानं अभिशीनं घृतम् । अवश्यानोऽ
वशीनो वृश्चिकः । व्यवस्थितविभापेयम् । तेनेह न । समवश्यानः ॥
इति ८९ अंशाः ।

अञ्चोऽनपादाने ८ । २ । ४८ ॥

अञ्चो निष्ठातस्य नः स्यान्नत्वपादाने ॥

यस्य विभापा ७ । २ । १५ ॥

यस्य क्वचिद्विभापयेद्विहितस्ततो निष्ठाया इण् । उदितो वा

इति क्त्वायां वेदत्वादिह नेद् । समक्तः । अनपादाने किम् । उद-
क्तमुदर्कं कृपात् । नत्वस्यासिद्धत्वात् व्रश्च इति पत्वे प्राप्ते ॥

निष्ठादेशः पत्वस्वरप्रत्ययेङ्घिषु सिद्धो वाच्यः ❀ ॥
वृक्कणः । वृक्कणवान् ॥

परिस्कन्दः प्राच्यभरतेषु ८ । ३ । ७५ ॥

पूर्वेण मूर्धन्ये प्राप्ते तदभावो निपात्यते । परिस्कन्दः । प्राच्येति
किम् । परिष्कन्दः परिस्कन्दः । परेश्व इति विकल्पः । स्तम्भेः
इति पत्वे प्राप्ते ॥

प्रतिस्तब्धजिस्तब्धौ च ८ । ३ । ११४ ॥

अत्र पत्वं न ॥

दिवोऽविजिगीपायाम् ८ । २ । ४९ ॥

दिवो निष्ठातस्य नः अविजिगीपायाम् । दूनः । विजिगीपायां
तु दूतम् ॥

निर्वाणोऽवाते ८ । २ । ५० ॥

अवात इति च्छेदः । निःपूर्वाद्वातेर्निष्ठातस्य नत्वं वातश्चेत्कर्ता न ।
निर्वाणोऽग्निर्मुनिर्वा । वाते तु निर्वातो वातः ॥

शुपः कः ८ । २ । ५१ ॥

निष्ठातस्य । शुष्कः ॥

पचो वः ८ । २ । ५२ ॥

पक्कः ॥

क्षायो मः ८ । २ । ५३ ॥

क्षामः ॥

स्त्यः प्रपूर्वस्य ६ । १ । २३ ॥

प्रात्स्त्यः । संप्रसारणं निष्ठायाम् ॥

प्रस्त्योऽन्यतरस्याम् ८ । २ । ५४ ॥

निष्ठातस्य मो वा । प्रस्तीमः । प्रस्तीतः । प्रात् । किम् स्त्यानः ॥

अनुपसर्गात्फुल्लक्षीवकृशोलाघाः ८ । २ । ५५ ॥

अिफला फुल्लः । निष्ठातस्य लत्वं निपात्यते । क्तवत्वेकदेश-
स्यापीदं निपातनमिष्यते । फुल्लवान् । क्षीवादिषु तु क्तप्रत्यय-
स्यैव तलोपः । तस्यासिद्धत्वात्प्राप्तस्येटोऽभावश्च निपात्यते । क्षीवो
मत्तः । कृशस्तनुः । उलाघो नीरोगः । अनुपसर्गात् किम् ॥

आदितश्च ७ । २ । १६ ॥

आकारेतो निष्ठाया इण्ण ॥

ति च ७ । ४ । ८९ ॥

चरफलोरात् उत् तादौ किति । प्रफुल्लः । प्रक्षीवितः । प्रकृ-
शितः । प्रोलाघितः । कथं तर्हि, लोध्रद्रुमं सानुमतः प्रफुल्लम् इति ।
फुल्ल विकसने । पचाद्यच् । सूत्रं तु फुल्लादिनिवृत्त्यर्थम् ॥

उत्फुल्लसंफुल्लयोरुपसंख्यानम् ❀ ॥

नुद्विदोन्दत्राघ्राहीभ्योऽन्यतरस्याम् ८ । २ । ५६ ॥

एभ्यो निष्ठातस्य नो वा । नुन्नः नुत्तः । विद विचारणे ।
रौधादिक एव गृह्यते उन्दिना परेण साहचर्यात् । विन्नः वित्तः ।
वेत्तेस्तु विदितः । विद्यतेर्विन्नः । उन्दी ॥

श्रीदितो निष्ठायाम् ७ । २ । १४ ॥

श्वयतेरीदितश्च निष्ठाया इण्ण । उन्नः उत्तः । घ्राणः घ्रातः ।
घ्राणः घ्रातः । हीणः हीतः ॥

न ध्याख्यापृमूर्च्छिमदाम् ८ । २ । ५७ ॥

एभ्यो निष्ठातस्य नत्वं न । ध्यातः । ख्यातः । पूतः । राहोपः ।
मूर्तः । मत्तः ॥

वित्तो भोगप्रत्यययोः ८ । २ । ५८ ॥

विन्दतेर्निष्ठान्तस्य निपातोऽयं भोग्ये प्रतीते चार्थे । वित्तं ध-
नम् । वित्तः पुरुषः । अनयोः किम् । विन्नः । विभाषा गमहन
इति कसौ वेदत्वादिह नेद् ॥

भित्तं शकलम् ८ । २ । ५९ ॥

भिन्नमन्यत् ॥

ऋणमाधमर्ण्ये ८ । २ । ६० ॥

ऋधातोः क्त. तकारस्य नत्व निपात्यते आधमर्ण्यव्यवहारे ।
ऋतमन्यत् ॥

स्फायः स्फी निष्ठायाम् ६ । १ । २२ ॥

स्फीतः ॥

इष् निष्ठायाम् ७ । २ । ४७ ॥

निरः कुपो निष्ठाया इद् । यस्य विभाषा इति निषेधे प्राप्ते
पुनविधिः । निष्कुपितः ॥

वसतिक्षुधोरिद् ७ । २ । ५२ ॥

आभ्या क्त्वानिष्ठयोर्नित्यमिद् । उपितः । क्षुधितः ॥

अश्वेः पूजायाम् ७ । २ । ५३ ॥

पूजार्थादश्वेः क्त्वानिष्ठयोरिद् । अश्वितः । गतौ त्वक्तः ॥

लुभो विमोहने ७ । २ । ५४ ॥

लुभः क्त्वानिष्ठयोर्नित्यमिद् नतु गार्ध्वे । लुभितः । गार्ध्वे
तु लुब्धः ॥

क्लिशः क्त्वानिष्ठयोः ७ । २ । ५० ॥

इडा । क्लिश उपतापे । नित्य प्राप्ते । क्लिशू विवाधने । अस्य
क्त्वाया विकल्पे सिद्धेऽपि निष्ठाया निषेधे प्राप्ते विकल्पः । क्लि-
शितः क्लिष्टः ॥

पूडश्च ७ । २ । ५१ ॥

पूडः क्त्वानिष्ठयोरिडा ॥

पूडः क्त्वा च १ । २ । २२ ॥

पूडः क्त्वा निष्ठा च सेद् क्लिन्न । पवितः । पूतः । क्त्वाग्रहण-
मुत्तरार्थम् । नोपधात् इत्यत्र हि क्त्वंवत्सवध्यते ॥

निष्ठा शीङ्स्विदिमिदिक्ष्वदिधृपः १ । २ । १९ ॥

एभ्यः सेणिनष्ठा किञ्च । शयितः शयितवान् । अनुबन्धनिर्देशो
यङ्लुङ्वृत्त्यर्थः । शैशियतः शैशियतवान् ॥

आदिकर्मणि निष्ठा वक्तव्या ❀ ॥

आदिकर्मणि क्तः कर्तरि च ३ । ४ । ७१ ॥

आदिकर्मणि यः क्तः स कर्तरि चाद्वाचकर्मणोः ॥

विभाषा भावादिकर्मणोः ७ । २ । १७ ॥

भाव आदिकर्मणि चादितो निष्ठाया इङ्गा । प्रस्वेदितश्चैत्रः ।
प्रस्वेदितं तेन । जिष्विदा इति भ्वादित्रय गृह्यते । ङीङ्गिः साहच-
र्यात् । स्वद्यतेस्तु स्वदित इत्येव । जिमिदा-जिष्विदा दिवादी
भ्वादी च । प्रमेदितः प्रमेदितवान् । प्रक्ष्वेदितः प्रक्ष्वेदितवान् ।
प्रधर्षितः प्रधर्षितवान् । धर्षितं तेन । सेट् किम् । प्रस्विन्नः ।
प्रस्विन्नं तेनेत्यादि ॥

मृपस्तितिक्षायाम् १ । २ । २० ॥

सेणिनष्ठा किञ्च । मर्षितः मर्षितवान् । क्षमायां किम् । अपमृ-
षितं वाक्यम् । अविस्पष्टमित्यर्थः ॥

उदुपधाद्भावादिकर्मणोरन्यतरस्याम् १ । २ । २१ ॥

उदुपधात्परा भावादिकर्मणोः सेणिनष्ठा वा किञ्च । द्युतितं द्योति-
तम् । मुदितं मोदितं साधुना । प्रद्युतितः प्रद्योतितः । प्रमुदितः
प्रमोदितः साधुः । उदुपधात् किम् । विदितम् । भावेत्यादि किम् ।
रुचितं कार्पापणम् । सेट् किम् । कुष्टम् । शब्धिकरणेभ्य एवेभ्यते
नेह । गुह्यतेर्गुहितम् ॥

निष्ठायां सेटि ६ । ४ । ५२ ॥

णेलोपः । भावितः भावितवान् । श्वीदितः इति नेट् संप्रसारण-
म् । शूनः । दीप्तः । गृह् गृहः । वनु वतः । तनु, ततः । पतेः सनि
वेङ्गत्वादिङभावे प्राप्ते द्वितीया श्रित इति सूत्रे निपातनादि ।

पतितः । सेऽसिचि इति वेङ्कत्वात्सिद्धे कृन्तत्यादीनामीदित्वेनानि-
त्यत्वज्ञापनाद्वा । तेन धावितमिभराजधिया इत्यादि । यस्य विभाषा
इत्यत्रैकाच इत्येव । दारिद्रितः ॥

क्षुब्धस्वान्तध्वान्तलग्नम्लिष्टविरिब्धफाण्टवाठानि म-
न्थमनस्तमःसक्ताविस्पष्टस्वरांनायासभृशेषु ७ । २ । १८ ॥

क्षुब्धादीन्यष्टावनिङ्गानि निपात्यन्ते समुदायेन मन्यादिषु वा-
च्येषु । द्रवद्रव्यसंपृक्ताः सक्तवो मन्यः मन्यनदण्डश्च । क्षुब्धो
मन्यश्चेत् । स्वान्तं मनः । ध्वान्तं तमः । लग्नं सक्तम् । निष्ठानत्व-
मपि निपातनात् । म्लिष्टमविस्पष्टम् । विरिब्धः स्वरः । म्लेच्छ रेभृ
अनयोरुपधाया इत्वमपि निपात्यते । फाण्टमनायाससाध्यः कपा-
यविशेषः । माधवस्तु नवनीतभावात्प्रागवस्थापन्नं द्रव्यं फाण्टमिति
वेदभाष्य आह । वाढं भृशम् । अन्यत्र तु क्षुभितम् । क्षुब्धो
राजेति त्वागमशास्त्रस्यानित्यत्वात् । स्वनितम् । ध्वनितम् । लगे-
तम् । म्लेच्छितम् । विरोभितम् । फणितम् । वाहितम् ॥

धृपिशसी वैयात्ये ७ । २ । १९ ॥

एतौ निष्ठायामविनय एवानिदौ । धृष्टः । विशस्तः । अन्यत्र
धर्षितः । विशसितः । भावादिकर्मणोस्तु वैयात्ये धृपिर्नास्ति । अत
एव नियमार्थमिदं सूत्रमिति वृत्तिः । धृपेरादित्वे फलं चिन्त्य-
मिति हरदत्तः । माधवस्तु भावादिकर्मणोरिवैयात्ये विकल्पमाह ।
धृष्टं धर्षितम् । प्रधृष्टः प्रधर्षितः ॥

दृढस्थूलबलयोः ७ । २ । २० ॥

स्थूले बलवति च निपात्यते । दृह-दृहि वृद्धौ । क्तस्येडभावः
तस्य ढत्वं हस्य लोपः इदितो नलोपः । दृहितः । दृंहितोऽन्यः ॥

प्रभौ परिवृढः ७ । २ । २१ ॥

वृह-वृहि वृद्धौ । निपातनं प्राग्वत् । परिवृहितः । परिवृंहितोऽन्यः ॥

कृच्छ्रगहनयोः कपः ७ । २ । २२ ॥

कषो निष्ठाया इण्ण एतयोरर्थयोः । कष्टं दुःखं तत्कारणं च ।
स्यान्कष्टं कृच्छ्रमाभीलम् । कष्टो मोहः । कष्टं शास्त्रम् । दुरवगा-
हमित्यर्थः । कषितमन्यत् ॥

घुपिरविशब्दने ७ । २ । २३ ॥

घुपिर्निष्ठायामनिट् । घुष्टा रज्जुः । अविशब्दने किम् । घुपितं
वाक्यम् । शब्देन प्रकटीकृताभिप्रायमित्यर्थः ॥

अर्देः संनिविभ्यः ७ । २ । २४ ॥

एतत्पूर्वादर्देर्निष्ठाया इण्ण । समर्णः । न्यर्णः । व्यर्णः । अर्दि-
तोऽन्यः ॥

अभेश्चाविदूर्ये ७ । २ । २५ ॥

अभ्यर्णम् । नातिदूरमासन्नं वा । अभ्यर्दितमन्यत् ॥

णेरघ्ययने वृत्तम् ७ । २ । २६ ॥

प्यन्ताद्धृत्तेः क्तस्येडभावो णिलुक्चाधीयमानेऽर्थे । वृत्तं छन्द-
श्छात्रेण संपादितम् । अधीतमिति यावत् । अन्यत्र तु वर्तिता रज्जुः ॥

शृतं पाके ६ । १ । २७ ॥

श्रातिश्रपयत्योः क्तै शृभावो निपात्यते क्षीरहविषोः पाके । शृ-
तं क्षीरम् । स्वयमेव विक्लिन्नं पकं वेत्यर्थः । क्षीरहविर्भ्यामन्यत् ।
श्राणं श्रपितम् ॥

वा दान्तशान्तपूर्णदस्तरूपष्टच्छन्नज्ञप्ताः ७ । २ । २७ ॥

एते णिचि निष्ठान्ता वा निपात्यन्ते । पक्षे, दमितः । शमितः ।
पूरितः । दासितः । स्पाशितः । छादितः । ज्ञपितः ॥

इति ९० अंशाः । इति तृतीयाध्यायस्य प्रथमः पादः ।

रुष्यमत्वरसंधुपास्वनाम् ७ । २ । २८ ॥

एभ्यो निष्ठाया इट्ठा । रुषितः रुष्टः । आन्तः अमितः । तूर्णः
त्वरितः । अस्यादिच्चे फलं मंदम् । संधुष्ट, संधुषितः । आस्वान्तः
आस्वनितः ॥

हृपेलोमसु ७।२।२९ ॥

हृपेर्निष्ठाया इद्वा लोमसु विपये । हृष्टं हृषितं लोम ॥

विस्मितप्रतिघातयोश्च ❀ ॥

हृष्टो हृषितो मेघः । विस्मितः प्रतिहतो वेत्यर्थः । अन्यत्र तु । हृषु अलीके । उदित्वान्निष्ठायां नेद् । हृष तुष्टौ । इद् ॥

अपचितश्च ७।२।३० ॥

चायतेर्निपातोऽयं वा । अपचितः अपचायितः ॥

प्यायः पी ६।१।२८ ॥

पी वा निष्ठायाम् । व्यवस्थितविभाषेयम् । तेन स्वाङ्गे नित्यम् । पीनं मुखम् । अन्यत्र । प्यानः पीनः स्वेदः । सोपसर्गस्य न । प्रप्यानः । आङ्पूर्वस्यान्धूधसोः स्यादेव । आपीनोऽन्धुः । आपी नमूधः ॥

ह्लादो निष्ठायाम् ६।४।९५ ॥

हस्यः । प्रह्वन्नः ॥

द्यतिस्यतिमास्थामिति किति ७।४।४० ॥

एषामिकारोऽन्तादेशः तादौ किति । ईत्वदद्भावयोरपवादः । दितः । सितः । मा माङ् । मेङ् मितः । स्थितः ॥

शाच्छोरन्यतरस्याम् ७।४।४१ ॥

शितः शतः । छितः छातः । व्यवस्थितविभाषात्वात् व्रतविपये श्यतेर्नित्यम् । संशितं व्रतम् । सम्यक्संपादितामित्यर्थः । संशितो ब्राह्मणः । व्रतविषयकयत्रवानित्यर्थः ॥

दधातेर्हिः ७।४।४२ ॥

तादौ किति । अभिहितम् । निहितम् ॥

दो ददोः ७।४।४६ ॥

घुसंज्ञकस्य दा इत्यस्य दद् स्यात्तादौ किति । चर्त्यम् । दत्तः । घोः किम् । दातः । तान्तो वायमादेशः । न चैवं विदत्तमित्यादां-

कषो निष्ठाया इण्ण एतयोरर्थयोः । कष्टं दुःखं तत्कारणं च ।
स्यान्कष्टं कृच्छ्रमाभीलम् । कष्टो मोहः । कष्टं शास्त्रम् । दुस्वगा-
हमित्यर्थः । कपितमन्यत् ॥

घुपिरविशब्दने ७ । २ । २३ ॥

घुपिर्निष्ठायामनिट् । घुष्टा रज्जुः । अविशब्दने किम् । घुपितं
वाक्यम् । शब्देन प्रकटीकृताभिप्रायमित्यर्थः ॥

अर्देः संनिविभ्यः ७ । २ । २४ ॥

एतत्पूर्वादर्देर्निष्ठाया इण्ण । समर्णः । न्यर्णः । व्यर्णः । अर्दि-
तोऽन्यः ॥

अभेश्चाविदूयै ७ । २ । २५ ॥

अभ्यर्णम् । नातिदूरमासन्नं वा । अभ्यर्दितमन्यत् ॥

णेरध्ययने वृत्तम् ७ । २ । २६ ॥

प्यन्ताद्दृतेः क्तस्येडभावो णिलुक्चाधीयमानेऽर्थे । वृत्तं छन्द-
श्छात्रेण संपादितम् । अधीतमिति यावत् । अन्यत्र तु वर्तिता रज्जुः ॥

शृतं पाके ६ । १ । २७ ॥

श्रातिश्रपयत्योः क्त श्रृभावो निपात्यते क्षीरहविषोः पाके । शृ-
तं क्षीरम् । स्वयमेव विक्लिन्नं पकं वेत्यर्थः । क्षीरहविभ्यामन्यत् ।
श्राणं श्रपितम् ॥

वा दान्तशान्तपूर्णदस्तस्पष्टच्छन्नज्ञप्ताः ७ । २ । २७ ॥

एते णिचि निष्ठान्ता वा निपात्यन्ते । पक्षे, दमितः । शमितः ।
पूरितः । दासितः । स्पाशितः । छादितः । ज्ञापितः ॥

इति ९० अंशाः । इति तृतीयाध्यायस्य प्रथमः पादः ।

रूप्यमत्वरसंघुपास्वनाम् ७ । २ । २८ ॥

एभ्यो निष्ठाया इड्वा । रूपितः रूपः । आन्तः अमितः । तूर्णः
त्वरितः । अस्यादित्त्वे फलं मंदम् । संघुष्टः संघुपितः । आस्वान्तः
आस्वनितः ॥

हृपेलोमसु ७ । २ । २९ ॥

हृपेर्निष्ठाया इद्वा लोमसु विषये । हृष्टं हृपितं लोम ॥

विस्मितप्रतिघातयोश्च * ॥

हृष्टो हृपितो मैत्रः । विस्मितः प्रतिहतो वेत्यर्थः । अन्यत्र तु । हृपु अलीके । उदिच्चान्निष्ठाया नेट् । हृप तुष्टौ । इद् ॥

अपचितश्च ७ । २ । ३० ॥

चायतेर्निपातोऽयं वा । अपचितः अपचायितः ॥

प्यायः पी ६ । १ । २८ ॥

पी वा निष्ठायाम् । व्यवस्थितविभाषेयम् । तेन स्वाङ्गे नित्यम् । पीनं मुखम् । अन्यत्र । प्यानः पीनः स्वेदः । सोपसर्गस्य न । प्रप्यानः । आङ्पूर्वस्यान्धूधसोः स्यादेव । आपीनोऽन्धुः । आपीनमूधः ॥

हादो निष्ठायाम् ६ । ४ । ९५ ॥

ह्रस्वः । प्रहृन्नः ॥

द्यतिस्यतिमास्थामिति किति ७ । ४ । ४० ॥

एपाभिकारोऽन्तादेशः तादौ किति । ईत्वदद्भावयोरपवादः । दितः । सितः । मा माङ् । मेङ् मितः । स्थितः ॥

शाच्छोरन्यतरस्याम् ७ । ४ । ४१ ॥

शितः शातः । छितः छातः । व्यवस्थितविभाषात्वात् व्रतविषये श्यतेर्नित्यम् । सशितं व्रतम् । सम्यक्संपादितमित्यर्थः । संशितो ब्राह्मणः । व्रतविषयकयत्नवानित्यर्थः ॥

दधार्तोर्हिः ७ । ४ । ४२ ॥

तादौ किति । अभिहितम् । निहितम् ॥

दो ददोः ७ । ४ । ४६ ॥

धुसंज्ञकस्य दा इत्यस्य दद् स्यात्तादौ किति । चर्त्यम् । दत्तः । धोः किम् । दातः । तान्तो वायमादेशः । न चैवं विदत्तामित्यादा-

वुपसर्गस्य दस्ति इति दीर्घापत्तिः । तकारादौ तद्धिधानात् दान्तो वा धान्तो वा । न च दान्तत्वे निष्ठानत्वं धान्तत्वे ह्यपस्तथोः इति धत्वं शङ्क्यम् । संनिपातपरिभाषाविरोधात् ॥

अच उपसर्गात्तः ७ । ४ । ४७ ॥

अजन्तादुपसर्गात्परस्य दा इत्यस्य घोरचस्तः तादौ किति । चर्त्वम् । प्रत्तः । अवत्तः । अवदत्तं विदत्तं च प्रदत्तं चादिकर्मणि । सुदत्तमनुदत्तं च निदत्तमिति चेप्यते ॥ चशब्दाद्यथाप्राप्तम् ॥

दस्ति ६ । ३ । १२४ ॥

इगन्तोपसर्गस्य दीर्घः दादेशो यस्तकारस्तदादावुत्तरपदे । खरि च इति चर्त्वमाश्रयात्सिद्धम् । नीत्तम् । सूत्तम् । धुमास्था इतीच्चम् । धेद् । धीतम् । गीतम् । पीतम् । जनसन इत्यात्वम् । जातम् । सातम् । खातम् ॥

अदो जग्धिल्यति किति २ । ४ । ३६ ॥

ल्यविति लुप्तसप्तमीकम् । अदो जग्धः स्याल्ल्यपि तादौ किति च । इकार उच्चारणार्थः । ध्वत्वम् । झरो झरि । जग्धः । आदिकर्मणि क्तः कर्तरि च । प्रकृतः कटं सः । प्रकृतः । कटःतेन निष्ठायामण्यदर्थे इति दीर्घः । क्षियो दीर्घात् इति नत्वम् । प्रक्षीणः सः ॥

वा क्रोशदैन्ययोः ६ । ४ । ६१ ॥

क्षियो निष्ठायां दीर्घो वाऽऽक्रोशे दैन्ये च । क्षीणायुर्मथ । क्षितायुर्वा । क्षीणोऽयं तपस्वी । क्षितो वा ॥

निनदीभ्यां स्रातेः कौशले ८ । ३ । ८९ ॥

आभ्यां स्रातेः सस्य पः कौशले गम्ये । निष्णातः शास्त्रेषु । नद्यां स्रातीति नदीष्णः । सुपि इति कः ॥

सूत्रं प्रतिष्णातम् ८ । ३ । ९० ॥

प्रतेः स्रातेः पत्वम् । प्रतिष्णातं सूत्रम् । शुद्धमित्यर्थः । अन्यत्र । प्रतिस्रातम् ॥

कपिष्ठलो गोत्रे ८ । ३ । ९१ ॥

कपिष्ठलो नाम यस्य कापिष्ठलिः पुत्रः । गोत्रे किम् । कपीनां स्थलं कपिस्थलम् ॥

विकुशमिपरिभ्यः स्थलम् ८ । ३ । ९६ ॥

एभ्यः स्थलस्य सस्य षः । विष्ठलम् । कुष्ठलम् । शमिष्ठलम् । परिष्ठलम् । गत्यर्थाकर्मकश्चिपशीङ्-स्थासवसजनरुहजीर्यतिभ्यश्च । गङ्गां गतः । गङ्गां प्राप्तः । म्लानः सः । लक्ष्मीमाश्छिष्टो हरिः । शेषमधिशयितः । वैकुण्ठमधिष्ठितः । शिवमुपासितः । हरिदिन-मुपोषितः । राममनुजातः । गरुडमारूढः । विश्वमनुजीर्णः । पक्षे, प्राप्ता गङ्गा तेनेत्यादि ॥

क्तोऽधिकरणे च ध्रौव्यगतिप्रत्यवसानार्थेभ्यः ३ । ४ । ७६ ॥

एभ्योऽधिकरणे क्तः चाद्यथाप्राप्तम् । ध्रौव्यं स्थैर्यम् । मुकुन्द-स्यासितमिदमिदं यातं रमापतेः । भुक्तमेतदनन्तस्येत्यूचुर्गोप्यो दि-दक्षवः ॥ पक्ष आसिरकर्मकत्वात्कर्तरि भावे च । आसितो मुकुन्दः । आसितं तेन । गत्यर्थेभ्यः कर्तरि कर्मणि च । रमापतिरिदं यातः । तेनेदं यातम् । भुजेः कर्मणि । अनन्तेनेदं भुक्तम् । कथं भुक्त्वा ब्राह्मणाः इति । भुक्तमास्ति एषामिति मत्वर्थीयोऽच् । वर्तमान इत्यधिकृत्य ॥

भीतः क्तः ३ । २ । १८७ ॥

विद्विदा-द्विन्नः । निन्धी-इद्धः ॥

मतिबुद्धिपूजार्थेभ्यश्च ३ । २ । १८८ ॥

मतिरिहेच्छा बुद्धेः पृथगुपादानात् । राज्ञां मतः इष्टः । तैरि-प्यमाण इत्यर्थः । बुद्धः । विदितः । पूजितः । अर्चितः । चका-रोऽभुक्तममुधयार्थः । शीलितो रक्षितः । क्षान्त आकृष्टो जुष्ट इत्यादि । नर्पुमके भावे क्तः ह्रीवत्वविशिष्टे भावे फालसामान्ये क्तल्युदा ल्युद्धेति । जल्पितम् । शयितम् । दसितम् । जल्यनम् । शपनम् । दमनम् ॥

सुयजोर्ङ्निप् ३ । २ । १०३ ॥

सुनोतेर्यजेश्च ङ्निप् भृते । सुत्वा । सुत्वानी । यज्वा । यज्वानी ॥

जीर्यतेरत्न् ३ । २ । १०४ ॥

भूत इत्येव । जरन् । जरन्तौ । जरन्तः । वासरूपन्यायेन नि-
ष्ठापि । जीर्णो जीर्णवान् ॥

छन्दसि लिट् ३ । २ । १०५ ॥

लिटः कानज्वा ३ । २ । १०६ ॥

कसुश्च ३ । २ । १०७ ॥

इह भूतसामान्ये छन्दसि लिट् । तस्य विधीयमानौ कसुकान-
चावपि छन्दसाविति त्रिसुनिमतम् । कवयस्तु बहुलं प्रयुञ्जते । तं
तस्थिवांसं नगरोपकण्ठे श्रेयांसि सर्वाण्यधिजग्मुपस्ते । इत्यादि ॥

वस्वेकाजाद्विसाम् ७ । २ । ६७ ॥

कृतद्विर्वचनानामेकाचामादन्तानां घसेश्च वसोरिद् नान्येषाम् ।
एकाच् आरिवान् । आत-ददिवान् । जक्षिवान् । एपां किम् ।
बभूवान् ॥

भापायां सदवसश्रुवः ३ । २ । १०८ ॥

सदादिभ्यो भूतसामान्ये भापायां लिट्वा । तस्य च नित्यं
कसुः । निपेदुपीमासनबंधधीरः । अध्वपुपस्तामभवञ्जनस्य ।
शुश्रुवान् ॥

उपेयिवाननाश्वाननूचानश्च ३ । २ । १०९ ॥

एते निपात्यन्ते । उपपूर्वादिणो भापायामपि भूतमात्रे लिट्वा ।
तस्य नित्यं कसुः । इद् । उपेयिवान् । उपेयुपः स्वामपि मूर्तिम-
श्याम् । उपेयुर्षा । उपेत्यविवक्षितम् । ईयिवान् । सगीयिवान् ।
नञ्पूर्वादश्रानेः कसुरिडभावश्च । धृतजयधृतेरनाशुपः इति भारविः ।
अनुपूर्वाद्विचेः कर्तरि कानच् । वेदस्यानुवचनं कृतवाननूचानः ॥

विभाषा गमहनविद्विशाम् ७ । २ । ६८ ॥

ऐभ्यो वसोरिद्धा । जग्मिवान् जगन्वान् । जग्मिवान् जघन्वान् ।
 विविदिवान् विविद्वान् । विविशिवान् विविश्वान् । विशिना साहच-
 र्याद्विन्दतेग्रहणम् । वेत्तेस्तु विविद्वान् । नेद्भुशि कृति इतीप्तिपेधः ।
 दृशेश्च । दृशिवान् दृश्वान् । लटः शतृशानचावप्रथमासमानाधि-
 करणे । पचन्तं चैत्रं पश्य । आने मुक् । पचमानं चैत्रं पश्य ।
 लडित्यनुवर्तमाने पुनर्लङ्ग्रहणमधिकविधानार्थम् । तेन प्रथमा सा-
 मानाधिकरण्येऽपि क्वचित् । सन्ब्राह्मणः ॥

माढ्याक्रोश इति वाच्यम् ❀ ॥

मा जीवन्त्यः परावज्ञा दुःखदग्धोऽपि जीवति । माडि लुङ् इति
 प्राप्ते एतद्वचनसामर्थ्याल्लट् ॥

संवोधने च ३ । २ । १२५ ॥

हे पचन् हे पचमान ॥

लक्षणहेत्वोः क्रियायाः ३ । २ । १२६ ॥

क्रियायाः परिचायके हेतौ चार्थे वर्तमानाद्दातोर्लटः शतृशान-
 चो स्तः । शयाना भुञ्जते यवनाः । अर्जयन्वसति । हरिं पश्य-
 न्मुच्यते । हेतुः फलं कारणं च । कृत्यचः । प्रपीयमाणः सोमः ॥

ईदासः ७ । २ । ८३ ॥

आसः परस्यानस्येत् । आदेः परस्य । आसीनः ॥

विदेः शतुर्वसुः ७ । १ । ३६ ॥

वेत्तेः परस्य शतुर्वसुरादेशो वा । विदन् विद्वान् विदुपी ॥

लटः सद्वा ३ । ३ । १४ ॥

व्यवस्थितविभाषेयम् । तेनाप्रथमासमानाधिकरण्ये प्रत्ययोत्तर-
 पदयोः संवोधने लक्षणहेत्वोश्च नित्यम् । करिष्यन्तं करिष्यमाणं
 पश्य । करिष्यतोऽपत्यं कारिष्यतः । करिष्यद्भक्तिः । हे करि-
 ष्यन् । अर्जयिष्यन्वसति । प्रथमासमानाधिकरण्येऽपि क्वचित् । करि-
 ष्यतीति करिष्यन् ॥

पूङ्चजोः शानन् ३ । २ । १२८ ॥

वर्त्तमाने । पवमानः । यजमानः ॥

ताच्छील्यवयोवचनशक्तिपु चानश् ३ । २ । १२९ ॥

एषु द्योत्येषु कर्त्तरि चानश् । भोगं भुञ्जानः । कवचं विभ्राणः ।

वृद्धं निघ्नानः ॥

इङ्धार्योः शत्रुकृच्छ्रिणि ३ । २ । १३० ॥

आभ्यां शत्रु स्यादकृच्छ्रिणि कर्त्तरि । अधीयन् । धारयन् ।

मकृच्छ्रिणि किम् । कृच्छ्रेणाधीते धारयति ॥

द्विपोऽमित्रे ३ । २ । १३१ ॥

द्विपच्छत्रुः ॥

सुभो यज्ञसंयोगे ३ । २ । १३२ ॥

सर्वे सुन्वन्तः । सर्वे यजमानाः सत्रिणः ॥

अर्हः प्रशंसायाम् ३ । २ । १३३ ॥

अर्हन् ॥

इति ९१ अंशः ।

आकेस्तच्छीलतद्धर्मतत्साधुकारिषु । तृन् । कर्ता कटम् ॥

अलंकृञ्जिराकृञ्जप्रजनोत्पचोत्पतोन्मदरुच्यपत्रपवृत्त-

वृधुसहचर इष्णुश् ३ । २ । १३६ ॥

अलंकारिष्णुः । निराकारिष्णुः । प्रजनिष्णुः । उत्पचिष्णुः ।

उत्पातिष्णुः । उन्मदिष्णुः । रोचिष्णुः । अपत्रपिष्णुः । वर्तिष्णुः ।

वर्धिष्णुः । सहिष्णुः । चरिष्णुः ।

णेङ्छन्दसि ३ । २ । १३७ ॥

वीरुधः पारयिष्णवः ॥

भुवश्च ३ । २ । १३८ ॥

छन्दसीत्येव । भविष्णुः । कथं तर्हि, जगत्प्रभोरप्रभविष्णु वैष्ण-
वम् । इति निरकुशाः कवयः । चकारोऽस्तुक्तसमुच्चयार्थं । भ्राजिष्णु
रिति वृत्तिः । एवं क्षयिष्णुः । नैतद्भाष्ये दृष्टम् ॥

ग्लजिस्थश्च ग्स्तुः ३ । २ । १३९ ॥

छन्दसीति निवृत्तम् । गिदयं नतु कित् । तेन स्थ ईत्वं न । ग्ला-
स्तुः । गित्त्वान्न गुणः । जिष्णुः । स्थास्तुः । चाद्भुवः । श्युकः किति
इत्यत्र गकारप्रश्लेपान्नेट् । भूष्णुः ॥

दंशेश्छन्दस्युपसंख्यानम् ❀ ॥

दङ्क्षणवः पशवः ॥

त्रसिगृधिधृपिक्षिपेः क्रुः ३ । २ । १४० ॥

त्रस्तुः । गृध्रः । धृष्णुः । क्षिप्रुः ॥

शमित्यष्टाभ्यो घिनुष् ३ । २ । १४१ ॥

उकार उच्चारणार्थं इति काशिका । अनुबन्ध इति भाष्यम् ।
तेन शमिनितरा शमिनीतरेत्यत्र उगितश्च इति ह्रस्वविकल्पः । न
चैव शमी शमिनावित्यादौ नुम्प्रसङ्गः । श्लघ्रहणमपकृष्य श्ल-
न्तानामेव तद्विधानात् । नोदात्तोपदेशस्य इति वृद्धिनिषेधः । शमी ।
तमी । दमी । श्रमी । त्रमी । भ्रमी । कृमी । प्रमादी । उत्पूर्वा-
न्मदेः अलकृञादिसूत्रेणेषुक्तो वासरूपविधिना घिनुणपि ।
उन्मादी । ताच्छीलिकेषु वासरूपविधिर्नास्ति इति तु प्रायिकम् ॥

संपृचानुरुधाङ्चमाङ्च्यसपरिसृसंसृजपरिदेविसंज्वर-
परिक्षिपपरिरटपरिवदपरिदहपरिसुहदुपद्विपद्दुहदुहयुजा-
क्रीडविविचत्यजरजभजातिचरापचरामुपाभ्याहनश्च
३ । २ । १४२ ॥

घिनुष् । सपर्की । अनुरोधी । आयामी । आयासी । परिसारी ।
ससर्गी । परिदेवी । संज्वारी । परिक्षेपी । परिराटी । परिवादी । प-
रिदाही । परिमोही । दोषी । द्वेषी । द्रोही । दोही । योगी ।

आक्रीडी । विवेकी । त्यागी । रागी । भागी । अतिचागी । अप-
चारी । आमोपी । अभ्याघाती ॥

वौ कपलसकत्थस्रम्भः ३ । २ । १४३ ॥

विकापी । विलासी । विकत्थी । विस्रम्भी ॥

अपे च लपः ३ । २ । १४४ ॥

चाद्वौ । अपलापी । विलापी ॥

प्रेलपसृद्रुमथवदवसः ३ । २ । १४५ ॥

प्रलापी । प्रसारी । प्रद्रावी । प्रमाथी । प्रवादी । प्रवासी ॥

निन्दहिंसक्लिशखादविनाशपरिक्षिपपरिरटपरिवादिव्या-
भापासूयो बुञ्ज ३ । २ । १४६ ॥

पञ्चम्यर्थे प्रथमा एभ्यो बुञ्ज । निन्दकः । हिंसक इत्यादि ।
ण्वुला सिद्धे बुञ्जवचनं ज्ञापकं तच्छीलादिषु वासरूपन्यायेन वृजा-
दयो नेति ॥

देविक्रुशोश्चोपसर्गे ३ । २ । १४७ ॥

आदेवकः । आक्रोशकः । उपसर्गे किम् । देवयिता । क्रोष्टा । च-
लनशब्दार्थादकर्मकाद्युच् चलनः । चोपनः । कम्पनः । शब्दनः ।
खणः । अकर्मकात् किम् । पठिता विद्याम् । अनुदात्तेश्च ह-
लादेः । वर्तनः । वर्धनः । अनुदात्तैः किम् । भविता । हलादेः
किम् । एधिता । अकर्मकात् किम् । वसिता वस्त्रम् ॥

जुचङ्क्रम्यदन्द्रम्यसृगृधिज्वलशुचलपपतपदः ३ ।
२ । १५० ॥

जु इति सौत्रो धातुर्गतौ वेगे च । जवनः । चद्रमणः । द-
न्द्रमणः । सरणः । पूर्वेण सिद्धे पदग्रहणं लपपतपद इत्युक्त्वा
बाधा मा भृदिति । तेन ताच्छीलिकेषु परस्परं वासरूपविभिनां-
स्तीति तेनालंकृतवस्त्र । क्रुधमण्डार्येभ्यः । क्रोधनः । तोषणः ।
मण्डनः । भूषणः ॥

सृघस्यदः वमरञ्च ३ । २ । १६० ॥

सृमरः । घस्मरः । अमरः ॥

भञ्जभासमिदो घुरञ्च ३ । २ । १६१ ॥

भङ्गुरः । भासुरः । मेदुरः ॥

विदिभिदिच्छिदेः कुरञ्च ३ । २ । १६२ ॥

विदुरः । मिदुरम् । छिदुरम् ॥

इण्णशजिसर्तिभ्यः क्वरप् ३ । २ । १६३ ॥

इत्वरः । इत्वरी । नश्वरः । जित्वरः । सृत्वरः ॥

गत्वरश्च ३ । २ । १६४ ॥

गमेरनुनासिकलोपोऽपि निपात्यते । गत्वरी ॥

जागुरूकः ३ । २ । १६५ ॥

जागर्तेरूकः । जागरूकः ॥

यजजपदशां यडः ३ । २ । १६६ ॥

एभ्यो यडन्तेभ्य ऊकः । दशामिति भाविना नलोपेन निर्देशः ।
यायजूकः । जञ्जपूकः । दन्दशूकः ॥

नमिकम्पिस्म्यजसकमर्हिसदीपो रः ३ । २ । १६७ ॥

नम्रः । कम्प्रः । स्मेरः । जसिर्नञ्पूर्वः । क्रियासातत्ये वर्तते । ञ्-
जसं संततमित्यर्थः । कम्प्रः । हिंस्रः । दीप्रः । सनागसमिश्र ङः ।
चिकीर्षुः । आशंसुः । भिक्षुः ॥

विन्दुरिच्छुः ३ । २ । १६९ ॥

वेत्तेर्नुमिपेश्छत्व च निपात्यते । वेत्ति तच्छीलो विन्दुः । इच्छने
इच्छुः ॥

क्याच्छन्दसि ३ । २ । १७० ॥

देवाञ्जिगाति सुन्नयुः ॥

आहृगमहनजनः किकिनौ छिद् च ३ । २ । १७१ ॥

आदन्तादन्ताद्गमादिभ्यश्च किकिनौ स्तश्छन्दसि तौ च लिङ्गत् ।
पपिः सोमम् । दादिर्गाः । बभ्रिर्वज्रम् । जग्मिर्गुवा । जग्मिर्वृत्रम-
मित्रियम् । जज्ञिः । भापायां धाञ्कृष्टगमिजनिनमिभ्यः । दीधिः ।
चक्रिः । सस्रिः । जग्मिः । जज्ञिः । नेमिः ॥

सासहिवावहिचाचलिपापतीनामुपसंख्यानम् ❀ ॥

यडन्तेभ्यः सहेत्यादिभ्यः किकिनौ पतेर्नीगभावश्च निपात्यते ॥

स्वपितृपोर्नजिङ् ३ । २ । १७२ ॥

स्वमक् । तृष्णक् । तृष्णजौ । तृष्णजः । धृपेश्च इति वाच्य-
मिति काशिकादौ । धृष्णक् ॥

श्रृवन्द्योरारुः ३ । २ । १७३ ॥

शरारुः । वन्दारुः ॥

भियः कुक्कनौ ३ । २ । १७४ ॥

मीरुः । मीलुकः ॥

कुक्कन्नपि वाच्यः ❀ ॥

मीरुकः ॥

स्थेशभासपिसकसो वरञ्च ३ । २ । १७५ ॥

स्थावरः । ईश्वरः । भास्वरः । पेस्वरः । कस्वरः ॥

यश्च यडः ३ । २ । १७६ ॥

यातेर्यडन्ताद्गरच् । अतो लोपः । नस्य अचः परस्मिन् इति
स्थानिवद्भावे प्राप्ते न पदान्तेति तस्य यलोपं प्रति स्थानिवद्भावनि-
पेधात् लोपो व्योः इति यलोपः । अलोपस्य स्थानिवत्त्वमाश्रि-
त्यातो लोपे प्राप्ते वरे लुप्तं न स्थानिवत् । यायावरः ॥

इति ९२ अंशाः ।

भ्राजभासधुर्विद्युतोर्जिपृजुग्रावस्तुवः क्विप् ३ । २ ।
१७७ ॥

विभ्राद् । भाः । भासौ । धूः । धुरौ । विद्युत् । ऊर्क । पूः ।
पुरौ । दृशिग्रहणस्यापकर्षाज्जवतेर्दीर्घः । जूः । जुवौ । जुवः । ग्रावश-
ब्दस्य धातुना समासः सूत्रे निपात्यते । ततः क्विप् । ग्रावस्तुत् ॥

अन्येभ्योऽपि दृश्यते ३ । २ । १७८ ॥

क्विप् । छित् भिद् दृशिग्रहणं विध्यन्तरोपसंग्रहार्थम् । क्वचिदीर्घः ।
क्वचिदसंप्रसारणं क्वचिद्वे क्वचिद्ध्रस्वः । तथा च वार्तिकम् ॥

क्विवचिप्रच्छयायतस्तुकटपुजुश्रीणां दीर्घोऽसंप्र-
सारणं च ❀ ॥

क्विवचीत्यादिनोणादिसूत्रेण केषांचित्सिद्धे तच्छीलादौ वृना
वाधा मा भूदिति वार्तिके ग्रहणम् । वक्तीति वाक् । पृच्छतीति प्राद् ।
प्राशौ । आयतं स्तौति आयतस्तूः । कटं प्रवते कटपूः । जुरुक्तः श्रय-
ति हरिं श्रीः । द्युतिगमिजुहोतीनां द्वे च । दृशिग्रहणादभ्याससंज्ञा
दिद्युत् । जगत् । जुहोतेर्दीर्घश्च । जुहूः । ह मये । अस्य ह्रस्वश्च ।
दीर्यति ददृत् । ध्यायतेः संप्रसारणं च । धीः ॥

भुवः संज्ञान्तरयोः ३ । २ । १७९ ॥

मित्रभूर्नाम कश्चित् धनिकाधमर्णयोरन्तरे यास्तिष्ठति विश्वासार्थं
स प्रतिभूः ॥

विप्रसंभ्यो द्वसंज्ञायाम् ३ । २ । १८० ॥

एभ्यो भुवो डुः नतु संज्ञायाम् । विभुर्व्यापकः । प्रभुः स्वामी
संभुर्जनिता । संज्ञायां तु विभूर्नाम कश्चित् ॥

मितद्वादिभ्य उपसंख्यानम् ❀ ॥

मितं द्रवतीति मितद्वः । शतद्वः । शंभुः । अन्तर्भावितप्यर्थो-
ऽत्र भवतिः ॥

धः कर्मणि घृन् ३ । २ । १८१ ॥

धेटो धाञश्च कर्मण्यर्थे घृन् । धात्री जनन्यामलकीवसुमत्युप-
माटपु ॥

दात्रीशसयुयुजस्तुतुदसिसिचमिहपतदशनहः करणे
३ । २ । १८२ ॥

दाम्न्यादे. प्रून्करणेऽर्थे । दान्त्यनेन दात्रम् । नेत्रम् । तितुत्रयेति
नेद । शस्त्रम् । योत्रम् । योक्रम् । स्तोत्रम् । तोत्रम् । सेत्रम् । सेक्रम् ।
मेद्रम् । पत्रम् । दंष्ट्रा । नधी ॥

हलसूकरयोः पुवः ३ । २ । १८३ ॥

पूड्पूजोः करणे प्रून् । तच्चेत्करणं हलसूकरयोस्वयवः । हलस्य
सूकरस्य वा पोत्रम् । मुखमित्यर्थः ॥

अर्तिलूधूसूखनसहचर इत्रः ३ । २ । १८४ ॥

अरित्रम् । लवित्रम् । धवित्रम् । सवित्रम् । खनित्रम् । सहि-
त्रम् । चरित्रम् ॥

पुवः संज्ञायाम् ३ । २ । १८५ ॥

पवित्रम् । येनाज्यमुत्पूयते यच्चानामिकावेष्टनम् ॥

कर्तारि चर्षिदेवतयोः ३ । २ । १८६ ॥

पुव इत्रः ऋषौ करणे देवताया कर्तारि । ऋषिर्वेदमन्त्रः । तदु-
क्तमृषिणेति दर्शनात् । पूयतेऽनेनेति पवित्रम् । देवताया तु अग्निः
पवित्र समा पुनातु ॥

उणादयो बहुलम् ३ । ३ । १ ॥

एते वर्तमाने संज्ञाया च बहुल केचिदविहिता अप्यूह्याः ।
संज्ञासु धातुरूपाणि प्रत्ययाश्च ततः परे । कार्याद्विद्यादनूबन्धमेत-
च्छास्त्रमुणादिषु ॥

भूतेऽपि दृश्यन्ते ३ । ३ । २ ॥

भविष्यति गम्यादयः ३ । ३ । ३ ॥

दाशगोघ्नौ संप्रदाने ३ । ४ । ७३ ॥

एतौ संप्रदाने कारके निपात्येते । दाशन्ति तस्मै दाशः । गा हन्ति
तस्मै गोघ्नोऽतिथिः ॥

भीमादयोऽपादाने ३ । ४ । ७४ ॥

भीमः । भीष्मः । प्रस्कन्दनः । प्ररक्षः । मूर्खः । खलतिः ॥

ताभ्यामन्यत्रोणादयः ३ । ४ । ७५ ॥

संप्रदानापादानपरामर्शार्थं ताभ्यामिति । ततोऽसौ भवति तन्तुः ।
तं तदिति वर्त्म। चरितं तदिति चर्म। तुमुन्ण्वुलौ क्रियाया क्रियार्था
।।म् । कृष्णं द्रष्टुं याति कृष्णं दर्शको याति । अत्र वासरूपेण
।जादयो न पुनर्ण्वुलुक्तेः । समानकर्तृकेषु तुमुन् । अक्रियार्थोपपदा-
मिमेतत् । इच्छति भोक्तुम् । वष्टि वाञ्छति वा ॥

शकधृपज्ञाग्लाघटरभलभक्रमसहार्हास्त्यर्थेषु तुमुन्
३ । ४ । ६५ ॥

एषूपपदेषु धातोस्तुमुन् । शक्नोति भोक्तुम् । एवं धृष्णोत्यादौ ।
अर्थग्रहणमस्तिनैव संबध्यते अनन्तरत्वात् । अस्ति भवति विद्यते
वा भोक्तुम् ॥

पर्याप्तिवचनेष्वलमर्थेषु ३ । ४ । ६६ ॥

पर्याप्तिः पूर्णता तद्वाचिषु सामर्थ्यवचनेषूपपदेषु तुमुन् । पर्याप्तो
भोक्तुं प्रवीणः । कुशलः । पटुरित्यादि । पर्याप्तिवचनेषु किम् ।
अलं भुक्त्वा । अलमर्थेषु किम् । पर्याप्तं भुङ्क्ते । प्रभूततेह गम्यते ।
नतु भोक्तुः सामर्थ्यम् ॥

कालसमयवेलासु तुमुन् ३ । ३ । १६७ ॥

पर्यायोपादानमर्थोपलक्षणार्थम् । कालार्थेषूपपदेषु तुमुन् । कालः
समयो वेलानेहा वा भोक्तुम् । प्रेपादिग्रहणमिहातुवर्तते । तेनेह न ।
भूतानि कालः पचतीति वार्ता ॥

भाववचनाश्च ३ । ३ । ११ ॥

भाव इत्यधिकृत्य वक्ष्यमाणा घञादयः क्रियार्यायां क्रियाया
भविष्यति स्युः । यागाय याति ॥

अण् कर्मणि च ३ । ३ । १२ ॥

कर्मण्युपपदे क्रियार्थायां क्रियाणां चाण् । ण्वुलोऽपवादः । का-
ण्डलावो व्रजति । परत्वादयं कादीन् वाधते । कम्बलदायो व्रजति ॥

पदरुजविशस्पृशो घञ् ३ । ३ । १६ ॥

भविष्यतीति निवृत्तम् । पद्यतेऽसौ पादः । रुजतीति रोगः ।
विशतीति वेशः । स्पृशतीति स्पर्शः ॥

सृ स्थिरे ३ । ३ । १७ ॥

सृ इति लुप्तविभक्तिकं सततः स्थिरे कर्तरि घञ् । सरति काला-
न्तरमिति सारः ॥

व्याधिमत्स्यबलेषु चेति वाच्यम् ❀ ॥

अतीसारो व्याधिः । अन्तर्भावितण्यर्थोऽत्र सरतिः । रुधिरा-
दिक्रमातिशयेन सारयतीत्यर्थः । विसारो मत्स्यः । सारो बले दृढांशे
च । मावे । पाकः पाका ॥

स्फुरतिस्फुलत्योर्घञि ६ । १ । ४७ ॥

अनयोरेच आत्वं घञि । स्फारः । स्फालः । उपसर्गस्य घञि
इति वक्ष्यमाणेन दीर्घः । परीदारः । इकः काशे । नीकाशः । नो-
दात्तोपदेश इति न वृद्धिः । शमः । आचमादेस्तु । आचामः ।
कामः । वामः । विश्राम इति त्वपाणिनीयम् ॥

स्यदो जवे ६ । ४ । २८ ॥

स्यन्देर्घञि नलोपो वृद्धघमावश्च निपात्यते । स्यदो वेगः ।
अन्यत्र स्यन्दः ॥

अवोदोऽघञप्रथमहिमथथाः ६ । ४ । २९ ॥

अवोदोऽघञ्प्रथमहिमथथाः । पथ इन्धनम् । ओष उन्दनम् । अन्धेर्नलोपो
वृद्धघमावश्च । अकर्तरि च कारके गङ्गायाम् ॥

घञि च भावकरणयोः ६ । ४ । २७ ॥

घञेर्नलोपः । रागः । अनयोः किम् । रज्यत्यास्मिन् रङ्गः ।

मास्यत इति प्रासः । संज्ञायाम् इति प्रायिकम् । को भवता लामो
लब्धः । इत उत्तरं मासे अकर्तरि कारके इति कृत्यल्युटो बहुलम्
इति यावद्द्वयमप्यनुवर्तते ॥

परिमाणाख्यायां सर्वेभ्यः ३ । ३ । २० ॥

घञ् । अजपोर्वाधनार्थमिदम् । एकस्तण्डुलनिचायः । द्वौ
शूर्पनिष्पावौ । द्वौ कारौ ॥

दारजारौ कर्तरि णिलुक्च ❀ ॥

दारयन्तीति दाराः । जारयन्तीति जाराः ॥

इडश्च ३ । ३ । २१ ॥

घञ् । अचोऽपवादः । उपेत्यस्मादधीयते उपाध्यायः ॥

अपादाने स्त्रियामुपसंख्यानं तदन्ताच्च वा ङीप् ❀ ॥

उपाध्याया उपाध्यायी ॥

शृ वायुवर्णनिवृत्तेषु ❀ ॥

शृ इत्यविभक्तिको निर्देशः । शारो वायुः । करणे घञ् । शारो
वर्णः । चित्रीकरणमिह धात्वर्थः । निव्रियते आव्रियतेऽनेनेति
निवृत्तमावरणम् । बाहुलकात् करणे क्तः । गौरिवाकृतनीशारः प्रायेण
शिशिरे कृशः । अकृतमावरण इत्यर्थः ॥

उपसर्गे र्वः ३ । ३ । २२ ॥

घञ् । संरावः । उपसर्गे किम् । र्वः ॥

अभिनिस्तः स्तनः शब्दसंज्ञायाम् ८ । ३ । ८६ ॥

अस्मात्स्तनः सस्य मूर्धन्यः । अभिनिष्ठानो वर्णः । शब्दसंज्ञायां
किम् । अभिनिःस्तनति मृदङ्गः ॥

समियुद्बुदुवः ३ । ३ । २३ ॥

संयूयते मिश्रीक्रियते गुडादिभिरिति संयावः पिष्टविकारोऽपूप-
विशेषः । संद्रावः । संदावः ॥

त्रिणी भुवोऽनुपसर्गे ३ । ३ । २४ ॥

श्रायः । नायः । भावः । अनुपसर्गे किम् । प्रश्रयः । प्रणयः ।
प्रभवः । कथं प्रभावो राज्ञः । इति प्रकृत्यो भाव इति प्रादिसमासः ।
कथं राज्ञो नय इति बाहुलकात् ॥

वौ क्षुश्रुवः ३ । ३ । २५ ॥

विक्षावः । विश्रावः । वौ किम् । क्षवः । श्रवः ॥

अवोदोर्नियः ३ । ३ । २६ ॥

अवनायोऽधोनयनम् । उन्नायः ऊर्ध्वनयनम् । कथम् उन्नयः ।
उत्प्रेक्षा इति बाहुलकात् ॥

प्रे द्रुस्तुस्रुवः ३ । ३ । २७ ॥

प्रद्रावः । प्रस्तावः । प्रे इति किम् । द्रवः । स्तवः । स्रवः ॥

निरभ्योः पूल्वोः ३ । ३ । २८ ॥

निष्पूयते शूर्पादिभिरिति निष्पावो धान्यविशेषः । अभिलावः
निरभ्योः किम् । पवः । लवः ॥

इति ९३ अंशाः ।

उङ्गयोर्ग्रः ३ । ३ । २९ ॥

उङ्गारः । निगारः । उङ्गयोः किम् । गरः ॥

कृ धान्ये ३ । ३ । ३० ॥

कृ इत्यस्माद्धान्यविषयकादुङ्गयोर्घञ् । उत्कारो निकारो धा-
न्यस्य विक्रम इत्यर्थः । धान्यं किम् । भिक्षोत्करः । पुष्पनिकरः ॥

यज्ञे समिस्तुवः ३ । ३ । ३१ ॥

समेत्य स्तुवन्ति यस्मिन्देसे छन्दोगाः स देशः । संस्तावः । यज्ञे
किम् । संस्तवः पारिचयः ॥

प्रेस्त्रोऽयज्ञे ३ । ३ । ३२ ॥

अयज्ञे इति छेदः । यज्ञे इति प्रकृतत्वात् प्रस्तारः । अयज्ञे
किम् । वार्हिषः प्रस्तारो मुष्टिविशेषः ॥

प्रथने वावशब्दे ३ । ३ । ३३ ॥

विपूर्वात्स्वृणातेर्घञ् । अशब्दविषये प्रथने । पटस्य विस्तरः ।
प्रथने किम् । तृणविस्तरः । अशब्दे किम् । ग्रन्थविस्तरः ॥

छन्दोनाम्नि च ३ । ३ । ३४ ॥

स्रः इत्यनुवर्तते । विद्यारपाङ्क्तिश्छन्दः । विस्तीर्यन्तेऽस्मिन्नक्षरा-
णीत्याधिकरणे घञ् ततः कर्मधारयः ॥

छन्दोनाम्नि च ८ । ३ । ९४ ॥

विपूर्वात्स्वृणातेर्घञन्तस्य सस्य पत्वं छन्दोनाम्नि । इति पत्वम् ॥

उदि ग्रहः ३ । ३ । ३५ ॥

उद्गाहः ॥

समि मुष्टौ ३ । ३ । ३६ ॥

मलस्य संग्राहः । मुष्टौ किम् । द्रव्यस्य संग्रहः ॥

परिन्योर्नाणोर्धूताभ्रेपयोः ३ । ३ । ३७ ॥

परिपूर्वान्नयतेर्निपूर्वादिणश्च घञ् क्रमेण द्यूतेऽभ्रेपे च विषये ।
परिणायेन शारान्दन्ति । समन्तान्नयनेनेत्यर्थः । एषोऽत्र न्यायः उ-
चितमित्यर्थः । द्यूताभ्रेपयोः किम् । परिणयो विवाहः । न्ययो नाशः ॥

परावनुपात्यय इणः ३ । ३ । ३८ ॥

क्रमप्राप्तस्यानातिपातोऽनुपान्ययः । तव पर्यायः । अनुपात्यये
किम् । कालस्य पर्ययः । अतिपात इत्यर्थः ॥

व्युपयोः शेतेः पर्याये ३ । ३ । ३९ ॥

तव विशायः । तव राज्ञोपशायः । पर्याये किम् । विशयः ।
संशयः । उपशयः समीपशयनम् ॥

हस्तादाने चेरस्तेये ३ । ३ । ४० ॥

हस्तादान इत्यनेन प्रत्यासत्तिरादेयस्य लक्ष्यते । पुष्पप्रचायः ।
हस्तादाने किम् । वृक्षाग्रस्थानां फलानां यद्यथा प्रचयं करोति ।
अस्तेये किम् । पुष्पप्रचयश्चौर्येण ॥

निवासचितिशरीरोपसमाधानेष्वदेश्च कः ३।३।४१ ॥

एषु चिनोतेर्घञ्स्यात् आदेश्च ककारः । उपसमाधानं राशीकरणं तच्च धात्वर्थः । अन्ये प्रत्ययार्थस्य कारकस्योपाधिभूताः । निवासे-काशीनिकायः । चितौ-आकायमार्त्तं चिन्वीत । शरीरे-चीयतेऽस्मिन्नस्थ्यादिकमिति कायः । समूहे-गोमयनिकायः । एषु किम् । चयः । चः क इति वक्तव्ये आदीरित्युक्तेर्यद्ब्रह्म्यादेरेव इति । गोमयानां निकेचायः । पुनःपुना राशीकरणमित्यर्थः ॥

संघे चानौत्तराधये ३ । ३ । ४२ ॥

घेर्घञ्देश्च कः । भिक्षुनिकायः । प्राणिनां समूहः संघः । अनौत्तराधये किम् सूकर निचयः । संघे किम् । ज्ञानकर्मसमुच्चयः ॥

कर्मव्यतिहारे णच् स्त्रियाम् ३ । ३ । ४३ ॥

स्त्रीलिङ्गे भावे णच् ॥

णचः स्त्रियाम् ५ । ४ । १४ ॥

न कर्मव्यतिहारे ७ । ३ । ६ ॥

अत्र ऐज्ज । व्यावक्रोशी । व्यावहाती ।

अभिविधौ भाव इनुण् ३ । ३ । ४४ ॥

अणिनुणः ५ । ४ । १५ ॥

इनप्यनपत्ये इति वक्ष्यमाणः प्रकृतिभावः । सांराविणं वर्तते ॥

आक्रोशेऽवन्योर्ग्रहः ३ । ३ । ४५ ॥

अवनि एतयोर्ग्रहेर्घञ्ज्ञ शप्ते । अवग्राहस्ते भूयात् । अभिमव इत्यर्थः । निग्राहस्ते भूयात् । बाध इत्यर्थः । आक्रोशे किम् । अवग्रहः पदस्य । निग्रहश्चोरस्य ॥

प्रे लिप्सायाम् ३ । ३ । ४६ ॥

पाप्रमप्राहेण चरति भिक्षुः ॥

परो यज्ञे ३ । ३ । ४७ ॥

उत्तरः परिग्राहः । स्फयेन वेदेः स्वीकरणम् ॥

नौ वृ धान्ये ३ । ३ । ४८ ॥

वृ इति लुप्तपञ्चमीकम् । नीवाराः । धान्ये किम् । निवरा कन्या ।
क्तिन्विपयेऽपि बाहुलकादप् । प्रवरा सेतिवत् ॥

उदि श्रयतियौतिपूद्रुवः ३ । ३ । ४९ ॥

उच्छ्रायः । उद्यावः । उत्पावः । उद्द्रावः । कथं पतनान्ताः ।
समुच्छ्रयाः इति बाहुलकात् ॥

विभापा डिः रूपुवोः ३ । ३ । ५० ॥

आरावः आरवः । आप्लावः आप्लवः ॥

अवे ग्रहो वर्षप्रतिबन्धे ३ । ३ । ५१ ॥

विभापेति वर्तते । अवग्रहः अवग्राहः । वर्षप्रतिबन्धे किम् ।
अवग्रहः पदस्य ॥

प्रे वणिजाम् ३ । ३ । ५२ ॥

प्रे ग्रहेर्धञ्वा वणिजां संबन्धी चेत्प्रत्ययार्थः । तुलासूत्रमिति
यावत् । तुलाप्रग्राहेण चरति तुलाप्रग्रहेण ॥

रश्मौ च ३ । ३ । ५३ ॥

प्रग्रहः प्रग्राहः ॥

वृणोतेराच्छादने ३ । ३ । ५४ ॥

विभापा प्र इत्येव । प्रवारः ॥

परौ भुवोऽवज्ञाने ३ । ३ । ५५ ॥

परिभावः परिभवः । अवज्ञाने किम् । सर्वतो भवनं परिभवः । एर-
च् । चयः । जयः ॥

भयादीनामुपसंख्यानं नपुंसके क्तादिनिवृत्त्यर्थम् ❀ ॥

मयम् । वर्षम् । ऋदोरप् । कतः । गरः । शरः । यवः । लवः ।
स्तवः । पवः ॥

वृक्षासनयोर्विष्टरः ८ । ३ । ९३ ॥

अनयोर्विपूर्वस्य स्रः पत्वं निपात्यते । विष्टरो वृक्ष आसनं च ।
वृक्ष इति किम् । वाक्यस्य विस्तरः ॥

ग्रहवृद्धनिश्चिगमश्च ३ । ३ । ५८ ॥

अप् । घञचोरपवादः । ग्रहः । वरः । दरः । निश्चयः । गमः ॥

वशिरण्योरुपसंख्यानम् * ॥

वशः । रणः ॥

घभर्थे कविधानम् * ॥

प्रस्यः । विघ्नः ॥

द्वित्वप्रकरणे के कृभादीनामिति वक्तव्यम् * ॥

चक्रम् । चिह्नितम् । चक्तसः ॥

उपसर्गेऽदः ३ । ३ । ५९ ॥

जप् ॥

घभपोश्च २ । ४ । ३८ ॥

अदेर्वस्त्वात् स्वाद् घञ्यपि च । प्रघसः । विघसः । उपसर्गे
किम् । घातः ॥

नौ ण च ३ । ३ । ६० ॥

नौ उपपदे अदेर्णः अप्च । न्यादः । निघसः ॥

व्यघजपोरनुपसर्गे ३ । ३ । ६१ ॥

अप् । व्यघः । जपः । उपसर्गे तु, आढ्याधः । उपजापः ॥

स्वनदसोर्वा ३ । ३ । ६२ ॥

अप् । पक्षे घञ् । स्वनः स्नानः । दसः दामः । अनुपसर्गे
इत्ये । प्रम्बानः । मदागः ॥

यमः समुपनिविषु च ३ । ३ । ६३ ॥

एष्वनुपसर्गे च यमेरष्वा । संयमः । संयामः उपयमः । उप-
मः । नियमः नियामः । वियमः । वियामः यमः यामः ॥

नौ गदनदपठस्वनः ३ । ३ । ६४ ॥

अब्बा । निगदः निगादः । निनदः निनादः । निपठः
नेपाठः । निस्वनः निस्वानः ॥

क्वणो वीणायां च ३ । ३ । ६५ ॥

नावनुपसर्गे च वीणाविषयाच्च क्वणतेरब्बा । वीणाग्रहणं प्राच-
म् । निक्वणः निक्वाणः । क्वणः क्वाणः । वीणाया तु । प्रक्वणः
क्वाणः ॥

नित्यं पणः परिमाणे ३ । ३ । ६६ ॥

अप् । मूलकपणः । शाकपणः । व्यवहारार्थं मूलकादीनां
परिमितो मुष्टिर्वध्यते सोऽस्य विषयः । परिमाणे किम् । पाणः ॥

मदोऽनुपसर्गे ३ । ३ । ६७ ॥

धनमदः । उपसर्गे तु, उन्मादः ॥

प्रमदसंमदौ हर्षे ३ । ३ । ६८ ॥

हर्षे किम् । प्रमादः । संमादः ॥

समुदोरजः पशुषु ३ । ३ । ६९ ॥

संपूर्वोऽजिः समुदाय उत्पूर्वश्च प्रेरणे तस्मात्पशुविषयकादप् ।
मघजपोः इत्युक्तेर्बीभावो न । समजः पशूना संघः । उदजः
शूना प्रेरणम् । पशुषु किम् । समाजो ब्राह्मणानाम् । उदाजः
त्रियाणाम् ॥

अक्षेषु गृहः ३ । ३ । ७० ॥

अक्षशब्देन देवं लक्ष्यते । तत्र यत्पणरूपेण ग्राह्यं तत्र गृहः
इति निपात्यते । अक्षस्य गृहः । व्यात्युक्षीमभिसरणगृहामदी-
व्यन् । अक्षेषु किम् । पादस्य ग्रहः ॥

प्रजने सर्तेः ३ । ३ । ७१ ॥

द्वुपचप-पात्रेन निर्वृत्तं पत्रिमम् । द्वुप-उत्त्रिमम् । द्वितोऽथुच्च ।
द्वेपृ वेपथुः-श्वयथुः ॥

यजयाचयतविच्छप्रच्छरक्षोऽनङ् ३ । ३ । ९० ॥

यज्ञः । याच्ना । यत्नः । विश्रः । प्रश्रः । प्रश्रे चासन्न इति
ज्ञापकान्न संप्रसारणम् । डित्त्वं तु विश्र इत्यत्र गुणनिषेधाय । रक्षणः ॥

स्वपो नन् ३ । ३ । ९१ ॥

स्वमः ॥

उपसर्गे घोः किः ३ । ३ । ९२ ॥

प्रधिः । अन्तर्धिः । उपाधीयतेऽनेनेत्युपाधिः ॥

कर्मण्यधिकरणे च ३ । ३ । ९३ ॥

कर्मण्युपपदे घोः किः अधिकरणेऽर्थे । जलानि धीयन्तेऽस्मि-
न्निति जलधिः । स्त्रिया क्तिन् । घञोऽपवादः । अजपौ तु परत्वा-
द्भाधते । कृतिः । चितिः । स्तुतिः । स्फाथी । स्फातिः । स्फीति-
कामः इति तु प्रामादिकम् । क्तान्ताद्धात्वर्थे णिचि अच इः इति
वा ममाधेयम् ॥

श्रुयजीपिस्तुभ्यः करणे ❀ ॥

श्रूयतेऽनया श्रुतिः । यजेरिपेश्च । इष्टिः । स्तुतिः ॥

ऋत्वादिभ्यः क्तिन्निष्ठावद्वाच्यः ❀ ॥

तेन नत्वम् । गीर्णिः । लूनिः । घूनिः । यूनिः । ह्लादः इति
योगविभागात् क्तिनि ह्रस्वः । प्रह्वन्निः । ति च । चूर्तिः । फुल्लिः ॥

चायतेः क्तिनि चिभावो वाच्यः ❀ ॥

अपचितिः । संपदादिभ्यः क्तिप् । संपत् । विपत् । क्तिन्नपी-
च्यते । संपत्तिः । विपत्तिः ॥

स्थागापापन्नो भावे ३ । ३ । ९५ ॥

क्तिन्स्याद्ङोऽपवादः । प्रस्थितिः । उपस्थितिः । संगीतिः ।

संपीतिः । पाक्तिः । कथम् अवस्था संस्था इति । व्ययस्थायाम् इति ज्ञापकात् ॥

ऊतियूतिजूतिसातिहेतिकीर्तयश्च ३ । ३ । ९७ ॥

अवतेः ज्वर त्वर इत्यूट् । ऊतिः स्वरार्थं वचनम् । उदात्त इति हि वर्तते । यूतिः । जूतिः । अनयोर्दीर्घत्वं च निपात्यते । स्यनेः सातिः । यतिस्यतिमास्था इतीच्चे प्राप्त इत्वाभायो निपात्यते । सनोतेर्वा जनसन इत्यात्वे कृते स्वार्थं निपातनम् । हन्तेर्दिनोतेर्वा । हेतिः । कीर्तिः ॥

व्रजयजोर्भावे क्यप् ३ । ३ । ९८ ॥

व्रज्या । इज्या ॥

संज्ञायां समजनिपदनिपतमनविदपुञ्जशीङ्भृभिणः ३ । ३ । ९९ ॥

गमजादिभ्यः स्त्रियां भावादी क्यप् स चादात्तः संज्ञायाम् ॥

अजेः क्यपि वीभायो नेति वाच्यम् ❀ ॥

समजन्त्यस्यामिति समज्या सभा । निपीदन्त्यस्यामिति निपद्या आपणः । निपतन्त्यस्यामिति निपत्या पिच्छिला भूमिः । मन्यतेऽनयेति मन्या गलपार्श्वशिरा । विदन्त्यनया विया । मुत्याभिपवः । शय्या । भृत्या । ईयतेऽनया इत्या शिविका ॥

कृजः श च ३ । ३ । १०० ॥

कृजः इति योगरिभागः । कृजः क्यप् कृज्या श च । चात्किन् । क्रिया कृतिः ॥

इच्छा ३ । ३ । १०१ ॥

इषेर्भावे शो यगमावश्च निपात्यते । इच्छा ॥

परिचर्यापरिसर्यामृगयाटास्यानामुपसंख्यानम् ❀ ॥

शो यक्च निपात्यते । परिचर्या पूजा । परिसर्या परिस्मरणम् । अत्र गुणोऽपि । मृग अन्वेषणे । सुरादावदन्तः । अतो लोपात्मा-

वोऽपि । शे यकि णिलोपः । मृगया । अटतेः शे यकि टचशब्दस्य
द्वित्वं पूर्वभागे यकारनिवृत्तिर्दीर्घश्च । अटाट्या ॥

जागतैरकारो वा ❀ ॥

पक्षे शः । जागरा जागर्या । अप्रत्ययात् । चिकीर्षा । पुत्रका-
म्या । गुरोश्च हलः । ईहा । ऊहा । गुगेः किम् । भक्तिः । हल
किम् । नीतिः ॥

निष्ठायां सेट इति वक्तव्यम् ❀ ॥

नेह । आप्तिः । तितुत्र इति नेद् । दीप्तिः ॥

तितुत्रेष्वगृहादीनामिति वाच्यम् ❀ ॥

निगृहीतिः । निपठितिः । पिद्भिदादिभ्योऽङ् । जृप् । ऋदृशोऽ-
ङि गुणः । जरा । ञ्पूप् त्रपा । भिदा । विदारण एवायम् ।
भित्तिरन्या । छिदा । मृजा ॥

ऋपेः संप्रसारणं च ❀ ॥

कृपा ॥

चिन्तिपूजिकथिकुम्बिचर्चश्च ३ । ३ । १०५ ॥

अङ् युचोऽपवादः । चिन्ता । पूजा । कथा । कुम्बा । चर्चा ।
आतश्चोपसर्गं । प्रदा । उपदा ॥

श्रदन्तरोरुपसर्गवद्भक्तिः ❀ ॥

श्रद्धा । अन्तर्धा । उपसर्गं घोः किः इत्यनेन किः । अन्तर्धि
ष्यामश्चन्यो युच् । कारणा । हारणा । आसना । श्रन्थना ॥

घट्टिवन्दिविदिभ्यश्चेति वाच्यम् ❀ ॥

घट्टना । वन्दना । वेदना ॥

इपेरनिच्छार्थस्य ❀ ॥

अन्वेषणा ॥

परेर्वा ❀ ॥

पर्येषणा । परोष्टिः ॥

रोगारख्यायां ष्वुल्बहुलम् ❀ ॥

प्रच्छर्दिका । प्रसाहिका । विचर्चिका ॥

क्वचिन्न ❀ ॥

शिरोर्तिः ॥

धात्वर्थानर्देशे ष्वुल्वक्तव्यः ❀ ॥

आसिका । शायिका । इक्षितपादय उक्ताः । पचिः पचतिः ।
अकारः ककारः । रादिफः रेफः । मत्वर्थीयः । आजिः । जातिः ।
वापिः । वासिः । कृषिः । गिरिः ॥

संज्ञायाम् ३ । ३ । १०९ ॥

अत्र धातोर्णुल् । उद्दालकपुष्पभञ्जिका ॥

विभाषारख्यानपरिप्रश्नयोरिञ्च ३ । ३ । ११० ॥

परिप्रश्न आख्याने च गम्य इन्न चाण्णुल् विभाषोक्तैर्यथाप्राप्त
मन्येऽपि । का त्व कारि कारिका क्रिया कृत्या कृति वाकार्पाः ।
सर्वा कारि कारिका क्रिया कृत्या कृति वाकार्पम् । एवं गणि
गणिका गणनाम् । पाचि पाचिका पचा पक्तिम् ॥

पर्यायाहर्णोत्पत्तिषु ष्वुच्च ३ । ३ । १११ ॥

पर्यायः । परिपाटी क्रमः । अर्हणमर्हः योग्यता । पर्यायादिषु
द्योत्येषु ष्वुज्वा । भवत आसिका । शायिका । अग्रगामिका ।
भवानिक्षुभक्षिकामर्हति । ऋणे-इक्षुभक्षिका मे धारयति । उत्पत्तौ-
इक्षुभक्षिका उदपादि । आम्रोशे नञ्यनिः अजीवनिस्ते शठ भू-
यात् । अप्रयाणिः । कृत्यलघुटो बहुलम् । भावे । कर्तरि च कारके
संज्ञायामिति च निवृत्तम् । राज्ञा भुज्यन्ते राजभोजनाः शालयः ।
नपुंसके भावे क्तः । ल्युट् च । हसितं हसनम् । योगविभाग उत्तरार्थम् ॥

कर्मणि च येन संस्पर्शात्कर्तुः शरीरसुखम् ३ । ३ ।

११६ ॥

येन स्पृश्यमानस्य कर्तुः शरीरसुखमुत्पद्यते तस्मिन्कर्मण्युपपदे
ल्युट् । पूर्वेण सिद्धे नित्यसमासार्थं वचनम् । पयःपानं सुखम् ।
कर्तरि इति किम् । गुरोः स्नापनं सुखम् । नेह गुरुः कर्ता क्तितु कर्म ॥

इति ९५ अंशाः ।

वायौ २ । ४ । ५७ ॥

अजेर्वा वायौ । प्रवयणम् । प्राजनम् । करणाधिकरणयोश्च ।
ल्युट् । इध्मप्रव्रश्चनः कुठारः । गोदोहनी स्थाली । खलः । प्राकर-
णाधिकरणयोरित्यधिकारः ॥

अन्तरदेशे ८ । ४ । २४ ॥

अन्तःशब्दाद्धन्तेर्नस्य णः । अन्तर्हणनम् । देशे तु अन्तर्हणनो
देशः । अत्पूर्वस्येत्येव । अन्तर्घ्नन्ति । तपरः किम् । अन्तरघानि ॥

अयनं च ८ । ४ । २५ ॥

अयनस्य णोऽन्तःशब्दात्परस्य । अन्तरयणम् । अदेश इत्येव ।
अन्तरयनो देशः ॥

पुंसि संज्ञायां घः प्रायेण ३ । ३ । ११८ ॥

छादेर्घेऽद्भ्युपसर्गस्य ६ । ४ । ९६ ॥

द्विप्रभृत्युपसर्गहीनस्य छादेर्ह्रस्वः घे परे । दन्ताश्लेषान्तेऽनेन
दन्तच्छदः । आकुर्वन्त्यस्मिन्नाकरः ॥

गोचरसंचरवहव्रजव्यजापणनिगमाश्च ३ । ३ । ११९ ॥

घान्ता निपात्यन्ते । हलश्च इति वक्ष्यमाणस्य घञोऽपवादः ।
गावश्चान्त्यस्मिन्निति गोचरो देशः । संचरन्तेऽनेन संचरो मार्गः ।
वहन्त्यनेन वहः स्कन्धः व्रजः । व्यजस्तालवृन्तम् । निपातनाष्टी-
भावो न । आपणः पण्यस्थानम् । निगच्छन्त्यनेन निगमश्छन्दः ।
चात्कपः । निकपः ॥

अवे तृस्रोर्घञ ३ । ३ । १२० ॥

अवतारः कृपादेः । अवस्तारो जवनिका । हलश्च । रमन्ते
योगिनोऽस्मिन्निति रामः । अपमृज्यतेऽनेन व्याध्यादिगित्यपा-
मार्गः । विमार्गः । समूहनी ॥

अध्यायन्यायोद्यावसंहाराश्च ३ । ३ । १२२ ॥

अधीयतेऽस्मिन्नध्यायः । नियन्त्युद्युवन्ति संहरन्त्यनेनेति विग्रहः ॥

अवहाराधारावायानामुपसंख्यानम् ❀ ॥

उदङ्कोऽनुदके ३ । ३ । १२३ ॥

उत्पूर्वादञ्चतेर्घञ् नतूदके । घृतमुदच्यते उद्घ्रियतेऽस्मिन्निति
घृतादङ्गश्चर्ममयं भाण्डम् । अनुदके किम् । उदकोदञ्चनः ॥

जालमानायः ३ । ३ । १२४ ॥

आनीयन्ते मत्स्यादयोऽनेनेत्यानायः । जालम् इति किम् ।
आनयः ॥

खनो घ च ३ । ३ । १२५ ॥

चाद्वञ् । आखनः आखानः । धित्करणमन्यतोऽप्ययमिति
ज्ञापनार्थम् । तेन भगः पदमित्यादि ॥

खनेर्हुडरेकेकवका वाच्याः ❀ ॥

आखः । आखरः । आखनिक आखनिकवकः । एते खनित्रवचनाः ।
ईपद्दुःसुपु कृच्छ्राकृच्छ्रार्थेषु खल् । करणाधिकरणयोरिति निवृत्तम् ।
कृच्छ्रे-दुष्करः कटो भवता । अकृच्छ्रे-ईपत्करः सुकरः ॥

निमिर्मालियां खलचोरात्वं नेति वाच्यम् ❀ ॥

ईपन्निमयः । दुष्प्रमयः । सुविलयः । निमयः । मयः । लयः ॥

उपसर्गात् खलघभोः ७ । १ । ६७ ॥

उपसर्गादेव लभेर्नुम् । ईपत्प्रलम्भः । दुष्प्रलम्भः । सुप्रलम्भः ।
उपालम्भः । उपसर्गात् किम् । ईपल्लभः लाभः ॥

न सुदुर्भ्यां केवलाभ्याम् ७ । १ । ६८ ॥

उपसर्गान्तररहिताभ्यां सुदुर्भ्यां लभेर्नुन्न खल्घञोः । सुलभम् ।
दुर्लभम् । केवलाभ्यां किम् । सुप्रलम्भः । अतिदुर्लम्भः । कथं तर्हि
अतिसुलभमितिदुर्लभमिति । यदा स्वती कर्मप्रवचनीया तदा भवि-
ष्यति ॥

कर्तृकर्मणोश्च भूकृभोः ३ । ३ । १२७ ॥

कर्तृकर्मणोरीपदादिषु चोपपदेषु भूकृञोः खल् यथासंख्यं न
ष्यते कर्तृकर्मणी च धातोरव्यवधानेन प्रयोज्ये । ईपदादयस्तु ततः
प्राक् ॥

कर्तृकर्मणोश्च्यर्थयोरिति वाच्यम् ❀ ॥

खित्त्वान्मुम् । अनाढ्येन दुःखेन भूयते दुराढ्यम्भवम् । ईप
दाढ्यम्भवम् । स्वाढ्यम्भवम् । ईपदाढ्यङ्करः । दुराढ्यङ्करः । स्वा
ढ्यङ्करः । च्यर्थयोः किम् । आढ्येन सुभूयते । आतो युच् ।
खलोऽपवादः । ईपत्पानः सोमो भवता । दुष्पानः ॥

भापायां शासियुधिदृशिधृपिभ्यो युज्वाच्यः ❀ ॥

दुःशासनः । दुर्योधन इत्यादि ॥

पात्पदान्तात् ८ । ४ । ३४ ॥

नस्य णो न । निष्पानम् । सर्पिष्पानम् । पात् किम् । निर्णयः ।
पदान्तात् किम् । पुष्णाति । पदेऽन्तः पदान्तोऽप्यमिति सप्तमीस-
मासोऽप्यम् । तेनेह न । सुसर्पिष्केण । आवश्यककाधमर्ण्ययोर्णिनिः ।
अवश्यंकारी । शतंदायी । कृत्याश्च । आवश्यककाधमर्ण्ययोरित्येव ।
अवश्यं हरिः सेव्यः । शतं देयम् । क्तिक्तौ च संज्ञायाम् । तितुन
इति नेट् । भवताऽहूतिः ॥

न क्तिचि दीर्घश्च ६ । ४ । ३९ ॥

अनिटां वनतितनोत्यादीनां च दीर्घानुनासिकलोपो न स्त-
क्तिचि परे । यन्तिः । रन्तिः । वन्तिः । तन्तिः ॥

सनः क्तिचि लोपश्चास्यान्यतरस्याम् ६ । ४ । ४५ ॥

सनोतेः क्तिच्यात्वं वा लोपश्च वा । सनुतात् । सातिः सतिः
मन्तिः । देवा एनं देयामुर्देवदत्तः । अलंखल्वोः प्रतिपेधयोः प्राचां
क्त्वा । प्राचां ग्रहणं पूजार्थम् । अमैवाव्ययेन इति नियमान्नोपपद-
समासः । दोदद्वो' । अलं दत्त्वा । घुमास्या । पीत्वा खलु । अलं-
खल्वोः किम् । माकार्पात् । प्रतिपेधयोः किम् । अलंकारः ॥

उदीचां माङो व्यतीहारे ३ । ४ । १९ ॥

व्यतीहारेऽर्थे माङः क्त्वा । अपूर्वकालार्थमिदम् ॥

मयतेरिदन्यतरस्याम् ६ । ४ । ७० ॥

मेड इकारोऽन्तादेशः वा ल्यपि । अपमित्य याचते अपमाय ।
उदीचाग्रहणाद्यथाप्राप्तमपि । याचित्वा अपमयते ॥

परावरयोगे च ३ । ४ । २० ॥

परेण पूर्वस्यावरेण परस्य योगे गम्ये धातोः क्त्वा । अप्राप्य
नदीं पर्वतः । परनदी योगोऽत्र पर्वतस्य । अतिक्रम्य पर्वतं स्थिता
नदी । अवरपर्वतयोगोऽत्र नद्याः । समानकर्तृकयोः पूर्वकाले । भु-
क्त्वा व्रजति । द्वित्वमतन्त्रम् । स्नात्वा भुक्त्वा पीत्वा व्रजति । अनु-
दात्त इत्यनुनासिकलोपः । विष्णुं नत्वा स्तौति ॥

स्वरत्यादेः श्युकः किति इति नित्यमिडभावः पूर्ववि-
प्रतिपेधेन ❀ ॥

सृत्वा । सूत्वा । धूत्वा ॥

क्त्व स्कान्दिस्यन्दोः ६ । ४ । ३१ ॥

एतयोर्नलोपे न स्यात्क्त्व परे । स्कन्त्वा । ऊदित्वादिडा । स्य-
न्त्वा स्यन्दित्वा ॥

न क्त्वा सेट् १ । २ । १८ ॥

सेट् क्त्वा क्तिन्न । अयित्वा । सेट् किम् । कृत्वा ॥

मृडमृदगुधकुपक्लिशवदवसः क्त्वा १ । २ । ७ ॥

एभ्यः सेट् क्त्वा कित् । मृडित्वा । क्लिप्तः क्त्वा इति वेद् ।
 क्लिशित्वा क्लिप्तः । उदित्वा । उपित्वा । रुद्विद इति कित्त्वम् ।
 रुदित्वा । विदित्वा । मुपित्वा । गृहीत्वा ॥

नोपधात्थफान्ताद्वा १ । २ । २३ ॥

सेट् क्त्वा कित्स्याद्वा । श्रथित्वा श्रन्थित्वा । गुफित्वा गुम्फि
 त्वा । नोपधात् किम् । कोथित्वा । रेपित्वा ॥

वञ्चिलुञ्चृतश्च १ । २ । २४ ॥

सेट् क्त्वा किद्वा । वचित्वा वञ्चित्वा । लुचित्वा लुञ्चित्वा ।
 ऋतित्वा अर्तित्वा ॥

तृपिमृपिकृशेः काश्यपस्य १ । २ । २५ ॥

एभ्यः सेट् क्त्वा किद्वा । तृपित्वा तर्पित्वा । मृपित्वा मर्पित्वा ।
 कृशित्वा कर्शित्वा । रलो व्युपधात् इति वा कित्त्वम् । हृतित्वा
 द्योतित्वा । लिखित्वा लोखित्वा । रलः किम् । सेवित्वा । व्युपधात्
 किम् । वर्तित्वा । हलादेः किम् । एपित्वा । सेट् किम् । भुक्त्वा ।
 वसतिधुधोरिद् । उपित्वा । धुधित्वा क्षोधित्वा । अञ्चेः पूजायाम्
 इति नित्यमिट् । अञ्चित्वा । गतौ तु अक्त्वेत्यपि । लुभित्वा लोभि-
 त्वा । लुभो विमोहने इतीद् । विमोहने तु । लुब्ध्या ॥

जृव्रश्च्योः कित् ७ । २ । ५५ ॥

आभ्या परस्य क्तव इट् । जरीत्वा जगित्वा । प्रथित्वा ॥

उदितो वा ७ । २ । ५६ ॥

उदितः परस्य क्तव इट्वा । शमित्वा । अनुनामिकस्य कि इति
 दीर्घः । शान्त्या । दृत्वा देवित्वा ॥

इति ९६ अंशाः ।

ऋमश्च कित् ६ । ४ । १८ ॥

ऋमठपधाया वा दीर्घः । झलादी नित्र षे । नान्त्वा ऋन्त्वा ।
 झलि किम् । ऋमिता । प्रडश्च इति वेद् । पवित्वा पृत्वा ॥

जान्तनशां विभाषा ६ । ४ । ३२ ॥

जान्तानां नशेश्च नलोपो वा क्त्वि परे। भक्त्वा भङ्क्त्वा । रक्त्वा
गङ्क्त्वा । मस्तिजनशोः इति तुम् । तस्य पक्षे लोपः । नष्ठा नंष्ठा ।
ग्धादिभ्यश्च इतीदृपक्षे । नशित्वा ॥

झलादाविति वाच्यम् ॐ ॥

नेह । अञ्जित्वा । ऊदित्वाद्देदृपक्षे । अक्त्वा अङ्क्त्वा । जन-
नन इत्यात्वम् । खात्वा खनित्वा । द्यतिस्यति इतीत्वम् । दित्वा ।
मित्वा । मित्वा । स्थित्वा । दधानेर्धिः । हित्वा ॥

जहातेश्च क्त्वि ७ । ४ । ४३ ॥

हित्वा । हाडस्तु हात्वा । अदो जग्धिः । जग्ध्वा । ममानेड-
नञ्पूर्वे ल्यप् तुक् । प्रकृत्य । अनञ् किम् । अकृत्वा ।
पर्युदासाश्रयणान्नेह । परमकृत्वा ॥

पत्वतुकोरसिद्धः ६ । १ । ८६ ॥

पत्वे तुकि च कर्तव्ये एकादेशशास्त्रमसिद्धम् कोऽमिचत् । इह
पत्वं न । अधीत्य । प्रेत्य । ह्रस्वस्य इति तुक् ॥

वा ल्यपि ६ । ४ । ३८ ॥

अनुदात्तोपदेशानां वनतितनात्वादीनामनुनामिकलोपो वा
न्याह्यपि । व्यवस्थितविभाषेयम् । तेन मान्तानिटां वा नान्ता-
निटां वनादीनां च नित्यम् । आगत्य । आगम्य । प्रणत्य ।
प्रणम्य । प्रहत्य । प्रमत्य । प्रवत्य । वितत्य । अदो जग्धिः ॥

अन्तरङ्गानपि विधीन्चहिरङ्गो ल्यञ्चाधते ॥

जग्धिविधौ ल्यञ्चप्रहणात् तेन हित्वदत्वात्वे त्वदीर्घत्वश्रुटिदो
ल्यपि न । विधाय । प्रदाय । प्रावन्य । प्रस्थाप्य । प्रक्रम्य । आपृ-
च्छय । प्रदीव्य ॥

न ल्यपि ६ । ४ । ६९ ॥

ल्यपि परे घुमास्थादेरीत्वं न । धेद् । प्रधाय । प्रमाय । प्रगाय ।

प्रपाय । प्रहाय । प्रसाय । मीनातिमिनोति इत्यात्वम् । प्रमाय ।
निमाय । उपदाय । विभापा लीयतेः । विलाय विलीय । णिलोपः ।
उत्तार्य । विचार्य ॥

ल्यपि लघुपूर्वात् ६ । ४ । ५६ ॥

लघुपूर्वात्परस्य णेरयादेशो ल्यपि । विगणय्य । प्रणमय्य । प्र-
वेभिदय्य । लघुपूर्वात् किम् । संप्रधार्य ॥

विभापापः ६ । ४ । ५७ ॥

आप्तेणैरयादेशो वा ल्यपि । प्रापय्य प्राप्य ॥

क्षियः ६ । ४ । ५९ ॥

क्षियो ल्यपि दीर्घः । प्रक्षीय ॥

ल्यपि च ६ । १ । ४१ ॥

वेजो ल्यपि संप्रसारणं न । प्रवाय ॥

ज्यश्च ६ । १ । ४२ ॥

प्रज्याय ॥

व्यश्च ६ । १ । ४३ ॥

उपव्याय ॥

विभापा परेः ६ । १ । ४४ ॥

परेव्येञो वा संप्रसारणं ल्यपि । तुकं बाधित्वा परत्वात् हलः
इति दीर्घः । परिबीय परिव्याय । कथं मुखं व्यादाय स्वपिति नेत्रे
निमीलय हसति इति । व्यादानसंमीलनोत्तरकालेऽपि स्वापहासयो-
रनुवृत्तेस्तदंशविवक्षया भविष्यति । आभीक्ष्ये णमुल्च । स्मारं स्मारं
नमति शिवम् । स्मृत्वा स्मृत्वा । पायं पायम् । भोजं भोजम् ।
श्रावं श्रावम् । चिण्णमुलोः इति णमुल्परं णौ वा दीर्घः । गामं
गामम् । गमं गमम् । विभापा चिण्णमुलोः इति नुम्वा । लम्भं
लम्भम् । लाभं लाभम् । व्यवस्थितविभापयोपसृष्टस्य नित्यं नुम् ।
प्रलम्भं प्रलम्भम् । जाप्रोऽविचिण् इति गुणः । जागरं जागरम् । प्य-
न्तस्याप्येवम् ॥

न यद्यनाकाङ्क्षे ३ । ४ । २३ ॥

यच्छब्द उपपदे पूर्वकाले यत्प्राप्तं तन्न । यत्र पूर्वोत्तरे क्रिये त-
द्वाक्यमपरं नाकाङ्क्षते चेत् । यदयं भुङ्क्ते ततः पठति । इह क्त्वाण-
मुलौ न । अनाकाङ्क्षे किम् । यदयं भुक्त्वा व्रजति ततोऽधीते ॥

विभाषाग्रेप्रथमपूर्वेषु ३ । ४ । २४ ॥

आभीक्ष्ण्य इति नानुवर्तते । एषूपपदेषु समानकर्तृकयोः पूर्व-
काले क्त्वाणमुलौ वा । अग्रेभोजं व्रजति । अग्रेभुक्त्वा । प्रथमं भौ-
जम् । प्रथमं भुक्त्वा । पूर्वं भोजम् । पूर्वं भुक्त्वा । पक्षे लडादयः ।
अग्रे भुङ्क्ते ततो व्रजति । आभीक्ष्ण्ये तु । पूर्वविप्रतिषेधेन नित्यमेव
विधेः । अग्रे भोजं भोजं व्रजति । भुक्त्वा भुक्त्वा ॥

कर्मण्याक्रोशे कृञः खमुञ् ३ । ४ । २५ ॥

कर्मण्युपपद आक्रोशे गम्ये चौरंकारमाक्रोशति । करोतिरुच्चा-
रणे । चौरशब्दमुच्चार्येत्यर्थः ॥

स्वाडुमि णमुल् ३ । ४ । २६ ॥

स्वाद्धर्षेषु कृञो णमुल् । एककर्तृकयोः पूर्वकाले पूर्वपदस्य मा-
न्तत्वं निपात्यते । अस्मादुं स्वादुं कृत्वा भुङ्क्ते स्वादुंकारं भुङ्क्ते ।
संपन्नंकारम् । लवणंकारम् । संपन्नलवणशब्दौ स्वादुपर्यायौ । वा-
सरूपेण क्त्वापि । स्वादुं कृत्वा भुङ्क्ते ॥

अन्यथैवंकथमित्थंसुसिद्धाप्रयोगश्चेत् ३ । ४ । २७ ॥

एषु कृञो णमुल् । सिद्धोऽप्रयोगोऽस्यैवंभूतश्चेत्कृञ्बुध्यर्थत्वात्प्र-
योगानर्ह इत्यर्थः । अन्यथाकारम् । एवंकारम् । कथंकारम् ।
इत्थंकारं भुङ्क्ते । इत्थं भुङ्क्ते इत्यर्थः । सिद्ध इति किम् । शिरोऽन्यथा
कृत्वा भुङ्क्ते ॥

यथातथयोरसूयाप्रतिवचने ३ । ४ । २८ ॥

कृञः सिद्धाप्रयोग इत्येव । असूयाया प्रतिवचने । यथाकारमर्हं
भोक्ष्ये । तथाकारं भोक्ष्ये । किं तवानेन ॥

कर्मणि दृशिविदोः साकल्ये ३ । ४ । २९ ॥

कर्मण्युपपदे णमुल् कन्यादर्शं वरयति । सर्वाः कन्या इत्यर्थः ।
ब्राह्मणवेदं भोजयति । यं यं ब्राह्मणं जानाति लभते विचारयति
त तं सर्वं भोजयतीत्यर्थः ॥

यावति विन्दजीवोः ३ । ४ । ३० ॥

यावद्वेदं भुङ्के । यावल्लभते तावदित्यर्थः । यावज्जीवमधीते ॥

चर्मोदरयोः पूरेः ३ । ४ । ३१ ॥

कर्मणीत्येव । चर्मपृष्ठं स्तृणाति । उदरपूरं भुङ्के ॥

वर्षप्रमाण लोपश्चास्यान्यतरस्याम् ३ । ४ । ३२ ॥

कर्मण्युपपदे पूरेर्णमुल् स्यादृकारलोपश्च वा । समुदायेन वर्षप्रा-
माण्ये गम्ये । गोष्पदपूरं वृष्टो देवः । गोष्पदप्रं वृष्टो देवः । अस्य
इति किम् । उपपदस्य मा भृत् । भूपिकाविलप्रम् ॥

चेले क्लोपेः ३ । ४ । ३३ ॥

चेलार्थेषु कर्मसूपपदेषु क्लोपेर्णमुल् वर्षप्रमाणे । चेलक्लोपं वृष्टो
देवः । वस्त्रक्लोपम् । वसनक्लोपम् ॥

निमूलसमूलयोः कपः ३ । ४ । ३४ ॥

कर्मणीत्येव कपादिष्वनुप्रयोगं वक्ष्यति । अत्र प्रकरणे पूर्वकाल
इति न संबध्यते । निमूलकापं कपति । समूलकापं कपति । निमूलं
समूलं कपतीत्यर्थः । एकस्यापि धात्वर्थस्य निमूलादिप्रिणोपणसं-
बन्धाद्भेदः । तेन सामान्यविशेषभावेन विशेषणविशेष्यभावः ॥

शुष्कचूर्णरूक्षेषु पिपः ३ । ४ । ३५ ॥

एषु कर्मसु पिपेर्णमुल् । शुष्कपेपं पिपति । शुष्कं पिपतीत्यर्थः ।
चूर्णपेपम् । रूक्षपेपम् ॥

समूलावृत्तजीवेषु हन्वृत्त्यद् ३ । ४ । ३६ ॥

कर्मणीत्येव । समूलानां हन्ति । अहृतकारं करोति । जीवपादं

गृह्णाति । जीवतीति जीवः । इगुपधलक्षणः कः । जीवन्तं
गृह्णातीत्यर्थः ॥

करणे हन्ः ३ । ४ । ३७ ॥

पादघातं हन्ति । पादेन हन्तीत्यर्थः । यथाविध्यनुप्रयोगार्थः ।
नन्नित्यसमासार्थोऽयं योगः । भिन्नधातुसंबन्धे तु हिंसार्थानां च
इति वक्ष्यते ॥

स्नेहने पिपः ३ । ४ । ३८ ॥

स्निह्यते येन तस्मिन्करणे पिपेर्णमुल् । उदपेयं पिनाष्टि । उदकेन
पिनष्टीत्यर्थः ॥

हस्ते वर्तिग्रहोः ३ । ४ । ३९ ॥

हस्तार्थे करणे । हस्तवर्तं वर्तयति । करवर्तम् । हस्तेन गुलिकां
करोतीत्यर्थः । हस्तग्राहं गृह्णाति । ऋग्राहम् । पाणिग्राहम् ॥

स्वे पुपः ३ । ४ । ४० ॥

करण इत्येव । स्व इत्यथेग्रहणं तेन स्वरूपे पर्याये विशेषे च
णमुल् । स्वपोषं पुष्णाति । धनपोषम् । गोपोषम् ॥

अधिकरणे बन्धः ३ । ४ । ४१ ॥

चक्रबन्धं बध्नाति । चक्रे बध्नातीत्यर्थः ॥

इति ९७ अंशाः ।

संज्ञायाम् ३ । ४ । ४२ ॥

नध्नातेर्णमुल्लसंज्ञायाम् । क्रीञ्चनन्धं उद् । मयूरिकावन्धम् ।
अट्टालिकावन्धम् । बंधविशेषाणां संज्ञा ष्ताः ॥

कर्त्रोर्जीवपुरुपयोर्नशिवहोः ३ । ४ । ४३ ॥

जीवनाशं नश्यति । जीवो नश्यतीत्यर्थः । पुरुपवाहं वहति ।
पुरुषो वहतीत्यर्थः ॥

ऊर्ध्वे शुचिपूरोः ३ । ४ । ४४ ॥

ऊर्ध्वं कर्तरि । ऊर्ध्वशोषं शुष्यति । वृक्षादिरूर्ध्व एव तिष्ठञ्छु-
ष्यतीत्यर्थः । ऊर्ध्वपूरं पूर्यते । ऊर्ध्वमुख एव घटादि वर्षादकादिना
पूर्णा भवतीत्यर्थः ॥

उपमाने कर्मणि च ३ । ४ । ४५ ॥

चात्कर्तरि । घृतनिधायं निहितं जलम् । घृतमिव सुरक्षितमि-
त्यर्थः । अजकनार्शं नष्टः । अजक इव नष्ट इत्यर्थः ॥

कपादिषु यथाविध्यनुप्रयोगः ३ । ४ । ४६ ॥

यस्माष्णमुलुक्तः । स एवानुप्रयोक्तव्य इत्यर्थः । तथैवोदाहृतम् ॥

उपदंशस्तृतीयायाम् ३ । ४ । ४७ ॥

इतः प्रभृति पूर्वकाल इति संबध्यते । तृतीयाप्रभृतिन्यन्यतर-
स्याम् इति वा समासः । मूलकोपदंशं भुङ्क्ते । मूलकेनोपदंशम् ।
दृश्यमानस्य मूलकस्य भुञ्जिं प्रति करणत्वात्तृतीया।यद्यप्युपदंशिना
सह न शाब्दः संबन्धस्तथाप्यायौस्त्येव कर्मत्वात् । एतावतैव
सामर्थ्येन प्रत्ययः समासश्च तृतीयायामेति वचनसामर्थ्यात् ॥

हिसार्थानां च समानकर्मकाणाम् ३ । ४ । ४८ ॥

तृतीयान्त उपपदेऽनुप्रयोगधातुना समानकर्मकाद्विसार्थात्
णमुल् । दण्डोपघातं गाः कालयति । दण्डेनोपघातम् । दण्ड-
ताडम् । समानकर्मकाणाम् इति किम् । दण्डेन चोरमाहृत्य गाः
कालयति ॥

सप्तम्यां चोपपीडरुधकर्षः ३ । ४ । ४९ ॥

उपपूर्वभ्यः पीडादिभ्यः सप्तम्यन्ते तृतीयान्ते चोपपदे णमुल् ।
पार्श्वोपपीडं शेते । पार्श्वयोरुपपीडम् । पार्श्वभ्यामुपपीडम् ।
ब्रजोपरोधं गाः स्थापयति । ब्रजेन ब्रजे उपरोधं वा । पाण्युपकर्ष
धानाः संगृह्णाति । पाण्युपकर्षम् । पाणिनोपकर्षम् ॥

समासत्तौ ३ । ४ । ५० ॥

तृतीया सप्तम्योर्धातोर्णामुल संनिकर्षे गम्यमाने । केदाग्राहं
युध्यन्ते । केनेषु गृहीत्वा । हस्तग्राहम् । हस्तेन गृहीत्वा ॥

प्रमाणे च ३ । ४ । ५१ ॥

वृत्तीयासप्तम्योरित्येव । द्व्यंगुलोत्कर्ष खण्डिकां छिनत्ति । द्व्यंगु-
लेन द्व्यंगुले चोत्कर्षम् ॥

अपादाने परीप्सायाम् ३ । ४ । ५२ ॥

परीप्सा त्वरा । शय्योत्थायं धावति ॥

द्वितीयायां च ३ । ४ । ५३ ॥

परीप्सायामित्येव । यष्टिग्राहं युध्यन्ते । लोष्टग्राहम् ॥

अपगुरो णमुलि ६ । १ । ५३ ॥

गुरी उद्यमने इत्यस्यैचोवात् णमुलि । अस्यपगोरं युध्यन्ते ।
अस्यपगारम् ॥

स्वाङ्गेऽध्रुवे ३ । ४ । ५४ ॥

द्वितीयायामित्येव । अध्रुवे स्वाङ्गे द्वितीयान्ते धातोर्णमुल् ।
भ्रूविक्षेपं कथयति । भ्रुवं विक्षेपम् । अध्रुवे किम् । शिर उत्क्षिप्य
येन विना न जीवनं तद् ध्रुवम् ॥

परिक्लिश्यमाने च ३ । ४ । ५५ ॥

सर्वतो विवाध्यमाने स्वाङ्गे द्वितीयान्ते णमुल् । उरः प्रतिपेपं
युध्यन्ते । कृत्स्नमुरः पीडयन्त इत्यर्थः । उरोविदारं प्रतिचस्करे
नखैः । ध्रुवार्थमिदम् ॥

विशिपतिपदिस्कन्दां व्याप्यमानासेव्यमानयोः ३ ।

४ । ५६ ॥

द्वितीयायामित्येव । द्वितीयान्त उपपदे विश्यादिभ्यो णमुल् ।
व्याप्यमान आसेव्यमाने चार्थे गम्ये गेहादिद्रव्याणां विश्यादि-
क्रियाभिः साकल्येन संबन्धो व्याप्तिः । क्रियायाः पौनःपुन्यमा-
सेवा । नित्यवीप्सयोः इति द्वित्वं तु न भवति । समासेनैव स्वभा-
वतस्तयोरुक्तत्वात् । यद्यप्याभीक्ष्ण्ये णमुलुक्त एव तथापि उपपद-
संज्ञार्थमासेवायामिह पुनर्विधिः । गेहानुप्रवेशमास्ते गेहं गेहमनु-

प्रवेशम् । गेहमनुप्रवेशमनुप्रवेशम् । एवं गेहानुप्रपातम् । गेहानु
प्रपादम् । गेहानुस्कन्दम् । असमाप्ते तु गेहस्य णमुलन्तस्य च
पर्यायेण द्वित्वम् ॥

अस्यतितृपोः क्रियान्तरे कालेषु ३ । ४ । ५७ ॥

क्रियामन्तरयति व्यवधत्त इति क्रियान्तरः तस्मिन्धात्वर्थे वर्त-
मानादस्यतेस्त्वृष्यतेश्च कालाचिषु द्वितीयान्तेषूपपदेषु णमुल ।
ब्रह्मात्यासंगाः पाययति ब्रह्मत्यासम् । ब्रह्मर्षम् ब्रह्मन्तर्षम् । अ-
त्यसनेन तर्पणेन च गवां पाययति व्यवधीयते । अथ पाययित्वा ।
ब्रह्मतिक्रम्य पुनः पाययतीत्यर्थः ॥

नाभ्यादिशिग्रहोः ३ । ४ । ५८ ॥

द्वितीयायामित्येव । नामादेशमाचष्टे । नामग्राहमाह्वयति ॥

अव्ययेऽयथाभिप्रेताख्याने कृञः क्त्वाणमुलौ ३ । ४ । ५९ ॥

अथथाभिप्रेताख्याने नाम । अप्रियस्याच्चैः प्रियस्य च नीचैः
कथनम् । उच्चैःकृत्य । उच्चैःकृत्वा । उच्चैः कारमप्रियमाचष्टे । नीचैः-
कृत्य । नीचैःकृत्वा । नीचैःकारं प्रियं ब्रूते ॥

तिर्य्यच्यपवर्गे ३ । ४ । ६० ॥

तिर्य्यकशब्दे उपपदे कृञः क्त्वाणमुलौ समाप्तौ गम्यायाम् ।
तिर्य्यक्य तिर्य्यक्त्वा गतः तिर्य्यकारम् । समाप्य गत इत्यर्थः ।
अपवर्गे किम् । तिर्य्यकृत्वा काष्ठं गतः ॥

स्वाङ्गे तस्प्रत्यये कृभ्योः ३ । ४ । ६१ ॥

मुखतः कृन्त्य गतः मुखतः कृत्वा । मुखतःकारम् । मुखतोभूय ।
मुखतोभूत्वा । मुखतोभावम् ॥

नाधार्थप्रत्यये च्व्यर्थे ३ । ४ । ६२ ॥

नाधार्थप्रत्ययान्ते च्व्यर्थाविषये उपपदे कृभ्योः क्त्वाणमुलौ ।
अनाना नानाकृत्वा नानाकृत्य नानाकारम् । विनाकृत्य विनाकृत्वा
विनाकारम् । नानाभूय नानाभूत्वा नानाभावम् । अनेकं द्रव्यमेकं

कृत्वा एकधाभूय एकधाभूत्वा एकधाभावम् । एकधाकृत्य एकधा-
कृत्वा एकधाकारम् ॥

तूष्णीमि भुवः ३ । ४ । ६३ ॥

तूष्णींशब्दे उपपदे भुवः क्त्वाणमुलौ । तूष्णीभृय तूष्णीभूत्वा
तूष्णींभावम् ॥

अन्वचयानुलोम्ये ३ । ४ । ६४ ॥

अन्वक्शब्द उपपदे आनुकूल्ये गम्ये भुवः क्त्वाणमुलौ । अन्व-
ग्भृय आस्ते । अन्वग्भूत्वा अन्वग्भावम् । अग्रतः पार्श्वतः पृष्ठतो
वाग्निकूलो भूत्वा आस्त इत्यर्थः । आनुलोम्ये किम् । अन्वग्भूत्वा-
तिष्ठति । पृष्ठतो भूत्वेत्यर्थः । इति कृत ॥

इति ९८ अंशाः ।

अनभिहिते कर्मादौ द्वितीयादय उक्ताः । अभिहिते तु कर्मादां
प्रातिपदिकार्ये इति प्रथमैव । अभिधानं तु प्रायेण तिङ्कृतद्वित-
समासैः । तिङ्-हरिः सेव्यते । कृत्-लक्ष्म्या सेवितः । तद्धितः-शतेन
क्रीतः शत्यः । समासः-प्राप्त आनन्दो यं प्राप्तानन्दः । कचिन्नि
पातेनाभिधानम् । यथा, विपवृक्षोऽपि संवर्धय स्वयं छेतुमसांप्रतम् ।
असांप्रतमित्यत्यनयुज्यत इत्यर्थः ॥

तथायुक्तं चानीप्सितम् १ । ४ । ६० ॥

ईप्सिततमवत्क्रियया युक्तमनीप्सितमपि कारकं कर्मसंज्ञम् ।
गामं गच्छंस्त्वणं स्पृशति । ओदनं भुञ्जानो विपं भुङ्गे ॥

अकथितं च १ । ४ । ६१ ॥

अपादानादिविशेषैरविवक्षितं कारकं कर्मसंज्ञम् । दुह्यात्पच्द-
ण्डरुधिप्रच्छिच्चिन्नशासुजिमथमुपाम् । कर्मयुक्स्यादकथितं तथा
प्यात्रीहृक्ष्वहाम् ॥ दुहादीनां द्वादशानां नीप्रभृतीनां चतुर्णां च
कर्मणा यद्युज्यते तदेवाकथितं कर्म इति परिगणनं कर्तव्यमित्यर्थः ।
गां दोग्धि पयः । बलिं याचते वसुधाम् । अविनीतं विनयं या
चते । तण्डुलानोदनं पचति । गर्गाञ्छतं दण्डयाति । व्रजमवरु-

णाद्धि गाम् । माणवकं पन्थानं पृच्छति । वृक्षमवचिनोति फलानि ।
माणवकं धर्मं वृते शास्ति वा । शतं जयति देवदत्तम् । सुधा क्षी-
रनिधि मथ्नाति । देवदत्तं शतं मुष्णाति । ग्राममजा नयति हरति
कर्पति वहति वा । अर्थनिवन्धनेयं संज्ञा । वलिं भिक्षते वसुधाम् ।
माणवकं धर्मं मापते अभिधत्ते वक्तीत्यादि । कारकं किम् । माणव-
कस्य पितरं पन्थानं पृच्छति ॥

अकर्मकधातुभिर्योगे देशः कालो भावो गन्तव्योऽ-
ध्वा च कर्मसंज्ञक इति वाच्यम् ❀ ॥

कुरुन्स्वपिति । मासमास्ते । गोदोहमास्ते । क्रोशमास्ते ॥

गतिबुद्धिप्रत्यवसानार्थशब्दकर्माकर्मकाणामणि कर्ता
स णौ १ । ४ । ५२ ॥

गत्वाद्यर्थानां शब्दकर्मणामकर्मकाणां चाणौ यः कर्ता स णौ
कर्म स्यात् । शत्रून्गमयत्स्वर्गं वेदार्यं स्वानवेद्यत् । आशयञ्चामृतं
देवान्देवमध्यापयद्विधिम् ॥ आसयत्सालिले पृथ्वीं यः स मे श्रीह-
रिर्गतिः । गति इत्यादि किम् । पाचयत्योदनं देवदत्तेन । अप्य-
न्तानां किम् । गमयति देवदत्तो यज्ञदत्तं तमपरः प्रयुङ्क्ते । गमयति
देवदत्तेन यज्ञदत्तं विष्णुमित्रः ॥

नीवह्योर्न ❀ ॥

नाययति वाहयति वाभारं भृत्येन ॥

नियन्तृकर्तृकस्य वहेरनिपेधः ❀ ॥

वाहयति रथं वाहान्सूतः ॥

आदिखाद्योर्न ❀ ॥

आदयति खादयति वान्नं वटुना ॥

भक्षेरहिंसार्थस्य न ❀ ॥

भक्षयत्यन्नं वटुना । अहिंसार्थस्य किम् । भक्षयति वलीवर्दा-
न्सस्यम् ॥

जल्पतिप्रभृतीनामुपसंख्यानम् ❀ ॥

जल्पयति भाषयति वा धर्मं पुत्रं देवदत्तः ॥

दृशेत् ❀ ॥

दर्शयति हरिं भक्तान् । सूत्रे ज्ञानसामान्यार्थानामेव ग्रहणं न तु तद्विशेषार्थानामित्यनेन ज्ञाप्यते । तेन स्मरति जिघ्रति इत्यादीनां न । स्मारयति घ्रापयति देवदत्तेन ॥

शब्दायतेर्न ❀ ॥

शब्दाययति देवदत्तेन।धात्वर्थसंगृहीतकर्मत्वेनाकर्मकत्वात्प्राप्तिः । येषां देशकालादिभिन्नं कर्म न संभवति तेऽत्राकर्मकाः नत्वविवक्षितकर्माणोऽपि । तेन मासमासयति देवदत्तम् इत्यादौ कर्मत्वं भवति । देवदत्तेन पाचयति इत्यादौ तु न ॥

हृकोरन्यतरस्याम् १ । ४ । ५३ ॥

हृकोरणौ यः कर्ता स णौ वा कर्मसंज्ञः । हारयति कारयति वा भृत्यं भृत्येन वा कटम् ॥

अभिवादिदृशोरात्मनेपदे वेत्ति वाच्यम् ❀ ॥

अभिवादयते दर्शयते देवं भक्तं भक्तेन वा ॥

अधिशीङ्स्थासां कर्म १ । ४ । ४६ ॥

अधिपूर्वाणामेपामाधारः कर्म स्यात् । अधिशेते अधितिष्ठति अध्यास्ते वा वैकुण्ठं हरिः ॥

अभिनिविशश्च १ । ४ । ४७ ॥

अभिनीत्येतत्संघातपूर्वस्य विशतेराधारः कर्म स्यात् । अभिनिविशते सन्मार्गम् । परिक्रयणे संप्रदानम् इति सूत्रादिह मण्डूकपुत्यान्यतरस्यां ग्रहणमनुवर्त्य व्यवस्थितविभाषाश्रयणात्काचिन्न । पापेऽभिनिवेशः ॥

उपान्वध्याङ्सः १ । ४ । ४८ ॥

उपादिपूर्वस्य वसतेराधारः कर्म स्यात् । उपवसति अनुवसति अधिवसति आवसति वा वैकुण्ठं हरिः ॥

अभुवत्यर्थस्य न ❀ ॥

वने उपवसति । उभसर्वतसोः कार्या विगुपर्यादिषु त्रिषु ।
द्वितीयाश्लेषितान्तेषु ततोऽन्यत्रापि दृश्यते ॥ उभयतः कृष्ण गोपा ।
सर्वतः कृष्णम् । धिक् कृष्णामक्तम् । उपर्युपरि लोकं हरिः ।
अध्याधिलोकम् । अधोऽधोलोकम् । अभितःपरित.समयानिकपा
हाप्रतियोगेऽपि । अभितः कृष्णम् । परित. कृष्णम् । समया ग्रामम् ।
निकपा लङ्काम् । हा कृष्णामक्तम् । तस्य शोच्यत इत्यर्थः । उमु
क्षितं न प्रतिभाति किञ्चित् ॥

इति ९९ अंशाः ।

अन्तरान्तरेण युक्ते २ । ३ । ४ ॥

आभ्या योगे द्वितीया । अन्तरा त्वा मा हरिः । अन्तरेण हरि
न सुखम् ॥

कर्मप्रवचनीयाः १ । ४ । ८३ ॥

इत्यधिकृत्य ॥

अनुलक्षणे १ । ४ । ८४ ॥

लक्षणे द्योत्येऽनुरुक्तसंज्ञः । गत्युपसर्गसज्ञापवादः ॥

कर्मप्रवचनीययुक्ते द्वितीया २ । ३ । ८ ॥

एतेन योगे द्वितीया । जपमनुप्रावर्षत् । हेतुभूतजपोपलक्षित
पर्यणमित्यर्थः । परापि हेतौ तृतीयानेन वाध्यते । लक्षणेत्यभृत
इत्यादिना सिद्धे पुनः संज्ञाविधानसामर्थ्यात् ॥

तृतीयार्थे १ । ४ । ८५ ॥

जस्मिन्द्योत्येऽनुरुक्तसंज्ञः । नदीमन्ववसिता सेना । नद्या सह
संबद्धेत्यर्थः । पित्र बन्धने क्तः ॥

हीने १ । ४ । ८६ ॥

हीने द्योत्येऽनुरुक्तसंज्ञः । अनुहरिं सुराः । हरेर्हीना इत्यर्थः ॥

उपोऽधिके च १ । ४ । ८७ ॥

अधिके हीने च द्योत्य उपेत्यव्ययं प्राक्संज्ञम् अधिके सप्तमी
वक्ष्यते । हीने उपहरिं सुराः ॥

लक्षणेत्थंभूताख्यानभागवीप्सासु प्रतिपर्यनवः १।४।९०॥

एष्वर्थेषु विषयभूतेषु प्रत्यादय उक्तसंज्ञाः । लक्षणे वृक्षं-प्रति परि
तु वा विद्योतते विद्युत् । इत्थंभूताख्याने भक्तो विष्णुं प्रति परि
तु वा । भागे लक्ष्मीर्हरिं प्रति परि अनु वा । हरेर्भाग इत्यर्थः ।
सायां वृक्षं वृक्षं प्रति परि अनु वा सिञ्चति । अत्रोपमर्गत्वाभा-
न पत्वम् । एषु किम् । परिपिञ्चति ॥

अभिरभागे १।४।९१ ॥

भागवर्जे लक्षणादावभिरुक्तसंज्ञः स्यात् । हरिमभिवर्तते भक्तो
मभि । देवं देवमभिसिञ्चति । अभागे किम् । यदत्र ममाभि-
त्तदीयताम् ॥

अधिपरी अनर्थकौ १।४।९३ ॥

उक्तसंज्ञौ । कुतोऽन्यागच्छति । कुतः पर्यागच्छति । गतिसं-
वाधात् । गतिर्गतौ इति निघातो न ॥

सुः पूजायाम् १।४।९४ ॥

सुसिक्तम् । सुस्तुतम् । अनुपमर्गत्वान्न पः । पूजायां किम् ।
पक्तं किं तवात्र । आक्षेपोऽयम् ॥

अतिरतिक्रमणे च १।४।९५ ॥

अतिक्रमणे पूजायां चाति उक्तसंज्ञः । अतिदेवान्कृष्णः ॥

अपिः पदार्थसंभावनान्ववसर्गगर्हासमुच्चयेषु १।४।९६॥

एषु द्योत्येष्वपिरुक्तसंज्ञः । सर्पिपोऽपि स्यात् । अनुपमर्गत्वान्न
संभावनाया लिङ् । तस्या एव विषयभूते भवने कर्तृदौर्लभ्यप्र-
क्तं दौर्लभ्यं द्योतयन्नपिशब्दः स्यादित्यनेन संबध्यते । सर्पिपः
त पष्ठी त्वपिशब्दबलेन गम्यमानस्य विन्दोरखयवावयविभावसं-
धे इयमेव ह्यपिशब्दस्य पदार्थद्योतकता नाम । द्वितीया तु नेह

प्रवर्तते । सर्पिपो विन्दुना योगो न त्वपि नेत्युक्तत्वात् । अपि
स्तुयाद्विष्णुम् । संभावनं शक्त्युत्कर्षमाविष्कर्तुमत्युक्तिः । अपि-
स्तुहि । अन्ववसर्गः कामचारानुज्ञा । धिग्देवदत्तमपि स्तुयाद्दृष-
लम् । गर्हा । अपिसिद्धि । अपिस्तुहि । समुद्ये ॥

कालाध्वनोरत्यन्तसंयोगे २ । ३ । ५ ॥

इह द्वितीया मासं कल्याणी मासमधीते । मासं गुडधानाः ।
क्रोशं कुडिला नदी । क्रोशमधीते । क्रोशं गिरिः । अत्यन्तसंयोगे
किम् । मासस्य द्विरधीते । क्रोशस्यैकदेशे पर्वतः ॥

दिवः कर्म च १ । ४ । ४३ ॥

दिवः साधकतमं कारकं कर्मसंज्ञं स्याद्घातकरणसंज्ञम् । अक्षर-
क्षान्वा दीव्यति ॥

अपवर्गे तृतीया २ । ३ । ६ ॥

अपवर्गः फलप्राप्तिः तस्यां द्योत्यायां कालाध्वनोरत्यन्तसंयोगे
तृतीया । अद्वा क्रोशेन वातुवाकोऽधीतः अपवर्गे किम् । मासम-
धीतो नायातः ॥

येनांगविकारः २ । ३ । २० ॥

येनाङ्गेन विकृतेनाङ्गिनो विकारो लक्ष्यते ततस्तृतीया । अक्षणा
काणः । अक्षिसंबंधिकाणत्वविशिष्ट इत्यर्थः । अङ्गविकारः किम् ।
अक्षिकाणमस्य ॥

इत्थंभूतलक्षणे २ । ३ । २१ ॥

कंचित्प्रकारं प्राप्तस्य लक्षणे तृतीया । जटाभिस्तापसः । जटाज्ञा-
प्यतापसत्वविशिष्ट इत्यर्थः ॥

संज्ञोऽन्यतरस्यां कर्मणि २ । ३ । २२ ॥

संपूर्वस्य जानातेः कर्मणि तृतीया वा । पित्रा पितरं वा संजा-
नीते ॥

हेतौ २ । ३ । २३ ॥

किम् । पुष्पेभ्यो वने स्पृहयति । ईप्सितमात्र इयं संज्ञा । प्रकर्षविव-
क्षायां तु परत्वात्कर्मसंज्ञा । पुष्पाणि स्पृहयति ॥

क्रुधद्रुहेर्ष्यासूयार्थानां यं प्रति कोपः १ । ४ । ३७ ॥

क्रुधाद्यर्थानां प्रयोगे यं प्रति कोपः स उक्तसंज्ञः । हरये क्रुध्यति
द्रुह्यति ईर्ष्यति असूयति । यं प्रति कोपः किम् । भार्यामीर्ष्यति ।
मैनामन्योऽद्राक्षीदित । क्रोधोऽमर्षः । द्रोहोऽपकारः । ईर्ष्याऽक्षमा ।
असूया गुणेषु दोषाविष्करणम् । द्रोहादयोऽपि कोपप्रभवा एव
गृह्यन्ते । अतो विशेषणं सामान्येन यं प्रति कोपः इति ॥

क्रुधद्रुहोरुपसृष्टयोः कर्म १ । ४ । ३८ ॥

सोपसर्गघोरनयोर्योगे यं प्रति कोपस्तत्कारकं कर्मसंज्ञम् ।
क्रूरमभिक्रुध्यति । अभिद्रुह्यति ॥

राधीक्ष्योर्यस्य विप्रश्नः १ । ४ । ३९ ॥

एतयोः कारकं संप्रदानम् । यदीयो विविधः प्रश्नः क्रियते ।
कृष्णाय राध्यति ईक्षते वा । पृष्टो गर्गः । शुभाशुभं पर्यालोच-
यतीत्यर्थः ॥

प्रत्याङ्भ्यां श्रुवः पूर्वस्य कर्ता १ । ४ । ४० ॥

आभ्या परस्य शृणोतेर्योगे पूर्वस्य प्रवर्तनरूपव्यापारस्य
कर्ता संप्रदानम् । विप्राय गां प्रतिशृणोति आशृणोति वा । विप्रेण
मह्यं देहीति प्रवर्तितस्तत्प्रतिजानीत इत्यर्थः ॥

अनुप्रतिगृणश्च १ । ४ । ४१ ॥

आभ्या गृणातेः कारकं पूर्वव्यापारस्य कर्तृभूतमुक्तसंज्ञम् ।
होत्रेऽनुगृणाति । प्रतिगृणाति । होता प्रथमं शंसति । तमध्वर्युः
प्रोत्साहयतीत्यर्थः ॥

परिक्रयणे संप्रदानमन्यतरस्याम् १ । ४ । ४४ ॥

नियतकालं भृत्या स्वीकरणं पग्न्यणं तस्मिन् साधकतमं
कारकं संप्रदानसंज्ञं वा । शतेन शताय वा परिक्रीतः ॥

तादर्थ्ये चतुर्थी वाच्या ॐ ॥

मुक्तये हरिं भजति ॥

कृपि संपद्यमाने च ॐ ॥

भक्तिर्ज्ञानाय कल्पते संपद्यते जायत इत्यादि ॥

उत्पातेन ज्ञापिते च ॐ ॥

वाताय कपिला विष्टुत् ॥

हितयोगे च ॐ ॥

ब्राह्मणाय हितम् ॥

क्रियार्थोपपदस्य च कर्मणि स्थानिनः २ । ३ । १४ ॥

क्रियार्था क्रिया उपपदं यस्य तस्य स्थानिनोऽप्रयुज्यमानस्य तुमुनः कर्मणि चतुर्थी । फलेभ्यो याति । फलान्याहर्तुं यातीत्यर्थः । नमस्कुर्मो नृसिंहाय । नृसिंहमनुकूलयितुमित्यर्थः । एवं स्वयंभुवे नमस्कृत्य इत्यादावपि ॥

तुमर्थाच्च भाववचनात् २ । ३ । १५ ॥

भाववचनाश्च इति सूत्रेण यो निहितस्तदन्ताद्यतुर्थी स्यात् । यागाय याति । यष्टुं यातीत्यर्थः ॥

उपपदविभक्तेः कारकविभक्तिर्वलीयसी ॥

नमस्करोति देवान् । प्रजाभ्यः स्वस्ति । अग्नये स्वाहा । पितृभ्यः स्वधा । अलमिति पर्याप्त्यर्थप्रहणम् । तेन दैत्येभ्यो हरिसलं प्रभुः समर्थः शक्त इत्यादि । प्रभ्वादियोगे पष्ठचापि साधुः । तस्मै प्रभवति । स एषां ग्रामणीः इति निर्देशात् । तेन 'प्रभुर्बुभृषुर्भुवनत्रयस्य' इति सिद्धम् । वषट्तिन्द्राय । चकारः पुनर्विधानार्थः । तेनाजीर्विवक्षायां परामपि चतुर्थी चाशिपि इति पष्ठौ बाधित्वा चतुर्थ्येव भवति । स्वस्ति गोभ्यो भूयात् ॥

मन्यकर्मण्यनादरे विभाषाऽप्राणिषु २ । ३ । १७ ॥

प्राणिवर्जे मन्यतेः कर्मणि चतुर्थी वा स्याच्चिरस्कारे । न त्वां

तृणं मन्ये तृणाय वा । श्यना निर्देशात्तानादिकयोगे न । न त्वां
तृणं मन्ये ॥

अप्राणिष्वित्यपनीय नौकाकान्नशुकशृगालवर्जेष्वि-
ति वाच्यम् ❀ ॥

तेन न त्वां नावं मन्ये इत्यत्राप्राणित्वेऽपि चतुर्थी न । न त्वां
शुने मन्ये इत्यत्र प्राणित्वेऽपि भवत्येव ॥

गत्यर्थकर्मणि द्वितीयाचतुर्थ्यौ चेष्टायामनध्वनि २ ।
३ । १२ ॥

अध्वभिन्ने गत्यर्थानां कर्मण्येते स्तश्चेष्टायाम् । ग्रामं ग्रामाय
वा गच्छति । चेष्टायाम् किम् । मनसा हरिं व्रजति । अनध्वनि
इति किम् । पन्थानं गच्छति । गन्त्राधिष्ठितेऽध्वन्येवायं निषेधः ।
यदा तृत्पथात्पन्था एवाक्रामेतुमिष्यते तदा चतुर्थी भवत्येव । उ-
त्पथेन पथे गच्छति ॥

इति १०१ अंशः ।

ध्रुवमपायेऽपादानम् । कारकमित्येव । नेह । वृक्षस्य पर्णं पतति ॥

जुगुप्साविरामप्रमादार्थानामुपसंख्यानम् ❀ ॥

पापाञ्जुगुप्सते विरमति । धर्मात्प्रमाद्यति ॥

।भीत्रार्थानां भयहेतुः १ । ४ । २५ ॥

भयार्थानां त्राणार्थानां च प्रयोगे भयहेतुरपादानम् । चौराद्वि-
मेति । चौरात्रायते । भयहेतुः किम् । अरण्ये विमेति त्रायते वा ॥

पराजेरसोढः १ । ४ । २६ ॥

पराजेः प्रयोगेऽसह्योऽर्थोऽपादानम् । अध्ययनात्पराजयते ।
ग्लायतीत्यर्थः । असोढः किम् । शत्रून्पराजयते । अभिभवेती-
त्यर्थः ॥

वारणार्थानामीप्सितः १ । ४ । २७ ॥

० प्रवृत्तिविधातो वारणम् । वारणार्थानां धातूनां प्रयोग ईप्सितोऽ-

यांश्चादानम् । यवेभ्यो गां वारयति । इंधितः किम् । यवेभ्यो गां वारयति क्षेत्रे ॥

अन्तर्धा येनादर्शनमिच्छति १ । ४ । २८ ॥

व्यवधाने सति यत्कर्तृकस्यात्मनो दर्शनस्याभासमिच्छति तदपादानम् । मातुर्निलीयते कृष्णः । अन्तर्धा किम् । चांगन्न दिदक्षने । इच्छतिग्रहणं किम् । अदर्शनेच्छायां सत्यां सत्यपि दर्शने यथा स्यात् । देवदत्तायज्ञदत्तां निलीयते ॥

आख्यातोपयोगे १ । ४ । २९ ॥

नियमपूर्वकविद्यास्वीकारे वक्ता प्राक्मंज्ञः । उपाध्यायादधीते । उपयोगे किम् । नटस्य गाथां शृणोति ॥

जनिकर्तुः प्रकृतिः १ । ४ । ३० ॥

जायमानस्य हेतुरपादानम् । ब्रह्मणः प्रजाः प्रजायन्ते ॥

भुवः प्रभवः १ । ४ । ३१ ॥

भवनं भूः भूकर्तुः प्रभवस्तथा । हिमवतो गङ्गा प्रमयाति । तत्र प्रथमं प्रकाशत इत्यर्थः ॥

ल्यल्लोपे कर्मण्यधिकरणे च ॥

प्रासादात्प्रेक्षते । आसनात्प्रेक्षते । प्रामादमारुह्य आसने उपविश्य प्रेक्षत इत्यर्थः । श्वशुराज्जिदेति । श्वशुरं वीक्ष्येत्यर्थः । गम्यमानाजपि क्रिया कारकविभक्तीनां निमित्तम् । कस्मात्त्वं नचाः ॥

यतश्चाध्वकालनिर्माणं तत्र पञ्चमी । तद्युक्तादध्वनः प्रथमासप्तम्यौ । कालात्सप्तमी च वक्तव्या ॐ ॥

वनाद्ग्रामो योजनं योजने वा । कार्तिक्या आप्रहायणां मासे । अन्यारादितर्गते इत्यादिभिर्योगे पञ्चमी विहिता तत्र अन्य इत्यर्थ-ग्रहणम् । इतरग्रहणं प्रपञ्चार्यम् । अन्यो भिन्न इतरे वा कृष्णात् । आरादनात् । ऋते कृष्णात् । पूर्वां प्रामात् । दिशि दृष्टः शब्दो दिक्शब्दः । तेन संमति देवकालवृत्तिना योगेऽपि भवति । चत्रा-

त्पूर्वः फाल्गुनः । अवयववाचियोगे तु न । तस्य परमाश्रेडितम्
इति निर्देशात् । पूर्व कायस्य । अञ्चूत्तरपदस्य तु दिक्शब्दत्वेऽपि
पष्ठ्यतसर्थ इति षष्ठी वाधितुं पृथग्रहणम् । प्राक् प्रत्यग्वा ग्रामात् ।
आच् दाक्षिणा ग्रामात् । आहि-दाक्षिणाहि ग्रामात् । अपादाने
पञ्चमी इति सूत्रे कार्तिक्याः प्रभृति इति भाष्यप्रयोगात्प्रभृत्यर्थ-
योगे पञ्चमी । भवात्प्रभृते आरभ्य वा सेव्यो हरिः । अपपरिवहिः
इति समासविधानाज्ज्ञापकाद्ब्रह्मिर्योगे पञ्चमी । ग्रामाद्ब्रहिः ॥

अपपरी वर्जने १ । ४ । ८८ ॥

एतां वर्जने कर्मप्रवचनीयौ ॥

आङ् मर्यादावचने १ । ४ । ८९ ॥

आङ् मर्यादायामुक्तसङ्गः । वचनग्रहणादभिविधावपि ॥

पञ्चम्यपाङ्परिभिः २ । ३ । १० ॥

एतैः कर्मप्रवचनीयैर्योगे पञ्चमी । अप हरेः परि हरेः सं-
सारः । परिरत्र वर्जने । लक्षणादौ तु । हरि परि आमुक्तेः संसारः ।
आसक्लाद्ब्रह्म ॥

प्रतिः प्रतिनिधिप्रतिदानयोः १ । ४ । ९२ ॥

एतयोरर्थयोः प्रतिरुक्तसङ्गः ॥

प्रतिनिधिप्रतिदाने च यस्मात् २ । ३ । ११ ॥

अत्र कर्मप्रवचनीयैर्योगे पञ्चमी । प्रमुञ्च कृष्णात्प्रति । तिले-
भ्यः प्रतियच्छति मापान् ॥

अकर्तृर्षणे पञ्चमी २ । ३ । २४ ॥

कर्तृवर्जित यदण हेतुभूत ततः पञ्चमी । शताद्ब्रह्म । अकर्तृरि-
किम् । शतेन बन्धितः ॥

विभाषा गुणेऽस्त्रियाम् २ । ३ । २५ ॥

गुणे हेतावस्त्रीलिङ्गे पञ्चमी वा । जाड्यात् जाड्येन वा बद्धः ।
गुणे किम् । धनेन कुलम् । अस्त्रिया किम् । बुद्ध्या मुक्तः । वि-

भाषा इति योगविभागादगुणे स्त्रियां च क्वचित् । धुमादग्निमान् ।
नास्ति घटोऽनुपलब्धेः ॥

पृथग्विनानानाभिस्तृतीयाऽन्यतरस्याम् २।३।३२ ॥

एभिर्योगे तृतीया स्यात् । पञ्चमी द्वितीये च । अन्यतरस्यां ग्रहणं
समुच्चयार्थम् । पञ्चमीद्वितीये चाऽनुवर्तते पृथग्रांमण रामात् रामं
वा । एवं विना नाना ॥

करणे च स्तोकाल्पकृच्छ्रकतिपयस्यासत्त्ववचनस्य
२।३।३३ ॥

एभ्योऽद्रव्यवचनेभ्यः करणे तृतीयापञ्चम्यौ स्तः । स्तोकेन स्तो-
काद्वा मुक्तः । द्रव्ये तु, स्तोकेन विषेण हतः ॥

पष्ठी हेतुप्रयोगे २।३।२६ ॥

हेतुशब्दप्रयोगे हेतौ द्योत्ये पष्ठी । अन्नस्य हेतोर्वसति ॥

सर्वनाम्नस्तृतीया च २।३।२७ ॥

सर्वनाम्नो हेतुशब्दस्य च प्रयोगे हेतौ द्योत्ये तृतीया पष्ठी च ।
केन हेतुना वसति । कस्य हेतोः ॥

निमित्तपर्यायप्रयोगे सर्वासां प्रायदर्शनम् ❀ ॥

किं निमित्तं वसति । केन निमित्तेन । कस्मिन् निमित्तायेत्यादि ।
एवं किंकारणम् । को हेतुः । किं प्रयोजनम् इत्यादि । प्रायग्रहणाद्-
सर्वनाम्नः प्रथमाद्वितीये न स्तः । ज्ञानेन निमित्तेन हरिः सेव्यः ।
ज्ञानाय निमित्तायेत्यादि ॥

पष्ठ्यतसर्थप्रत्ययेन २।३।३० ॥

एतद्योगे पष्ठी । दिक्शब्द इति पञ्चम्या अपवादः । ग्रामस्य
दक्षिणतः । पुरः पुरस्तात् । उपरि उपरिष्ठात् ॥

एनपा द्वितीया २।३।३१ ॥

एनवन्तेन योगे द्वितीया । एनपा इति योगविभागात्पष्ठ्यपि ।
दक्षिणेन ग्रामं ग्रामस्य वा । एवमुत्तरेण ॥

दूरान्तिकार्थैः पष्ठ्यन्यतरस्याम् २ । ३ । ३४ ॥

एतैर्योगे षष्ठी पञ्चमी च । दूरं निकटं ग्रामस्य ग्रामाद्वा ॥

इति १०२ अंशाः ।

ज्ञोऽविदर्थस्य करणे २ । ३ । ५१ ॥

जानातेरज्ञानार्थस्य करणे शेषत्वेन विवक्षिते षष्ठी । सर्पिषो ज्ञानम् । शेषे षष्ठीति षष्ठीसिद्धावापि प्रतिपदविधाना षष्ठी न समस्यते । इति समासनिवृत्तये प्रकरणम् । अत एव तिङन्तं नोदाह्रियते । सर्पिषो जानीते, इत्यादाँ तु शेषे षष्ठीत्येव षष्ठीत्याहुः । काशिकादाँ तु ज्ञोऽविदर्थेत्यादाँ तिङन्तमुदाहरतम् । अन्येऽपि बहवस्तिङन्तमुदाहरन्ति ॥

अधीगर्थद्वयेषां कर्मणि २ । ३ । ५२ ॥

एषां कर्मणि शेषे षष्ठी । मातुः स्मरणम् । सर्पिषो दैन्यनमी-शनं वा ॥

कृञः प्रतियत्ने २ । ३ । ५३ ॥

प्रतियत्नो गुणाधानं कृञः कर्मणि शेषे षष्ठी स्याद्वृणाधाने । एधोदकस्योपस्करणम् ॥

रुजार्थानां भाववचनानामज्वरेः २ । ३ । ५४ ॥

भावकर्तृकाणां ज्वरिर्जितानां रुजार्थानां कर्मणि शेषे षष्ठी । चौरस्य रोगस्य रुजा ॥

अज्वरिसंताप्योरिति वाच्यम् ❀ ॥

रोगस्य चौरज्वरः चौरसंतापो वा । रोगकर्तृकं चौरसंबन्धि ज्वरादिकमित्यर्थः ॥

आशिपि नाथः २ । ३ । ५५ ॥

आशीरर्थस्य नाथतेः शेषे कर्मणि षष्ठी । सर्पिषो नाथनम् । आशिपि इति किम् । माणवकनाथनम् । तत्संबन्धिनी याच्जेत्यर्थः ॥

जासिनिप्रहणनाटक्राथपिपां हिंसायाम् २ । ३ । ५६ ॥

हिंसार्थानामेषा शेषे, कर्मणि षष्ठी । चौरस्योज्जासनम् । निप्रो-
संहतौ विपर्यस्तौ व्यस्तो वा । चौरस्य निप्रहणनं प्रणिहननं निह-
ननं प्रहणनं वा । नट अवस्थन्दने चुरादिः । चौरस्योन्नादनम् ।
चौरस्य क्राथनम् । वृषलस्य पेपणम् । हिंसाया किम् । धाना-
पेपणम् ॥

व्यवहृपणोः समर्थयोः २ । ३ । ५७ ॥

शेषे कर्मणि षष्ठी । शूते क्रयविक्रयव्यवहारे चानयोस्तुस्त्वार्थता ।
अतस्य व्यवहरणं पणनं वा । समर्थयोः किम् । शलाकाव्यवहारः ।
गणनेत्यर्थः । ब्राह्मणपणनं स्तुतिरित्यर्थः ॥

दिवस्तदर्थस्य २ । ३ । ५८ ॥

दृशार्थस्य क्रयविक्रयरूपव्यवहारार्थस्य च दिवः कर्मणि षष्ठी ।
शतस्य दीव्यति । तदर्थस्य किम् । ब्राह्मणं दीव्यति ।
स्तौतीत्यर्थः ॥

विभापोपसर्गे २ । ३ । ५९ ॥

पूर्वयोगापवादः । शतस्य शतं वा प्रतिदीव्यति ॥

प्रेष्यश्रुवोर्हविषो देवतासंप्रदाने २ । ३ । ६१ ॥

देवतासंप्रदानकेऽर्थे वर्तमानयोः प्रेष्यश्रुवोः कर्मणो हविर्विशेषस्य
वाचकाच्छब्दात्षष्ठी । अग्नये छागस्य हविषो वपाया मेदसः प्रेष्य
अनुब्रूहि वा ॥

कृत्वोर्थप्रयोगे कालेऽधिकरणे २ । ३ । ६४ ॥

कृत्वोर्थानां प्रयोगे कालवाचिन्याधिकरणे शेषे षष्ठी । पञ्चकृ-
त्वोञ्चो भोजनम् । द्विरद्वौ भोजनम् । शेषे किम् । द्विरहन्यध्ययनम् ।
कर्तृकर्मणोः कृति । गुणकर्मणि वेप्यते । नेताश्वस्य सुप्तस्य सुप्तं
वा । कृति किम् । तद्धिते मा भूत् । कृतपूर्वा कटम् ॥

उभयप्राप्तौ कर्मणि २ । ३ । ६६ ॥

दभयोः प्राप्तिर्यस्मिन्कृति तत्र कर्मण्येव पृष्ठी । आश्रयों गवां
 दोहोऽगोपेन । स्त्रीप्रत्यययोस्काकाग्योर्नायं नियमः । भेदिका
 विभित्सा वा रुद्रस्य जगतः । शेषे विभाषा । स्त्रीप्रत्यय इत्येके ।
 विचित्रा जगतः कृतिर्हरेः हरिणा वा । केचिद्विशेषेण विभाषामि-
 च्छन्ति । शब्दानामनुशासनमाचार्येण आचार्यस्य वा ॥

क्तस्य च वर्तमाने २ । ३ । ६७ ॥

वर्तमानार्थस्य क्तस्य योगे पृष्ठी । नलोकइति निषेधस्यापवादः ।
 राज्ञां मतो बुद्धः पूजितो वा ॥

अधिकरणवाचिनश्च २ । ३ । ६८ ॥

क्तस्य योगे पृष्ठी । इदमेपामासितं शयितं गतं भुक्तं वा ॥

अक्रेनोर्भविष्यदाधमर्ण्ययोः २ । ३ । ७० ॥

भविष्यत्यक्तस्य भविष्यदाधमर्ण्यार्थेनश्च योगे पृष्ठी न । सतः
 पालकोऽवतरति । व्रजंगामी । शतंदायी ॥

कृत्यानां कर्तरि वा २ । ३ । ७१ ॥

पृष्ठी । मया मम वा सेव्यो हरिः । कर्तरि इति किम् । गेयो
 माणवकः साम्नाम् । भव्यगेय इति कर्तरि यद्विधानादनभिहितं
 कर्म । अत्र योगो विभज्यते कृत्यानाम् । उभयप्राप्तौ इति न इति
 चानुवर्तते । तेन नेतव्या व्रजं गावः कृष्णेन । ततः कर्तरि वा
 उक्तोऽर्थः ॥

तुल्यार्थैस्तुलोपमाभ्यां तृतीयान्यतरस्याम् २ । ३ । ७२ ॥

तुल्यार्थयोगे तृतीया वा स्यात्पक्षे पृष्ठी । तुल्यः सदृशः समो
 वा कृष्णस्य कृष्णेन वा । अतुलोपमाभ्यां किम् । तुला उपमा वा
 कृष्णस्य नास्ति ॥

इति १०३ अंशाः ।

चतुर्थी चाशिष्यायुप्यमद्रुभद्रकुशलसुखार्थहितैः २ ।
 ३ । ७३ ॥

एतदर्थ्ययोगे चतुर्थी वा पक्षे षष्ठी आशिपि । आयुष्यं चिं
जीवितं कृष्णाय कृष्णस्य वा भूयात् । एवं मद्रं भद्रं कुशलं निगमयं
मुखं शम् अर्थः प्रयोजनं हितं पथ्यं वा भूयात् आशिपि किम् ।
देवदत्तस्यायुष्ममस्ति । व्याख्यानात्मवर्त्रार्थप्रहणम् । मद्रभद्रयोः
पर्यायत्वादन्यतरो न पठनीयः ॥

क्तस्येन्विपयस्य कर्मण्युपसंख्यानम् ❀ ॥

अधीती व्याकरणे । अधीतमनेनेति विग्रहे इष्टादिभ्यश्च इति
कर्तरीनिः ॥

साध्वसाधुप्रयोगे च ❀ ॥

साधुः कृष्णो मातरि । असाधुर्मातुले । निमित्तात्कर्मयोगे
निमित्तमिह फलम् । योगः संयोगसमवायात्मकः । चर्मणि
द्वीपिनं हन्ति दन्तयोर्हन्ति कुञ्जरम् । केशेषु चर्मो हन्ति सीमि
पुष्कलको हतः ॥ हेतौ तृतीयात्र प्राप्ता । सीमाण्डकोशः । पुष्क-
लको गन्धमृगः । योगविशेषे किम् । वेतनेन धान्यं लुनाति ।
यस्य च भावेनेति सप्तम्युक्ता । अर्हाणां कर्तृत्वेऽनर्हाणामकर्तृत्वे
तद्वेपरीत्ये च । सत्सु तरत्सु असन्त आसते । असत्सु तिष्ठत्सु
सन्तस्तरन्ति । सत्सु तिष्ठत्सु असन्तस्तरन्ति । असत्सु तर्त्सु
सन्तस्तिष्ठन्ति ॥

षष्ठी चानादरे २ । ३ । ३८ ॥

अनादराधिक्ये भावलक्षणे षष्ठीसप्तम्यौ । रुदति रुदतो वा
प्राव्राजीत् । रुदन्तं पुत्रादिकमनादृत्य संन्यस्तवानित्यर्थः ॥

स्वामीश्वराधिपतिदायादसाक्षिप्रतिभूप्रसूतैश्च २ । ३ । ३९ ॥

एतैः सप्तभिर्योगे षष्ठीसप्तम्यौ । षष्ठ्यामेव प्राप्तायां पाक्षिकम-
प्तम्यर्थं वचनम् । गवां गोषु वा स्वामी । गवां गोषु वा प्रसूतः ।
गा एवानुभवितुं जात इत्यर्थः ॥

आयुक्तकुशलाभ्यां चासेवायाम् २ । ३ । ४० ॥

आभ्यां योगे पृष्ठीसप्तम्यौ स्तस्तात्पर्येऽर्थे । आयुक्तो व्यापारितः आयुक्तः कुशलो वा हरिपूजने हरिपूजनस्य वा । आसेवायाम् किम् । आयुक्तो गौः शकटे । ईपद्युक्त इत्यर्थः ॥

पञ्चमी विभक्ते २ । ३ । ४२ ॥

विभागो विभक्तं निर्धार्यमाणस्य यत्र भेद एव तत्र पञ्चमी । माधुराः पाटलिपुत्रकेभ्य आढ्यतराः ॥

साधुनिपुणाभ्यामर्चायां सप्तम्यप्रतेः २ । ३ । ४३ ॥

आभ्यां योगे सप्तमी स्यादर्चायाम् नतु प्रतेः प्रयोगे । मातरि साधुनिपुणो वा । अर्चायां किम् । निपुणो राज्ञो भृत्यः । इह त्वकथने तात्पर्यम् ॥

अप्रत्यादिभिरिति वक्तव्यम् ❀ ॥

साधुनिपुणो वा मातरं प्रति पर्यनु वा ॥

प्रसितोत्सुकाभ्यां तृतीया च २ । ३ । ४४ ॥

आभ्यां योगे तृतीया स्याद्यात्सप्तमी । प्रसित उत्सुको हरिणा हसौ वा ॥

नक्षत्रे च लुपि २ । ३ । ४५ ॥

नक्षत्रे प्रकृत्यर्थे यो लुप्तंज्ञया लुप्यमानस्य प्रत्ययस्यार्थस्तत्र वर्तमानात्तृतीयासप्तम्यौ । अधिकरणे—मूलेनावाहयेद्देवीं श्रवणन विसर्जयेत् । मूले श्रवण इति वा । लुपि किम् । पुष्ये शनिः ॥

सप्तमीपञ्चम्यौ कारकमध्ये २ । ३ । ७ ॥

शक्तिद्वयमध्ये यौ कालाध्वानौ ताभ्यामेते स्तः । अद्य भुक्त्वायं द्यहे द्यहाद्वा भोक्ता । कर्तृशक्त्योर्मध्येऽयं कालः । इहस्योऽयं क्रोशे क्रोशाद्वा लक्ष्यं विध्येत् । कर्तृकर्मशक्त्योर्मध्येऽयं देशः । अधिकशब्देन योगे सप्तमीपञ्चम्याविष्येते । तदास्मिन्नाधिकम् इति यस्मादधिकम् इति च सूत्रनिर्देशात् । लोके लोकाद्वाधिको हरिः ॥

अधिरीश्वरे १ । ४ । ९७ ॥

रुपः । तिङा-पर्यभूपयत् । नाम्ना-कुम्भकारः । धातुना-कटपूः ।
अजस्रम् । तिङां तिङा-पिवतखादता खादतमोदता । तिङां
सुपा-कृन्तविचक्षणोति यस्यां क्रियायां मा कृन्तविचक्षणा । एही-
डादयोऽन्यपदार्थे इति मयूरव्यंसकादौ पाठात्ममासः । समर्थः
पदाविधिः इति प्राग्व्याख्यातमनुसन्धेयम् ॥

प्राक्कारात्समासः २ । १ । ३ ॥

कडाराः कर्मधारये इत्यतः प्राक् समास इत्यधिक्रियते ॥

सह सुपा २ । १ । ४ ॥

सह इति योगो विमज्यते । सुवन्तं समर्थेन सह समस्यते ।
योगविभागस्येष्टसिद्धचर्धत्वात्कतिपयतिङन्तीत्तरपदोऽयं समासः ।
स च छन्दस्येव । पर्यभूपयत् । अनुव्यचलत् । सुपा सुप्सुपा सह
सस्यते । समासत्वात्प्रातिपादिकत्वम् । सुपो धात्विति सुपो लुक् ।
भृतपूर्वं चरट् इति निर्देशाद् भृतशब्दस्य पूर्वनिपातः । पूर्व भूतो
भृतपूर्वः । इवेन समासो विभक्त्यलीपश्च । जीभूतस्येव ॥

अव्ययीभावः २ । १ । ५ ॥

अधिकारोऽयम् । अव्ययं विभक्तीति सूत्रेऽव्ययमिति योगो
विमज्यते । अव्ययं समर्थेन समस्यते सोऽव्ययीभावः । दिशयोर्म-
ध्यमपदिशम् । ह्लीवाव्ययं त्वपदिशं दिशोर्मध्ये विदिक् स्त्रिया-
मित्यमरः । अथ विमक्त्यर्थादिषु । हरी इत्यधि हरि । सप्तम्यर्थस्यै-
वात्र द्योतकोऽधिः । अत्र निपातेनाभिहितेऽप्याधिकरणे वचनसाम-
र्थ्यात्सप्तमी । समीपे-कृष्णस्य समीपमुपकृष्णम् । समया ग्रामम् ।
निकपा लङ्गाम् । आरादनादित्यत्र तु नाव्ययीभावः । अभितः
परित् । अन्यारात् इति द्वितीयापश्चम्योर्बिधानसामर्थ्यात् । मद्राणां
समृद्धिः सुमद्रम् । बहुलग्रहणात्सुमद्रमुन्मत्तगङ्गमित्यादौ मत्तम्या
नित्यमम्भावः । यवनानां वृद्धिर्दुर्वयनम् । विगता ऋद्धिर्वृद्धिः ।
माशिकाणामभावो निर्मक्षिणम् । हिमस्यात्ययोऽतिहिमम् । अत्ययो
ध्वंसः निद्रा मंप्रति न युज्यत इत्यतिनिद्रम् । हरिशब्दस्य प्रकाश

अपविष्णु संसारः अपविष्णोः । परिपिष्णु परिपिष्णोः ।
वहिर्वनं वहिर्वनात् । प्राग्वनं प्राग्वनात् ॥

इति १०५ अंशाः ।

आङ्मर्यादाभिविध्योः २ । १ । १३ ॥

एतयोराङ् पञ्चम्यन्तेन वा समस्यते सोऽव्ययीभावः । आमु-
क्ति संसारः आमुक्तेः । आवालं हरिमक्तिः आवालेभ्यः ॥

लक्षणेनाभिप्रती आभिमुख्ये २ । १ । १४ ॥

आभिमुख्यद्योतकावभिप्रती चिद्ववाचिना सह प्राग्वत् । अभ्यग्नि
शलमाः पतन्ति अग्निमभि । प्रत्यग्नि अग्नि प्रति ॥

पारे मध्ये पष्ठ्या वा २ । १ । १८ ॥

पागमध्यशब्दौ पष्ठ्यन्तेन सह वा समस्येते । एदन्तत्वं चान-
योर्निपात्यते । पक्षे पष्ठीतत्पुरुषः । पारेगङ्गादानय गङ्गापारात् ।
मध्येगङ्गात् गङ्गामध्यात् । महाविभापया वाक्यमपि । गङ्गायाः
पारात् । गङ्गाया मध्यात् ॥

समासान्ताः ५ । ४ । ६८ ॥

इत्यधिकृत्य ॥

अव्ययीभावे शरत्प्रभृतिभ्यः ५ । ४ । १०७ ॥

शरदादिभ्यष्टच्स्यात्समासान्तोऽव्ययीभावे । शरदः समीपमुप-
शरदम् । प्रतिविपाशम् । शरद् विपाश् अनस् मनस् उपानह्
दिब् हिमवत् अनडुह् दिश् दृश् विश् चेतस् चतुर् त्यद् तद् यद्
कियत् जराया जरस् च उपजरसम् । प्रतिपरसमनुभ्योऽक्ष्णः य-
स्येति च प्रत्यक्षम् । अक्ष्णः परम् इति विश्रहे समासान्तविधानसा-
मर्थ्यादव्ययीभावः । परोक्षे लिट् इति निपातनात्परस्यौकारादेशः ।
परोक्षम् । परोक्षा क्रिया इत्यादि तु अर्श आद्यचि । समक्षम् ।
अन्वक्षम् ॥

अनश्च ५ । ४ । १०८ ॥

अन्नन्तादव्ययीमावाहृत् ॥

नस्तद्धिते ६ । ४ । १४४ ॥

नान्तस्य भस्य टेलोपस्तद्धिते । उपगजम् । अख्यात्मम् ॥

नपुंसकादन्यतरस्याम् ५ । ४ । १०९ ॥

अन्नन्तं यत्हीवं तदन्तादव्ययीमावाहृत् । उपनमम् उपनमम् ॥

ज्ञयः ५ । ४ । १११ ॥

क्षयन्तादव्ययीमावाहृत्वा । उपगमिर्ध उपगमिन् ॥

गिरेश्च सेनकस्य २ । ४ । ११२ ॥

गिर्यन्तादव्ययीमावाहृत्वा । उपगिर् उपगिर् । इत्यव्ययीमात्रः ॥

तत्पुरुषः २ । १ । २२ ॥

प्राग्बहुधीर्हरधिकारः ॥

द्विगुश्च २ । १ । २३ ॥

द्विगुरपि तत्पुरुषगंशः । इदं स्रष्टं त्यक्तं शक्यम् । गंख्यापूर्वो द्वि-
गुश्चेति पठित्वा चकारग्यत्वेन संज्ञादयसमावेशस्य भुवचत्वात् ।
समामान्तः प्रयोजनम् । पञ्चगजम् ॥

द्वितीयाश्रितातीतपतितगतात्यस्तप्राप्तापन्नेः २ । १ ।
२४ ॥

द्वितीयान्तं श्रितादिप्रकृतिकैः भुवन्तः मह वा ममम्यने स
तत्पुरुषः । कृष्णं श्रितः कृष्णश्रितः । दुःखमर्त्वीनो दुःखार्त्वीनः ॥

गम्यादीनामुपसंख्यानम् ॐ ॥

प्राग् गमी प्राग्गमी । अन्नं भुभुभुन्नभुभुः ॥

पूर्वसदृशसमोनार्थकलहनिपुणमिश्रलक्षणः २ । ३ । ३१ ॥

द्वितीयान्तमेतः प्राग्बत् । मानपूर्वः । मात्रमदशः । निवृत्तः ।
ऊनापे मापेनं कर्षापणम् । मापारिक्तम् । वास्तवः । आचार-
निपुणः । गुढमिश्रः । आचारलक्षणः । निश्रमणो मौनगंस्यादि

ग्रहणम् । मिश्रं चानुपसर्गमसंधौ इत्यत्रानुपसर्गग्रहणात् । गुडसंमि-
श्रा धानाः ॥

अवरस्योपसंख्यानम् ❀ ॥

मासेनावरो मासावरः । कर्तृकरणे कृता बहुलम् । हरित्रातः ।
नखभिन्नः । कृद्ग्रहणे गतिकारकपूर्वस्यापि ग्रहणम् । नखनिभिन्नः ।
कर्तृकरणे इति किम् । भिक्षामिरूपितः । हेतवेपा तृतीया ।
बहुलग्रहणं सर्वोपाधिव्यभिचारार्थम् । तेन दात्रेण लूनवान् इत्यादौ
न । कृता किम् । काष्ठैः पचतितराम् ॥

अन्नेन व्यञ्जनम् २ । १ । ३४ ॥

संस्कारकद्रव्यवाचकं तृतीयान्तमन्नेन प्राग्वत् । दध्ना ओदनो
दध्योदनः । इहान्तभूतोपसेकक्रियाद्वारा सामर्थ्यम् ॥

भक्ष्येण मिश्रीकरणम् २ । १ । ३५ ॥

गुडेन धाना गुडधानाः । मिश्रणक्रियाद्वारा सामर्थ्यम् ॥

चतुर्थी तदर्थार्थवलिहितसुखरक्षितैः २ । १ । ३६ ॥

चतुर्थ्यन्तार्थाय यत्तद्वाचिनार्थादिभिश्च चतुर्थ्यन्तं वा प्राग्वत् ।
तदर्थेन प्रकृतिविकृतिभाव एव । वलिरक्षितग्रहणाज्ज्ञापकात् ।
यृपाय दारु यूपदारु । नेह । रन्धनाय स्थाली । अश्वघासादयस्तु
पष्ठीसमासाः ॥

अर्थेन नित्यसमासो विशेष्यलिङ्गता चेति वक्तव्यम् ❀ ॥

द्विजायार्थं द्विजार्थः सूपः । द्विजार्था यवागूः । द्विजार्थं पयः ।
भृतवलिः । गोहितम् । गोसुखम् । गोरक्षितम् ॥

पञ्चमी भयेन २ । १ । ३७ ॥

चोराद् भय चोरमयम् । पष्ठी-राजपुरुषः ॥

भयभीतभीतिभीभिरिति वाच्यम् ❀ ॥

वृकभीतः ॥

स्तोकान्तिकदूरार्थकृच्छ्राणि क्तेन २ । १ । ३९ ॥

स्तोकान्मुक्तः । अल्पान्मुक्तः । अन्तिकादागतः । अभ्याशादा-
गतः । दूरादागतः । विप्रकृष्टादागतः । कृच्छ्रादागतः । पञ्चम्या-
स्तोकादिभ्यः इत्यलुक् ॥

याजकादिभिश्च २ । २ । ९ ॥

एभिः षष्ठ्यन्तं समस्यते । वृजकाभ्यां कर्त्तरि इत्यस्य प्रतिप्रस-
वोऽयम् । ब्राह्मणयाजकः । देवपूजकः ॥

गुणात्तरेण तरलोपश्चेति वक्तव्यम् ॐ ॥

तरवन्तं यद्वृणवाचि तेन सह समासस्तर्लोपश्च । न निर्धा-
रणे इति पूरणगुण इति च निषेधस्य प्रतिप्रसवोऽयम् । सर्वेषां श्वेत-
तरः सर्वश्वेतः । सर्वेषां महत्तरः सर्वमहान् ॥

इति १०६ अंशः ।

कृद्योगा च षष्ठी समस्यत इति वाच्यम् ॐ ॥

इध्मस्य व्रश्न इध्मव्रश्नः ॥

न निर्धारणे २ । २ । १० ॥

निर्धारणे या षष्ठी सा न समस्यते । नृणां द्विजः श्रेष्ठः ॥

प्रतिपदविधाना षष्ठी न समस्यत इति वाच्यम् ॐ ॥

सर्पिषो ज्ञानम् ॥

पूरणगुणसुहितार्थसद्व्ययतव्यसमानाधिकरणे न २ ।

२ । ११ ॥

पूरणाद्यर्थः सदादिभिश्च षष्ठी न समस्यते । पूरणं-मता षष्ठः ।
गुणे-वाकस्य काष्ण्यम् । ब्राह्मणस्य शुक्लः । यदा प्रकृष्णादिना
दन्ता इति विशेष्यं ज्ञातं तदेदमुदाहरणम् । अनित्योऽर्थं गुणेन
निषेधः । तदशेष्यं संज्ञाप्रमाणत्वात् इत्यादिनिर्देशात् । तेन अर्थ-
गौरवं बुद्धिमान्द्यं इत्यादि सिद्धम् । सुहितार्थास्त्वृथ्याः । फलानां
सुहितः । वृतीयासमामस्तु स्यादेव । स्वरं विशेषः । सत्-द्विजस्य

कुर्वन् कुर्वाणो वा । किंकर इत्यर्थः । अव्ययम्—ब्राह्मणस्य कृत्वा । पूर्वोत्तरसाहचर्यात्कृदव्ययमेव—गृह्यते । तेन तदुपरि इत्यादिसिद्धमिति रक्षितः । तव्यः—ब्राह्मणस्य कर्तव्यम् । तव्यता तु भवत्येव । स्वकर्तव्यम् । स्वरे भेदः समानाधिकरणे । तक्षकस्य सर्पस्य विशेषणसमासस्त्विह बहुलग्रहणान्न । गोर्धेनोः इत्यादिषु पीढायुवति इत्यादीना विमत्तपन्तरे चरितार्यानां परत्वाद्वाधकः षष्ठीसमासः प्राप्तः सोऽप्यनेन वार्यते ॥

क्तेन च पूजायाम् २ । २ । १२ ॥

मतिबुद्धि इति सूत्रेण विहितो यः क्तस्तदन्तेन षष्ठी न समस्यते । राज्ञा मतो बुद्धः पूजितो वा । राजपूजितः इत्यादी तु भूते क्तान्तेन सह तृतीयान्तस्य समासः ॥

अधिकरणवाचिना च २ । २ । १३ ॥

क्तेन षष्ठी न समस्यते । इदमेपामासितं गतं भुक्तं वा ॥

कर्मणि च २ । २ । १४ ॥

उभयप्राप्ती कर्मणि इति या षष्ठी सा न स मस्यते । आश्वर्यो गवां दोहोऽगोपेन ॥

तृजकाभ्यां कर्त्तरि २ । २ । १५ ॥

कर्त्तर्यतृजकाभ्या षष्ठ्या न समासः । अपां स्रष्टा । ब्रजस्य भर्ता । ओदनस्य पाचकः । कर्त्तरि किम् । इक्षूणां भक्षणमिक्षुभक्षिका । पत्यर्थमर्त्तशब्दस्य याजकादित्वात्समासः । भूमर्ता । कथं तर्हि, घटाना निर्मातुस्त्रिभुवनविधातुश्च कलहः इति । शेषषष्ठ्या समासः इति कैयटः ॥

कर्त्तरि च २ । २ । १६ ॥

कर्त्तरि षष्ठ्या अकेन न समासः । भवतः शायिका । नेह तृजनुवर्तते । तद्योगे कर्तुरभिहितत्वेन कर्त्तृषष्ठ्या अभावात् ॥

नित्यं क्रीडाजीविकयोः २ । २ । १७ ॥

एतयोरर्थयोरकेन नित्यं पृष्ठी समस्यते । उद्दालकपुष्पमञ्जिका ।
क्रीडाविशेषस्य संज्ञा । संज्ञायाम् इति भावे ण्वुल् । जीविकायां
दन्तलेखकः । तत्र क्रीडायां विकल्पे जीविकायां वृजकाभ्यां कर्तरि
इति निषेधे प्राप्ते वचनम् ॥

पूर्वापराधरोत्तरमेकदेशिनैकाधिकरणे २ । २ । १ ॥

अवयविना सह पूर्वादयः समस्यन्ते । एकत्वसंख्याविशिष्टश्चेद-
वयवी । पृष्ठीसमासापवादः । पूर्व कायस्य पूर्वकायः । अपरकायः ।
एकदेशिना किम् । पूर्व नामेः कायस्य । एकाधिकरणे किम् ।
पूर्वशठात्राणाम् । सर्वोऽप्येकदेशोऽद्वा समस्यते । संख्याविषयाय इति
ज्ञापकात् । मध्याद्गः । सायाद्गः । केचित्तु सर्व एकदेशः कालेन
समस्यते न त्वद्वैव ज्ञापकस्य सामान्यापेक्षत्वात् । तेन मध्यरात्रः ।
वपारताः पश्चिमरात्रगोचरात् इत्यादि सिद्धम् इत्याहुः ॥

अर्धं नपुंसकम् २ । २ । २ ॥

समांशवाच्यर्धशब्दो नित्यं ह्रीवे प्राग्वत् ॥

एकविभक्तावपष्टयन्तवचनम् ॥

एकदेशिसमासविषयकोऽयमुपसर्जनसंज्ञानिषेधः । तेन पञ्चखटी
इत्यादि सिध्यति । अर्धं पिप्पल्या अर्धपिप्पली । ह्रीने किम् ।
प्रामार्थः । द्रव्यैक्य एव । अर्धं पिप्पलीनाम् ॥

सप्तमी शौण्डैः २ । १ । ४० ॥

सप्तम्यन्तं शौण्डादिभिः प्राग्वद्वा । अक्षेपु शौण्डोऽक्षशौण्डः ।
अधिशब्दोऽत्र पठ्यते । अपडक्षेत्यादिना अध्युत्तगपदात् खः ।
ईश्वराधीनः ॥

संज्ञायाम् २ । १ । ४४ ॥

सप्तम्यन्तं मुपा प्राग्वत्संज्ञायाम् । वाक्येन संज्ञानवगमान्नित्य-
नमासोऽयम् । अग्नये तिलकाः । वने कञ्जेरुकाः । दृढदन्तात्सप्तम्याः
इत्यलुक् ॥

क्षेपे २ । १ । ४७ ॥

मत्तम्यन्तं क्तान्तेन प्राग्वन्निन्दायाम् । अवतप्ते नकुलस्थितं
त एतत् ॥

पात्रे समितादयश्च २ । १ । ४८ ॥

एते निपात्यन्ते क्षेपे । पात्रे समिताः भोजनसमय एव संगता
न तु कार्ये । गेहे शूरः । गेहे नदी । आकृतिगणोऽयम् । चकारोऽव-
धारणार्थः । तेनैषा समासान्तरे घटकतया प्रवेशो न । परमाः
पात्रे समिताः ॥

पूर्वकालैकसर्वजरत्पुराणनवकेवलाः समानाधिकर-
णेन २ । १ । ४९ ॥

विशेषणं विशेष्येण इति सिद्धे पूर्वेनिपातनियमार्थं सूत्रम् ।
एकशब्दस्य दिक्संख्ये संज्ञायाम् इति नियमवाधनार्थं च । पूर्वं
स्नातः पश्चादनुलिप्तः स्नातानुलिप्तः । एकनाथः । सर्वयाज्ञिकाः ।
जरत्रैकायिकाः । पुराणमीमासकाः । नवपाठकाः । केवलवैयाकरणाः ॥
इति १०७ अंशाः ।

दिक्संख्ये संज्ञायाम् २ । १ । ५० ॥

समानाधिकरणेन इत्यापादपरिसमाप्तेरधिकारः । संज्ञायामेव
इति नियमार्थं सूत्रम् । पूर्वेपुकामशमी । सप्तर्षयः । नेह । उत्तरा
वृक्षाः । पञ्च ब्राह्मणाः ॥

तद्धितार्थोत्तरपदसमाहारे च २ । १ । ५१ ॥

तद्धितार्थे विषयउत्तरपदे च परतः समाहारे च वाच्ये, दिक्सं-
ख्ये प्राग्वद्वा । पूर्वस्था शालाया भव. पूर्वशालः । समाप्ते कृते
दिक्पूर्वपदादसंज्ञाया अ. इति अः ॥

सर्वनाम्नो वृत्तिमात्रे पुंवद्भावः ❀ ॥

अपरशालः । पूर्वा शाला प्रिया यस्येति त्रिपदेवहुव्रीहौ कृते
प्रियाशब्द उत्तरपदे पूर्वयोस्तत्पुरुषः । तेन शालाशब्द आकार
उदात्त. । पूर्वशालाप्रिय' । दिक्षु समाहारो नास्त्यनभिधानात् ।

ख्यायास्तद्धितायै। पण्णां मातृणामपत्यं पाण्मातुरः । पञ्च गावो नं यस्येति त्रिपदे बहुव्रीहाववान्तरतत्पुरुषस्य विकल्पे प्राप्ते ढ्ढ-त्पुरुषयोरुत्तरपदे नित्यसमासवचनम् ॥

गोरतद्धितलुकि ५ । ४ । ९२ ॥

गोऽन्तात्तत्पुरुषाट्छस्यात्समासान्तो न तद्धितलुकि । पञ्चगव-
नः । उत्तरपदे त्रयाणां लोकानां नाथस्त्रिलोकनाथ इत्यप्युदाह-
न्ति । तादृशान्यन्ये न मन्यन्ते । पञ्चानां गवां समाहारः ।
ख्यापूर्वो द्विगुः । द्विगुरेकवचनम् । स नपुंसकम् । पञ्चगवम् ।
हेगोरिति ङीष् । पञ्चपात्रम् । विशेषणं विशेष्येण बहुलम् ।
लेमुत्पलं नीलोत्पलम् । बहुलग्रहणात् कचिन्नित्यम् । कृष्णसर्पः।
चिन्न । रामो जामदग्न्यः ॥

पूर्वापरप्रथमचरमजघन्यसमानमध्यमध्यमधीराश्च २।

। ५८ ॥

पूर्वनिपातनियमार्थमिदम् । पूर्ववैयाकरणः । अपराध्यापकः ॥

अपरस्यार्थे पञ्चभावो वक्तव्यः ❀ ॥

अपरश्चासावर्धश्च पश्चार्धः । कथम् एकवीर इति । पूर्वकालेक-
ति बाधित्वा परत्वाद्नेन समासे वीरैक इति हि स्यात् । बहुलग्र-
णाद् भविष्यति ॥

श्रेण्यादयः कृतादिभिः २ । १ । ५९ ॥

श्रेण्यादिषु च्च्यर्थवचनं कर्तव्यम् ❀ ॥

अश्रेणयः श्रेणयः कृताः श्रेणीकृताः ॥

क्तेन नञ्चिशिष्टेनानञ् २ । १ । ६० ॥

नञ्चिशिष्टेन क्तान्तेनानञ्क्तान्तं समस्यते । कृतं च तदकृतं च
कृताकृतम् ॥

शाकपार्थिवादीनां सिद्धय उत्तरपदलोपस्योपसंख्या-
यम् ❀ ॥

शाकप्रियः प्रार्थिवः शाकप्रार्थिवः । देवब्राह्मणः ॥

सन्महत्परमोत्तमोत्कृष्टाः पूज्यमानैः २ । १ । ६१ ॥

संद्वयः । वक्ष्यमाणेन महत् आकारः । महावैयाकरणः । पूज्य-
मानैः किम् । उत्कृष्टो गौः । पशुदुष्टत इत्यर्थः ॥

किं क्षेपे २ । १ । ६२ ॥

कुत्सितो राजा किंजा यो न रक्षति । पुंवात् कर्मधारयजाती-
चदेशीयेषु पूग्णीप्रियादिष्वप्राप्तः पुंवावोऽनेन विधीयते । महा-
नवमी । कृष्णचतुर्दशी । महाप्रिया । तथा कोपधादेः प्रतिषिद्धः
पुंवावः कर्मधारयादौ प्रतिप्रसूयते । पाचकस्त्री । दत्तमार्या ।
पञ्चममार्या । स्त्रीप्रमार्या । मुक्केशमार्या । ब्राह्मणमार्या । एवं
पाचकजातीया । पाचकदेशीया इत्यादि ॥

प्रशंसावचनैश्च २ । १ । ६६ ॥

पतः सह जातिः प्राग्वत् । गोमताहिका । गोमचर्चिका ।
गोप्रफण्डम् । गयोदः । गोतल्लजः । प्रगस्ता गौरित्यर्थः । मत-
हिकादयो नियतलिङ्गा नतु विशेष्यनिम्नाः । जातिः किम् । कु-
मारी मताहिका ॥

मयूरव्यंसकादयश्च २ । १ । ७२ ॥

पते निपात्यन्ते । मयूरो व्यंसकः मयूरव्यंसकः । व्यंसको
पुनः । उद्दृष्ट चाराकृ चोपासनम् । निश्चिन्तं च प्रचिन्तं च निश्च-
न्तम् । नास्ति किञ्चन यस्य गोशंभिनः । नास्ति पुनोऽपि भयं
यस्य गोशुतोभयः । अन्यो गतागतान्तरम् । सिद्धं चिन्मात्रम् ॥

आख्यातमाख्यातेन त्रित्यासान्त्ये ॥

भ्रश्रीत विचरंतं परं गतं यत्राभिधीयते गाश्रीतविपत्ता ।
दत्तनृत्तता । ग्यादतमोऽन्ता ॥

एहीटादयोऽन्यपदार्थे ॥

एहीट इति यस्मिन्चमोऽन्तं तदेहीटम् । एहीटम् । उट्टर को-

ष्ठादुत्सृज देहीति यस्यां क्रियायां सोद्द्रोत्सृजा । उद्धमविधमा ।
असातत्यार्थमिह पाठः ॥

जहिकर्मणा बहुलमाभीक्ष्ण्ये कर्तारं चाभिदधाति ॥

जहीत्येतत्कर्मणा बहुलं समस्यते आभीक्ष्ण्ये गम्ये । समासेन
चेत्कर्ताभिधीयत इत्यर्थः । जहिजोडः । जहिस्तम्बः । नञ् । अत्रा-
हणः । अनश्वः । अर्थाभावेऽव्ययीभावेन सहायं विकल्प्यते ।
रक्षोहागमलब्धसंदेहाः प्रयोजनम् इति । अद्भुतायामसंहितम् इति
च भाष्यवार्तिकप्रयोगात् । तेन अनुपलब्धिः । अविवादः । अवि-
घ्नम् । इत्यादि मिद्धम् । नञो नलोपस्तिडि क्षेपे । अपचसि त्वं
जालम् । नैकधा इत्यादौ तु नशब्देन सह सुपा इति समाप्तः ॥

**नभ्राण् नपान्नवेदानासत्यानमुचिनकुलनखनपुंसकन-
क्षत्रनक्रनाकेषु प्रकृत्या ६ । ३ । ७५ ॥**

पाद् इति शत्रन्तः । वेदाः इत्यसुन्नन्तः । न सत्या असत्याः न
असत्या नासत्याः । न मुञ्चतीति नमुचिः । न कुलमम्य । न ख-
मस्य । न स्त्री पुमान् । स्त्रीपुंसयोः पुंसकमाधो निपातनात् । न
क्षरतीति नक्षत्रम् । क्षीयतेः क्षरतेर्वा क्षत्रमिति निपात्यते । न
क्रामतीति नक्रः । क्रमेडः । न अकमस्मिन्निति नाकः ॥

नगोऽप्राणिष्वन्यतरस्याम् ६ । ३ । ७७ ॥

नग इत्यत्र नञ्प्रकृत्या वा । नगाः अगाः पर्वताः । अप्राणिषु
इति किम् । अगो वृषलः । शीते न ॥

इति १०८ अंशाः ।

कुगतिप्रादयः । कुपुरुषः । ऊर्यादिच्चिडाचश्च । ऊरीकृत्य ।
शुक्लीकृत्य । पटपटाकृत्य ॥

कारिकाशब्दस्योपसंख्यानम् ❀ ॥

कारिका क्रिया कारिकाकृत्य ॥

अनुकरणं चानितिपरम् १ । ४ । ६२ ॥

खाड्कृत्य अनितिपरं किम् । खाडिति कृत्वा निरष्टीवत् ॥

आदरानादरयोः सदसती १ । ४ । ६३ ॥

सत्कृत्य । असत्कृत्य ॥

भूषणेऽलम् १ । ४ । ६४ ॥

अलंकृत्य । भूषणे किम् । अलं कृत्वौदनं गतः । पर्याप्तमित्यर्थः ।

अनुकरणम् इत्यादिनिस्त्री स्वभावात्कृञ्चिषया ॥

पुरोऽव्ययम् १ । ४ । ६७ ॥

पुरस्कृत्य ॥

तिरोऽन्तर्धौ १ । ४ । ७१ ॥

तिरोभूय ॥

विभाषा कृञि १ । ४ । ७२ ॥

तिरस्कृत्य तिरकृत्य तिरकृत्वा ॥

साक्षात्प्रभृतीनि च १ । ४ । ७४ ॥

कृञि वा गतिसंज्ञानि स्युः ॥

च्छर्थ इति वाच्यम् ❀ ॥

साधात्कृत्य साक्षात्कृत्वा । लवणं कृत्य लवणं कृत्वा । मान्तत्वं निपातनात् ॥

अनत्याधान उरसिमनसी १ । ४ । १५ ॥

उरसिकृत्य उरसिकृत्वा । अभ्युपगम्येत्यर्थः । मनसिकृत्य मनसिकृत्वा । निश्चित्येत्यर्थः । अत्याधानमुपश्लेषणं तत्र न । उरसि कृत्वा पाणिं शेते ॥

नित्यं हस्ते पाणावुपयमने १ । ४ । ७७ ॥

कृञि । उपयमनं विवाहः । स्वीकारमात्रम् इत्यन्ये । हस्ते कृत्य । पाणौ कृत्य । कुगतीत्यत्र प्रादिग्रहणमगत्यर्थम् । सुपुरुषः । अत्र वार्तिकानि । प्रादयो गताद्यर्थे प्रथमया । प्रगत आचार्यः प्राचार्यः । अत्यादयः क्रान्ताद्यर्थे द्वितीयया । अतिक्रान्तो मालामतिमालः ।

अवादयः क्रुष्टाद्यर्थे तृतीयया । अवक्रुष्टः कोकिलयावकोकिलः ।
पर्यादयो ग्लानाद्यर्थे चतुर्थ्या । परिग्लानोऽध्ययनाय पर्यध्ययनः ।
निरादयः क्रान्ताद्यर्थे पञ्चम्या । निष्क्रान्तः कौशाम्ब्याः निष्कौ-
शाम्बिः । कर्मप्रदचनीयानां प्रतिषेधः । वृक्षं प्रति । उपपदमतिङ् ।
कुम्भकारः । गतिकारकोपपदानां कृद्भिः सह समासवचनं प्राक्-
सुबुत्पत्तेः । व्याघ्री । अश्वक्रीती । कच्छपी । इदं परिभाषामु-
स्फुटीभविष्यति ॥

अभैवाव्ययेन २ । २ । २० ॥

अभैव तुल्यविधानं यदुपपदं तदेवाव्ययेन सह समस्यते ।
स्वादुंकारम् । नेह । कालसमयवेलासु तुमुन् । कालः समयो वेला वा
भोक्तुम् । अभैव इति किम् । अग्रेभोजम् । अग्रे भुक्त्वा । विभा-
षाग्रे प्रथमपूर्वेषु इति क्त्वाणमुलौ । अमा चान्येन च तुल्यविधान-
मेतत् ॥

तृतीयाप्रभृतीन्यन्यतरस्याम् २ । २ । २१ ॥

उपदंशस्त्वृतीयायाम् इत्यादीन्युपपदान्यमन्तेनाव्ययेन सह वा
समस्यन्ते । मूलकेनोपदंशं भुंक्ते मूलकोपदंशम् ॥

क्त्वा च २ । २ । २२ ॥

तृतीयाप्रभृतीन्युपपदानि क्त्वान्तेन सह वा समस्यन्ते । उच्चैः-
कृत्य उच्चैः कृत्वा । अव्ययेऽयथाभिप्रेत इति क्त्वा । तृतीयाप्र-
भृतीनि इति किम् । अलंकृत्वा । खलुकृत्वा ॥

तत्पुरुषस्याङ्गुलेः संख्याव्ययादेः ५ । ४ । ८६ ॥

संख्याव्ययादेरङ्गुल्यन्तस्य तत्पुरुषस्य समासान्तोऽश्चस्यात् । द्वे
अङ्गुली प्रमाणमस्य व्यङ्गुलं दारु । निर्गतमङ्गुलिभ्यो निरङ्गुलम् ॥

अहःसर्वैकदेशसंख्यातपुण्याच्च रात्रेः ५ । ४ । ८७ ॥

एभ्यो रात्रेरच्स्याच्चात्संख्याव्ययादेः । अहर्ग्रहणं द्वन्द्वार्थम् ।
अहश्च रात्रिश्चाहोरात्रः । सर्वा रात्रिः सर्वरात्रः । पूर्व रात्रेः पूर्वरात्रः ।

संख्यातंरात्रः । पुण्यरात्रः । द्वयो रात्र्योः समाहारो द्विरात्रम् ।
अतिक्रान्तो रात्रिमतिरात्रः ॥

राजाहःसखिभ्यष्टच् ५ । ४ । ९१ ॥

एतदन्तात्तत्पुरुषाष्टच् । परमराजः । अतिराजी । कृष्णसखः ॥

अह्नष्टखोरेव ६ । ४ । १४५ ॥

एतयोरेव परतोऽह्नष्टिलोपः स्यान्नान्यत्र । उत्तमाहः । द्वे अहनी
भृतो व्यहीनः क्रतुः । तद्धितार्थे द्विगुः । तमधीष्टः इत्यधिकारे
द्विगोर्वा इत्यनुवृत्तौ रात्र्यहःसंवत्सराच्च इति खः । लिङ्गाविशिष्टप-
रिभाषाया अनित्यत्वान्नेह । मद्राणां राज्ञी मद्रराज्ञी ॥

अह्नोऽह्न एतेभ्यः ५ । ४ । ८८ ॥

सर्वादिभ्यः परस्याहन्शब्दस्याह्नादेशः स्यात्समाप्तान्तेपरे ॥

अह्नोऽदन्तात् ८ । ४ । ७ ॥

अदन्तपूर्वपदस्थाद्रेफात्परस्याह्नोऽह्नादेशस्य नस्य णः । सर्वाह्नः ।
पूर्वाह्नः । संख्याताह्नः । द्वयोरह्नोर्भवः । कालाह्नच् । द्विगोर्लुगनपत्ये
इति ठञो लुक् । ब्यह्नः । खियामदन्तत्वाद्वाप् । ब्यह्ना । व्यह्नप्रियः ।
अत्यह्नः ॥

शुभ्रादिषु च ८ । ४ । ३९ ॥

एषु णत्वं न स्यात् । दीर्घाद्वी प्रावृट् । एवं चैतदर्थमह्न इत्यद-
न्तानुकरणक्लेशो न कर्तव्यः । प्रातिपदिकान्त इति णत्ववारणाय ।
शुभ्रादिषु पाठस्यावश्यकत्वात् । अतः इति तपरकरणान्नेह । पग-
गतमहः पराह्नः ॥

न संख्यादेः समाहारे ५ । ४ । ८९ ॥

समाहारे वर्तमानस्य संख्यादेरह्नादेशो न । संख्यादेः इति स्प-
ष्टार्थम् । द्वयोरह्नोः समाहारो व्यहः । व्यहः ॥

इति १०९ अंशाः ।

उत्तमैकाभ्यां च ५ । ४ । ९० ॥

आभ्यामद्वादेशो न । उत्तमशब्दोऽन्त्यार्थः पुण्यशब्दमाह ।
पुण्यैकाभ्याम् इत्येव सूत्रयितुमुचितम् । पुण्याहम् । सुदिनाहम् ।
सुदिनशब्दः प्रशस्तवाची । एकाहः । उत्तमग्रहणमुपान्त्यस्यापि
संग्रहार्थम् इत्येके । संख्याताहः ॥

अनोश्मायःसरसां जातिमंज्ञयोः ५ । ४ । ९१ ॥

टच्स्याज्जातौ संज्ञायां च । उपानसम् । अमृताश्मः । काला-
यसम् । मण्डूकसरसम् । इति जातिः । महानसम् । पिण्डाश्मः ।
लोहितायसम् । जलसरसम् । इति संज्ञा ॥

ग्रामकौटाभ्यां च तक्षः ५ । ४ । ९२ ॥

ग्रामस्य तक्षा ग्रामतक्षः । साधारण इत्यर्थः । कुट्ट्यां भवः
कौटः स्वतन्त्रः । स चासौ तक्षा च कौटतक्षः ॥

अतेः शुनः ५ । ४ । ९३ ॥

अतिश्वो वराहः । अतिश्वी सेना ॥

उपमानादप्राणिषु ५ । ४ । ९४ ॥

अप्राणिविषयकोपमानवाचिनः शुनष्टच् । आकर्षः श्वेवाकर्षश्च ।
अप्राणिषु किम् । वानरः श्वेव वानरश्चा ॥

उत्तरमृगपूर्वाच्च सक्थः ५ । ४ । ९५ ॥

चादुपमानात् । उत्तरसक्थम् । मृगसक्थम् । पूर्वसक्थम् । फल-
कामिव सक्थि फलकसक्थम् ॥

नावो द्विगोः ५ । ४ । ९६ ॥

नौशब्दान्ताद्विगोष्टच् नतु तद्धितलुकि । द्वाभ्यां नौभ्यामागतौ
द्विनावरूप्यः । द्विगोर्लुगनपत्ये इत्यत्र अचि इत्यस्यापकर्षणाद्दला-
देर्न लुक् । पञ्चनावप्रियः । द्विनावम् । त्रिनावम् । अतद्धितलुकि
इति किम् । पञ्चभिर्नौभिः प्रीतः पञ्चनौः ॥

अर्धाच्च ५ । ४ । ९०० ॥

अर्धान्नावष्ट् । नापोऽर्धम् अर्धनावम् । ह्रीवत्वं लोकात् ॥

स्वार्याः प्राचाम् ५ । ४ । १०१ ॥

द्विगोरर्धाच्च स्वार्याष्टज्वा । द्वित्वारम् द्वित्वारि । अर्धत्वारम् अर्धत्वारि ॥

द्वित्रिभ्यामञ्जलेः ५ । ४ । १०२ ॥

टज्वा द्विगौ । द्व्यञ्जलम् द्व्यञ्जलि । अतद्वितलुकि इत्येव । टाभ्यामञ्जलिभ्या क्रीतो द्व्यञ्जलिः ॥

आन्महतः समानाधिकरणजातीययोः ६ । ३ । ४६ ॥

महत आकारोन्तादेश. समानाधिकरण उत्तरपदे जातीये च परे । महादेशुः । महाजातीय' । समानाधिकरणे किम् । महत्. सेवा महत्सेवा । लाक्षणिकं विहाय प्रतिपदोक्तः सन्महत इति समासो ग्रहीष्यत इति चेत् महाबाहुर्न स्यात्तस्मात् लक्षणप्रतिपदोक्तयोः प्रतिपदोक्तस्य इति परिभाषा नेह प्रवर्तते समानाधिकरणग्रहणसामर्थ्यात् । आत् इति योगविभागादात्वं प्रागेकादशभ्यः इति निर्देशाद्वा । एकादश । महतीशब्दस्य पुंवत्कर्मधारय इति पुंवद्भावे कृत आत्वम् । महाजातीया ॥

महदात्वे घासकरविशिष्टेषूपसंख्यानं पुंवद्भावश्च ❀ ॥

असमानाधिकरण्यार्थमिदम् । महतो महत्या वा घासो महा घासः । महाकर. । महाविशिष्टः । अष्टनः कपाले हविषि । अष्टाकपालः । गवि च युक्ते । गोशब्दे परे युक्त इत्यर्थे गम्येऽष्टन आत्वम् । अष्टागवं शकटम् । अच्यत्यन्वव इत्यत्र अच् इति योगाभागाद्बहुव्रीहावप्यच् । अष्टाना गवा समाहारोऽष्टागवम् । तद्युक्तत्वाच्छकटमष्टागवमिति वा ॥

द्व्यष्टनः संख्यायामबहुव्रीह्यशीत्योः ६ । ३ । ४७ ॥

आत् । द्वौ च दश च द्वादश द्व्यधिकादशेति वा । द्वाविंशति. । अष्टादश । अष्टाविंशतिः । अबहुव्रीह्यशीत्योः किम् । द्वित्रा. व्य शीति. ॥

प्राक्शताद्वक्तव्यम् ❀ ॥

नेह । द्विशतम् । द्विसहस्रम् ॥

त्रेस्रयः ६ । ३ । ४८ ॥

त्रिशब्दस्य त्रयस् स्यात्पूर्वविषये । त्रयोदश । त्रयोविंशतिः । बहुव्रीहौ तु त्रिदश त्रिदशाः । मुज्यं बहुव्रीहिः । अंशीर्ता तु त्र्यशीतिः । प्राक्छतात् इत्येव । त्रिशतम् । त्रिसहस्रम् ॥

विभाषा चत्वारिंशत्प्रभृतौ सर्वेषाम् ६ । ३ । ४९ ॥

व्यष्टनोस्त्रेश्च प्रागुक्तं वा स्याच्चत्वारिंशदादौ परे । द्विचत्वारिंशत् द्वाचत्वारिंशत् । अष्टचत्वारिंशत् अष्टाचत्वारिंशत् । त्रिचत्वारिंशत् त्रयश्चत्वारिंशत् । एवं पञ्चाशत्पाष्टिसप्ततिनवतिषु ॥

एकादिश्चैकस्य चादुक् ६ । ३ । ७६ ॥

एकादिर्नञ् प्रकृत्या स्यादेकस्य चादुगागमश्च । नञो विंशत्या समासे कृत एकशब्देन सह तृतीया इति योगविभागात्समासः । अनुनासिकाविकल्पः । एकेन न विंशतिः एकात्रविंशतिः । एकाट्टन-विंशतिः । एकोनविंशतिरित्यर्थः ॥

पप उत्वं दत्दशधासूत्तरपदादेः घृत्वं च धासु वेत्ति वाच्यम् ❀ ॥

पोडन् पोडश । पोठा पड्धा । समाहारे द्विगुर्द्वन्द्वश्च । नपुंसक-मित्युक्तम् । पञ्चगवम् । अकारान्तोत्तरपदो द्विगुः स्त्रियामिष्टः । पञ्च-मूली । आवन्तो वा । पञ्चखट्वा पञ्चखट्वम् । अनो नलोपश्च वा च द्विगुः स्त्रियाम् । पञ्चतक्षी पञ्चतक्षम् ॥

पात्राद्यन्तस्य न ❀ ॥

॥ पञ्चपात्रम् । त्रिभुवनम् । चतुर्युगमित्याद्यन्यदापि लिङ्गानुशा-सने ज्ञेयम् । सामान्ये नपुंसकम् । मृदु पचति । प्रातः कमनीयम् । इति तत्पुरुषः ॥

इति ११० अंशाः । इति तृतीयाध्यायस्य तृतीयः पादः ।

शेषो बहुव्रीहिः । अनेकमन्यपदार्थे । प्राप्तोदकां ग्राम इत्यादि । प्रथमार्थे तु न । वृष्टे देवे गतः । व्यधिकरणानामपि न । पञ्चभिर्भुक्तमस्य ॥

प्रादिभ्यो धातुजस्य वाच्यो चाचोत्तरपदलोपः ॐ ॥

अविद्यमानपुत्रोऽपुत्रः । अस्ति इति विभक्तिप्रतिरूपकमव्ययम् । अस्तिकीरा गौः । स्त्रियाः पुंवदित्यादिना पुंवद्भावः । चित्रा गावो यस्येति लौकिकविग्रहं चित्रगुः । रूपवद्भार्यः । चित्रा जरती गौर्यस्येति विग्रहे अनेकोक्तेर्वहूनामपि बहुव्रीहिः । अत्र केचित् । चित्रा जरतीगुः जरती चित्रागुर्वा । एवं दीर्घान्वी जहः । तन्वीदीर्घा जहः । त्रिपदे बहुव्रीहौ प्रथमं न पुंवत् । उत्तरपदस्य मध्यमेन व्यवधानात् । द्वितीयमपि न पुंवत् । पूर्वपदत्वाभावात् । उत्तरपदशब्दो हि समासस्य चरमावयवे रूढः । पूर्वपदशब्दस्तु प्रथमावयवे इति वदन्ति । वस्तुतस्तु नेह पूर्वपदमाक्षिप्यते । आनङ् ऋतः इत्यत्र यथा तेनोपान्त्यस्य पुंवदेव चित्रा जरद्गुः इत्यादि । अत एव चित्राजरत्यौ गावौ यस्येति द्वन्द्वगर्भेऽपि चित्राजरद्गुः इति भाष्यम् । कर्मधारयपूर्वपदे तु द्वयोरपि पुंवत् । जरश्चित्रगुः । कर्मधारयोत्तरपदे तु चित्रजरद्गर्वाकः । पूरण्यां तु ॥

अपूरणीप्रमाण्योः ५ । ४ । ११६ ॥

पूरणार्थप्रत्ययान्तं यत्स्त्रीलिङ्गं तदन्तात्प्रमाण्यन्ताच्च बहुव्रीहेरप् । कल्याणी पञ्चमी यासां रात्रीणां ताः कल्याणीपञ्चमा रात्रयः । स्त्रीप्रमाणी यस्य स स्त्रीप्रमाणः । पुंवद्भावप्रतिषेधोऽप्रत्ययश्च प्रधानपूरण्यामेव । रात्रिः पूरणी वाच्या चेत्युक्तोदाहरणे मुख्या । अन्यत्र तु नष्टतश्चेति कप् । कल्याणी पञ्चमी यत्र स कल्याणपञ्चमीकः पक्षः । अत्र तिरोहितावयवभेदस्य पक्षस्यान्यपदार्थतया रात्रिरप्रधानम् । बहुकर्तृकः । अप्रियादिषु किम् । कल्याणीप्रियः । प्रिया । मनोज्ञा । कल्याणी । सुभगा । दुर्भगा । भक्तिः । सचिवा । स्वसा । कान्ता । क्षान्ता । समा । चपला । दुहिता ।

वामा । अवला । तनया । सामान्ये नपुंसकम् । दृढं भाक्तिर्यस्य
स दृढभक्तिः स्त्री ॥

तसिलादिष्वाकृत्वसुचः ६ । ३ । ३५ ॥

तसिलादिष्वाकृत्वसुजन्तेषु परेषु स्त्रियाः पुंवत् । परिगणनं कर्त-
व्यम् । अव्याप्त्यतिव्याप्तिपरिहाराय त्रतसौ । तरप्तमपौ । चरट्-
जातीयरौ । कल्पप्देशीयरौ । रूपप्पाशपौ । थाल् । तिलथ्यर्नौ ।
वह्नीषु बहुत्र बहुतः । दर्शनीयतरा दर्शनीयतमा । घरूप इति
वक्ष्यमाणो ह्रस्वः परत्वात्पुंवद्भावं, वाधते । पट्टितरा पट्टितमा ।
पट्टचरी पट्टजातीया । दर्शनीयकल्पा दर्शनीयदेशीया । दर्शनी-
यरूपा । दर्शनीयपाशा । बहुथा । प्रशस्ता वृकी वृकतिः । अजा-
भ्यो हिता अजथ्या ॥

शसि बहुलपार्थस्य पुंवद्भावो वक्तव्यः ❀ ॥

वह्नीभ्यो देहि बहुशः । अल्पाभ्यो देहि अल्पशः । त्वतलोगु-
णवचनस्य । शुक्लाया भावः शुक्लत्वम् । गुणवचनस्य किम् ।
कर्त्र्या भावः कर्त्रीत्वम् । शरदः कृतार्थता इत्यादौ तु सामान्ये
नपुंसकम् । मस्याढे तद्धिते । हस्तिनीनां समूहो हास्तिकम् । अढे
किम् । रौहिणेयः । स्त्रीभ्यो ढक् इति ढोऽत्र गृह्यते । अग्नेर्ढक् इति
ढकि तु पुंवदेव । अग्नायी देवतास्य स्थालीपाकस्याग्नेयः ।
सपत्नीशब्दस्त्रिधा । शत्रुपर्यायात्सपत्नशब्दाच्छार्ङ्गस्वादित्वान्डी-
न्येकः । समानः पतिर्यस्या इति विग्रहे विवाहनिबन्धनं पतिश-
ब्दमाश्रित्य नित्यस्त्रीलिङ्गो द्वितीयः । स्वामिपर्यायपतिशब्देन भा-
पितपुंस्कस्त्वृतीयः । आद्ययोः शिवाद्यण् । सपत्न्या अपत्यं सा-
पत्नः । वृतीयात्तु लिङ्गविशिष्टपरिभाषया पत्युत्तरपदलक्षणो ण्य एव
न त्वण् । शिवादौ रूढयोरेव ग्रहणात्सापत्यः । ढक्छसोश्च ।
भवत्याश्छात्रा भावत्काः भवदीयाः । एतद्दार्तिकम् एकतद्धिते च
इति सूत्रं च न कर्तव्यम् । सर्वनाम्नो वृत्तिमात्रे पुंवद्भावः इति
भाष्यकारेष्ट्या गतार्थत्वात् । सर्वकाम्याति । सर्विका भार्या यस्य

सर्वकमार्यः । सर्वप्रिय इत्यादि । पूर्वस्यैवेदम् । मर्खपाजाज्ञाद्रा
इति लिङ्गात् । तेनाकच्येकशेषवृत्तौ च न । सर्विका सर्वाः । कुक्कु-
ट्यादीनामण्डादिषु । कुक्कुट्या अण्डं कुक्कुटाण्डम् । मृग्याः पदं
मृगपदम् । मृगक्षीरम् । काकशावः ॥

क्यङ् मानिनोश्च ६ । ३ । ३६ ॥

एतयोः परतः पुंवत् । एनीवाचरत्येतायते । श्येनीवाचरति
श्येतायते । स्वभिन्नां कांचिद्दर्शनीयां मन्यते दर्शनीयमानिनी ।
दर्शनीयां स्त्रियं मन्यते दर्शनीयमानी चैत्रः ॥

न कोपधायाः ६ । ३ । ३७ ॥

कोपधायाः स्त्रियाः न पुंवत् । पाचिकाभार्यः । रसिकाभार्यः ।
मद्रिकायते । मद्रिकामानिनी ॥

कोपधप्रतिपेधे तद्धितबुग्रहणम् ❀ ॥

नेह । पाका भार्या यस्य स पाकभार्यः ॥

इति १११ अंशः ।

संज्ञापूरण्योश्च ६ । ३ । ३८ ॥

अनयोर्न पुंवत् । दत्ताभार्यः । दत्तामानिनी । दानक्रियानिमित्तः
स्त्रियां पुंसि च संज्ञाभूतोऽयमिति भाषितपुंस्कत्वमस्ति । पञ्चमी-
भार्यः । पञ्चमीपाशा ॥

वृद्धिनिमित्तस्य च तद्धितस्यारक्तविकारे ६।३।३९॥

वृद्धिशब्देन विहिता या वृद्धिस्तद्धेतुर्यस्तद्धितोऽरक्तविकारार्थ-
स्तदन्ता स्त्री न पुंवत् । सौम्रीभार्यः । माथुरीयते । माथुरीमानिनी ।
वृद्धिनिमित्तस्य किम् । मध्यमभार्यः । तद्धितस्य किम् । काण्डला-
वभार्यः । वृद्धिशब्देन किम् । तावद्भार्यः । रक्ते तु, काषायी
कल्या यस्य स काषायकल्याः । विकारे तु, हैमी मुद्रिका यस्येति
हममुद्रिक । वृद्धिशब्देन वृद्धिं प्रति फलोपधानाभावादिह पुंवत् ।
वैयाकरणभार्यः । सौवश्वभार्यः ॥

स्वाङ्गाच्चैतः ६ । ३ । ४० ॥

स्वाङ्गाद्य ईकारस्तदन्ता स्त्री न पुंवत् । सुकेशीभार्यः । स्वाङ्गात् किम् । पटुभार्यः । ईतः किम् । अकेशभार्यः ॥

अमानिनीति वक्तव्यम् ❀ ॥

सुकेशमानिनी ॥

जातेश्च ६ । ३ । ४१ ॥

जातेः परो यः स्त्रीप्रत्ययस्तदन्तं न पुंवत् । शूद्राभार्यः । ब्राह्मणीभार्यः । सौत्रस्यैवायं निषेधः तेन हस्तिनीनां समूहो हास्तिकमित्यत्र भस्याडे इति तु भवत्येव ॥

संख्ययाव्ययासन्नादूराधिकसंख्याः संख्येये २ । २ । २५ ॥

संख्येयार्थया संख्ययाव्ययादयः समस्यन्ते स बहुव्रीहिः । दशानां समीपे ये सन्ति त उपदशाः । नव एकादश वेत्यर्थः । बहुव्रीहौ संख्येये इति वक्ष्यमाणो डच् ॥

तिविंशतेर्डिति ६ । ४ । १४२ ॥

विंशतेर्भस्य तिशब्दस्य लोपः स्याडिति । आसन्नविंशाः । विंशतेरासन्ना इत्यर्थः । अदूरत्रिंशाः । अधिकचत्वारिंशाः । द्वौ वा त्रयो वा द्वित्राः । द्विरावृत्ता दश द्विदशाः । विंशतिरित्यर्थः ॥

दिङ्नामान्यन्तराले २ । २ । २६ ॥

दिशो नामान्यन्तराले वाच्ये प्राग्वत् । दक्षिणस्याः पूर्वस्याश्च दिशोऽन्तरालं दक्षिणपूर्वा । नामग्रहणाद्यौगिकानां न । ऐन्द्र्याश्च कौवेर्याश्चान्तरालं दिक् ॥

तत्र तेनेदमिति सरूपे २ । २ । २७ ॥

सप्तम्यन्ते ग्रहणविषये सरूपे पदे तृतीयान्ते च ग्रहणविषय इदं युद्धं प्रवृत्तमित्यर्थं समस्येते कर्मव्यतिहारे द्योत्ये स बहुव्रीहिः । इतिशब्दादयं विषयविशेषो लभ्यते । इत्समासान्तो वक्ष्यते । तिष्ठद्गुप्रभृतिष्विचप्रत्ययस्य पाठादव्ययीभावत्वमव्य-

यत्वं च । अन्येषामपि दृश्यते इति दीर्घः । केशेषु केशेषु गृहीत्वैदं
 युद्धं प्रवृत्तं केशाकेशि । दण्डैश्च दण्डैश्च प्रहृत्येदं युद्धं प्रवृत्तं दण्डा-
 दण्डि । मुष्टीमुष्टि।ओर्गुणः। अवादेशः। वाहूवाहवि । ओर्गुण इत्यत्र
 ओरोत् इति वक्तव्ये गुणोक्तिः । संज्ञापूर्वको विधिरनित्यः इति
 ज्ञापयितुम् । तेन स्वायंभुवः इत्यादि सिद्धम् । सरूपे इति किम् ।
 हलेन मुसलेन । तेन सहेति तुल्ययोगे वोपसर्जनस्य सपुत्रः सह-
 पुत्रः । तुल्ययोगवचनं प्रायिकम् । सकर्मकः । सलोमकः ॥

प्रकृत्याशिपि ६ । ३ । ८३ ॥

सहशब्दः प्रकृत्या स्यादाशिपि । स्वस्तिराज्ञे सहपुत्राय ।
 महामात्याय ॥

अगोवत्सहलेष्विति वाच्यम् ❀ ॥

सगवे । सवत्साय । सहलाय ॥

बहुव्रीहौ संख्येये ङजबहुगणात् ५ । ४ । ७३ ॥

संख्येये यो बहुव्रीहिस्तस्माद्बुच् । उपदशाः । अबहुगणात्
 किम् । उपबहवः । उपगणाः । अत्र स्वरे विशेषः ॥

संख्यायास्तत्पुरुषस्य वाच्यः ❀ ॥

निर्गतानि त्रिंशतो निस्त्रिंशानि वर्षाणि चैत्रस्य । निर्गतत्रिं-
 शतोऽगुलिभ्यो निस्त्रिंशः खङ्गः ॥

बहुव्रीहौ सक्थ्यक्ष्णोः स्वाङ्गात्पच् ५ । ४ । ११३ ॥

व्यत्ययेन षष्ठी । स्वाङ्गाच्चिसक्थ्यक्ष्यन्ताद्बहुव्रीहेः पच् ।
 दीर्घे सक्थिनी यस्य स दीर्घसक्थयः । जलजाक्षी । स्वाङ्गात् किम् ।
 दीर्घसक्थि शकटम् । स्थूलाक्षा वेणुयष्टिः । अक्ष्णोऽदर्शनात्
 इत्यत्र ॥

अंगुलेर्दारुणि ५ । ४ । ११४ ॥

अंगुल्यन्ताद्बहुव्रीहेः पच् दारुण्यर्थे । पञ्चांगुलयो यस्य तत्प-
 ञ्चांगुलं दारु । अंगुलिसदृशावयवं धान्यादिरिक्षेपणकाष्ठमुच्यते ।

बहुव्रीहेः किम् । षे अंगुली प्रमाणमस्या ब्यंगुला यष्टिः । तद्वितार्थं
तत्पुरुषे तत्पुरुषस्यांगुलेः इत्यच् । दारुणि किम् । पश्चांगुलिर्हस्तः ॥

द्वित्रिभ्यां प मूर्धः ५ । ४ । ११५ ॥

आभ्या मूर्धः पः बहुव्रीहो । द्विमूर्धः । त्रिमूर्धः ॥

नेतुर्नक्षत्रे अव्यक्तव्यः ❀ ॥

मृगो नेता चासा ता मृगनेत्रा रात्रयः । पुष्यनेत्रा ॥

अन्तर्वह्निभ्यां च लोमः ५ । ४ । ११७ ॥

आभ्या लोमोऽपू बहुव्रीहौ । अन्तर्लोमः वहिर्लोमः ॥

इति ११२ अंशाः ।

अनासिकायाः संज्ञायां नसं चास्थूलात् ५ । ४ । ११८ ॥

नासिकान्ताद्बहुव्रीहेरच् । नासिकाशब्दश्च नसं प्राप्नोति नतु
स्थूलपूर्वात् ॥

पूर्वपदात्संज्ञायामगः ८ । ४ । ३ ॥

पूर्वपदस्थान्निमित्तात्परस्य नस्य णः स्यात्संज्ञायां नतु गकार-
व्यवधाने । दुरिब नासिकास्य द्रुणसः । खरणसः । अगः किम् ।
ऋचामयनमृगयनम् । अणृगयनादिभ्यः इति निपातनाण्णत्वाभाव-
माश्रित्य अगः इति प्रत्याख्यातं भाष्ये । अस्थूलात् किम् । स्थू-
लनासिकः ॥

खुरखराभ्यां वा नसू ❀ ॥

खुरणाः खरणाः । पक्षेऽजपीष्यते । खुरणसः ॥

उपसर्गाच्च ५ । ४ । ११९ ॥

भादेर्यो नासिकाशब्दस्तदन्ताद्बहुव्रीहेरच् नासिकाया नसादेशश्च ।
असंज्ञार्थं वचनम् । उन्नता नासिका यस्य स उन्नसः । उपस-
र्गादनोत्परः इति सूत्रं तद् भङ्क्त्वा भाष्यकार आह ॥

उपसर्गाद्बहुलम् ८ । ४ । २८ ॥

उपसर्गस्थान्निमित्तात्परस्य नसो नस्य णः बहुलम् । प्रणसः ॥

वेग्रो वक्तव्यः ❀ ॥

विगता नासिकास्य विग्रः ॥

रव्यश्च ❀ ॥

विरव्यः । कथं तर्हि, विनसा हतवान्धवा इति महिः । विग-
तया नासिकयोपलक्षितेति व्याख्येयम् ॥

सुप्रातसुश्वसुदिवशारिकुक्षचतुरश्रेणीपदाजपद-
प्रोष्ठपदाः ५ । ४ । १२० ॥

एते बहुव्रीहयोऽचप्रत्ययान्ता निपात्यन्ते । शोभनं प्रातरस्य
सुप्रातः । शोभनं श्वोऽस्य सुश्वः । शोभनं दिवास्य सुदिवः । शारे-
खि कुक्षिरस्य शारिकुक्षः । चतस्रोऽश्रयोऽस्य चतुरश्रः । एण्या
इव पादावस्येणीपदः । अजपदः । प्रोष्ठो गौस्तस्येव पादावस्य
प्रोष्ठपदः ॥

नित्यमसिचप्रजामेधयोः ५ । ४ । १२२ ॥

नन्दुःमुभ्यः इत्येव । अप्रजाः । दुष्प्रजाः । सुप्रजाः । अमेधाः ।
दुर्मेधाः । सुमेधाः ॥

धर्मादनिच्च केवलात् ५ । ४ । १२४ ॥

केवलात्पूर्वपदात्परो यो धर्मशब्दस्तदन्ताद्बहुव्रीहेरनिच् । कल्या-
णधर्मा । केवलात् किम् । परमः स्वो धर्मो यस्येति त्रिपदे बहुव्रीहौ
मा भूत् । स्वशब्दो हीह न केवलं पूर्वपदं किन्तु मध्यमत्वादापेक्षि-
कम् । मंदिग्यसाध्यधर्मा इत्यादी तु धर्मधारमपूर्वपदो बहुव्रीहिः ।
एवं च परमन्वधर्मा इत्यपि साध्येव । निष्प्रतिधर्मा । अनुच्छिन्ति-
धर्मा इत्यादिवत् । पूर्वपदं तु बहुव्रीहिणा सिष्यते ॥

दक्षिणेमां लुब्धयोगे ५ । ४ । १२६ ॥

दक्षिणे ईर्म प्रण यस्य दक्षिणेमां मृगः । व्याधेन घृतप्रण
इत्यर्थः ॥

इच्च कर्मव्यतिहारे ५ । ४ । १२७ ॥

कर्मव्यतिहारे यो बहुव्रीहिस्तस्मादिच्छमासान्तः । केशाकेशि ।
मुसलामुसलि ॥

द्विदण्ड्यादिभ्यश्च ५ । ४ । १२८ ॥

तादर्थ्ये चतुर्थ्येषा एषां सिद्धचर्थमिच्छत्ययः । द्वौ दण्डौ यस्मि-
न्प्रहरणे तद्विदण्डि प्रहरणम् । द्विमुसलि । उभाहस्ति । उभया-
हस्ति ॥

प्रसंभ्यां जानुनोर्जुः ५ । ४ । १२९ ॥

आभ्यां परयोर्जानुशब्दयोर्जुरादेशो बहुव्रीहौ । प्रगते जानुनो
यस्य प्रजुः । संजुः ॥

ऊर्ध्वाद्धिभाषा ५ । ४ । १३० ॥

ऊर्ध्वजुः । ऊर्ध्वजानुः ॥

धनुषश्च ५ । ४ । १३२ ॥

धनुरन्तस्य बहुव्रीहेरनडादेशः । शार्ङ्गधन्वा ॥

वा संज्ञायाम् ५ । ४ । १३३ ॥

शतधन्वा । शतधनुः ॥

जायाया निङ् ५ । ४ । १३४ ॥

जायान्तस्य बहुव्रीहेर्निङादेशः । लोपो व्योर्वलि । पुंवदृभावः ।
युवतिर्जायास्य युवजानिः ॥

गंधस्येदुत्पूतिसुसुरभिभ्यः ५ । ४ । १३५ ॥

एभ्यो गन्धस्येकारोऽन्तादेशः । उद्गंधिः । पूतिगन्धिः । सुग-
न्धिः । सुरभिगन्धिः ॥

गंधस्येत्वे तदेकान्तग्रहणम् ॐ ॥

एकान्त एकदेश इवाविभागेन लक्ष्यमाण इत्यर्थः । अत्र गुण-
वाचिनो गन्धशब्दस्य ग्रहणमित्याशयः । सुगंधि पुष्पं तलिलं च ।

विशेष्यभूतान्यपदार्थगतगंधस्यैव ग्रहणमिति वृत्त्यादिमते तु सुगन्धि पुष्पमित्येव साधु सुगंधि सलिलम् । अयुक्च्छदयुच्छमुगन्धयः इत्यादित्वसाधु । अत एव मट्टिः । आघ्रायिवान् गन्धवहः सुगन्ध इति । तदेकान्तेति किम् । शोभना गंधा द्रव्याण्यस्य स सुगंधः । आपणिकः ॥

अल्पारव्यायाम् ५ । ४ । १३६ ॥

सूपस्य गंधो लेशो यस्मिंस्तत्सूपगन्धि भोजनम् । घृतगन्धि । गन्धो गन्धक आमोदे लेशे संबन्धगर्वयोः । इति विश्वः ॥

उपमानाच्च ५ । ४ । १३७ ॥

पद्मस्येव गन्धोऽस्य पद्मगंधिः ॥

पादस्य लोपोऽहस्त्यादिभ्यः ५ । ४ । १३८ ॥

हस्त्यादिर्वाजितादुपमानात्परस्य पादशब्दस्य लोपो बहुव्रीहौ । स्थानिद्वारेणायं समानान्तः । व्याघ्रस्येव पादावस्य व्याघ्रपात् । अहस्त्यादिभ्यः किम् । हस्तिपादः । कुसूलपादः ॥

संख्यासुपूर्वस्य ५ । ४ । १४० ॥

पादस्य लोपः समासान्तो बहुव्रीहौ । द्विपात् । सुपात् ॥

वयसि दन्तस्य दत् ५ । ४ । १४१ ॥

संख्यासुपूर्वस्य दन्तस्य दत् इत्यादेशो वयसि । द्विदन् । चतुर्दन् । पट्ट दन्ता अस्य षोडश । सुदन् । सुदती । वयसि किम् । द्विदन्तः करो । सुदन्तो नटः ॥

इति ११३ अंशाः ।

सुहृद्दुर्हृदौ मित्रामित्रयोः ५ । ४ । १५० ॥

सुदुर्भ्यां हृदयस्य हृदभावो निपात्यन्ते । सुहृन्मित्रम् । दुर्हृदमित्रः । अन्यत्र सुहृदयः । दुर्हृदयः ॥

उरःप्रभृतिभ्यः कप् ५ । ४ । १५१ ॥

व्यूहोरस्कः । प्रियसर्पिष्कः । इह पुमान् । अनङ्गान् । पयः । नीः । लक्ष्मीः । इत्येकत्रचनान्तानि पठ्यन्ते । द्वित्रचनबहुवचनान्तिभ्यस्तु

शेषाद्विभाषा इति विकल्पेन कप् । द्विपुमान् । द्विपुंस्कः । अर्था-
न्नजः । अनर्थकम् । नजः किम् । अपार्थम् । अपार्थकम् ॥

इनः स्त्रियाम् ५ । ४ । १५२ ॥

बहुदण्डिका नगरी ॥

अनिनस्मन्ग्रहणान्यर्थवता चानर्थकेनापि तदन्तविधिं
प्रयोजयन्ति ॥

बहुवाग्गिमका । स्त्रियाम् किम् । बहुदण्डी । बहुदण्डिको ग्रामः ॥

शेषाद्विभाषा ५ । ४ । १५४ ॥

अनुक्तसमासान्ताच्छेषाधिकारस्याद्बहुव्रीहेः कब्वा । महायज्ञ-
स्कः । महायज्ञाः । अनुक्त इत्यादि किम् । व्याघ्रपात् । सुगंधिः
प्रियपथः । शेषाधिकारस्यात् किम् । उपबहवः । उत्तरपूर्वा ।
सपुत्रः । तन्त्रादिना शेषशब्दोऽर्थद्वयपरः ॥

आपोऽन्यतरस्याम् ७ । ४ । १५५ ॥

कप्यावन्तस्य ह्रस्वो वा । बहुमालकः बहुमालकः । कवभावे
बहुमालः ॥

न संज्ञायाम् ५ । ४ । १५६ ॥

शेषात् इति प्राप्तः कन्न संज्ञायाम् । विश्वे देवा अस्य विश्वेदेवः ॥

ईयसश्च ५ । ४ । १५६ ॥

ईयमन्तोत्तरपदान् कप् । बहवः श्रेयांसोऽस्य बहुश्रेयान् । गो-
स्त्रियोः इति ह्रस्वत्वे प्राप्ते ॥

ईयसो बहुव्रीहेर्नेति वाच्यम् ❀ ॥

बह्वचः श्रेयस्योऽस्य बहुश्रेयसी । बहुव्रीहेः किम् । अतिश्रेयासिः ॥

निष्प्रवाणिश्च ५ । ४ । १६० ॥

कवभावोऽत्र निपात्यते । प्रपूर्वाद्द्वयतेल्युद् । प्रवाणी तन्तुवाय-
शलाका । निर्गता प्रवाण्यस्य निष्प्रवाणिः पटः । समाप्तवानः ।
नव इत्यर्थः ॥

सप्तमीविशेषणे बहुव्रीहौ २ । २ । ३५ ॥

सप्तम्यन्तं विशेषणं च बहुव्रीहौ पूर्वं प्रयोज्यम् । कण्ठेकालः ।
अत एव ज्ञापकाद्यधिकरणपदो बहुव्रीहिः । चित्रगुः ॥

सर्वनामसंख्ययोरुपसंख्यानम् ❀ ॥

सर्वश्वेतः । द्विशुक्लः । मिथोऽनयोः समाभे संख्यापूर्वं शब्दपर-
विप्रतिषेधात् । द्व्यन्यः । संख्याया अल्पीयस्याः । द्वित्राः । द्वन्द्वे
धि द्वादश वा मियस्य । गुडाप्रियः । प्रियगुडः ॥

गङ्गादेः परा सप्तमी ❀ ॥

गङ्गुकण्ठः । कचिन्न । वहेगङ्गुः ॥

निष्ठा २ । २ । ३६ ॥

निष्ठान्तं बहुव्रीहौ पूर्वम् । कृतकृत्यः ॥

जातिकालसुखादिभ्यः परा निष्ठा वाच्या ❀ ॥

सारङ्गजग्धी । मासजाता । सुखजाता । प्रायिकं चेदम् । कृत-
कटः । पीतोदकः ॥

वाहिताग्न्यादिषु २ । २ । ३७ ॥

आहिताग्निः अग्न्याहितः । आकृतिगणोऽयम् ॥

प्रहरणार्थेभ्यः परे निष्ठासप्तम्यौ ❀ ॥

अस्युद्यतः । दण्डपाणिः । कचिन्न । विवृतासिः । इति बहुव्रीहिः ।

चार्थे द्वन्द्वः । समुच्चयान्वाचयेतरतरयोगसमाहाराश्चार्थाः । पर-
स्परनिरपेक्षस्यानेकस्यैकस्मिन्नन्वयः समुच्चयः । अन्यतरस्यानुप-
द्विकत्वेऽन्वाचयः । मिलितानामन्वय इतरतरयोगः । समूहः समाहारः ।
तत्रेश्वरं गुरुं च भजस्व इति समुच्चये भिक्षामट गां चानय इत्यन्वा-
चये च न समासोऽसामर्थ्यात् । धवखदिरौ । संज्ञापरिभाषम् ।
अनेकोक्तेः होतृपोतृनेष्टोद्गातारः । द्वयोर्द्वयोर्द्वंद्वं कृत्वा पुनर्द्वंद्वे तु
आनङ् क्रतु इति वक्ष्यमाणे आनङ्ङि हीता पोता नेष्टोद्गातारः ॥

राजदन्तादिषु परम् २ । २ । ३२ ॥

एषु पूर्वप्रयोगार्हं परम् । दन्तानां राजा राजदन्तः ॥

धर्मादिष्वनियमः ❀ ॥

अर्थधर्मौ धर्मार्यौ । दम्पती । जम्पती जायापती । जायाश-
ब्दस्य जम्माशो दम्भावश्च वा निपात्यते । आकृतिगणोऽयम् ॥

द्वन्द्वे षि २ । २ । ३२ ॥

द्वन्द्वे षिसंज्ञं पूर्वम् । हरिश्च हरश्च हरिहरौ ॥

अनेकप्राप्तावेकत्र नियमोऽनियमः शोषे ❀ ॥

हरिगुरुहराः । हरिहृगुरुवः ॥

अजाद्यदन्तम् २ । २ । ३३ ॥

इदं द्वन्द्वे पूर्वम् । ईशकृष्णौ । बहुष्वनियमः । अश्वरथेन्द्राः
इन्द्राश्वरथाः । घ्यन्तादजाद्यदन्तं विप्रतिषेधेन । इन्द्राग्नी ॥

अल्पात्तरम् २ । २ । ३४ ॥

शिवकेशवौ । ऋतुनक्षत्राणां समाक्षराणामानुपूर्व्येण । हेमन्त-
शिर्शिरवसन्ताः । कृत्तिकारोहिण्यौ । समाक्षराणां किम् । ग्रीष्मव-
सन्तौ । लघ्वक्षरं पूर्वम् । कुशकाशम् । अभ्यर्हितं च । तापसपर्वतौ ।
वर्णानामानुपूर्व्येण । ब्राह्मणक्षत्रियविद्भूद्राः । भ्रातुर्ज्यायसः ।
युधिष्ठिरार्जुनौ ॥

द्वन्द्वश्च प्राणितूर्यसेनाङ्गनाम् २ । ४ । २ ॥

एषां द्वन्द्व एकवत् । पाणिपादम् । मार्दङ्गिकपाणविकम् । रथि-
काश्वारोहम् । समाहारस्यैकत्वादेकत्वे सिद्धे नियमार्थं प्रकरणम् ।
प्राण्यङ्गादीनां समाहार एव यथा स्यात् ॥

इति ११४ अंशाः ।

गवाश्वप्रभृतीनि च २ । ४ । ११ ॥

यथोच्चारितानि माधूनि स्युः । गवाश्वम् । दासीदासमित्यादि ॥

न दधिपयआदीनि २ । ४ । १४ ॥

एतानि नैकवत्स्यः । दधिपयसी । इध्मावर्हिषी । निपातनादीर्घः ।
ऋक्सामे । वाङ्मनसे ॥

आनङ् ऋतो द्वन्द्वे ६ । ३ । २५ ॥

विद्यायोनिबंधवाचिनामृदन्तानां द्वन्द्वे आनङ् स्यादुत्तरपदे
परे । होतापोतारा । होवृपोवृनेष्टोद्गातारः । मातापितर्ग । पुत्रे-
ऽन्यतरस्थाम् इत्यतो मण्डूकप्लुत्या पुत्रे इत्यनुवृत्तेः । पितापुत्रौ ॥

देवताद्वन्द्वे च ६ । ३ । २६ ॥

इहोत्तरपदे पर आनङ् । मित्रावरुणौ । वायुशब्दप्रयोगे प्रति-
पेधः । अग्निवायू । वाय्वग्नी । पुनर्द्वन्द्वग्रहणं प्रसिद्धसाहचर्यस्य परिग्र-
हार्थम् । तेन ब्रह्मप्रजापती इत्यादौ नानङ् । एतद्वि नैकहविर्भागत्वेन
श्रुतं नापि लोके प्रसिद्धसाहचर्यम् ॥

ईदग्नेः सोमवरुणयोः ६ । ३ । २७ ॥

देवताद्वन्द्वे ॥

अग्नेः स्तुत्स्तोमसोमाः ८ । ३ । ८२ ॥

अग्नेः परेषामेषां सस्य पः समासे । अग्निष्टुत् अग्निष्टोमः ।
अग्नीषोमी । अग्नीवरुणौ ॥

इद्वृद्धौ ६ । ३ । २८ ॥

वृद्धिमत्युत्तरपदे अग्नेरिदादेशो देवताद्वन्द्वे । अग्रामरुतौ देवते
अस्य आग्निमारुतं कर्म । अग्नीवरुणौ देवते अस्य अग्निवारुणम् ।
देवताद्वन्द्वे च इत्युभयपदवृद्धिः । अलौकिकवाक्य आनङ्मीत्वं च
वाधित्वा इत् । वृद्धौ किम् । आग्नेन्द्रः । नेन्द्रस्य परस्य इत्युत्तरपद-
वृद्धिप्रतिपेधः । विष्णौ न । अग्नविष्णवम् ॥

दिवो द्यावा ६ । ३ । २९ ॥

देवताद्वन्द्वे उत्तरपदे । द्यावाभूमौ । द्यावाक्षमे ॥

दिवसश्च पृथिव्याम् ६ । ३ । ३० ॥

दिवः इत्येव चाह्यावा । आदेशोष्कारोच्चारणं सकारस्य रुत्वं
मा भूदित्येतदर्थम् । द्यौश्च पृथिवी च दिवस्पृथिव्यौ द्यावापृथि-
व्यौ । छन्दसि दृष्टानुविधिः । द्यावाचिदस्मै पृथिवी दिवस्पृथिव्यो-
ररतिः इत्यत्र पदकारा विसर्गं पठन्ति ॥

उपासोपसः ६ । ३ । ३१ ॥

उपस्शब्दस्योपासादेशो देवताद्वन्द्वे । उपासा सृष्टेम् ॥

मातरपितराबुदीचाम् ६ । ३ । ३२ ॥

मातरपितरौ । उदीचां किम् । मातापितरौ ॥

द्वन्द्वान्नुदपहान्तात्समाहारे ५ । ४ । १०६ ॥

चवर्गान्ताहपहान्ताच्च द्वन्द्वाद्वचममाहारे । वाक् च त्वक् च वा-
यत्वचम् । त्वक् सजम् । शमीदपदम् । वाक्त्वपम् । छत्रोपानहम् ।
समाहारे किम् । प्रावृद्शरदा । इति द्वन्द्वसमासः ॥

सरूपाणामेकशेषः । रामौ । रामाः । विरूपाणामपि समाना-
र्थानाम् । वक्रदण्डश्च कुटिलदण्डश्च वक्रदण्डौ कुटिलदण्डौ ॥

वृद्धो यूना तल्लक्षणश्चेदेव विशेषः १ । २ । ६५ ॥

यूना सहोक्ता गोत्रं शिष्यते गोत्रयुवप्रत्ययमात्रकृतं चेत्तयोः
कृत्स्नं वैरूप्यम् । गार्ग्यश्च गार्ग्यायणश्च गार्ग्यौ । वृद्धः किम् ।
गर्गगार्ग्यायणौ । यूना किम् । गार्ग्यगर्गौ । तल्लक्षणः किम् ।
भागवित्तिभागवित्तिकौ । कृत्स्नं किम् । गार्ग्यवात्स्यायनौ ॥

स्त्री पुंवच्च १ । २ । ६६ ॥

यूना सहोक्ता वृद्धा स्त्री शिष्यते तदर्थश्च पुंवत् । गार्गी च
गार्ग्यायणौ च गर्गाः । अस्त्रियाम् इत्यनुवर्तमाने यजत्रोश्च इति
लुक् । दाक्षी च दाक्षायणश्च दाक्षी ॥

पुमान् स्त्रिया १ । २ । ६७ ॥

स्त्रिया सहोक्ता पुमाञ्छिष्यते तल्लक्षण एव विशेषश्चेत् । इंसी
च इंसश्च इंसा ॥

भ्रातृपुत्रौ स्वसृदुहितृभ्याम् २ । १ । ६८ ॥

भ्राता च स्वसा च भ्रातरौ । पुत्रश्च दुहिता च पुत्रौ ॥

नपुंसकमनपुंसके नैकवच्चास्यान्यतरस्याम् १ । २ । ६९ ॥

अक्लीवेन सहोक्तौ क्लीबं शिष्यते तच्च वा एकवत्तल्लक्षण एव विशेषश्चेत् । शुक्लः पटः । शुक्ला शार्दी । शुक्लं वस्त्रम् । तदिदं शुक्लम् । तानीमानि शुक्लानि ॥

पिता मात्रा १ । २ । ७० ॥

मात्रा सहोक्तौ पिता वा शिष्यते । माता च पिता च पितरौ मातापितरौ वा ॥

श्वशुरः श्वश्रवा १ । २ । ७१ ॥

श्वश्र्वा सहोक्तौ श्वशुरो वा शिष्यते तल्लक्षण एव विशेषश्चेत् । श्वश्रूश्च श्वशुरश्च श्वशुरी श्वश्रूश्चशुरी ॥

त्यदादीनि सर्वैर्नित्यम् १ । २ । ७२ ॥

सर्वैः सहोक्तौ त्वदादीनि नित्यं शिष्यन्ते । स च देवदत्तश्च तौ । त्यदादीना मिथः सहोक्तौ यत्परं तच्छिष्यते । स च यश्च यौ । पूर्वशेषोऽपि दृश्यते इति भाष्यम् । स च यश्च तौ । त्यदादितः शेषे पुंनपुंसकतो लिङ्गवचनानि । सा च देवदत्तश्च तौ । तच्च देवदत्तश्च यज्ञदत्ता च तानि । पुत्रपुंसकयोस्तु परत्वान्नपुंसकं शिष्यते । तच्च देवदत्तश्च ते ॥

अद्भ्रतत्पुरुषविशेषणानामिति वक्तव्यम् ❀ ॥

कुक्कुटमयूर्याविमे । मयूरीकुक्कुटाविमी । तच्च सा च अर्धपिप्पल्यौ ते ॥

ग्राम्यपशुसंघेष्वतरुणेषु स्त्री १ । २ । ७३ ॥

एषु सहविवक्षाया स्त्री शिष्यते । शुमान्स्त्रिया इत्यस्यापवादः । गावः इमाः । ग्राम्य इति किम् । रुख इभे । पशुग्रहणं किम् । ब्राह्मणा इमे । संघेषु किम् । एतां गावो । अतरुणेषु किम् । वन्सा इमे ॥

अनेकशफेप्विति वाच्यम् ❀ ॥

अथा इमे । इह सर्वत्रैकशेषे कृतेऽनेकसुबन्ताभावाद्द्वन्द्वो न । तेन शिरसी शिरांसि इत्यादौ समासस्येत्यन्तोदात्तः । प्राण्यङ्गत्वादेकचद्भावश्च न । पन्थानौ पन्थानः इत्यादौ समासान्तो न । इत्येकशेषः ॥

इति ११५ अंशाः ।

ऋक्पूरब्धूः पथामानक्षे ५ । ४ । ७४ ॥

अ अनक्ष इति च्छेदः । ऋगाद्यन्तस्य समासस्य अप्रत्ययोऽन्तावयवः । अक्षे या धूस्तदन्तस्य तु न । अर्धर्चः । अनृचबद्धावध्येतर्येव । नेह । अनृक् साम । बहृक् सूक्तम् । विष्णोः पूर्विष्णुपुरम् । क्लीवत्वं लोकात् । विमलापं सरः ॥

द्वन्तरूपसर्गेभ्योऽप ईत् ६ । ३ । ९७ ॥

अप इति कृतसमासान्तस्यानुकरणम् । पष्ठचर्थे प्रथमा एभ्योऽपस्य ईत् । द्विर्गता आपो यस्मिन्निति द्वीपम् । अन्तरीपम् । प्रतीपम् । समीपम् । समापो देवयजनमिति तु समा आपो यस्मिन्निति बोध्यम् । कृतसमासान्तग्रहणान्नेह । स्वप् । स्वपी । अवर्णान्ताद्वा । प्रेपम् । परेपम् । प्रापम् । परापम् ॥

ऊदनोर्देशे ६ । ३ । ९८ ॥

अनो परस्यापस्य ऊद्देशे अनूपो देशः । राजधुरा । अक्षे तु अक्षधूः । दृढधूरक्षः । सखिपथो रम्यपथो देशः ॥

अचप्रत्यन्ववपूर्वात्सामलोमः ५ । ४ । ७५ ॥

एतत्पूर्वात्सामलोमान्तात्समासादच् । प्रतिसामम् । अनुसामम् । अवसामम् । प्रतिलोमम् । अनुलोमम् ॥

कृष्णोदक्पाण्डुसंख्यापूर्वाया भूमेरजिप्यते ❀ ॥

कृष्णभूमः । उदग्भूमः । पाण्डुभूमः । द्विभूमः प्रासादः । संख्याया नदीगोदावरीभ्यां च । पञ्चनदम् । सप्तगोदावरम् । अच् इति योगविभागादन्यत्रापि । पद्मनामः ॥

अक्ष्णोऽदर्शनात् ५ । ४ । ७६ ॥

अचक्षुःपर्यायादक्ष्णोऽच् समासान्तः । गगामक्षीव गवाक्षः ॥

अचतुरविचतुरसुचतुरस्त्रीपुंसधेन्वनडुह्वर्सामवाङ्मन
साक्षिभ्रुवदारगवोर्वष्टीवपदष्टीवनक्तंदिवरात्रिदिवाहर्दिवस-
रजसनिःश्रेयसपुरुपायुपद्म्यायुपञ्चायुपर्यञ्जुपजातोक्षमहो-
क्षवृद्धोक्षोपशुनगोष्ठश्वाः ५ । ४ । ७७ ॥

एते पञ्चविंशतिरजन्ता निपात्यन्ते । आद्यास्त्रयो बहुव्रीहयः ।
अविद्यमानानि चत्वार्यस्य अचतुरः । विचतुरः । सुचतुरः ॥

त्र्युपाभ्यां चतुरोऽजिप्यते ❀ ॥

त्रिचतुराः । चतुर्णां समीपे उपचतुराः । तत एकादश द्वन्द्वाः ।
स्त्रीपुंसौ । धेन्वनडुह्वी । ऋक्सामे । वाङ्मनसे । अक्षिणी च भ्रुवौ
चाक्षिभ्रुवम् । दाराश्च गावश्च दारगवम् । ऊरू च अष्टीवन्ती च
ऊर्वष्टीवम् । निपातनाटिलोपः । पदष्टीवम् । निपातनात्पादशब्दस्य
पद्मावः । नक्तं च दिवा च नक्तंदिवम् । रात्रौ च दिवा च रात्रि-
दिवम् । रात्रेर्मान्तत्वं निपात्यते । अहनि च दिवा चाहर्दिवम् ।
वीप्साया द्वन्द्वो निपात्यते । अहन्यहनीत्यर्थः । सरजसमिति सा-
कल्येऽव्ययीभावः । बहुव्रीहौ तु सरजः पङ्कजम् । निश्चितं श्रेयो
* निःश्रेयसम् । तत्पुरुष एव नेह । निश्रेयान्पुरुषः । पुरुषस्यायुः
पुरुपायुपम् । ततो द्वियुः । द्यायुपम् । न्यायुपम् । ततो द्वन्द्वः ।
ऋग्यजुपम् । तत्सत्रयः कर्मधारयाः । जातोक्षः । महोक्षः । वृ-
द्धोक्षः । शुनः समीपमुपशुनम् । टिलोपाभावः संप्रसारणं च निपा-
त्यते । गोष्ठेऽश्वा गोष्ठश्च ॥

ब्रह्महस्तिभ्या वर्चसः ५ । ४ । ७८ ॥

अच् । ब्रह्मवर्चसम् । हस्तिवर्चसम् ॥

पत्यराजभ्यां चेति वक्तव्यम् ❀ ॥

पल्यवर्चसम् । राजवर्चसम् ॥

अवसमन्धेभ्यस्तमसः ५ । ४ । ७९ ॥

अवतमसम् । सन्तमसम् । अन्धयतीत्यन्धम् । पचाद्यच्च । अ-
न्धं तमोऽन्धतमसम् ॥

श्वसो वसीयःश्रेयसः ५ । ४ । ८० ॥

वसुशब्दः प्रशम्तवाची तत ईयमुनि वसीयः । श्वसशब्द उत्त-
पदार्थप्रशंसामाशीर्विपयतामाह । मयूरव्यंसकादित्वात् समासः ।
श्वोवसीयसम् । श्वःश्रेयसं ते भूयात् ॥

अन्ववतप्ताद्रहसः ५ । ४ । ८१ ॥

अनुरहसम् । अवरहसम् । तप्तरहसम् ॥

प्रतेरुरसः सप्तमीस्थात् ५ । ४ । ८२ ॥

उरसि इति प्रत्युरसम् । विभक्त्यर्थेऽव्ययीभावः ॥

अनुगवमायामे ५ । ४ । ८३ ॥

एतन्निपात्यते दीर्घत्वे । अनुगवं यानम् । यस्य चायामः इति
समासः ॥

द्विस्तावा त्रिस्तावा वेदिः ५ । ४ । ८४ ॥

अच्प्रत्ययषष्ठिलोपः समासश्च निपात्यते । यावती प्रकृता वेदि-
स्ततो द्विगुणा त्रिगुणा वाश्वमेधादी तत्रेदं निपातनम् । वेदिः इति
किम् । द्विस्तावती त्रिस्तावती रज्जुः ॥

उपसर्गाद्ध्वनः ५ । ४ । ८५ ॥

प्रगतोऽध्वानं प्राध्वो रथः ॥

न पूजनात् ५ । ४ । ६९ ॥

पूजनार्थात्परिभ्यः समासान्ता न स्युः । सुराजा । जतिराजा ।
स्वतिभ्यामेव नेह । परमराजः । पूजनात् किम् । नामतिक्रान्तोऽ-
तिगवः । बहुव्रीहौ सक्थ्यक्ष्णोः इत्यतः प्रागेवायं निषेधः । नेह ।
सुसक्थः । स्वक्षः ॥

किमः क्षेपे ५ । ४ । ७० ॥

क्षेपे चः किञ्चन्दस्ततः परं यत्तदन्तात्समासान्ता न स्युः । कु-
त्सितो राजा किराजा । किसखा । किंगीः । क्षेपे किम् । किराजः ।
किमखः । किगवः ॥

नभस्तत्पुरुषात् ५ । ४ । ७१ ॥

नमामान्तो न । अराजा । असखा । तत्पुरुषात् किम् । अधुरं
शकटम् ॥

पथो विभाषा ५ । ४ । ७२ ॥

नञ्पूर्वात्पथो वा समासान्तः । अपथम् । अपन्याः । तत्पुरुषात्
इत्येव । अपथो देशः । अपथं वर्तते । इति मर्वममासान्ताः ॥

अलुगुत्तरपदे ६ । ३ । १ ॥

अलुगुत्तरपदेः प्रागानङ् उत्तरपदाधिकारस्त्वापादसमाप्तेः ॥

पञ्चम्याः स्तोत्रादिभ्यः ६ । ३ । २ ॥

पञ्चम्याः पञ्चम्याः अलुक् उत्तरपदे । स्तोत्रान्युक्तः । एवमन्तिकार्थ-
दृगर्थकृच्छ्रेभ्यः । उत्तरपदे किम् । निष्कान्तः स्तोत्रान्निस्तोत्रः ॥

ब्राह्मणाच्छंसिन उपसंख्यानम् ❀ ॥

ब्राह्मणे विदितानि श्रुत्याण्युपनागः ब्राह्मणानि तानि शंसतीति
ब्राह्मणाच्छंसि ऋग्निग्विशेषः । द्वितीयांश्च पञ्चम्युपसंख्यानान्देव ॥

श्रीजःसद्गोम्भस्तमसस्तृतीयायाः ६ । ३ । ३ ॥

श्रीजया श्रुतिभित्वादि ॥

वञ्जस उपसंख्यानम् ❀ ॥

वञ्जया श्रुतिम् । आम्बेन श्रुतिमित्यर्थः ॥

पुंगानुजो जनुपान्य इति च ❀ ॥

पुंगानुजः पुनान्य पुंगानुजः । जनुपान्यो जापान्यः ॥

श्री ११६ भंजाः ।

मनसः संज्ञायाम् ६ । ३ । ४ ॥

मनसा गुप्ता ॥

आज्ञायिनि च ६ । ३ । ५ ॥

मनसः इत्येव । मनसा ज्ञातुं शीलमस्य मनसाज्ञायी ॥

आत्मनश्च ६ । ३ । ६ ॥

आत्मनस्त्वृतीयाया अलुक् ॥

पूरण इति वक्तव्यम् ❀ ॥

पूरणप्रत्ययान्त उत्तरपद इत्यर्थः । आत्मना पञ्चमः । जनार्दनस्त्वात्मचतुर्थ एव । इति बहुव्रीहिविधेः । पूरणे किम् । आत्मकृतम् ॥

वैयाकरणाख्यायां चतुर्थ्याः ६ । ३ । ७ ॥

आत्मनः इत्येव । आत्मनेपदम् । आत्मनेभाषा । तादर्थ्ये चतुर्थी । चतुर्थी इति योगविभागात्समासः ॥

परस्य च ६ । ३ । ८ ॥

परस्मैपदम् । परस्मैभाषा ॥

हलदन्तात्सप्तम्याः संज्ञायाम् ६ । ३ । ९ ॥

हलन्ताददन्ताच्च सप्तम्या अलुक् संज्ञायाम् । त्वचिसारः ॥

गवियुधिभ्यां स्थिरः ८ । ३ । १५ ॥

आभ्यां स्थिरस्य सस्य पः । गविष्ठिरः । अत्र गवीति वचनादेवालुक् । युधिष्ठिरः । अरण्येतिलकः । अत्र संज्ञायाम् इति सप्तमीसमासः । ह्युभ्यां च । ह्यदिस्पृक् । दिविस्पृक् ॥

अमूर्धमस्तकात्स्वाङ्गादकामे ६ । ३ । १२ ॥

कण्ठेकालः । उरसिलोमा । अमूर्धमस्तकात् किम् । मूर्धाशिवः । मस्तकाशिवः । अकामे किम् । मुखे कामोऽस्य मुखकामः ॥

तत्पुरुषे कृति बहुलम् ६ । ३ । १४ ॥

स्तम्बरमः स्तम्बरमः । कर्णेजपः कर्णेजपः । क्वचिन्न । कुरुचरः ॥

प्रावृद्शरत्कालदिवां जे ६ । ३ । १५ ॥

प्रावृषिजः । शरदिजः । कालेजः । दिविजः । पूर्वस्यायं प्रपञ्चः ॥

घकालतनेषु कालनाम्नः ६ । ३ । १७ ॥

सप्तम्या विभाषया लुक् । घः-पूर्वाह्नितरे पूर्वाह्नितरे । पूर्वाह्नितमे पूर्वाह्नितमे । कालः-पूर्वाह्निकाले पूर्वाह्निकाले । तनः-पूर्वाह्नितने पूर्वाह्नितने ॥

शयवासवासिष्वकालात् ६ । ३ । १८ ॥

खेशयः खशयः । ग्रामेवासः ग्रामवासः । ग्रामेवासी ग्रामवामी । हलदन्तात् इत्येव । भूमिशयः । अयो योनियन्मतुषु । अप्सु योनिरुत्पत्तिर्यस्य सोऽप्सुयोनिः । अप्सु भवोऽप्सव्यः । अप्सुमन्तावाज्यमागौ । अत्र मतुषु इत्यत्र मतिषु इति युक्तः पाठ इति परे ॥

नेन्सिद्धत्रधातिषु च ६ । ३ । १९ ॥

इन्नन्तादिषु सप्तम्या अलुग्र । स्थण्डिलगायी । सांकाश्यसिद्धः । चक्रबन्धः ॥

स्थे च भाषायाम् ६ । ३ । २० ॥

सप्तम्या अलुग्र । समन्थः । भाषायां किम् । कृष्णोऽस्या खरेष्ठः ॥

पष्ट्या आक्रोशे ६ । ३ । २१ ॥

चौस्य कुलम् । आक्रोशे किम् । ब्राह्मणकुलम् ॥

वाग्द्विपद्यद्भ्यो युक्तिदण्डहरेषु ॥

वाचोयुक्तिः । दिगोदण्डः । पश्यतोहरः ॥

आमुप्यायणामुप्यपुत्रिकामुप्यकुलिकेति च ॥

अमुप्यायणामुप्यायणः । नडादित्वात्कक् । अमुप्य पुत्रस्य भाव आमुप्यपुत्रिका । मनोहादित्वाद्दृश् । एवमामुप्यकुलिका ॥

देवानां प्रिय इति च मूर्ते ॥

मन्थत्र देवप्रियः ॥

शेषपुच्छलांगूलेषु शुनः ❀ ॥

शुनःशेषः । शुनःपुच्छः । शुनोलांगूलः ॥

दिवश्च दासे ❀ ॥

दिवोदासः ॥

पुत्रेऽन्यतरस्याम् ६ । ३ । २२ ॥

पष्ठ्याः पुत्रे परेऽलुग्वा निन्दायाम् । दास्याः पुत्रः दासीपुत्रः ।
निन्दायां किम् । ब्राह्मणीपुत्रः ॥

ऋतो विद्यायोनिबंधेभ्यः ६ । ३ । २३ ॥

विद्यासंबंधयोनिबंधवाचिन ऋदन्तात्पष्ठ्या अलुक् । होतुर-
न्तेवासी होतुःपुत्रः । पितुरन्तेवासी पितुःपुत्रः ॥

विद्यायोनिबंधेभ्यस्तत्पूर्वोत्तरपदग्रहणम् ❀ ॥

नेह । होतृधनम् ॥

विभाषा स्वसृपत्योः ६ । ३ । २४ ॥

ऋदन्तात्पष्ठ्या अलुक् वा स्वसृपत्योः परयोः ॥

मातुःपितृभ्यामन्यतरस्याम् ८ । ३ । ८५ ॥

आभ्यां स्वसुः सस्य षो वा । समासे मातुःष्वसा मातुःस्व-
सा । पितुःष्वसा पितुःस्वसा । लुक्पक्षे तु ॥

मातृपितृभ्यां स्वसा ८ । ३ । ८४ ॥

आभ्यां परस्य स्वसुः सस्य षः समासे । मातृष्वसा । पितृष्वसा ।
असमासे तु मातुः स्वसा । पितुः स्वसा । इत्यलुक्समासाः ॥

घरूपकल्पचेलइवृवगोत्रमतहतेषु ङ्योऽनेकाचो ह्र-
स्वः ६ । ३ । ४३ ॥

भापितपुंस्काद्यो ङी तदन्तस्यानेकाचो ह्रस्वः । घरूपकल्पप्रत्य-
येषु परेषु चेलडादिषु चोत्तरपदेषु । ब्राह्मणितरा । ब्राह्मणितमा ।
ब्राह्मणिरूपा । ब्राह्मणिकल्पा । ब्राह्मणिचेली । ब्राह्मणिब्रुवा ।

ब्राह्मणिगोत्रेत्यादि । ब्रूजः पचाद्यचि वच्चादेशगुणयोरभावोऽपि
निपात्यते । चेलडादीनि वृत्तिविषये कुत्सनवाचीनि तैः कुत्सिता-
नि कुत्सनैः इति समासः । डचः किम् । दत्तातरा । भाषित-
पुंस्कात् किम् । आमलकीतरा । कुवलीतरा ॥

नद्याः शेषस्यान्यतरस्याम् ६ । ३ । ४४ ॥

अडचन्तनद्या डचन्तस्यैकाचश्च घादिषु ह्रस्वो वा । ब्रह्मबन्धु-
तरा ब्रह्मबंधुतरा । स्त्रितरा स्त्रीतरा । कृन्नद्या न । लक्ष्मीतरा ॥

उगितश्च ६ । ३ । ४५ ॥

उगितः परा या नदी तदन्तस्य घादिषु ह्रस्वो वा । विदुषितरा ।
ह्रस्वाभावपक्षे तु तसिलादिषु इति पुंस्त् । विदत्तरा । वृत्त्यादिषु
विदुषीतरा । इत्यप्युदाहृतं तन्निर्मूलम् ॥

उदकस्योदः संज्ञायाम् ६ । ३ । ५७ ॥

उदमेघः ॥

उत्तरपदस्य चेति वक्तव्यम् ❀ ॥

क्षीरोदः ॥

पेपं वासवाहनधिषु च ६ । ३ । ५८ ॥

उदपेपं पिनष्टि उदवासः । उदवाहनः । उदधिर्वटः । समुद्रे तु
पूर्वेण सिद्धम् ॥

इति ११७ अंशाः ।

इको ह्रस्वोऽडच्यो गालवस्य ६ । ३ । ६१ ॥

इगन्तम्याऽडचन्तस्य ह्रस्वो वा उत्तरपदे । ग्रामणिपुत्रः ग्राम-
णीपुत्रः । इकः किम् । रमापतिः । अडचः इति किम् । गौरीपतिः ।
गालवग्रहणं पृजार्थम् । अन्यतरस्याम् इत्यनुवृत्तेः ॥

इयद्वन्द्भाविनामव्ययानां च नेति वाच्यम् ❀ ॥

श्रीमदः । भूमदः । शुर्मीमारः ॥

अभ्रुकुंसादीनामिति वक्तव्यम् ❀ ॥

भ्रुकुंसः भ्रुकुंसः । भ्रुकुटिः भ्रुकुटिः । अकारोऽनेन विधीयत
इति व्याख्यान्तरम् । भ्रुकुंसः । भ्रुकुटिः । भ्रुवा कुंसो भाषणं
शोभा वा यस्य स स्त्रीविषवारी नर्तकः । भ्रुवः कुटिः कौटिल्यम् ॥

ड्यापोः संज्ञाछन्दसोबहुलम् ६ । ३ । ६३ ॥

खेतिपुत्रः । अजक्षीरम् ॥

त्वे च ६ । ३ । ६४ ॥

त्वप्रत्यये ड्यापोर्वा ह्रस्वः । अजत्वम् अजात्वम् । रोहिणित्वम्
रोहिणीत्वम् ॥

इष्टकेपीकामालानां चित्तूलभारिषु ❀ ॥

इष्टकादीनां तदन्तानां च पूर्वपदानां चितादिषु क्रमादुत्तरपदेषु
ह्रस्वः स्यात् । इष्टकचित्तम् पकेष्टकचित्तम् । इपीकतूलम् मुञ्जेपीक-
तूलम् । मालभारी उत्पलमालभारी ॥

कारे सत्यागदस्य ६ । ३ । ७० ॥

मुम् । सत्यंकारः । अगदंकारः ॥

अस्तोश्चेति वक्तव्यम् ❀ ॥

अस्तुंकारः ॥

धेनोर्भव्यायाम् ❀ ॥

धेनुंभव्या ॥

लोकस्य पृणे ❀ ॥

लोकंपृणः । पृणः इति मूलविभुजादित्वात्कः ॥

इत्येऽनभ्याशस्य ❀ ॥

अनभ्याशमित्यः । दूरतः परिहर्तव्य इत्यर्थः ॥

भ्राष्ट्राश्याोरिन्धे ❀ ॥

भ्राष्ट्रमिन्धः । अग्निमिन्धः ॥

गिलेऽगिलस्य ❀ ॥

तिमिगिलः । अगिलस्य किम् । गिलगिल' ॥

गिलगिले च ❀ ॥

तिमिगिलगिलः ॥

उष्णभद्रयोः करणे ❀ ॥

उष्णंकरणम् । भद्रंकरणम् ॥

रात्रेः कृति विभाषा ६ । ३ । ७२ ॥

रात्रिचरः रात्रिचरः । रात्रिमटः रात्र्यटः । अखिदर्थमिदं सूत्रम् ।
विति तु अरुर्द्विपत् इति नित्यमेव वक्ष्यते । रात्रिम्मन्यः ॥

समानस्य च्छन्दस्य मूर्धप्रभृत्युदकेषु ६ । ३ । ८४ ॥

समानस्य सः उत्तरपदे नतु मूर्धादिषु । अनुभ्राता सगर्भ्यः ।
अनुसत्ता मयूथ्यः । योनः सनुत्यः । तत्र भव इत्यर्थे सगर्भसयूथ-
सनुतायत् । अमूर्धादिषु किम् । समानमूर्धा । समानप्रभृतयः ।
समानोदकाः । समानस्य इति योगो विभज्यते । तेन सपक्षः साध-
र्म्यं सजातीयमित्यादि सिद्धमिति काशिका । अथवा सह-
शब्दः सदृशवचनोऽस्ति । सदृशः सरूपा ससखीति यथा । तेनायम-
स्यपदधिग्रहो बहुव्रीहिः । समानः पक्षोऽस्येत्यादि ॥

ज्योतिर्जनपदरात्रिनाभिनामगोत्ररूपस्थानवर्णवयो-
वचनपन्धुषु ६ । ३ । ८५ ॥

एषु द्वादशसूत्रपदेषु समानस्य सः । सज्योतिः । सजनपद
इत्यादि ॥

चरणे ब्रह्मचारिणि ६ । ३ । ८६ ॥

ब्रह्मचारिण्युत्तरपदे समानस्य सः चरणे समानत्वेन गम्यमाने ।
चरणं शाखा ब्रह्म वेदः तदध्ययनार्थं ब्रह्मपि ब्रह्म तद्यगतीति
ब्रह्मचारी । गमाः सः गम्यमाने ॥

तीर्थे ये ६ । ३ । ८७ ॥

तीर्थ उत्तरपदे यादौ प्रत्यये विवक्षिते समानस्य सः । सतीर्थः
एकगुरुकः । समानतीर्थवासी इति यत्प्रत्ययः ॥

विभापोदरे ६ । ३ । ८८ ॥

यादौ प्रत्यये विवक्षित इत्येव । सोदर्यः ममानोदर्यः ॥

दृग्दृशवतुषु ६ । ३ । ८९ ॥

सदृक् सदृशः ॥

दृक्षे चेति वक्तव्यम् ❀ ॥

सदृक्षः । वतुरुत्तरार्थः ॥

इदंकिमोरीशुकी ६ । ३ । ९० ॥

दृग्दृशवतुषु इदम ईशु किमः की । ईदृक् ईदृशः । कीदृक्
कीदृशः । वतूदाहरणं वक्ष्यते ॥

दृक्षे चेति वक्तव्यम् ❀ ॥

ईदृक्षः । कीदृक्षः । आसर्वनाम्नः दृक्षे च । तादृक् तादृशः
तावान् तादृक्षः । दीर्घः मत्वोत्वे । अमृदृशः अमृदृक् अमृदृक्षः ॥

ज्योतिरायुपः स्तोमः ८ । ३ । ८३ ॥

आभ्या स्तोमस्य सस्य मूर्धन्यः समासे । ज्योतिष्टोमः ।
आयुष्टोमः । समासे किम् । ज्योतिषः स्तोमः ॥

सुपामादिषु च ८ । ३ । ९८ ॥

सस्य मूर्धन्यः । शोभनं साम यस्य सुपामा । सुपन्धिः ॥

एतिसंज्ञायामगात् ८ । ३ । ९९ ॥

सस्य मूर्धन्यः । हरिपेणः । एति किम् । हरिसकथम् । संज्ञाया
किम् । पृथुसेनः । अगकारात्किम् । विष्वक्सेनः । इण्कोरित्येव ।
सर्वसेनः ॥

नक्षत्राद्वा ८ । ३ । १०० ॥

एतिसस्य संज्ञायामगकारान्मृद्धन्व्यो वा । रोहिणीपेणः । रोहि-
णीसेनः । गकारात्तु शतभिषवसेनः । आकृतिगणोऽयम् ॥

अपष्टचतृतीयास्थस्यान्यस्य दुगाशीराशास्था-
स्थितोत्सुक्रातिकारकरागच्छेषु ६ । ३ । ९९ ॥

अन्यशब्दस्य दुगागमः आशीरादिषु परेषु । अन्यदाशीः ।
अन्यदाशा । अन्यदास्था । अन्यदास्थितः । अन्यदुत्सुकः ।
अन्यदूतिः । अन्यद्रागः । अन्यदीयः । अपष्टी इत्यादि किम् ।
अन्यस्यान्येन वाशीरन्याशीः । कारके छे च नायं निषेधः । अ-
न्यस्य कारकोऽन्यत्कारकः । अन्यस्यायमन्यदीयः । गहादेराकृति-
गणात्वाच्छः ॥

अर्थे विभाषा ६ । ३ । १०० ॥

अन्यदर्थः अन्यार्थः ॥

इति ११८ अंशाः ।

कोः कत्तत्पुरुषेऽचि ६ । ३ । १०१ ॥

अजादावुत्तरपदे । कुतिसतोऽश्वः कदश्वः । कदन्नम् । तत्पुरुषे
किम् । कूप्रो राजा ॥

त्रौ च ❀ ॥

कुतिसताश्वयः कन्नयः ॥

रथवदयोश्च ६ । ३ । १०२ ॥

कद्रयः । कद्रदः ॥

तृणे च जातौ ६ । ३ । १०३ ॥

कत्तृणम् ॥

कापथ्यक्षयोः ६ । ३ । १०४ ॥

कापथम् । काक्षः । अक्षगन्धेन तत्पुरुषः । अक्षिशब्देन वहु-
व्रीदिर्वा ॥

ईपदर्थे ढ । ३ । १०५ ॥

ईपजलं काजलम् । अजादारपि परत्वात्कादेशः । काम्लः ॥

विभापा पुरुषे ढ । ३ । १०६ ॥

कापुरुषः । कुपुरुषः । अप्राप्तविभाषेयम् । ईपदर्थे हि प्रविप्र-
तिषेधान्नित्यमेव । ईपत्पुरुषः कापुरुषः ॥

कवं चोष्णे ढ । ३ । १०७ ॥

उष्णशब्द उत्तरपदे कवं का च वा । कवोष्णम् । कोष्णम् ।
कदुष्णम् ॥

पृपोदरादीनि यथोपदिष्टम् ढ । ३ । १०९ ॥

पृपोदरप्रकाराणि निर्दिष्टार्थोच्चारितानि तथैव साधूनि । पृपदुदरं
पृपोदरम् । तलोपः । वारिवाहको बलाहकः । पूर्वपदस्य वः ।
उत्तरपदादेश्च लत्वम् । भवेद्वर्णागमाद्धंसः सिद्धो वर्णविपर्ययात् ।
गूढोत्मा वर्णविकृतेर्वर्णनाशात् पृपोदरम् ॥ दिक्शब्देभ्यस्तीगस्य
तारभावो वा । दक्षिणतारम् दक्षिणतीरम् । उत्तरतागम् उत्तरतीरम् ॥

दुरोदाशनाशदभ्येष्टत्वमुत्तरपदादेः ष्टुत्वं च ॐ ॥

दुःखेन दाश्यते दूडाशः । दुःखेन नाश्यते दूणाशः । दुःखेन
दभ्यते दूडभः । खलत्रिभ्यः दंभेर्नलोपो निपात्यते । दुःखेन
ध्यायतीति दूड्यः । आतश्च इति कः । ब्रुवन्तोऽस्यां सीदन्तीति
चृसी । ब्रुवच्छब्दस्य चृ आदेशः । सदेरधिकरणे ङट् । आकृतिग-
णोऽयम् ॥

नहिवृतिवृषिव्यधिरुचिसहितनिषु कौ ढ । ३ । ११६ ॥

क्विवन्तेषु परेषु पूर्वपदस्य दीर्घः । उपानत् । नीवित् । प्रावृत् ।
मर्मावित् । नीरुक् । अभीरुक् । ऋतीपट् । परीतत् । कौ इति किम् ।
परिणहनम् । विभापा पुरुषे इत्यतो मण्डकप्लुत्या विभापा अनु-
वर्त्तते । सा च व्यवस्थिता । तेन गतिकारकयोरेव नेह । पटुरुक् ।
तिग्मरुक् ॥

बले ६ । ३ । ११८ ॥

बलप्रत्यये परे दीर्घः संज्ञायाम् । कृपीपलः ॥

मतौ बह्वचोऽनजिरादीनाम् ६ । ३ । ११९ ॥

अमरावती । अनजिरादीना किम् । अजिरवती । बह्वचः किम् ।
व्रीहिमती । संज्ञायाम् इत्येव नेह । बलयवती ॥

शरादीनां च ६ । ३ । १२० ॥

शरावती ॥

उपसर्गस्य घञ्मनुष्ये बहुलम् ६ । ३ । १२२ ॥

उपसर्गस्य बहुलं दीर्घः घञन्ते परे नहु मनुष्ये । परीपाकः
परिपाकः । अमनुष्ये किम् । निपाठः ॥

इकः काशे ६ । ३ । १२३ ॥

इगन्तस्योपसर्गस्यैव दीर्घः काशे । वीकाशः । नीकाशः । इकः
किम् । प्रकाशः ॥

अष्टनः संज्ञायाम् ६ । ३ । १२५ ॥

उत्तरपदे दीर्घः । अष्टापदम् । संज्ञाया किम् । अष्टपुत्रः ॥

नरे संज्ञायाम् ६ । ३ । १२९ ॥

विश्वानरः ॥

मित्रे चर्षौ ६ । ३ । १३० ॥

विश्वामित्रः । ऋषौ किम् । विश्वमित्रो माणवक' ॥

पानं देशे ८ । ४ । ९ ॥

पूर्वपदस्थान्निमित्तात्परस्य पानस्य नस्य णत्वं देशे गम्ये ।
क्षीरं पानं येषां ते क्षीरपाणा उशीनराः । सुरापाणाः प्राच्याः ।
पीयत इति पानम् । कर्मणि ल्युट् ॥

वा भावकरणयोः ८ । ४ । १० ॥

पानस्य इत्येव । क्षीरपानम् क्षीरपाणम् ॥

गिरिनद्यादीनां वा ❀ ॥

गिरिनदी गिरीणदी । चक्रनितम्बा चक्रणितम्बा ॥

प्रातिपदिकान्तनुम्बिभक्तिषु च ८ । ४ । ११ ॥

पूर्वपदस्थान्निमित्तात्परस्य एषु स्थितस्य नस्य णो वा । प्रातिप-
दिकान्ते-मापवापिणौ । नुमि-त्रीहिवापाणि । विभक्तौ-मापवापे
ण । पक्षे मापवापिनावित्यादि । उत्तरपद यत्प्रातिपदिकं तदन्तस्यैव
णत्वं नेह । गर्गाणा भगिनी गर्गभगिनी । अत एव नुम्ग्रहणं
कृतम् । अङ्गस्य नुम्बिधानात्तद्भक्तो हि नुम् न तूत्तरपदस्य । किं
च प्राहिण्वन् इत्यादौ हिवेर्नुमो णत्वार्थमपि नुम्ग्रहणम् । प्रेन्वनम्
इत्यादौ तु क्षुभ्रादित्वान्न ॥

युवादेर्न ❀ ॥

रम्ययूना । परिपक्वानि । एकाञ्जुत्तरपदे णः । नित्यम् इत्यु-
क्तम् । वृत्रहणौ । हरिं मानयतीति हरिमाणी । नुमि-क्षीरपाणि ।
विभक्तौ-क्षीरपेण रम्यविणा ॥

कुमति च ८ । ४ । १३ ॥

कवर्गवत्युरपदे प्राग्बत् । हरिकामिणौ । हरिकामाणि । हरि-
कामेण ॥

पदव्यवायेऽपि ८ । ४ । ३८ ॥

पदेन व्यवधानेऽपि णत्वं न । मापकुम्भवापेन । चतुरङ्गयोगेन ॥

अतद्धित इति वाच्यम् ❀ ॥

आर्द्रगोमयेण । शुष्कगोमयेण ॥

कुस्तुम्बुरुणि जातिः ६ । १ । १४३ ॥

अत्र मुण् निपात्यते । कुस्तुम्बुरुधान्याकम् । क्लीबत्वमत्तन्त्रम् ।
जाति किम् । कुस्तुम्बुरुणि । कुत्सितानि तिन्दुकीफलानीत्यर्थः ॥

अपरस्पराः क्रियासातत्ये ६ । १ । १४४ ॥

मुण् निपात्यते । अपरस्पराः सार्थाः गच्छन्ति । सततमावेच्छे-

देन गच्छन्तीत्यर्थः । क्रिया इति किम् । अपरपरा गच्छंति ।
अपरे च परे च सऋदेव गच्छन्तीत्यर्थः ॥

गोष्पदं सेवितासेवितप्रमाणेषु ६ । १ । १४५ ॥

मुद् सस्य पत्वं च निपात्यते गावः पद्यन्तेऽस्मिन्देसे स गोभिः
सेवितो गोष्पदः । असेविते अगोष्पदान्यरण्यानि । प्रमाणे । गो-
ष्पदमात्रं क्षेत्रम् । सेवित इत्यादि किम् । गोः पदं गोपदम् ॥

आस्पदं प्रतिष्ठायाम् ६ । १ । १४६ ॥

आत्मयापनायस्थाने मुद् निपात्यते । आस्पदम् । प्र इति
किम् । आपदापदम् ॥

आश्चर्यमनित्ये ६ । १ । १४७ ॥

अहते मुद् । आश्चर्यं यदि स भुञ्जीत । अनित्ये किम् । आचर्य
कर्म शोभनम् ॥

वर्चस्केऽवस्करः ६ । १ । १४८ ॥

कुत्सितं वर्चो वर्चस्कमन्नमलम् । तस्मिन् मुद् । अवकीर्यत
इत्यवस्करः । वर्चस्के किम् । अवकरः ॥

अपस्करो रथाङ्गम् ६ । १ । १४९ ॥

अपकरोऽन्यः ॥

विष्किरः शकुनिर्विकिरो वा ६ । १ । १५० ॥

पक्षे विकिरः । वाचनेनैव सुद्धिकल्पे सिद्धे विकिरग्रहणं त-
स्यापि शकुनेरन्यत्र प्रयोगो मा भूदिति वृत्तिस्तत्र भाष्यविरोधात् ॥

प्रतिष्कशश्च कशेः ६ । १ । १५२ ॥

कश गतिशासनयोः इत्यस्य प्रतिपूर्वस्य पचाद्यचि मुद् निपा-
त्यते पत्वं च । सहायः पुरोयायी वा । प्रतिष्कश इत्युच्यते ।
कशेः किम् । प्रतिगतः कशां प्रतिकशोऽश्वः । यद्यपि कशेरेव
कशा तथापि कशेरिति धातोर्ग्रहणमुपसर्गस्य प्रतेर्ग्रहणार्थम् । तेन
धात्वन्तरोपसर्गाच्च ॥

प्रस्कण्वहरिश्चन्द्रावृषी ६ । १ । १५३ ॥

हरिश्चन्द्रग्रहणममन्त्रार्थम् । ऋषी इति किम् । प्रकण्वो दशः ।
हरिचन्द्रो माणवकः ॥

मस्करमस्करिणो वेणुपरित्राजकयोः ६ । १ । १५४ ॥

मकरशब्दोऽव्युत्पन्नस्तस्य मुडिनिश्च निपात्यते । वेणु इति
किम् । मकरो ग्राहः । मकरी समुद्रः ॥

कारस्करो वृक्षः ६ । १ । १५६ ॥

कारं कगेतीति कारस्करो वृक्षः । अन्यत्र कारकरः । केचिन्तु
कस्कादिष्विदं पठन्ति न सूत्रेषु ॥

पारस्करप्रभृतीनि च संज्ञायाम् ६ । १ । १५७ ॥

एतानि समुद्रकानि निपात्यन्ते नाम्नि । पारस्करः किष्किन्वा ॥

तद्ग्रहतोः करपत्योश्चौरदेवतयोः सुद् तलोपश्च ॥

तात्पूर्वं चर्त्वेन दकारो बोध्यः । तद्ग्रहतोर्दकारतकारा लुप्येते ।
करपत्योस्तु सुद् चौरदेवतयोः इति समुदायोपाधिः । तस्करः ।
बृहस्पतिः ॥

प्रायस्य चित्तिचित्तयोः ॥

प्रायश्चित्तिः । प्रायश्चित्तम् । वनस्पतिरित्यादि । आकृति-
गणोऽयम् ॥ इति समासाश्रया विधयः ॥

इति ११९ अंगाः ।

सर्वस्य द्वे ८ । १ । १ ॥

इत्याधिकृत्य ॥

नित्यवीप्सयोः ८ । १ । ४ ॥

आमीक्ष्ये वीप्सायां च द्योत्ये पदस्य द्विर्वचनम् । आमीक्ष्यं
तिङन्तेष्वव्ययसंज्ञककृदन्तेषु च । पचति पचति । भुक्त्वा भु-
क्त्वा । वीप्सायाम् । वृक्षं वृक्षं सिञ्चति । ग्रामो ग्रामो रमणीयः ॥

परेर्वर्जने ८ । १ । ५ ॥

परि परि वङ्गेभ्यो वृष्टो देवः । वङ्गान्परिहृत्येत्यर्थः ॥

परेर्वर्जने वावचनम् ❀ ॥

परि वङ्गेभ्यः ॥

उपर्यध्यधसः सामीप्ये ८ । १ । ७ ॥

उपर्युपरि ग्रामम् । ग्रामस्योपरिष्ठात्समीपे देश इत्यर्थः । अर्ध-
वि सुखम् । सुखस्योपरिष्ठात् समीपकाले दुःखमित्यर्थः । अधोऽव्यो
लोकम् लोकस्याधस्तात्समीपे देश इत्यर्थः ॥

वाक्यादेरामन्त्रितस्यासूयासंमतिकोपकुत्सनभर्त्स-
नेषु ८ । १ । ८ ॥

असूयायाम्-सुन्दर सुन्दर वृथा ने सौन्दर्यम् । संमतौ-देव
देव वन्द्योऽसि । कोपे-दुर्विनीत दुर्विनीत इदानीं ज्ञास्यसि । कुत्सने-
धानुष्क धानुष्क वृथा ते धनुः । भर्त्सने-चोर चोर घातयिष्यामि
त्वाम् ॥

एकं बहुव्रीहिवत् ८ । १ । ९ ॥

द्विरुक्त एकशब्दो बहुव्रीहिवत् । तेन सुब्लोपपुंवद्भावौ एकैक-
मक्षरम् । इह द्वयोरपि सुपोर्लुकि कृते बहुव्रीहिवद्भावादेव प्रातिप-
दिकत्वात् समुदायात्सुप् । एकैकयाहुत्या इह पूर्वभागे पुंवद्भावा-
द्विग्रहे विशेषः । न बहुव्रीहौ इत्यत्र पुनर्बहुव्रीहिवद्ग्रहणं मुख्यबहु-
व्रीहिलाभार्यम् । तेनातिदिष्टबहुव्रीहौ सर्वनामतास्त्येवेति प्राञ्चः ।
वस्तुतस्तु भाष्यमते प्रत्याख्यातमेतत् । सूत्रमतेऽपि बहुव्रीह्वर्थेऽ-
लौकिके विग्रहे निषेधकं नतु बहुव्रीहावितीहातिदेशशङ्कैव नास्ति ।
एकैकस्मै देहि ॥

आवाधे च ८ । १ । १० ॥

पीडाया घोत्यायं द्वे स्तो बहुव्रीहिवच्च । गतगतः विरहात्पी-
डयमानस्येयमुक्तिः । बहुव्रीहिवद्भावात्सुब्लुक् । गतगता । इह
पुंवद्भावः ॥

कर्मधारयवदुत्तरेषु ८ । १ । ११ ॥

इत उत्तरेषु द्विवचनेषु कर्मधारयवत् कार्यम् । प्रयोजनं सुब्लो-
पपुंवद्रावान्तोदात्तत्वानि ॥

प्रकारे गुणवचनस्य ८ । १ । १२ ॥

सादृश्ये द्योत्ये गुणवचनस्य द्वे स्तस्तच्च कर्मधारयवत् । कर्म-
धारयवदुत्तरेषु इत्याधिकारात् तेन पूर्वभागस्य पुंवद्रावः । समासस्य
इत्यन्तोदात्तत्वं च । पटुपट्वा पटुपटुः । पटुसदृशः । ईपत्पटु-
रिति यावत् । गुणोपसर्जनद्रव्यवाचिनः केवलगुणवाचिनश्चेह गृह्य-
न्ते । शुक्लशुक्लं रूपम् । शुक्लशुक्लः पटः ॥

आनुपूर्व्ये द्वे वाच्ये ❀ ॥

मूले मूले स्थूलः । संभ्रमेण प्रवृत्तौ ययंष्टमनेकधाप्रयोगो न्याय-
सिद्धः । सर्प सर्प बुध्यस्व बुध्यस्व । सर्प सर्प सर्प बुध्यस्व बुध्यस्व
बुध्यस्व ॥

क्रियासमभिहारे च ❀ ॥

लुनीहि लुनीहीत्येवायं लुनाति । नित्यवीप्सयोः इति सिद्धे
भृशार्थे द्वित्वार्थमिदम् । पौनःपुन्येऽपि लोटा सह समुच्चित्य
द्योतकतां लब्धुं वा ॥

कर्मव्यतिहारे सर्वनाम्नो द्वे वाच्ये । समासवच्च बहुलम् ❀ ॥

बहुलग्रहणादन्यपरयोर्न समासवत् । इतरशब्दस्य तु नित्यम् ॥

असमासवद्भावे पूर्वपदस्थस्य सुपः सुर्वक्तव्यः ❀ ॥

अन्योन्यं विप्रा नमन्ति । अन्योन्यौ । अन्योन्यान् । अन्योऽन्येन
कृतम् । अन्योन्यस्मै दत्तमित्यादि । अन्योन्येषां पुष्करैरामृशन्त
इति माघः । एवं परस्परम् । अत्र कस्कादित्वादिसर्गस्य सः ।
इतरेतरम् । इतरेतरेणेत्यादि ॥

**स्त्रीनपुंसकयोरुत्तरपदस्थाया विभक्तेराम्भावो वा व-
क्तव्यः ❀ ॥**

अन्योन्याम् । अन्योन्यम् । परस्पराम् । परस्परम् । इतरेतराम् ।
 इतरेतरं वा । इमे ब्राह्मण्यौ कुले वा भोजयतः । अत्र केचित् ।
 आमादेशो द्वितीयाया एव भाष्यादौ तथैवोदाहृतत्वात् तेन स्त्री-
 नपुंसकयोरपि तृतीयादिषु पुंवदेव रूपमित्याहुः । अन्ये तूदाहरण-
 स्य दिङ्मात्रत्वात्सर्वविभक्तीनामादेशमाहुः । दलद्वये टावभावः ।
 क्लीबे चाद्ङिरहः स्वमोः समासे सौरलुक् चेति सिद्धं बाहुलका-
 त्रयम् । तथाहि । अन्योन्यं परस्परमित्यत्र दलद्वयेऽपि टाप् प्राप्तः
 नच सर्वनाम्नो वृत्तिमात्रे इति पुंवद्भावः । अन्यपरयोरसमासवद्भा-
 वात् । नच द्विवचनमेव वृत्तिः । यां यां प्रियः प्रैक्षत कातरार्क्षी सा
 सा इत्यादावतिप्रसङ्गात् । अन्योन्यमितरेतरम् इत्यत्र च अदृङ्-
 तरादिभ्यः इत्यद्ङ् प्राप्तः । अन्योन्यसंसक्तमहस्त्रियामम् । अन्यो-
 न्याश्रयः परस्परक्षिसादृश्यम् । अदृष्टपरस्परैः इत्यादौ सोर्लुक्च
 प्राप्तः । सर्वं बाहुलकबलेन समाधेयम् । प्रकृतवार्तिकभाष्योदाहरणं
 स्त्रियाम् सूत्रे अन्योन्यसंश्रयम् त्वेतादिति भाष्यं चात्र प्रमाणमिति ॥

अकृच्छ्रे प्रियसुखयोरन्यतरस्याम् ८ । १ । १३ ॥

प्रियप्रियेण ददाति प्रियेण वा । सुखसुखेन ददाति सुखेन वा ।
 द्विवचने कर्मधारयवद्भावात्सुपि लुकि तदेव वचनम् । अतिप्रिय-
 मपि वस्त्वनायासेन ददातीत्यर्थः ॥

यथास्वे यथायथम् ८ । १ । १४ ॥

यथास्वम् इति वीप्तायामव्ययीभावः । योऽधमात्मा यच्चा-
 त्मीयं तद्यथास्वम् । तस्मिन् यथाशब्दस्य द्वे क्लीबत्वं च निपात्यते ।
 यथायथं ज्ञाता । यथास्वभावमित्यर्थः । यथात्मीयमिति वा ॥

द्वन्द्वं रहस्यमर्यादावचनव्युत्क्रमणयज्ञपात्रप्रयोगाभि-
 व्यक्तिषु ८ । १ । १५ ॥

द्विशब्दस्य द्विवचनं पूर्वपदस्याम्भावोऽस्तं चोत्तरपदस्य नपुंसकत्वं
 च निपात्यत षष्ठीषु । तत्र रहस्यं द्वन्द्वशब्दस्य वाच्यम् ।
 इतरे विषयभृताः द्वन्द्वं मन्त्रयते । रहस्यामित्यर्थः । मर्यादास्थित्य-

नतिक्रमः । आचतुरं हीमे पशवो द्वन्द्वं मिथुनायन्ते । माता पुत्रेण मिथुनं गच्छति । पौत्रेण प्रपौत्रेणापीति मर्यादार्यः । व्युत्क्रमणं पृथगवस्थानं द्वंद्वं व्युत्क्रान्ताद्विवर्गसंबन्धेन पृथगवस्थिताः । द्वन्द्वं यज्ञपात्राणि प्रयुनक्ति । द्वंद्वं संकर्षणवासुदेवो अभिव्यक्तौ । साहचर्येणेत्यर्थः । योगविभागादन्यत्रापि द्वन्द्व इष्यते । इति द्विरुक्ति-प्रक्रिया ॥

इति १२० अंशाः ।

इति तृतीयाध्यायस्य चतुर्थः पादः तृतीयोऽध्यायः समाप्तः ।

इति द्वितीयखण्डस्य प्रथमो भागः ।

अथ द्वितीयो भागः । तत्रादौ बहूपकारकत्वात्पाणिन्यष्टकपठिताः परिभाषा लिख्यन्ते । काश्चित्तु परैः परिभाषात्वेनानुलिखिता अपि तत्साम्यं मत्वाभेदबुद्धिना मया तासु न्यस्यन्ते । तत्र, उरण् स्परः । एच् इग्रस्वादेशे । अलोन्त्यस्य । आदेः परस्य । डिच्च । अनेकार्द्धशित्सर्वस्य । प्रत्ययलोपे प्रत्ययलक्षणम् । न लुमताङ्गस्य । पूर्वत्रासिद्धम् । मिदचोऽन्त्यात्परः । एताः स्वस्वस्यलेषु व्याख्याताः । अथ पूर्वत्र व्याख्याता अपि विशेषप्रदर्शनार्थं लिख्यन्ते । स्थानेऽन्तरतमः । तेन सुध्युपास्य इत्यत्र इकारस्य यकार एव सोऽपि प्राप्यमाणानां मध्य एव । तेन तत्रानुनासिको न । तथा जलौघ इत्यत्र त्रिमात्र औकारो न । स्थानार्थगुणप्रमाणैरान्तर्यं चतुर्द्धा । स्थानतः सुध्युपास्यः इत्यादौ । अर्थतः तृज्वत् क्रोष्टुः इत्यत्र । क्रोष्टुशब्दस्य क्रोष्टृ एव नतु तृजन्तोऽपि वक्रादिः । गुणतः प्रयत्नादेः । ज्ञयो ह इत्यत्र प्रयत्नसाम्यात् हस्य वर्गचतुर्थः । विद्वान् लिखतीत्यत्रानुनासिकनस्य 'तादृशो लः । प्रमाणतः अदसो मेरित्यत्र ह्रस्वव्यञ्जनयोर्द्विस्वः दीर्घस्य दीर्घः । स्थानत आन्तर्यं वलीयः । तेन चेता इत्यत्र गुणे कार्ये स्थानसाम्यात् इकारस्यैकार एव नतु प्रमाणतोऽकारः । तमवग्रहणं किम् । वाग्धरिरित्यत्र महाप्राणमात्रसाम्येन द्वितीयो न नादमात्रसाम्येन तृतीयश्च न किन्तुभयसा-

म्येन चतुर्थ एव । यथासंख्यमनुदेशः समानाम् । तेन एचोऽयवा-
याव इति चतुर्णामेचां ऋमेणायादयः । अन्यथा एचां प्रत्येकं
पर्यायेण ते स्युः । अणुदित्सवर्णस्य चाप्रत्ययः । तेन इको
यणचीत्यादाँ इग्भिरजिभश्च स्वस्वसवर्णा दीर्घा अपि संगृह्यन्तेऽतः
सुध्युपास्यः सुध्याशय इत्यादावपि यण् । अविधीयमानः किम् ।
अस्मै इत्यादौ त्यदादीनाम इत्यनेन अनुनासिकीऽकारो यथा न
स्यात् । तपरस्तत्कालस्य । तेन रमायै इत्यत्र अतो गुण इत्यनेन
याडाकारस्य पररूपं न । गङ्गोदकमित्यत्र अदेङ्गुण इत्यत्राताग्रह-
णादाद्गुण इति त्रिमात्र ओकारो न । द्विर्वचनेऽचि । ईर्ष्यधाती
व्याख्यातम् । परे तु द्वित्वनिमित्तेऽचि अजादेशः स्थानिरूपमाप-
द्यते द्वित्व एव कर्त्तव्ये इति व्याचक्षते । तत्र यणादेशे कृतेऽपि पुनः
कृभावो भवति ततो द्वित्वे कृते तु पुनर्यणादेशरूपमवतिष्ठते इति
तुल्यं फलम् ॥

असिद्धवदत्राभात् ॥

तेन एधि शाधीत्यादाँ एत्वशाभावयोः कृतयोरपि तयोरसिद्ध-
त्वेन श्लन्तत्वात् हुश्लभ्य इति हेर्द्धिः । समानाश्रये किम् । वपुषः ।
अत्र पाधातोः वसोर्यत्संप्रसारणं तदातो लोप इटि च इत्यालोपे
कर्त्तव्यं नासिद्धम् । आलोपो हि वसौ सम्प्रसारणं तु विभक्ताविति
व्याश्रयत्वात् ॥

आद्यन्तौ टकितौ ॥

डमो ह्रस्वादित्यत्र व्याख्यातम् । अवयवत्वं चात्र समीपे सदृशे
वा उपचारात् ॥

स्थानिवदादेशोऽनल्विधौ ॥

डेर्य इत्यत्र व्याख्यातम् । तथा सुध्युपास्य इत्यत्र यकारस्य
स्थानिवद्भावेनाऽच्चत्वमाश्रित्याऽनचि चेति द्वित्वनिषेधो न शङ्क्यो-
ऽल्विधित्वात् । अल्विधिश्चतुर्द्धा । तत्राला विधौ यथा । व्यूढोर-
स्केन । अत्र सकारस्य स्थानिवत्त्वेन विसर्गवदत्त्वमाश्रित्याद्भव्य-

वाय इति णत्वं न । अलः परस्य यथाद्यौः पन्थाः इह हलङ्घ्या-
दिलोपो न । अलो विधौ यथा । छुक्कामः । इह लोपो व्योर्बलीति
लोपो न । न चोत्त्वविधिसामर्थ्यम् । छुयानमित्यादी तस्य राव-
काशत्वात् । अलि विधौ यथा । यजेः क्तः । क इष्टः । इह हशि
चेत्युत्त्वं न ॥

आकडारादेका संज्ञा ॥

हलन्तेषु राजन्शब्दे व्याख्यातम् । आकडारीयप्रकरणादन्यत्र
तु यथोचितमनेकसंज्ञानां समावेशोऽपि भवति । यथा सर्वशब्दे
सर्वनामप्रातिपदिकसंज्ञयोः तथा तव्यटादौ कृतकृत्यप्रत्ययसंज्ञानां
समावेशः ॥

अचः परस्मिन् पूर्वविधौ ॥

तत्र पूर्वविधावित्यत्र द्विधा समासः । पूर्वस्य विधाविति समासं
कथयतीत्यत्र न वृद्धिरिति व्याख्यातम् । पूर्वस्माद्विधाविति समासे
तन्वन्ति तन्वते । इह यणादेशस्य स्थानिवद्भावान्नेट्ट । अत्र द्वि-
तनित्यङ्गं निमित्तं तच्च स्थानिभूतादुकारात्पूर्वमिति ॥

न लोपः सुप्स्वरसंज्ञातुग्विधिषु कृति ॥

तेन राजाश्च इत्यादौ सवर्णे दीर्घे कर्त्तव्ये नलोपो सिद्धो न
भवति।मुवाश्रितो विधिः सुब्विधिः । तेन राजभ्याम् राजभ्यः रा-
जभिरित्यात्रात्वमेत्वमेस्त्वं च न । स्वराविधौ पञ्चार्थम् । दिवसंख्ये
संज्ञायामिति समासे नलोपे कृते अवर्णान्तं पूर्वपदं जातमित्यर्थे
चावर्णं द्व्यच् न्यच् इति पूर्वपदाद्युदात्तत्वं प्राप्तं नलोपस्यासिद्धत्वान्न
भवति । संज्ञाविधौ पञ्चनार्य इत्यादौ नलोपे कृतेऽपि षण्णान्ता प-
डिति पट्संज्ञा प्रति नलोपस्यासिद्धत्वान्न पट् । स्पस्तादिभ्य इति
टाप् न भवति । कृति तुग्विधौ तु वृत्रहभ्याम् इत्यत्र ब्रह्मभूणेति
विहितं क्विपमाश्रित्य ह्रस्वस्येति तुङ् नाकृतीति किम् । वृत्रहच्छ-
त्रमित्यादौ छे चेति तुक् स्यादेव ॥

इति १०१ अंशाः ।

न मुने ॥

तेन अमुना इत्यत्र मुभावस्य सिद्धत्वेन धित्वात् आडो नामा-
वः सिद्धयति । कृते च नामावे मुभावः सिद्ध एव । तेन मुपि चेति
दीर्घोऽपि न भवति । परे तु कृते इति न व्याख्येयम् । तत्र हि स-
न्निपातपरिभाषया दीर्घत्ववारणसंभवादित्याहुः ॥

वासरूपोऽस्त्रियाम् ॥

तेन ऋहलोर्ण्यत् इत्यादयोऽपवादाः नव्यदादीनां विकल्पेन
बाधकाः । अतस्तव्यदादयोऽपि पक्षे स्युरेव । कार्यम् । कर्तव्यम् ।
करणीयम् । अतरूपः किम् । पोरदुपधादित्यादयो ण्यदादीनां
नित्यबाधका एव । लभ्यम् । शप्यम् । अस्त्रिया किम् । मृजा
इत्यादौ पिट्भिदादिभ्योऽडित्यादिभिः क्तिन्बाध्यत एव ॥

त्वरूपं शब्दस्याशब्दसंज्ञा १ । १ । ६८ ॥

शब्दस्य स्वं रूपं संज्ञि शब्दशास्त्रे या संज्ञा ता विना । तेन अ-
त्रैर्दक् इत्यग्निशब्दादेव ढकू न बह्वादिशब्दात् । अशब्दसंज्ञेति
किम् । उपसर्गे घोः किरिति दाधाभ्य एव किः यथा स्यात् ।
घुइ शब्द इत्यतो मा भूत् ॥

पष्ठी स्थानेयोगा १ । १ । ४९ ॥

अनिर्द्धारितमन्वन्धविशेषा पष्ठी स्थानेयोगा बोध्या । स्थानं च
प्रसङ्गः । तथा च इको यणचीत्यादी पष्ठीप्रसङ्गार्थका । तथा च
अच्परकस्येक उच्चारणप्रसङ्गे यणुच्चार्य इत्यादिर्गर्थः ॥

येन विधिस्तदन्तस्य १ । १ । ७२ ॥

विशेषणं तदन्तस्य संज्ञा स्वस्य च रूपस्य । तेन एरच इत्य-
नेन इकारान्ताटिकाररूपाच्च धातोरच् । तेन, चयः । जयः । अयः ॥

समासप्रत्ययविधौ प्रतिषेधः ❀ ॥

तेन द्वितीयाश्रितेत्यनेन कृष्णाश्रित इत्यत्रैव समासो नतु कृष्ण-
मुपाश्रित इत्यत्र नडादिभ्यः फक् इति । नडस्यापत्यं नाडायन
इत्यत्रैव स्यान्नतु सूत्रनडस्यापत्यं सूत्रनाडिरित्यत्रेति ॥

उगिद्वर्णग्रहणवर्जम् ❀ ॥

महान्तमतिक्रान्ता अतिमहती । महच्छब्दस्य गौरादित्वेऽप्यु-
पसर्जने षिद्गौरिति डीपोऽप्रवृत्ते रुगितश्चेत्युगिदन्तान् डीप् ।
एवं वर्णग्रहणे । अत इञ् । दाक्षिः ॥

इको गुणवृद्धी १ । १ । ३ ॥

गुणवृद्धिशब्दाभ्या यत्र गुणवृद्धी विधीयते तत्रैक इति पष्ठच-
न्त पदमुपतिष्ठते । यत्र साक्षात्स्थानी न निर्दिष्टः सार्वधातुकार्ध-
धातुकयोः सिचि वृद्धिरित्यादौ तत्रैवेयं परिभाषा प्रवर्तते न त्वचो-
ञ्णितीत्यादौ स्थानिनिर्देशात् । गुणवृद्धिशब्दाभ्यामिति किम् ।
त्यदादीनामः । इमे । दिव औत् । द्यौः । विधीयत इति किम् ।
यत्र त्वनुवादो वृद्धिर्यस्याचामादिरित्यादौ तत्रैक इति नोपतिष्ठते ।
अनुवादे परिभाषाणामनुपस्थितेरिति भावः ॥

अचश्च १ । २ । २८ ॥

ह्रस्वदीर्घप्लुतशब्दैर्यत्राज्विधीयते तत्राच इति पष्ठचन्तं पदमुप-
तिष्ठते । तेन ह्रस्वो नपुंसके इत्यादौ प्रातिपदिकान्तस्य अचो
ह्रस्वः । श्रीप कुश्म् । नतु सुवाग् ब्राह्मणकुलम् इत्यादौ । ह्रस्वे-
त्यादि किम् । दिव उत् । द्युभ्याम् ॥

तस्मिन्निति निर्दिष्टे पूर्वस्य १ । १ । ६६ ॥

सप्तमीनिर्देशेन विधीयमानं कार्यं वर्णान्तरेणाव्यवहितस्य पूर्वस्य
बोध्यम् । यथा दध्युदकम् । अत्रोकारस्य मा भृत् । अव्यवहित-
स्यैवेति किम् । अग्निचिदत्र । सोमसुदत्र ॥

तस्मादित्युत्तरस्य १ । १ । ६७ ॥

पञ्चमीनिर्देशेन क्रियमाणं कार्यं वर्णान्तरेणाव्यवहितस्य परस्य
बोध्यम् । तेन तिङ्गितिङ् इति निघात उत्तरस्येव । अग्निमीडे । नेह ।
ईडे अग्निम् । अव्यवहितस्येति किम् । उत्संस्थान उत्संस्तम्भनामि-
त्यादौ उदस्थेति पूर्वसवर्णो न प्रवर्तते ॥

स्वरितेनाधिकारः १ । ३ । ११ ॥

स्वरितत्वयुक्तं शब्दस्वरूपमाधिकृतं बोध्यम् । प्रतिज्ञास्वरिताः पाणिनीयाः । कियदूरमाधिकार इत्यत्र तु व्याख्यानमेव शरणम् । यद्वा स्वरिते दृष्टे सति नाधिकारः अधिकारी निवर्तते इत्यर्थः । ऋः स्वरितोऽधिकारार्थः कश्च तन्नित्यर्थे इत्यत्रापि व्याख्यानमेव शरणम् । यद्वा अधिकः कारोऽधिकारः । अधिकं कार्यं गौणेऽपि शास्त्रप्रवृत्तिरित्यर्थः । तथा च गौणमुख्यन्यायो यत्र नेष्यते अपादानाधिकारणादौ तत्र स्वरितः पाठघः किञ्च अधिकः कारः कृतिरियं यत्पूर्वः सन् परं बाधते । तथा च नुमचिरवृज्वद्भावेभ्यो-
नुदित्यादि वक्ष्यमाणपूर्वविप्रतिषेधाः सर्वे संगृहीता भवन्ति । तत्र स्वरितपाठेनैव गतार्थत्वादित्यादि ॥

न पदान्तद्विर्वचनवरेयलोपस्वरसवर्णानुस्वारदीर्घज- श्रीर्वधिषु १ । १ । ५८ ॥

पदस्य धरमावयवे द्विर्वचनादौ च कर्त्तव्ये परानिमित्तोऽजादेशो न स्थानिवत् । अचः परस्मिन्नित्यस्यायं निषेधः । पदान्ते-कानि संतीत्यत्र अस्तेरलोपस्याच्छ्वमाश्रित्य यण् न । द्विर्वचने-सुद्धयुपा-
स्यः । यस्य इत्वमाश्रित्यानचि चेति द्वित्वनिषेधो न । वरे-याया-
वरः । यातेर्यङन्ताद् यश्च यङ इति वरच । अतो लोपः तस्य अचः परस्मिन्नाति स्थानिवद्भावे प्राप्ते यलोपं प्रति स्थानि-
वद्भावनिषेधात् लोपो व्यौरिति यलोपः । स च आतो लोप इटि चेत्यालोपे कर्त्तव्ये वरे लुप्तत्वात् न स्थानिवत् । यलोपे-यातिः । याते-
र्यङन्तात् क्तिच् प्रतो लोपः । यलोपः अलोपस्य स्थानिवत्त्वादातो लोपः स चालोपः यलोपे कार्ये न स्थानिवत् । तेन पुनर्यलोपः ।
स्वरे-चिकीर्षकः । सनोऽतो लोपः लितीति ऋकारेकारस्योदात्तत्वे कर्त्तव्ये न स्थानिवत् । सवर्णानुस्वारयोः-शिण्डि । श्रसोरलोपो न स्थानिवत् । दीर्घे-प्रतिदीप्ता जशि-सगिधश्च मे अटनं गिधः । ञदेः क्तिनि बहुलं उन्दसीति घस्त्व घसिमसोर्हलीत्युपधालोपः श्लो

झलीति सलोपः । तकारस्य धत्वं घस्य झलां जशिति जश्त्वं तत्र कर्तव्ये उपधालोपो न स्थानिवत् । समानस्य छन्दसीति समानस्य सः । समाना गिधः सगिधः । चरि-जक्षतुः । जक्षुः । घसेर्लिटि अतुष् उष् च गमहनेत्युपधालोपः । खरि चेति चत्वं प्रति न स्थानिवत् । भाष्ये तु पूर्वत्रासिद्धे न स्थानिवदित्यवष्टभ्य द्विर्वचनसवर्णानुस्वारदीर्घजश्चरः प्रत्याख्याताः । तद्रीत्या तु सलोपे धत्वे च कर्तव्ये स्थानिवद्भावशङ्कैव नास्तीति ॥

इति १२२ अंशाः ।

विप्रतिपेधे परं कार्यम् १ । ४ । २ ॥

क्वचित्परस्परलब्धावकाशयोरेकेत्र समावेशो विप्रतिपेधः स एव तुल्यबलविरोधस्तत्र परं कार्यं स्यात् । तेन वृक्षेभ्य इत्यत्र सुपि चेत्यतः परत्वाद्बहुवचने झल्येत् इत्येव भवति ॥

अन्तादिवच्च ६ । १ । ८५ ॥

योऽयमेकादेशः स पूर्वस्यान्तवत्परस्यादिवत् स्यात् । यथा ब्रह्मबन्धुरित्यत्र ब्रह्मबन्धुरिति प्रातिपदिकम् । ऊङ् प्रतिपादिकं तयोर्थे एकादेशः स प्रातिपदिकस्यान्तवद् भवति । तेन ङच्चात्प्रातिपदिकादिति स्वादिविधिर्भवति । वृक्षावित्यत्र सुवौकारः असुवकारः तयोरेकादेशः सुप आदिवद् भवति । तेन सुबन्तत्वात्पदसंज्ञा वर्णाश्रयविधावन्तवद्भावो नेष्यते । तेन खट्वाभिरित्यत्रान्तवद्भावादतो भिस ऐस् न भवति । एवं प्राच्छति उपाच्छतीत्यादौ पदान्तवद्भावेन रेफस्य न विसर्गः । उभयथर्क्षु इत्यादिनिर्देशाच्च ॥

समर्थः पदविधिः २ । १ । १ ॥

पदसम्बन्धी यो विधिः स समर्थाश्रितो बोध्यः । सामर्थ्यं द्विधा । व्यपेक्षा एकार्थीभावश्च । तत्राकाशादिवशात्परस्परसम्बन्धो व्यपेक्षा सैव वाक्ये । यथा गङ्गः पुरुषोऽश्वश्चेति । तत्र ह्यपेक्षायां सत्यां सन्निहितेन योग्येन च संबन्धोऽभ्युपेयते । एकार्थीभावश्च गजपुरुषइत्यादि वृत्तावेवाम च प्रक्रियादशायां पृथगर्थत्वेन प्रथम-

गृहीतार्थस्य विशिष्टैकार्थत्वरूपः स एवेह गृह्यते । पदग्रहणं किम् ।
वर्णविधौ समर्थपरिभाषा मा भूत् । तेन तिष्ठतु दध्यानय तक्र-
मित्यत्र सामर्थ्यार्भावेऽपि यण् भवत्येव । समर्थ इति किम् ।
पश्यति कृष्णं श्रितो देवदत्तमित्यादौ कृष्णश्रित इति समासो न
भवति । कचिच्च सापेक्षत्वेऽपि भाष्यादिप्रामाण्याद्वत्तिरङ्गीक्रियते ।
किमोदनः शालीनाम् । केषां शालीनामोदन इत्यर्थः । सक्त्वाढक-
मापणीयानाम् । आपणीयानां सक्त्वाढकमित्यर्थः ॥

न वेति विभाषा १ । १ । ४४ ॥

निषेधविकल्पयोर्विभाषासंज्ञा । विभाषा श्वेरित्यादिषु प्रतिषेध-
विकल्पावुपतिष्ठेते । तत्र प्रतिषेधेन समीकृते विषये पश्चाद्विकल्पः
प्रवर्तते । शुशाव शिश्वायेत्यत्राप्राप्तौ विकल्पः । शिशुवतुः शिश्वि-
यतुरित्यादौ तु वचि स्वपीति नित्यप्राप्ताविति विवेकः । अत्रेदं
बोध्यम् । इतिशब्दः काकाक्षिन्यायेनोभाभ्या सम्बध्यते । स च पदा-
र्थविपर्यासकृत् । तेन निषेधो विकल्पश्च न वाशब्दार्थः संज्ञी वि-
भाषाशब्दार्थो विकल्पः संज्ञा उभयत्र विभाषार्थं चेदं सूत्रम् ।
प्राप्तविभाषायामप्राप्तविभाषाया च नास्योपयोगः । प्राप्तविभाषायां
भावाशस्य सिद्धत्वेन विभाषाश्रुत्या पक्षे भवतीति भावाशमनूद्य
पक्षे न भवतीत्यभावाशमात्रकरणात् । अप्राप्तविभाषायां तु अभा-
वाशस्य सिद्धत्वेन पक्षे न भवतीत्यभावाशमनूद्य पक्षे भवतीति
भावाशमात्रकरणात् । विभाषा श्वेरित्युभयत्र विभाषाया तु यदि
विधिमुखेन प्रवृत्तिस्तर्हि पित्स्वेव संप्रसारणाविकल्पः स्यात् । कित्सु
यजादित्वाद्वाचिस्वपीति नित्यमेव स्यात् । अथ प्रतिषेधमुखेन प्रवृ-
त्तिस्तर्हि कित्स्वेव प्रवृत्तिः स्यान्नतु पित्सु । परनित्यान्तरङ्गापवा-
दानामुत्तरोत्तरं बलीयः । पराद् नित्यं यथा, तुदादिभ्यः शः ।
तुदाति । रुदादिभ्यः श्रम् । रुणद्धि । परमपि लघूपधगुणं बाधित्वा
नित्यत्वात् शश्रमौ । तथा धिनवाव । धिनवाम । परमपि लोप-
श्चास्यान्यतरस्या म्वोरित्युकारलोपं बाधित्वा नित्यत्वादाडुत्तम-
स्येत्याद् । परादन्तरङ्गं यथा । उमये देवमनुष्याः । इह प्रथमचरमेति

परमपि विकल्पं वाधित्वा सर्वादीनीति सर्वनामसंज्ञाविभक्तिनिरपेक्षत्वेनान्तरङ्गत्वात् । तथा स्रवतेर्णिश्रीति चडि द्वित्वे उपधागुणादन्तरङ्गत्वादुवङ् । असुस्रवत् । परादपवादो यथा । परमप्यनेकालिति सर्वादेशं वाधित्वा डिधेत्यन्तादेशः । दध्ना । दध्ने । अस्थिदधीत्यनङ् । नित्यादन्तरङ्गं यथा । ग्रामणिनी कुले । नित्यमपीकोचीति नुमं वाधित्वा ह्रस्वो नपुंसक इति ह्रस्वः कृने तु नुमि अनजन्तत्वात् ह्रस्वो न स्यात् । अन्तरङ्गादपवादो यथा । दैत्यारिः । श्रीशः । परमपि सवर्णदीर्घं वाधित्वा अन्तरङ्गत्वादाद्गुणे यणि च प्राप्तेऽपवादत्वात्सवर्णदीर्घः । तथा उरुयौ । उरुयः । सुल्वौ । सुल्वः । इत्यत्रान्तरङ्गत्वादियडि उवडि च प्राप्तेऽपवादत्वादेरनेकाच इत्योः सुपीति च यण् । यद्यपवादोऽन्यत्र चरितार्थः तर्हि परान्तरङ्गाभ्यां वाध्यत एव । तथाहि डिधेत्येतदनन्यार्थङकारयुक्तेष्वनडादिषु चरितार्थत्वात्ताताडि न प्रवर्तते । किन्तु परेणानेकाङ्शिदित्यनेन वाध्यते । जीवतात् । भवतात् । अयजे इन्द्रम् । ग्रामे इह । सर्वे इत्यम् । अत्र अयज इ इन्द्रम्, ग्राम इ इह, सर्वे इ इत्यमिति स्थिते अन्तरङ्गेण गुणेन सवर्णदीर्घो वाध्यते । तस्य समानाश्रये दैत्यारिः श्रीश इत्यादौ चरितार्थत्वात् ॥

कृताकृतप्रसंगि नित्यं तद्विपरीतमनित्यम् ॥

यथा ऋच्छति इत्यादौ सावकाशस्य शस्य तुतोदेत्यादौ सावकाशस्य गुणस्य च तुदतीत्यादौ परादापि गुणान्नित्यत्वाच्छ एव । शो हि गुणे कृतेऽकृते च प्रसङ्गी गुणस्तु अकृत एव । शो कृते तु शे तस्य ङित्त्वाद् गुणो न भवति ॥

असिद्धं वहिरंगमन्तरङ्गे ॥

वहिरङ्गापेक्षयान्तर्गतानि अन्तर्भूतानि अङ्गानि निमित्तानि यस्य तदन्तरङ्गम् एवमन्तरङ्गापेक्षया वहिर्भूतान्यङ्गानि यस्य तद्वहिरङ्गम् । तत्रान्तरङ्गे कार्यं कर्तव्ये वहिरङ्गमासिद्धम् । यथा पचावेदमित्यत्र आद्गुणे कृते एत ए इति ऐकारो न भवति वहिरङ्गतया

गुणस्यासिद्धत्वात् । शेषाः परिभाषास्तृतीये खण्डे व्याख्यास्यन्ते ॥
इति १२३ अंशाः ।

अथ णिजन्ताः ॥ ओः पुयण्यपरे । अपीपवत् । अवीभवत् ।
अमीभवत् । अयीयवत् । अरीखत् । अलीलवत् । अजीजवत् ॥

स्रवतिशृणोतिद्रवतिप्रवतिप्लवतिच्यवतीनां वा ७ ।
४ । ८१ ॥

एषामभ्यासोकारस्य इत्वं वा सनि अवर्णपरे धात्वक्षरे परे।असि-
स्रवत् । असुस्रवत् । नाग्लोपि इति ह्रस्वनिषेधः । अशशासत् । अडुडौ-
कत् । अचीचकासत् । मतान्तरे अचचकासदिति वक्ष्यते । अग्लोपि
इति सुब्धातुप्रकरण उदाहरिष्यते । ण्यन्ताण्यिचि पूर्वविप्रतिषेधा-
दपवादत्वाद्वा वृद्धिं बाधित्वा णिलोपः । चोरयति । णौ चङीति
ह्रस्वः । दीर्घो लघोः । न चाग्लोपित्वाद्दयोरप्यसम्भवः । ण्याकृति-
निर्देशात् । अचूचुस्त ॥

णौ च संश्रद्धोः ६ । १ । ३१ ॥

सन्परे चङ्परे च णौ श्वयतेः संप्रसारणं वा । संप्रसारणं तदा-
श्रयं कार्यं च बलवत् । अतः संप्रसारणं । पूर्वरूपम् । अशूशवत् ।
अलघुत्वान्न दीर्घः । आशिक्षयत् ॥

स्तम्भुसिबुसहां चङि ८ । ३ । ११६ ॥

उपसर्गनिमित्त एषां सस्य पो न स्याच्चङि । अवातस्तम्भत् ।
पर्यसीपिवत् । न्यसीपहत् । आटिटत् । आशिशत् । वहिरङ्गोऽप्यु-
पधाह्रस्वो द्वित्वात्प्रागेव । ओणेर्द्धादित्करणाद्धिङ्गात् मा भवानिदि-
धत् । एजादविधती विधानान्न वृद्धिः । मा भवान्प्रेदिधत् । नन्द्राः
इति नदराणां न द्वित्वम् । आन्ददत् । आट्टिटत् । आर्विचत् ।
उञ्ज आर्जवे । उपदेशे दकारोपधः । भुजन्युञ्जा पाण्युपतापयोः
इति मूत्रे निपातनाहस्य वः । स चान्तरङ्गोऽपि द्वित्वविषये नन्द्राः
इति निषेधाच्चिदशब्दस्य द्वित्वे कृते प्रवर्तते नतु ततः प्राक् । दकारो-
च्चारणमामर्थात् । आञ्जिजत् । अजादेरित्येव नैह । अदिद्रपत् ॥

रभेरशब्दिलोः ७ । १ । ६३ ॥

रभेर्नुमाचि नतु शब्दिलोः । अररम्भत् ॥

लभेश्च ७ । १ । ६४ ॥

अललम्भत् । हेरचडि इति सूत्रे अचडि इत्युक्तेः कुत्वं न ।
अजीहयत् ॥

अत्स्मृद्वत्वरप्रथमृदस्तृस्पशाम् ॥

असस्मरत् । अददरत् । तपरत्वसामर्थ्यादत्र लघोर्न दीर्घः ॥

विभाषा वेष्टिचेष्टयोः ७ । ४ । ९६ ॥

अभ्यासस्यात्वं वा स्याच्चङ्परि णौ । अववेष्टत् अविवेष्टत् । अच-
चेष्टत् अचिचेष्टत् । भ्राजभास इत्यादिना वीपधाह्रस्वः । अविभ्रजत्
अबभ्राजत् । काण्पादयः प्रागुक्ताः तेषामुपधाह्रस्वो वा । अची-
कणत् अचकाणत् ॥

स्वापेश्चडिः ६ । १ । १८ ॥

प्यन्तस्य स्वपेश्चडिः संप्रसारणम् । असूपुपत् ॥

शाच्छासाह्वाव्यावेपां युक् ७ । ३ । ३७ ॥

णौ पुकोऽपवादः । शाययति । हाययति ॥

ह्रः संप्रसारणम् ६ । १ । ३२ ॥

सन्परे चङ्परि च णौ ह्रः संप्रसारणम् । अजूहवत् अजुहावत् ॥

लोपः पिवतेरीच्चाभ्यासस्य ७ । ४ । ४ ॥

पिवतेरुपधाया लोपः स्यादभ्यासस्य ईदन्तादेशश्च चङ्परि णौ ।
अपीप्यत् । अर्तिही इति पुक् । अर्पयति ह्यपयति । ब्लेपयति ।
रेपयति । यलोपः । क्नोपयति । क्ष्मापयति । स्थापयति ॥

तिष्ठतेरित् ७ । ४ । ५ ॥

उपधाया इदादेशश्चङ्परि णौ । अतिष्ठित् ॥

जिघ्रतेर्वा ७ । ४ । ६ ॥

अजिघ्रिपत् अजिघ्रपत् । उर्कृत् । अर्चकृतत् अर्चिकीर्तत् ।
अवीघृतत् अववर्तत् । अमीमृजत् अममार्जत् ॥

पातेणौ लुग्वक्तव्यः ❀ ॥

पुकोऽपवादः । पालयति ॥

वो विधूनने जुक् ७ । ३ । ३८ ॥

वातेर्हुक्स्याणौ कम्पेऽर्थे । वाजयति । कम्पे किम् । केशान्वा-
पयति ॥

विभाषा लीयतेः ॥

लीलोर्नुग्लुकावन्यतरस्यां स्नेहविपातने ७ । ३ । ३९ ॥

लीयतेर्लातिश्च क्रमानुग्लुकावागमौ वा णौ स्नेहद्रवे । विलीन-
यति । विलापयति विलालयति वा घृतम् । ली इति ईकारप्रक्षेपा-
दात्वपक्षे जुग्न । स्नेहद्रवे किम् । लोहं विलापयति ॥

प्रलम्भनाभिभवपूजासु लियो नित्यमात्वमाशिति
वाच्यम् ❀ ॥

लियः संमाननशालीनीकरणयोश्च १ । ३ । ७० ॥

लीङ्लियोर्ण्यन्तयोरात्मनेपदं स्यादकर्तृगेऽपि फले पूजाभिभव-
योः प्रलम्भने चार्थे । जटाभिर्लापयते । पूजामधिगच्छतीत्यर्थः ।
श्येनो वर्तिकाशुलापयते । अभिभवतीत्यर्थः । बालशुलापयते ।
वञ्चयतीत्यर्थः ॥

विभेतेर्हेतुभये ६ । १ । ५६ ॥

विभेतेरेच आत्वं वा प्रयोजकाद् । भयं चेत् ॥

भीस्म्योर्हेतुभये १ । ३ । ६८ ॥

प्यन्ताभ्यामाभ्यामात्मनेपदं स्याद्धेतोश्चेद् भयस्मर्यौ । सूने
भयग्रहणं धात्वर्थोपलक्षणम् मुण्डो भापयते ॥

भियो हेतुभये पुक् ७ । ३ । ४० ॥

भी ई इति ईकारः प्रश्लिष्यते ईकारान्तस्य भियः पुक् स्याण्णौ हेतुभये । भीषयते ॥

नित्यं स्मयतेः ६ । १ । ५७ ॥

स्मयतेरेचो नित्यमात्वं णौ हेतोः स्मये । जटिलो विस्मापयते । हेतोश्चेद् भयस्मयावित्युक्तेर्नेह । कुञ्चिकयै न भाययति । विस्माययति । कथं तर्हि विस्मापयन्विस्मितमात्मवृत्तौ इति । मनुष्यवाचा इति करणादेव हि तत्र स्मयः । अन्यथा शानजपि स्यात् । सत्यम् । विस्माययन् इत्येव पाठ इति साप्रदायिकाः । यद्वा मनुष्यवाक् प्रयोष्यकर्त्री विस्मापयते । तथा सिंहो विस्मापयन्निति प्यन्ताण्णौ शता इति व्याख्येयम् ॥

स्फायो वः ७ । ३ । ४१ ॥

णौ । स्फाययति ॥

इति १२४ अशाः ।

शदेरगतौ तः ७ । ३ । ४२ ॥

शदेर्णो तोऽन्तादेशः न तु गतौ । शातयति । गतौ तु गाः शादयति गोविन्दः । गमयतीत्यर्थः ॥

रुहः पोऽन्यतरस्याम् ७ । ३ । ४३ ॥

णौ । रोपयति । रोहयति ॥

क्रीड्जीनां णौ ६ । १ । ४८ ॥

एषामेच आत्वं णौ । क्रापयति । अध्यापयति । जापयति ॥

णौ च संश्रुडोः २ । ४ । ५१ ॥

सन्परे चङ्परे च णौ इडो गाङ्गा । अध्यजीगपत् । अध्यापिपत् ॥

सिध्यतेरपारलौकिके ६ । १ । ४९ ॥

ऐहलौकिकेऽयं विद्यमानस्य सिध्यतेरेच आत्वं णौ । अन्नं साधयति निष्पादयतीत्यर्थः । अपारलौकिके किम् । तापसः सि-

ध्यति । तत्त्वं निश्चिनोति तं प्रेरयति सेधयति तापसं तपः ॥

प्रजने वीयतेः ६ । १ । ५५ ॥

अस्यैच आत्वं वा णौ प्रजनेऽर्थे । वापयति वांययति वा गाः ।
पुरोवातः गर्भं ग्राहयतीत्यर्थः ॥

ऊदुपधाया गोहः ॥

गूहयति ॥

दोषो णौ ६ । ४ । ९० ॥

दुपः इति सुवचम् । दुष्यतेरुपधाया ऊणौ । दूपयति ॥

वा चित्तविरागे ६ । ४ । ९१ ॥

विरागोऽप्रीतता । चित्तं दूपयति दोषयति वा कामः । मितां
ह्रस्वः । तत्र केचिन्मितः प्रागुक्ताः । इदानीं सर्वं उच्यन्ते । तत्रादौ
त्वरत्यन्तास्त्रयोदशानुदात्ततः पित्तश्च । घट चेष्टायाम् । घटते ।
इत्यादिरूपाणि । ज्ञेयानि अनुवादरूपाणां तु स्वस्वगणे रूपाणि
भवन्ति । घटादयो मितः इति मित्संज्ञा । तत्फलं तु णौ मितां ह्रस्वः
इति चिष्णमुलोर्दीर्घोऽन्यतरस्याम् इति चोक्तम् । घटयति । वि-
घटयति । कथं तर्हि कमलवनोद्घाटनं कुर्वते ये प्रविघाटयिता ।
समुत्पतन्हरिदश्वः । कमलाकरानिव इत्यादि शृणु । घट संघाते
इति चौरादिकस्येदम् । नच तस्यैवार्थविशेषे मित्वार्थमनुवादौऽप्यभि-
ति वाच्यम् । नान्ये मितोऽहेतौ इति निषेधात् । अहेतौ स्वार्थे णिचि
ज्ञपादिव्यतिरिक्ताश्चुरादयो मितो नेत्यर्थः । व्यथ भयसंच-
लनयोः । प्रथ प्रख्याने । प्रस विस्तारे । म्रद् मर्दने । स्वद् स्वदने ।
स्वदनं विद्रावणम् । क्षजिगतिदानयोः । मित्त्वसामर्थ्यादनुपधा-
त्वेऽपि चिष्णमुलोः इति दीर्घविकल्पः । अक्षञ्जि अक्षाञ्जि । क्षञ्जं
क्षञ्जम् । क्षाञ्जं क्षाञ्जम् । क्षजेति अनिदितमपि चोपदेवः पठति । दक्ष
गतिर्हिसनयोः । योऽयं वृद्धिशैष्ययोरनुदात्तत्वे पठितस्तस्येहार्थ-
विशेषे मित्वार्थोऽनुवादः । ऋष कृपायां गतौ च । कदि-ऋदि-ऌदि
वैकल्ये । वैकल्ये इत्येके । प्रयोऽप्यनिदित इति नन्दी । इदित इति

स्वामी । कदि ऋदी-इदितौ । ऋद-ऋद् इति चानिदिताधिति
 मैत्रेयः । कदि-ऋदि-ऋदीनामाह्वानरोदनयोः परस्मै पादिपूक्तानां
 पुनरिह पाठो मित्त्वार्थ आत्मनेपदार्थश्च । अित्वरा संभ्रमे । घटा-
 दयः पितः । पित्वात् कृतसु अङ् वक्ष्यते । घटा व्यथा इत्यादि ।
 अथ फणान्ताः परस्मैपदिनः ॥ ज्वर रोगे । गड सेचने । गडति ।
 जगाड । हेड वेष्टने । हेड् अनादरे इत्यात्मनेपदिषु गतः । स एवो
 त्मृष्टानुबन्धोऽनूद्यतेऽर्थविशेषे मित्त्वार्थम् । परस्मैपादिभ्यो ज्वरादि-
 भ्यः प्रागेवानुवादे कर्त्तव्ये तन्मध्येऽनुवादसामर्थ्यात् परस्मैपदम् ।
 हेडति । जिहेड । गतौ, हिडयति । अहिडि अहीडि । अनादरे
 तु हेडयति । परे तु असांमदायिकोऽस्य पाठः । सति साम्प्रदा-
 यिकत्वे तु अपूर्वे एवायं नत्वनुवाद इत्याहुः । वट-भट परिमा-
 पणे । वट वेष्टने, भट भृतौ इति पठितयोः परिभाषणे मित्त्वार्थोऽ-
 नुवादः । नट नृतौ इत्यमेव पूर्वमपि पठितं तत्रायं विवेकः । पूर्वप-
 ठितस्य नाट्यमर्थः । यत्कारिषु नटव्यपदेशः । वाक्यार्थाभिनयो
 नाट्यम् । घटादौ तु नृत्तं नृत्यं चार्थः । यत्कारिषु नर्तकव्यप-
 देशः । पदार्थाभिनयो नृत्यम् । गात्रविक्षेपमात्रं नृत्तम् । केचित्तु
 घटादौ नट नतौ इति पठन्ति गतौ इत्यन्ये । णोपदेशपर्युदासवाक्ये
 भाष्यकृता नाटि इति दीर्घपाठात् घटादिर्णोपदेश एव । एक प्रती-
 घाते । स्तकति । चक वृत्तौ । वृत्तिप्रतीघातयोः पूर्वं पठितस्य वृत्ति-
 मात्रे मित्त्वार्थोऽनुवादः । आत्मनेपदिषु पठितस्य परस्मैपादिष्वनु-
 वादात्परस्मैपदम् । कत्वे हसने । एदित्वान्न वृद्धिः । अकृत्वीत् ।
 रगे शङ्कायाम् । लगे संगे । हगे-हृगे-पगे-ष्टगे-संगे-स्यगे संवरणे ।
 कगे नोच्यते । अस्यायमर्थ इति विशिष्य नोच्यते क्रियासामा-
 न्यार्थत्वात् । अनेकार्थत्वादित्यन्ये । अक-अग कुटिलायां गतौ ।
 कण-रण गतौ चकाण । रराण । चण-शण-श्रण दाने च । शण गतौ
 इत्यन्ये । श्रथ-श्रथ-ऋथ क्लृथ हिंसार्याः । जासिनिग्रहण इति सूत्रे
 कायेति मित्त्वेऽपि वृद्धिर्निपात्यते । काययति । मित्त्वं तु निपातना-
 त्परत्वात् चिष्णमुलोः इतिदीर्घे चरितार्थम् अक्रथि । अक्रायि ।

कथं ऋथम् । काथं प्राथम् । वन च हिंसायामिति शेषः । वनु च
 नोच्यते । वनु इत्यपूर्वं ष्वायं धातुर्नतु तानादिकस्यानुवादः ।
 उदित्तरणसामर्थ्यात् । तेन क्रियासामान्ये वनतीत्यादि । प्रवन-
 यति । अनुपमृष्टस्य तु मित्रविकल्पो वक्ष्यते । ज्वल दीप्तौ ।
 णप्रत्ययार्थं पठित एवायं मित्रार्थमनृद्यते । प्रज्वलयति । हल-
 लल चलने । प्रहलयति । प्रललयति । स्मृ आध्याने । चिंतायां
 पठितस्य आध्याने मित्रार्थोऽनुवादः । आध्यानमुत्कण्ठापूर्वकं
 स्मरणम् । हृ भये हृ विदारणे इति त्रयादेरयं मित्रार्थोऽनुवादः ।
 दृणन्तं प्रेरयति दारयति । भयादन्यत्र दारयति । धात्वन्तरमेवेदामिति
 मते तु दरतीत्यादि केचित् घटादौ अत्स्मृष्टत्वर इति सूत्रे दृ
 इति दीर्घस्थाने ह्रस्वं पठन्ति । तन्नैति माधवः । नृ नये । त्रयादिषु
 पठितस्यानुवादः । नयादन्यत्र, नारयति । श्रा पाके । श्रं इति
 कृतात्वस्य श्रा इत्यदादिकस्य च सामान्येनानुकरणम् । लुग्वि-
 करणालुग्विकरणयोरलुग्विकरणस्य लक्षणप्रदिपदोक्तयोः प्रतिपदो-
 क्तस्यैव ग्रहणम् इति परिभाषाभ्याम् । श्रपयति । विक्लेदयतीत्यर्थः ।
 पाकादन्यत्र श्रापयति । स्वेदयतीत्यर्थः ॥

इति १२५ अंशः ।

मारणतोपणनिशामनेषु ज्ञा ॥

निशामनं चाक्षुषज्ञानम् इति माधवः । ज्ञापनमात्रम् इत्यन्ये ।
 निशानेषु इति पाठान्तरम् । निशानं तीक्ष्णीकरणम् । एष्वेवार्थेषु
 जानातिर्मित् । ज्ञपमिच्च इति चुरादौ । ज्ञापनं मारणादिकं च
 तस्यार्थः । कथं, विज्ञापना भर्तृषु सिद्धिमेति इति तज्ज्ञापयत्याचार्यः
 इति च । शृणु माधवमतेऽचाक्षुषज्ञाने मित्राभावात् । ज्ञापनमात्रे
 मित्वमिति मते तु ज्ञा नियोगे इति चौरादिकस्य । धातूनामने-
 कार्थत्वात् । निशानेष्विति पठतां हरदत्तादीनां मते तु न काप्य-
 नुपपत्तिः ॥

कम्पने चलिः ॥

चल कम्पने इति ज्वलादिः । चलयति शाखाम् । कम्पना-
दन्यत्र तु शीलं चालयति । अन्यथा करोतीत्यर्थः । हरतीत्यर्थः
इति स्वामी । सूत्रं चालयति । क्षिपतीत्यर्थः । छदिर् ऊर्जने । छद्
अपवारणे । इति चौरादिकस्य स्वार्थे णिजभावे मित्त्वार्थोऽयमनु-
वादः । अनेकार्थत्वादूर्जने वृत्तिः । छदन्तं प्रयुंक्ते छदयति । बल-
वन्तं प्राणवन्तं वा करोतीत्यर्थः । अन्यत्र छादयति । अपवारयन्तं
प्रयुंक्त इत्यर्थः । स्वार्थे णिचि तु छादयति । बलीभवति प्राणीभ-
वति अपवारयति वेत्यर्थः ॥

जिह्वोन्मथने लडिः ॥

लड विलासे इति पठितस्य मित्त्वार्थोऽनुवादः । उन्मथनं ज्ञाप-
नम् । जिह्वाशब्देन पष्ठीतत्पुरुषः । लडयति जिह्वाम् । वृतीयात-
त्पुरुषो वा । लडयति जिह्वया । अन्ये तु जिह्वाशब्देन तद्व्यापारो
लक्ष्यते । समाहारद्वन्द्वोऽयम् । लडयति शत्रुम् । लडयति दधि ।
अन्यत्र लाडयति पुत्रम् । मदी हर्षग्लेपनयोः । ग्लेपनं दैन्यम् ।
देवादिकस्य मित्त्वार्थोऽयमनुवादः । मदयति । हर्षयति ग्लेपयति
वेत्यर्थः । अन्यत्र मादयति । चित्तविकारमुत्पादयतीत्यर्थः । ध्वन
शब्दे । मित्त्वार्थमयमनूद्यते । ध्वनयति घण्टाम् । अन्यत्र ध्वान-
यति । अस्पष्टाक्षरमुच्चारयतीत्यर्थः । अत्र भोजः दलिवलिस्खलि-
रणिध्वानित्रापिक्षपयश्च इति पपाठ । तत्र ध्वनिरणी उदाहृतौ ।
दल विशरणे । बल संवरणे । स्खल संचलने । त्रपूष् लज्जायाम्
इति गताः । तेषां णौ दलयति । बलयति । स्खलयति । त्रपयति ।
क्षे क्षये इत्यस्य कृतात्वस्य पुका निर्देशः । क्षपयति । स्वन अवतं-
सने । शब्द इति पठितस्यानुवादः । स्वनयति । अन्यत्र स्वानयति ।
घटादयो मितः । मित्संज्ञा इत्यर्थः ॥

जनीजूषूक्तसुरज्जोऽमन्ताश्च ॥

मितः इत्यनुवर्तते । जूष् इति पित्वनिर्देशाज्जीर्यतेर्ग्रहणम् । जृ-
णतेस्तु जारयति । केचित्तु जनीजूष्णसु इति पठित्वा णसु निर-
सन इति देवादिकमुदाहरन्ति ॥

ज्वलह्वलह्वलनमामनुपसर्गाद्वा ॥

एषां मित्त्वं वा । प्राप्तविभाषेयम् । ज्वलपति । ज्वालयाति ।
उपसृष्टे तु नित्यं मित्त्वम् । प्रज्वलयति । कथं तर्हि प्रज्वालयाति
उन्नामयतीति । घञन्तात् तत्करोति इति णौ । कथं संक्रामयतीति ।
मितां ह्रस्वः इति सूत्रे वा चित्तविरागे इत्यतो वा इत्यनुवर्त्य व्य-
वस्थितविभाषाश्रयणादिति वृत्तिकृत् । एतेन, रजो विश्रामयन्
राज्ञां धुर्यान्विश्रामयेति सः । इत्यादि व्याख्यातम् ॥

गलास्नावनुवर्मां च ॥

अनुपसर्गादेषां मित्त्वं वा । आद्ययोरप्राप्ते इतरयोः प्राप्ते विभाषा ॥

न कम्यमिचमाम् ॥

अमन्तत्वात्प्राप्तं मित्वमेषां न । कामयते । आमयति । चामयति ॥

शमोऽदर्शने ॥

शाम्यतिर्दर्शने मित्र । निशामयति रूपम् । अन्यत्र तु, प्रणयिनो
निशमय्य बधुः कथाः । कथं तर्हि, निशामय तदुत्पत्तिं विस्तरात्
गदतो मम इति । शम आलोचने इति चौरादिकस्य धातूनाम-
नेकार्थत्वाच्छ्रवणे वृत्तिः शाम्यतिवत् ॥

यमोऽपरिवेषणे ॥

यच्छ्रतिर्भोजनातोऽन्यत्र मित्र । आयामयति । द्रावयति ।
व्यापारयति वेत्यर्थः । परिवेषणे तु यमयति । ब्राह्मणान् भोजय-
तीत्यर्थः । पर्यवसितं नियमयन् इत्यादि तु नियमवच्छब्दात्तत्करो-
तीति णौ बोध्यम् ॥

स्वदिर् अवपरिभ्यां च ॥

मिन्नेत्येव । अवस्वादयति । परिस्वादयति । अपावपरिभ्यः
इति न्यासकारः । स्वामी तु न कामि इति नञमुत्तरात्रिसूत्र्यामनु-
वर्त्य शमः अदर्शने इति चिच्छेद । यमस्तु अपरिवेषणे मित्वमाह ।
तन्मते पर्यवसितं नियमयन् इत्यादि सम्यगेव । उपसृष्टस्य स्वदेशे-
दवादिपूर्वस्यैव इति नियमात्प्रस्वादयतीत्याह । तस्मात्सूत्रद्वय उदा-

हरणप्रत्युदाहरणयोर्व्यत्यासः फलितः । इदं च मतं वृत्तिन्यासादि-
विरोधादुपेक्ष्यम् । फण गतौ । न इति निवृत्तमसंभवात् । निषेधात्पू-
र्वमसौ न पठितः फणादिकार्यानुरोधात् । फणयति । इति घटादयः
समाप्ताः । फणेः प्रागेवेति केचित् । तेषां मते फाणयतीत्येव ॥

रञ्जैर्णौ मृगरमणे नलोपो वक्तव्यः ❀ ॥

मृगरमणमाखेटकम् । रजयति मृगान् । मृग इति किम् । रञ्ज-
यति पक्षिणः । रमणादन्यत्र तु रञ्जयति मृगांस्तृणदानेन । चुरादिषु
ज्ञपादिश्चञ् । चिस्फुरोर्णौ । चपयति चययतीत्युक्तम् । चिनोतेस्तु
चापयति चाययति । स्फारयति स्फोरयति । अपुस्फरत् अपु-
स्फुरत् ॥

इति १२६ अंशाः ।

उभौ साभ्यासस्य ८ । ४ । २१ ॥

साभ्यासस्यानितेरुभौ नकारौ णौ स्तो निमित्ते सति । प्राणिणत् ॥

ईर्ष्यतेस्तृतीयस्येति वक्तव्यम् ❀ ॥

तृतीयव्यञ्जनस्य तृतीयैकाच इति वार्थः । आद्ये पकारस्य
द्वित्वं वारयितुमिदम् । द्वितीये तु अजादेर्द्वितीयस्य इत्यस्यापवाद-
तया सन्नन्ते प्रवर्त्तते । ऐर्षियत् ऐर्षिष्यत् । द्वितीयव्याख्यायां
णिजन्ताच्चङिः पकार एवाभ्यासे श्रूयते हलादिः शेषात् । द्वित्वं तु
द्वितीयस्यैव । तृतीयाभावेन प्रकृतवार्त्तिकाप्रवृत्तेः ॥

बुधयुधनशजनेङ्प्रुद्रुस्रुभ्यो णेः १ । ३ । ८६ ॥

एभ्यो ण्यन्तेभ्यः परस्मैपदम् । णिचश्च इत्यस्यापवादः ।
बोधयति पद्मम् । बोधयति काष्ठानि । नाशयति दुःखम् । जनयति
मुखम् । प्रीतिं भक्तजनस्य यो जनयते इति त्वसाधु । अध्यापयति ।
प्रावयति । प्रापयतीत्यर्थः । द्रावयति । विलापयतीत्यर्थः । स्राव-
यति । स्पन्दयतीत्यर्थः ॥

निगरणचलनार्थेभ्यश्च १ । ३ । ८७ ॥

निगारयति । आशयति । भोजयति । चलयति । कम्पयति ॥

अदेः प्रतिषेधः ❀ ॥

आदयते देवदत्तेन । गतिबुद्धि इति कर्मत्वम् आदिखाद्योर्न
इति प्रतिषिद्धम् । निगरणचलन इति सूत्रेण प्राप्तस्यैवायं निषेधः ।
शेषादित्यकर्त्रभिप्राये परस्मैपदं स्यादेव । आदयत्यन्नं वदुना ॥

अणावकर्मकाच्चित्तवत्कर्तृकात् १ । ३ । ८८ ॥

प्यन्तात्परस्मैपदम् । शेते कृष्णमन्ते गोपी शाययति ॥

न पादम्याङ्च्यमाङ्च्यसपरिमुहुरुचिनृत्तिवद्वसः

१ । ३ । ८९ ॥

एभ्यो प्यन्तेभ्यः परस्मैपदं न । पिबतिर्निगरणार्थः । इतरे
चित्तवत्कर्तृकाकर्मकाः । नृत्तिश्चलनार्थोऽपि । तेन सूत्रद्वयेन प्राप्तिः ।
पाययते । दमयते । आयामयते । आयासयते । परिमोहयते ।
रोचयते । नर्तयते । वादयते । वासयते ॥

धेट उपसंख्यानम् ❀ ॥

धापयेते शिशुमेकं समीची । अकर्त्रभिप्राये शेषात् इति परस्मै-
पदं स्यादेव । वत्सान्पाययति पयः । दमयन्ती कमनीयतामदम् ।
भिक्षां वासयति ॥

णेरणौ यत्कर्म णौ चेत्स कर्तानाध्याने १ । ३ । ६७ ॥

प्यन्तादात्मनेपदं स्यादणौ या क्रिया सैव चेप्यन्तेनोच्यते ।
अणौ यत्कर्मकारकं । स चेण्णौ कर्ता स्यान्न त्वाध्याने । णिचश्च
इति सिद्धेऽकर्त्रभिप्रायार्थमिदम् । कर्त्रभिप्राये तु विभाषोपपदेन
प्रतिषेधेनेदमेवेप्यते । कर्तृस्थभावकाः कर्तृस्थक्रियाश्चोदाहरणम् ।
तथा हि । पश्यन्ति भवं भक्ताः । चाक्षुपज्ञानविषयं कुर्वन्तीत्यर्थः ।
प्रेरणांशत्यागे पश्यति भवः । विषयो भवतीत्यर्थः । ततो हेतुम-
ण्णिच् । दर्शयन्ति भवं भक्ताः । पश्यन्तीत्यर्थः । पुनर्ण्यर्थस्यावि-
चक्षायां दर्शयते भवः । इह प्रथमतृतीययोर्द्वितीयचतुर्थयोश्चावस्थ-
योस्तृत्तयोऽर्थः । तत्र तृतीयायां न तद् । क्रियासाम्येऽप्यणी

कर्मणो णौ कर्तृत्वाभावात् । चतुर्थ्यां तु तद् द्वितीयामादाय क्रियासाम्यात् । प्रथमायां कर्मणो भवस्य कर्तृत्वाच्च । एवम् आरोहन्ति हस्तिनं हस्तिपकाः । न्यग्भावयन्तीत्यर्थः । तत आरोहति हस्ती । न्यग्भवतीत्यर्थः । ततो णिच् । आरोहयन्ति । आरोहन्तीत्यर्थः । तत आरोहयते । न्यग्भवतीत्यर्थः । यद्वा । पश्यन्त्यारोहन्तीति प्रथमकक्षा प्राग्वत् । ततः कर्मण एव हेतुत्वारोपाणिञ्च । दर्शयति भवः । आरोहयति हस्ती । पश्यत आरोहतश्च प्रेरयतीत्यर्थः । ततो णिजभ्यां तत्प्रकृतिभ्यां च उपात्तयोर्द्वयोरपि प्रेषणयोस्त्यागे दर्शयते आरोहयते इत्युदाहरणम् । अर्थः प्राग्वत् । अत्र पक्षे द्वितीयकक्षायां न तद् । समानक्रियत्वाभावाणिजर्थस्याधिक्यात् । अनाध्याने किम् । स्मरति वनगुल्मं कोकिलः । स्मरयति वनगुल्मः । आगमेः क्षमायाम् । ष्यन्तात् आत्मनेपदम् । आगमयस्व तावत् । मा त्वरिष्ठा इत्यर्थः ॥

गृधिवञ्च्योः प्रलंभने १ । ३ । ६९ ॥

प्रतारणेऽर्थं ष्यन्ताभ्यामाभ्यामात्मनेपदम् । माणवकं गर्हयते । वञ्चयते । प्रलम्भने किम् । श्वानं गर्हयति । अभिकांक्षामस्योत्पादयतीत्यर्थः । अहिं वञ्चयति । वर्जयतीत्यर्थः ॥

मिथ्योपपदात्कृभोऽभ्यासे १ । ३ । ७१ ॥

णेः इत्येव । पदं मिथ्या कारयते । स्वरादिदुष्टमसकृदुच्चारयतीत्यर्थः । मिथ्येति किम् । पदं सुष्ठु कारयति । अभ्यासे किम् । पदं सकृन्मिथ्या कारयति ॥

णौ गमिर्बोधने २ । ४ । ४६ ॥

इणो णौ गमिर्नर्तु बोधने । गमयति । बोधने तु प्रत्याययति । इण्वदिकः । अधिगमयति ॥

हनस्तोऽचिण्णलोः ७ । ३ । ३२ ॥

हन्तेस्तोऽन्तादेशश्चिण्णल्वर्जे ञिति णिति च । हो हन्तेरिति कुत्वम् । घातयति । निवृत्तप्रेषणाद्घातोर्हेतुमण्णौ शुद्धेन तुल्योऽर्थः ।

तेन, प्रार्थयन्ति शयनोत्थितं प्रिया इत्यादि सिद्धम् । एवं सदर्म-
केषु सर्वेषुहाम् ॥ इति णिजन्ताः ॥

इति १२७ अंशाः ।

अय सन्नन्ताः । अत्रुमिच्छति । घस्त्व इडमावः सस्य तः ।
जिघत्सति ॥

रुद्विदमुपग्रहिस्वपिप्रच्छः संश्च १ । २ । १८ ॥

एभ्यः संश्च क्त्वा च कितौ । रुरुदिपति । विविदिषति । मुमु-
पिषति । सनिग्रहगुहोश्च । ग्रहिज्येति संप्रसारणम् । सनः पत्व-
स्यासिद्धत्वाद्भ्रमावः । जिघृक्षति । सुपुप्सति ॥

किरश्च पञ्चभ्यः ७ । २ । ७५ ॥

कृगृहृद्धृद्प्रच्छ एभ्यः सन इद् । पिपृच्छिपति । चिकरिपति ।
जिगारिपति । जिगालिपति । अत्रेटो दीर्घो नेष्टः । दिदरिपते ।
दिधरिपते । उदिधीर्धुरिति तु भ्वादेर्धृद्धृजोर्ज्ञेयम् ॥

हलन्ताच्च १ । २ । १० ॥

इक्समीपाद्दलः परो श्लादिः सन् कित् । गुह् । जुघुक्षति ।
विभित्सति । इकः किम् । यियक्षते । श्ल् किम् । विवर्द्धिपते ।
हलग्रहणं जातिपरम् । वृह्-तिवृक्षति तिवृंहिपति । संलिटोर्जेरिति
कुत्वम् । अज्ज्ञन्निति दीर्घः । जिगीपति । जिघांसति । विभाषा
चेः । चिकीपति । चिचीपति ॥

सनि च २ । ४ । ४७ ॥

इणो गमिः सनि नतु बोधने । जिगमिपति । बोधने-प्रतीपि-
पति । इण्वदिकः । अधिजिगमिपति । कर्माणि तद् । परस्मैपदे-
ष्वित्युक्तेर्नेट् । अज्ज्ञन्निति दीर्घः । जिगांसाते । अधिजिगांसाते ।
इडिणिकादेशगतेरित्युक्तेर्गच्छतेर्न दीर्घः । जिगंसाते । संजिगंसते ॥

इडश्च २ । ४ । ४८ ॥

गमिः सनि । अधिजिगांसते ॥

रलोव्युपधाद्धलादेः संश्व १ । २ । २६ ॥

उकारेकारोपधाद्धलादेरलन्तात् परी क्त्वासनी सेदौ वा कितौ ।
द्युतिस्वाप्योरिति संप्रसारणम् । द्युतिपते द्योतिपते । रुचि-
पते रुरोचिपते । लिलिखिपति लिलेखिपति । रलः किम् दिदे-
विपति । व्युपधात् किम् । विवर्तिपते । हलादेः किम् । एपिपिप-
ति । इह नित्यमपि द्वित्वं गुणेन वाच्यते । उपधाकार्यं हि द्वित्वा-
त्प्रबलम् । ओणेऋदित्करणस्य सामान्यापेक्षज्ञापकत्वात् ॥

तनिपतिदरिद्रातिभ्यः सनो वा इङ्गाच्यः ❀ ॥

तनोतेर्विभाषा ६ । ४ । १७ ॥

अस्योपधायाः दीर्घो वा झलादौ सनि । तितांसति तितंसति
तितनिपति ॥

आशंकायां सन् वक्तव्यः ❀ ॥

श्वा मुमूर्षति । कूलं पिपतिपति ॥

सनिमीमाधुरभलभशकपतपदामच इस् ७ । ४ । ५४ ॥

एपामच इस् सादौ सनि ॥

अत्र लोपोऽभ्यासस्य ७ । ४ । ५८ ॥

सनिमीमेत्यारभ्य यदुक्तं तत्राभ्यासस्य लोपः । स्कोरितिस-
लोपः । पित्सति । दिदरिद्रिपति । दिदरिद्रासति । डुमिञ् मीञ्
आभ्यां सन् । कृतदीर्घस्य मिञोऽपि मीरूपत्वात् सः सीति तः ।
मित्सति मित्सते । मा मित्सति । माङ् मेङ् मित्सते । दो दाण्
दित्सति । देङ् दित्सते । दाञ् दित्सति दित्सते । धेद् धित्सति ।
धाञ् धित्सति धित्सते । रिप्सते । लिप्सते । शकल शिक्षति ।
शिक्षेर्जिज्ञासायाम् आत्मनेपदमनुवर्तते । धनुषि शिक्षते । शक्तौ
भवितुमिच्छतीत्यर्थः । शकादिवादिः उभयपदी । शिक्षति शिक्षते ।
पित्सते ॥

राधोऽर्हिसायां सनीस् वाच्यः ❀ ॥

रित्सति । अहिंसायां तु आरिरात्सति ॥

इद् सनि वा ७ । २ । ४१ ॥

वृड्वृञ्भ्यामृदन्ताश्च सन इङ्गा । तितरिषति तितरीषति ।
तितीर्षति । विवरिषति विवरीषति बुवूर्षति । वृङ् बुवूर्षते विवरिषते ।
दुध्वूर्षति ॥

स्मिपूङ्ङ्वशां सनि ७ । २ । ७४ ॥

स्मिङ् पूङ् ऋ अञ्जू अञ् एभ्यः सन इद् । सिस्मायिपते । पिप-
विपते अरिरिषति । इह रिस्शब्दस्य द्वित्वम् । इस् इति सनोऽव्ययः
कार्यभागिति कार्पिणो निमित्तत्वायोगात् द्विर्वचनेचीति न प्रवर्तते ।
अञ्जिजिषति । अशिशिषते । उभौ साभ्यासस्य । प्राणिणिषति ।
ओः पुयण्यपरे । पिपावयिषति । यियावयिषति । विमावयि-
षति । रिरावयिषति । लिलावयिषति । जिजावयिषति । पुयण्जी-
ति किम् । नुनावयिषति । अपरे किम् । बुभूषति । स्रवतीतीत्वं
वा । सिस्त्रावयिषति । सुस्त्रावयिषतीत्यादि । अपरे इत्येव । शुश्रू-
षते । पूर्ववत्सनः । निविषिक्षते । शदेः शितः म्रियतेर्लुङ्गलिङ्गोश्चेति
सूत्रद्वये सनो न इत्यनुवर्त्य वाक्यभेदेन व्याख्येयम् । तेन शदमृ-
डोस्तङ् न । शिशत्सति । मुमूर्षति ॥

ज्ञाश्रुस्मृदशां सनः १ । ३ । ५७ ॥

सन्नन्तानामेपामात्मनेपदम् । धर्मं जिज्ञासते । शुश्रूषते । सुस्मूर्षते
दिदक्षते ॥

नानोर्ज्ञः १ । ३ । ५८ ॥

पुत्रमनुजिज्ञासति । पूर्वसूत्रस्यैवायं निषेधः । अनन्तरस्येति न्या-
यात् । तेनेह न । सर्पिपोऽनुजिज्ञासते । सर्पिपा प्रसर्त्तितुमिच्छति
इत्यर्थः । पूर्ववत्सन इति तद् । अकर्मकाचेति केवलादिधानात् ॥

प्रत्याङ्भ्यां श्रुवः १ । ३ । ५९ ॥

आभ्यां मन्नन्ताच्छ्रुव उक्तं न । प्रतिशुश्रूषति । आशुश्रूषति ।
कर्मप्ररचनीयात् स्यादेव । देवदत्तं प्रतिशुश्रूषते । शैपिकान्मतुवर्थी

याच्छैपिको मनुवार्थिकः । सरूपः प्रत्ययो नेष्टः सन्नन्तान्न सनि-
ष्यते ॥ तेन शालीये भव इति वाक्यमेव । नतु च्छान्ताच्छः ।
विरूपस्तु अहिच्छत्रे भव आहिच्छत्रीयः । धनवानस्यास्ति इत्येव
विरूपस्तु स्यात् । दण्डिमान्।इच्छासन्नन्तान्न सन् । स्वार्थसन्नन्तात्तु
स्यादेव । जुगुप्सिपते ॥ इति सन्नन्ताः ॥

इति १२८ अंशाः ।

अथ यङन्ताः । धातोरेकाच इत्यादिना यद्द्विविधाने धातोरित्यु-
क्तिरार्द्धधातुकत्वाय । तेन श्रुवो वचिरित्यादि । एकाचः किम् । पुनः
पुनर्जागर्ति । हलादेः किम् । भृशमीक्षते । भृशं शोभते रोचते इत्यत्र
यद् निति भाष्यम् । पौनःपुन्ये तु स्यादेव । शोशुभ्यते । रोरुच्यते ॥

सूचिसूत्रिमूत्र्यत्यर्त्यशूर्णोतिभ्यो यङ् ॥

सोसूच्यते । सोसूत्र्यते । सोमूत्र्यते । एकाच्त्वाभावेन पोपदेशत्वा-
भात्पस्त्वं नायस्य हलः । आदेः परस्य । अतो लोपः । सोसूचाश्चक्रे ।
सोसूचिता । दीर्घो कितः । अटाट्यते ॥

यङि च ७ । ४ । ३० ॥

अर्त्तः संयोगादेश्चक्रतो गुणो याङि । यकारपरस्य रेफस्य न
द्वित्वनिषेधः । अरार्यते इति भाष्योदाहरणात् । अरार्यते । अरा-
रिता । ऊर्णोनूयते । वेभिद्यते । अल्लोपस्य स्थानिवत्त्वान्नोप-
धागुणः । वेभिदिता ॥

नित्यं कौटिल्ये गतौ ३ । १ । २३ ॥

गत्यर्थात्कौटिल्येऽर्थे एव यद् नतु क्रियासमभिहारे । कुटिलं
व्रजति वात्रज्यते ॥

लुपसदचरजपजभदहदशगृभ्यो भावगर्हायाम् ३ । १ । २४ ॥
एभ्यो धात्वर्थगर्हायामेव यद् । गर्हितं लुम्पति लोलुप्यते ।
सासद्यते ॥

जपजभदहदशभञ्जपशां च ७ । ४ । ८६ ॥

अभ्यासस्य नुक् यङ्लुकोः । नुकानुस्वारो लक्ष्यते स च
पदान्तवद्वाच्यः । जङ्गप्यते । जंजप्यते इत्यादि ॥

चरफलोश्च ७ । ४ । ८७ ॥

अभ्यासस्यातो नुक् यङ्लुकोः ॥

उत्परस्यातः ७ । ४ । ८८ ॥

चरफलोरभ्यासात्परस्यात् उत् यङ्लुकोः । हलि चेति दीर्घः ॥
चञ्चूर्यते । चंचूर्यते । पम्फुल्यते पंफुल्यते ॥

ओ यङि ८ । २ । २० ॥

गिरते रेफस्य लृवं यङि । जेगिल्यते । घुमास्था इतीत्वम् ।
देदीयते । पेपीयते । सेपीयते । विभाषा श्वेः । शोशूयते । शी-
शीयते । यङि च । सास्मर्यते । रीडृतः । चेक्रीयते । मुद् । संचे-
स्कीयते ॥

नुगतोऽनुनासिकान्तस्य ७ । ४ । ८५ ॥

अनुनासिकान्तस्यांगस्य योऽभ्यासोऽदन्तस्तस्य नुक् । नुकाऽनु-
स्वारो लक्ष्यते इत्युक्तम् । यंयम्यते यंयम्यते । तपरत्वसामर्थ्यात्
भूतपूर्वदीर्घस्यापि न । वामाम्यते । ये विगापा । जाजायते जङ्ग-
न्यते । हन्तेर्हिसायां यङि घ्नी । जेघ्नीयते । अन्यत्र जंघन्यते ॥

रीगृदुपधस्य च ७ । ४ । ९० ॥

ऋदुपधस्य धातोरभ्यासस्य रीक् यङ्लुकोः । वरीवृत्यते । क्षु-
भ्रादौ, नरीनृत्यते । जरीगृह्यते । चलीकल्प्यते ॥

रीगृत्वत इति वक्तव्यम् ❀ ॥

वरीवृत्यते । परीगृच्छते ॥

ईं घ्राध्मोः ७ । ४ । ३१ ॥

जेघ्नीयते । देघ्नीयते ॥

अयङि च ङिति ७ । ४ । २२ ॥

गीशोऽभ्यदादेशो यादौ ङिति परे । शाशम्यते । अभ्यासस्य

ह्रस्वः । ततो गुणः । डोढौक्यते । तोत्रौक्यते । इति यङन्ताः ।
 अथ यङ्लुगन्ताः । गर्द । जागर्दीति । जागर्त्ति । जागर्त्तः ।-हौ
 जागर्द्धि । सिपि दश्चेति रुर्वा । रोरि द्रूलोप इति दीर्घः । अजागाः ।
 अजागर्त् । नानदीति । नानत्ति । सिपि अनानः । अनानत् ।
 लुङ् अनानादीत् अनानदीत् । चिती । नाभ्यस्तस्येति गुणनिषेधः ।
 चेचितीति चेचेत्ति । अचेचितीत् अचेचेत् अचेचेः । अचे-
 चेत् । लुङि अचेचेतीत् ॥

रुग्निकौ च लुकि ७ । ४ । ९१ ॥

ऋदुगधस्य धातोरभ्यासस्य रुक् रिक् रीक् एते आगमाः
 यङ्लुकि ॥

ऋतश्च ७ । ४ । ९२ ॥

ऋदन्तधातोरपि तथा । वर्वृतीति वरिवृतीति वरीवृतीति । वर्व-
 र्त्ति । वर्वर्तिता । गणनिर्दिष्टत्वान्न वृद्धञ्च इति न । वर्वर्तिष्यति । अव-
 र्वृतीत् । अवर्वर्त् । सिपि दश्चेति रुत्वपक्षे रोरि । अवर्वाः । गणनि-
 र्दिष्टत्वादङ् न । अवर्वर्त्तीत् ३ । चर्क्करीति ३ । चर्क्कर्त्ति चरिक्कर्त्ति
 चरीक्कर्त्ति । चर्कृतः ३ । चर्कृति ३ । चर्कराश्चकार ३ । चर्करिता ३ ।
 अचर्करीत् ३ । अचर्कः ३ । चर्क्यात् ३ । आशिपि रिङ् । च-
 र्कियात् ३ । अचर्कारीत् ३ । ऋतश्चेति तपरन्वान्नेह । कृ विक्षेपे ।
 चाकर्त्ति । तातर्त्ति । तातीर्त्तः । तातिरात् । तातीर्हि । तातराणि ।
 अतातरीत् । अतातः । अतातीर्त्ताम् । अतातरुः । अतातारीत् ।
 अतातारिष्टामित्यादि । जङ्गमीति । जङ्गन्ति । अनुदात्तोपदेशेत्य-
 नुनासिकलोपः । जङ्गतः । जङ्गति । म्वोश्च । जङ्गन्मि । जङ्गन्वः ।
 एकाजग्रहणान्नेष्णिपेधः । जङ्गमिता । अनुनासिकलोपस्याभीयत्वे-
 नासिद्धत्वान्न हेर्लुक् । जङ्गहि । मो नः । अजङ्गन् । अनुबन्धनिर्देशान्न
 च्लेरङ् । ह्यन्तेति न वृद्धिः । अजङ्गमीत् । अजङ्गमिष्टाम् । हनो
 यङ्लुक् । यद्यपि अभ्यासाच्चेति कुत्वं हन्तेरिति शितवन्तमनुवर्त्य
 विहितं तथापि यङ्लुकि भवत्येवेति न्यासः । शितपा शपेति त्वनित्यं

गुणो यद्भुकोरिति सामान्यापेक्षज्ञापकात् । जंघनीति जंघन्ति ।
जंघतः । जंघति । जंघनिता । शितपा निर्देशाज्जादेशो न । जंघहि ।
अजंघनीत् । अजंघन् । जंघन्यात् । आशिपि तु । वध्यात् । अव-
धीत् । अवधिष्टामित्यादि । वधादेशस्य द्वित्वं न स्थानिवत्त्वेन अ-
नभ्यासस्येति निषेधात् । तद्धि समानाधिकरणं धातोर्विशेषणम् ।
बहुव्रीहिवलात् आङ्पूर्वात्तु आङो यमहन इत्यात्मनेपदम् । आजं-
घते।लुका लुप्ते प्रत्ययलक्षणत्वाभावात् स्वपिस्यमीत्युत्वं न रुदादिभ्य
इति गणनिर्दिष्टत्वादिण् । सास्वपीति सास्वप्ति । सास्वप्तः । सा-
स्वपति । असास्वपीत् । असास्वप् । सास्वप्यात् । आशिपि वचि-
स्वपीत्युत्वम् । सासुप्यात् । असास्वपीत् । असास्वपीत् । गृह
ग्रहणे । जर्गृहीति ३ । जर्गृद्धि । जर्गृद्धः ३ । जर्गृहति ३ । अज-
घर्त् ३ । गृह्णातेस्तु जागृहीति । जाग्रद्धि । तसादौ ङिन्निमित्तं
सम्प्रसारणम् । तस्य बहिरङ्गत्वेनासिद्धत्वान्न रुगादयः । जागृद्धः ।
जागृहति । जाग्रहीपि । जाग्रक्षि । जाग्रहिता । ग्रहो लिटि इति
दीर्घस्तु न तत्रैकाच इत्यनुवृत्तेः । माधवस्तु दीर्घमाह । तद्भाष्य-
विरुद्धम् । जर्गृधीति ३ । जर्गृद्धि ३ । जर्गृद्धः ३ । जर्गृधति ३ ।
जर्गृधीपि ३ । जर्गृद्धि ३ । अजर्गृधीत् ३ । इडभावे गुणः ।
इडङ्चादिलोपः भष्मावः । जश्त्वत्त्वे।अजर्घर्त् ३ । अजर्गृद्गाम् ।
गिपि दश्चेति पक्षे रुत्वम् । अजर्घाः ३ । अजर्गृधीत् ३ । अजर्ग-
र्द्धिष्टाम् ३ ॥ इति यद्भुगन्ताः ॥

इति १२९ अंशाः ।

नः क्ये । मन्निपानपरिभाषया क्यचो यम्य लोपो न । गव्यां-
चकार । गव्यिता । नाव्यांचकार । नाव्यिता । नलोपः । राजीय-
नि । प्रन्ययोत्तग्नदयोश्च । त्वयति । मयति । एकार्थयोः इत्येव ।
युष्मयति । अम्मयति । इति च। गीर्षयति पृषयति। धातोः इत्येव ।
नेह । दिवमिच्छति दिव्यति । इह पुगमिच्छति पुर्यनीति माधवोक्तं

भत्युदाहरणं चिन्त्यम् । षृर्गिरोः साम्यात् । दीव्यतीति दीर्घस्तु
नाचः प्रामादिक एव । अदस्यति ॥

रीडृतः ॥

कर्त्रीयति ॥

क्यच्च्योश्च ६ । ४ । १५२ ॥

हलः परस्यापत्ययकारस्य लोपः क्ये च्चौ च । इति वक्ष्यमाणयज्ञो
रस्य लोपः । गार्गीयति । वाच्यति । अकृतसार्व इति दीर्घः ।
ह्वीयति ।ः समिध्यति । क्यस्य विभाषा । आदेः परस्य अतो
श्लेषः । तस्य स्थानिवत्त्वाल्लघूपधगुणो न । समिधिता समिध्यता ॥

मान्तप्रकृतिकसुवन्तादव्ययाच्च क्यच् न ❀ ॥

किमिच्छति । इदमिच्छति । स्वरिच्छति ॥

अशनायोदन्यधनायावुभुक्षापिपासागर्धेषु ७।४।३४ ॥

क्यजन्ता निपात्यन्ते । अशनायति । उदन्याति । धनायति ।
वुभुक्षादौ किम् । अशनीयति । उदकीयति । धनीयति ॥

अश्वक्षीरवृषलवणानामात्मप्रीतौ क्यचि ७।१।५१ ॥

एषां क्यचि असुगागमः । अश्ववृषयोर्मैथुनेच्छायाम् । अश्व-
स्यति वडवा । वृषस्यति गौः ॥

क्षीरलवणयोर्लालसायाम् ❀ ॥

क्षीरस्यति बालः । लवणस्यत्युप्ः ॥

सर्वप्रातिपदिकानां क्यचि लालसायां सुगसुकौ ❀ ॥

दाधिस्यति दध्यस्यति । मधुस्यति मध्वस्यति । क्लाम्यच्च । पुत्र-
काम्यति । इह यस्य हलः इति लोपो न । अनर्थकत्वात् । यस्य इति
संघातग्रहणमित्युक्तम् । यशस्काम्यति । सर्पिष्काम्यति । मान्ता-
व्ययेभ्योऽप्ययम् । किंकाम्यति । स्वःकाम्यति । आचारे क्यङु-
क्तः । तत्र मान्तस्य लोपस्तु क्यङ्संनियोगशिष्टः । स च व्यवस्थितः ।
ओजसोऽप्सरसो नित्यमितरेषां विभाषया । ओजःशब्दो वृत्तिवि-

पये तद्धति । ओजायते । अप्सरायते । यशायते । यशस्यते ।
 सर्वप्रातिपदिकेभ्यः क्विबुक्तः । कविरिवाचरति कवयति । आशी-
 लिङि कवीयात् । सिचि वृद्धिः इत्यत्र धातोः इत्यनुवर्त्य धातुरेव
 यो धातुरिति व्याख्यानान्नामधातान् वृद्धिरिति कैयटादयः । अक-
 वयीत् । माधवस्तु नामधातोरपि वृद्धिमिच्छति । अकवायीत् ।
 विरिव वयति । विवाय । विव्यतुः । अवयीत् अवायीत् । श्रीरिव
 श्रयति । शिश्राय । शिश्रियतुः । पितेव पितरति । आशिपि रिङ् ।
 पित्रियात् ॥

अनुनासिकस्य क्विञ्जलोः क्विति ६ । ४ । १५ ॥

अनुनासिकान्तस्योपधाया दीर्घः कौ झलादौ च क्विति । इद-
 मिवाचरति इदामति । राजेव राजानति । पन्था इव पथीनति ।
 मथीनति । ऋभुक्षीणति ॥

भृशादिभ्यो भुव्यच्चेर्लोपश्च हलः ३ । १ । १२ ॥

अभूततद्भावविषयेभ्यो भृशादिभ्यो भवत्यर्थे क्यङ् । हलन्ताना-
 नामेषां लोपश्च । अभृशो भृशो भवति भृशायते । अच्चेः इति
 पर्युदासबलात् अभूततद्भावे इति लब्धम् । तेनेह न । क्व दिवा
 भृशा भवन्ति । ये रात्रौ भृशा नक्षत्रादयस्ते दिवा क्व भवन्तीत्यर्थः ।
 सुमनस् अस्य सलोपः । सुमनायते । चुरादौ संग्राम युद्धे इति प-
 ठ्यते । तत्र संग्राम इति प्रातिपदिकम् । तस्मात् तत्करोति इति
 णिच् सिद्धः । तत्संनियोगेनानुबन्ध आसज्यते । युद्धे योऽयं
 ग्रामशब्द इत्युक्तेऽपि सामर्थ्यात्संग्रामशब्दे लब्धे विशिष्टपाठो
 ज्ञापयति । उपसर्गसमानाकारं पूर्वपदं धातुसंज्ञाप्रयोजके प्रत्यये
 चिकीर्षिते पृथक् क्रियते इति । तेन मनःशब्दात्प्रागद् । स्वमना-
 यत । उदमनायत ॥

लोहितादिडाज्भ्यः क्यप् ३ । १ । १३ ॥

लोहितादिभ्यो डाजन्ताच्च भवत्यर्थे क्यप् ॥

वा क्यपः १ । ३ । ९० ॥

क्यपन्तात्परस्मैपदं वा । लोहितायति लोहितायते । अत्र अ-
च्वेः इत्यनुवृत्त्याऽभूततद्भावविषयत्वं लब्धं तद्य लोहितशब्दस्यैव
विशेषणम् । ननु डाचोऽसंभवात् । नाप्यादिशब्दग्राह्याणां तस्य प्रत्या-
ख्यानात् । तथा च वार्तिकम् । लोहितडाजभ्यः ययच्चचनं भृशा-
दिष्वितराणि इति । न चैवं काम्यच इव क्यपोऽपि ककारः श्रूयेत ।
उच्चारणसामर्थ्यादिति वाच्यम् । तस्यापि भाष्ये प्रत्याख्यानात् ।
पटपटायति पटपटायते । कृभ्वस्तियोगं विनापीह डाच् । डाज-
न्तात्क्यपो विधानसामर्थ्यात् ॥

कर्मणो रोमन्थतपोभ्यां वर्तिचरोः ३ । १ । १५ ॥

रोमन्थतपोभ्यां कर्मभ्यां क्रमेण वर्तनायां चरणे चाथे क्यङ् ।
रोमन्थं वर्तयति रोमन्थायते ॥

हनु चलन इति वक्तव्यम् ❀ ॥

चर्वितस्याकृष्य पुनश्चर्वणमित्यर्थः । नेह । कीटो रोमन्थं
वर्तयति । अपानप्रदेशान्निःसृतं द्रव्यमिह रोमन्थः । तदश्राती-
त्यर्थः इति कैयटः । वर्तुलं करोतीत्यर्थः इति न्यासकारहरदत्तो ।
तपसः परस्मैपदं च । तपश्चरति तपस्यति ॥

वाष्पोष्मभ्यामुद्गमने ३ । १ । १६ ॥

आभ्यां कर्मभ्यां क्यङ् । वाष्पमुद्गमति वाष्पायते । ऊष्मायते ॥

फेनाच्चेति वाच्यम् ❀ ॥

फेनायते ॥

शब्दवैरकलहाभ्रकण्वमेघेभ्यः करणे ३ । १ । १७ ॥

एभ्यः कर्मभ्यः करोत्यर्थे क्यङ् । शब्दं करोति शब्दायते ।
पक्षे तत्करोति इति णिजपीष्यत इति न्यासः । शब्दयति ॥

सुदिनदुर्दिननीहारेभ्यश्च ❀ ॥

सुदिनायते ॥

इति १३० अंशाः । इति तृतीयाध्यायस्य प्रथमः पादः ।

सुखादिभ्यः कर्तृवेदनायाम् ३ । १ । १८ ॥

सुखादिभ्यः कर्मभ्यो वेदनायामर्थे क्यङ् । वेदनाकर्तुरेव चेत् सुखादीनि । सुखं वेदयते सुखायते । कर्तृग्रहणं किम् । परस्य सुखं वेदयते ॥

नमोवरिवश्चित्रङः क्यच् ३ । १ । १९ ॥

करणे इत्यनुवृत्तेः क्रियाविशेषे पूजायां परिचर्यायामाश्चर्ये च । नमस्यति देवान् । पूजयतीत्यर्थः । वरिवस्यति गुरुन् । शुश्रूषत इत्यर्थः । चित्रीयते । विस्मयत इत्यर्थः । विस्मापयत इत्यन्ये ॥

पुच्छभाण्डचीवराणिङ् ३ । १ । २० ॥

पुच्छाद्दुदसने व्यसने पर्यसने च । विविधं विरुद्धं बोत्क्षेपणं व्यसनम् । उत्पुच्छयते । विपुच्छयते । परिपुच्छयते ॥

भाण्डात्समाचयने ❀ ॥

संभाण्डयते । भाण्डानि समाचिनोति । राशीकरोतीत्यर्थः । समवभाण्डत ॥

चीवरादर्जने परिधाने च ❀ ॥

सञ्चीवरयते भिक्षुः । चीवराण्यर्जयति परिधत्ते वेत्यर्थः ॥

मुण्डमिश्रश्लक्ष्णलयणव्रतवस्त्रहलकलकृततूस्तेभ्यो णिच् ३ । १ । २१ ॥

कृत्ये । मुण्डं करोति मुण्डयति । व्रताद्भोजनतन्निवृत्त्योः । पयः शूद्रान्नं वा व्रतयति । वस्त्रात्समाच्छादने संवस्त्रयति । हल्यादिभ्यो ग्रहणे । हलिकलयोरदन्तत्वं च निपात्यते । हलिं कलिं वा गृह्णाति हलयति । कलयति । महद्दलं हलिः । परत्वाद्दृष्टौ सत्यामपीष्वद्भावेऽमेव लुप्यते । अतः सन्वद्भावेदीर्घो न । अजहलत् । अचकलत् । कृतं गृह्णाति कृतयति । तूस्तानि विहन्ति वितूस्तयति । तूस्तं केशा इत्येके । जटीभृताः केशा इत्यन्ये । पापमित्यपरे । मुण्डादयः सत्यापपाश इत्यत्रैव पठितुं युक्ताः । प्रातिपदिकाद्वा

त्वर्थे इत्येव सिद्धे केपाचिद्ग्रहणं सापेक्षेभ्योऽपि णिजर्थम् । मुण्ड-
यति माणवकम् । मिश्रयत्यन्नम् । श्लक्ष्णयति वस्त्रम् । लवणयति
व्यञ्जनमिति । हलिकलयोरदन्तत्वार्थम् । सत्यस्यापुगर्थम् । केपाचित्तु
प्रपञ्चार्थम् । सत्यं करोत्याचष्टे वा सत्यापयति ॥

अर्थवेदयोरप्यापुग् वक्तव्यः ❀ ॥

अर्थापयति । वेदापयति । पाशं विमुञ्चति विपाशयति । रूपं
पश्यति रूपयति । वीणयोपगायत्युपवीणयति । तूलेनानुकुष्णा-
त्यनुतूलयति । तृणाग्रं तूलेनानुघट्टयतीत्यर्थः । श्लोकैरुपस्तौति
उपश्लोकयति । सेनयाभियाति अभिपेणयति । उपसर्गात्सुनोति
इति षः । अभ्यपेणयत् । प्राक्सितात् इति षः । अभिपिपेणयि-
पति । स्थादिष्वभ्यासेन च इति षः । लोमान्यनुमार्ष्टि अनुलोम-
यति । त्वच सवरणे । घः । त्वच गृह्णाति त्वचयति । वर्मणा सनहति
संवर्मयति । वर्णं गृह्णाति वर्णयति । चूर्णैरवध्वंसते अवचूर्णयति ॥

प्रातिपदिकाद्वात्वर्थे बहुलमिष्टवच्च ॥

प्रातिपदिकाद्वात्वर्थे णिच् । इष्टे यथा प्रातिपदिकस्य पुंवद्भाव-
मावटिलोपविन्मतुब्लोपयणादिलोपप्रस्थस्फाद्यादेशभसंज्ञास्तद्गुणा-
वपि । पटुमाचष्टे पटयति । परत्वादृद्धौ सत्या टिलोपः । अपीप-
टत् । णौ चडि इत्यत्र भाष्ये तु वृद्धेलोपो बलीयान् इति स्थितम् ।
अपपटत् ॥

तत्करोति तदाचष्टे ॥

पूर्वस्य प्रपञ्चः । करोत्याचष्ट इति धात्वर्थमात्रं णिजर्थः । लडर्थ-
स्त्वविवक्षित' ॥

तेनातिक्रामति ॥

अश्वेनातिक्रामति अश्वयति । हस्तिनातिक्रामति हस्तयति ॥

धातुरूपं च ॥

णिच्प्रकृतिर्धातुरूप प्रतिपद्यते । चशब्दोऽनुक्तसमुच्चयार्थः ।
तथा च वातिकम् ॥

आख्यानात्कृतस्तदाचष्टे कृष्टुक् प्रकृतिप्रत्यापत्तिः
प्रकृतिवच्च कारकम् इति ❀ ॥

कंसवधमाचष्टे कंसं घातयति इह कंसं हन इ इति स्थिते ॥

हनस्तोऽचिण्णलोः ७ । ३ । ३२ ॥

हन्तेस्तकारोऽन्तादेशः चिण्णल्वर्जे जिति णिति । नन्वत्राङ्गसंज्ञा
धातुसंज्ञा च कंसविशिष्टस्य प्राप्ता ततश्चाद्द्वित्वयोर्दोषः । किंच
कुत्वतत्वेन स्याताम् । धातोः स्वरूपग्रहणे तत्प्रत्यये कार्यविज्ञानात् ।
सत्यं प्रकृतिवच्च इति चकारो भिन्नक्रमः । कारकं च चात्कार्यम् ।
हेतुमण्णचः प्रकृतेर्हन्यादेर्हेतुमण्णौ यादृशं कारकं धातावनन्तर्भूतं
द्वितीयान्तं यादृशं च कार्यं कुत्वतत्वादि तदिहापीत्यर्थः । कंसमजी-
घतत् ॥

कर्तृकरणाद्धात्वर्थे ॥

कर्तृव्यापारार्थं यत्करणं न तु चक्षुरादिमात्रमित्यर्थः । अस्तिना
हन्ति असयति ॥

णिङ्ङान्निरसने ॥

अङ्गवाचिनः प्रातिपदिकान्निरसनेऽर्थे णिङ् । हस्तौ निरस्यति
हस्तयते । पादयते ॥

श्वेताश्वश्वतरगालोडिताह्वरकाणामश्वतरेतकलोपश्च ॥

श्वेताश्वदीनां चतुर्णामश्वदयो लुप्यन्ते णिङ् च धात्वर्थे । श्वे-
ताश्वमाचष्टे तेनात्तिक्रामति वा श्वेतयते । अश्वतरमाचष्टेऽश्वयते ।
गालोडितं वाचां विमर्शः तत्करोति गालोडयते । आह्वरयते । के-
चिच्च णिचमेवानुवर्तयन्ति तन्मते परस्मैपदमपि ॥

पुच्छादिषु धात्वर्थे इत्येव सिद्धम् ॥

णिजन्तादेव बहुलवचनादात्मनेपदमस्तु भास्तु पुच्छभाण्ड इति
णिङ्वाविधिः । शेषा नामधातयोऽग्रे वक्ष्यन्ते ॥ इति नामधातुप्रक्रिया ॥

इति १३१ अंशाः ।

अभिज्ञावचने लृट् ३ । २ । ११२ ॥

स्मृतिबोधिन्युपपदे भूतानयने धातो ऋट् । लृटोऽपवादः । स्म-
रति कृष्ण गोकुले वत्स्यामः । एवं बुध्यमं चेतसि इत्यादियोगे-
ऽपि । तेषामपि प्रसङ्गादिवशेन स्मृती पृथिमंभवान् ॥

न यदि ३ । २ । ११३ ॥

ययोगे उक्तं न । अभिज्ञानाणि कृष्ण घटने अमुञ्जमदि ॥

विभाषा साकाङ्गे ३ । २ । ११४ ॥

उक्तविषये लृङ्गा । लक्ष्यलक्षणभावेन साकाङ्गश्रेढावर्धः । स्म-
रति कृष्ण बने वत्स्यामस्तत्र गाश्रारिष्यामः । वामो लक्षणं चा-
रणं लक्ष्यम् । पक्षे लङ् । यच्छब्दयोगेऽपि न यदि इति बाधित्वा
परत्वाद्विकल्पः । परोक्षे लिट् । चकार । उत्तमपुरुषे वित्तविकेपादिना
पातोक्ष्यम् । मुतोऽर्द्धं लिट् विल्लाप । यहु जगद पुरुस्तात्तस्य मत्ता
निल्लाहम् ॥

अत्यन्तापह्नवे लिङ्क्तव्यः ॐ ॥

कलिङ्गेष्ववात्सीः । नाहं कलिङ्गाभ्रगाम ॥

इशश्वतोर्लृट् च ३ । २ । ११६ ॥

अनयोरुपपदयोर्लिङ्गविषये लृट् चालिट् । गति हाकगोपकार
वा । शश्वदकगोपकार वा ॥

प्रश्ने चासन्नकाले ३ । २ । ११७ ॥

प्रष्टव्यः प्रश्नः । आसन्नकाले पृच्छयमानेऽप्ये लिङ्गविषये लृट्-
लिटौ । अगच्छत्किम् । जगाम किम् । अनामन्ने तु कर्मं जयान किम् ॥

लृट् स्मे ३ । २ । ११८ ॥

लिटोऽपवादः । यजति स्म युधिष्ठिरः ॥

अपरोक्षे च ३ । २ । ११९ ॥

भूतानयने लृट् स्मयोगे । एवं स्म विना ब्रवीति ॥

ननौ पृष्टप्रतिवचने ३ । २ । १२० ॥

अनद्यतने परोक्ष इति निवृत्तम् । भृते लट् । अकार्पाः किम् ।
ननु करोमि भोः ॥

नन्वोर्विभाषा ३ । २ । १२१ ॥

अकार्पाः किम् । न करोमि । नाकार्पम् । अहं नु करोमि । अहं
न्व कार्पम् ॥

पुरि लुङ् चास्मे ३ । २ । १२२ ॥

अनद्यतनग्रहणं मण्डुकप्लुत्यानुवर्तते । पुराशब्दयोगे भृतानद्य-
तने विभाषा लुङ् चालट् न तु स्मयोगे । पक्षे यथाप्राप्तम् । वस-
न्तीह पुरा छात्राः । अवात्सुः । अवसन् । ऊर्षुर्वा । अस्मे किम् ।
यजति स्म पुरा । भविष्यतीत्यनुवर्तमाने ॥

यावत्पुरानिपातयोर्लट् ३ । ३ । ४ ॥

यावदुङ्क्ते । पुग भुङ्क्ते । निपातवैर्ता निश्चयं द्योतयतः । निपातयोः
किम् । यावदास्यते तावद्भोक्ष्यते । करणभृतया पुरा यास्यति ॥

विभाषा कदाकर्षोः ३ । ३ । ५ ॥

भविष्यति लट् वा । कदा कर्हि वा भुङ्क्ते भोक्ष्यते भोक्ता वा ॥

किंवृत्ते लिप्सायाम् ३ । ३ । ६ ॥

भविष्यति लट् । कं कतरे कतमं वा भोजयामि भोजयिष्यसि
भोजयिनामि वा । लिप्सायां किम् । कः पाटलिपुत्रं गमिष्याति ॥

लिप्स्यमानसिद्धौ च ३ । ३ । ७ ॥

लिप्स्यमानेनात्रादिना भर्गादेः सिद्धौ गम्यमानाया भविष्यति
• लट् । योऽन्नं ददाति दास्यति दाता वा न स्वर्गं याति यास्यति
याता वा ॥

लोट्यर्थलक्षणे च ३ । ३ । ८ ॥

लोट्यर्थः श्रपादिर्लट्यर्थे येन लप्स्यत्यर्थे वर्तमानाटानां भविष्यति
लट् । लृप्स्यत्यर्थे लृट् लृप्स्यत्यर्थे लृट् लृप्स्यत्यर्थे ॥

लिङ् चौर्ध्वमौर्ध्वार्तिके ३ । ३ । ९ ॥

ऊर्ध्वं मुहूर्ताद्भव ऊर्ध्वमौर्ध्वार्तिकः । निपातनात्समास उत्तरपदवृ-
द्धिश्च । ऊर्ध्वमौर्ध्वार्तिके भविष्यति । लोटर्थलक्षणे वर्तमानाटातोर्लि-
ङ्लटा वा । मुहूर्तादुपरि उपाध्यायशेदागच्छेत् आगच्छति आग-
मिष्यति आगन्ता वा । अथ त्वं छन्दोऽधीष्व ॥

वर्तमानसामीप्ये वर्तमानवद्वा ३ । ३ । १३१ ॥

समीपमेव सामीप्यम् । स्वार्थं प्यञ्च । वर्तमाने लट् इत्पारभ्य
उणादयो बहुलम् इति यावद्येनोपाधिना प्रत्यया उक्तास्ते तथैव
वर्तमानसमीपे भूते भविष्यति च वा स्युः । कदा आगतोऽसि ।
अयमागच्छामि । अयमागमम् । कदा गमिष्यसि । एष गच्छामि ।
गमिष्यामि वा ॥

आशंसायां भूतवच्च ३ । ३ । १३२ ॥

वर्तमानसामीप्य इति नानुवर्तते । भविष्यति काले भूतवद्वर्तमान-
वच्च प्रत्यया वा आशंसायाम् । देवश्रेदवर्षाद्दर्पति धर्षिष्यति वा
धान्यमवाप्स्य वषामः वप्स्यामो वा । सामान्यातिदेशे विशेषानति-
देशः तेन लङ्लिटा न ॥

क्षिप्रवचने लट् ३ । ३ । १३३ ॥

क्षिप्रपर्याय उपपदे पूर्वविषये लट् । वृष्टिश्रेत् क्षिप्रमाशु त्वग्निं
वा यास्यति शीघ्रं वप्स्यामः । नेति वक्तव्ये लङ्ग्रहणं लुटोऽपि
विषये यथा स्यात् । श्वः शीघ्रं वप्स्यामः ॥

आशंसावचने लिङ् ३ । ३ । १३४ ॥

आशंसावाचिन्युपपदे भविष्यति लिङ् स्यात् ननु मृतरत् ।
गुरुश्रेदुपेयादाशंसेऽधीयीथ । आशंसे क्षिप्रमधीयीथ ॥

नानद्यतनवत्क्रियाप्रबन्धसामीप्यशोः ३ । ३ । १३५ ॥

क्रियायाः सातत्ये सामीप्ये च लङ्लुटा न । यावज्जीवमन्नमदा-
हास्यति वा । सामीप्यं तुल्यजातीयेनाव्यवधानम् । येनैवं परिणामान्य-

तिक्रान्ता तस्यामग्नीनाधीत । सोमेनायष्ट । येयममावास्यागामिनी
तस्यामग्नीनाधास्यते । सोमेन यक्ष्यते ॥

भविष्यति मर्यादावचनेऽवरस्मिन् ३ । ३ । १३६ ॥

भविष्यति काले मर्यादोक्ताववरस्मिन् प्रविभागेऽनद्यतनवन्न ।
योऽयमध्वा गन्तव्य आ पाटलिपुत्रात्तम्य यदवरं कौशाम्ब्यास्तत्र
रुक्मूर पास्यामः ॥

कालविभागे चानहोरात्राणाम् ३ । ३ । १३७ ॥

पूर्वसूत्रं सर्वमनुवर्तते । अहोरात्रसम्बन्धिनि विभागे प्रतिपेद्यार्थ-
मिदम् । योगविभाग उत्तरार्थः । योऽयं वत्सर आगामी तस्य
यदवरमाग्रहायण्यास्तत्र युक्ता अध्येष्यामहे । अनहोरात्राणां
किम् । योऽयं मास आगामी तस्य योऽवरः पञ्चदशरात्रस्तत्राध्ये-
तास्महे ॥

परस्मिन्विभाषा ३ । ३ । १३८ ॥

अवरस्मिन् वर्ज्यं पूर्वसूत्रद्वयमनुवर्तते । अप्राप्तविभाषेयम् । योऽयं
संवत्सर आगामी तस्य यत्परमाग्रहायण्यास्तत्राध्येष्यामहे ।
अध्येतास्महे ॥

इति १३२ अंशाः ।

लिङ्निमित्ते लृङ् क्रियातिपत्तौ ॥

भविष्यतीत्येव । सुवृष्टिश्चेदभविष्यत्तदा सुभिक्षमभविष्यत् ॥

भूते च ३ । ३ । १४० ॥

पूर्वसूत्रं संपूर्णमनुवर्तते ॥

उताप्योः ३ । ३ । १४१ ॥

वा आ उताप्योः उताप्योः इत्यतः प्राग्भूते लिङ्निमित्ते
लृङ् चेत्यधिक्रियते । पूर्वसूत्रं तु उताप्योः इत्यादी प्रवर्तत इति
विवेकः ॥

गर्हायां लडपि जात्वोः ३ । ३ । १४२ ॥

आभ्यां योगे लट् कालत्रये गर्हायाम् । लुडादीन्परत्वादयं
वाधते । अपि जायां त्यजसि जातु गणिकामादत्से गर्हितमेतत् ॥

विभाषा कथमि लिङ् च ३ । ३ । १४३ ॥

गर्हायामित्येव कालत्रये लिङ् चाल्ङ् । कथं धर्मं त्यजेस्त्य-
जसि वा । पक्षे कालत्रये लकाराः । अत्र भविष्यति नित्यं लुङ्
भूते वा । कथं नाम तत्र भवान्धर्ममत्यक्ष्यत् ॥

किंवृत्ते लिङ्लटौ ३ । ३ । १४४ ॥

गर्हायामित्येव । विभाषा तु नानुवर्तते । कः कतरः कतमो वा
हरिं निन्देत् निन्दिष्यति वा । लङ् प्राग्वत् ॥

अनवकृत्यमर्षयोरकिंवृत्तेऽपि ३ । ३ । १४५ ॥

गर्हायामिति निवृत्तम् । अनवकृत्तिरसंभावना । अमर्षोऽक्षमा ।
न संभावयामि न मर्षये वा । भवान्हरिं निन्देत् निन्दिष्यति वा ।
कः कतरः कतमो वा हरिं निन्देत् निन्दिष्यति वा । लङ् प्राग्वत् ॥

किंकिलास्त्यर्थेषु लट् ३ । ३ । १४६ ॥

अनवकृत्यमर्षयोरित्येतत् गर्हाया च इति यावदनुवर्तते ।
किंकिलेति समुदायः क्रोधघोतक उपपदम् । अस्त्यर्थाः अस्ति-
भवतिविद्यतयः । लिङोऽपवादः । न श्रद्धे न मर्षये वा किंकिल
त्वं शूद्रान्नं भोक्ष्यसे । भवति विद्यते वा । शूद्रो गामिष्यति । अत्र
लङ् न ॥

जातुयदोलिङ् ३ । ३ । १४७ ॥

यदायद्योरुपसंख्यानम् ॐ ॥

लटोऽपवादः । जातु यद्यदा यदि वा त्वाद्दशो हरिं निन्देन्नाव-
कल्पयामि न मर्षयामि । लङ् प्राग्वत् ॥

यच्चयत्रयोः ३ । ३ । १४८ ॥

यच्च यत्र वा त्वमेवं कुर्याः न श्रद्धे न मर्षयामि ॥

गर्हायां च ३ । ३ । १४९ ॥

अनवकृत्यमर्षयोरिति निवृत्तम् । यद्यत्रयोयोगे गर्हायां
लिडेव । यद्य यत्र वा त्वं शूद्रं याजयेः । अन्याद्यं तत् ॥

चित्रीकरणे च ३ । ३ । १५० ॥

यद्य यत्र वा त्वं शूद्रं याजयेः । आश्चर्यमेतत् ॥

शेषे लृढयदौ ३ । ३ । १५१ ॥

यद्यत्राभ्यामन्यास्मिन्नुपपदे चित्रीकरणे गम्ये धातोर्लृद् ।
आश्चर्यमन्धो नाम कृष्णं द्रक्ष्यति । अयदौ किम् । आश्चर्यं यदि
सोऽधीयीत ॥

उताप्योः समर्थयोर्लिङ् ३ । ३ । १५२ ॥

वाढमित्यर्थेऽनयोस्तुल्यार्थता । उत अपि वा हन्यादधं हरिः ।
समर्थयोः किम् । उत दण्डः पतिष्यति । अपिधास्यति द्वारम् ।
प्रश्नः प्रच्छादनं च गम्यते । इतः प्रभृति लिङ्गिमित्ते क्रियातिपत्तौ
भूतेऽपि नित्यो लिङ् ॥

कामप्रवेदनेऽकच्चिति ३ । ३ । १५३ ॥

स्वाभिप्रायाविष्करणे गम्यमाने लिङ् नतु कच्चिति । कामो मे
भुञ्जीत भवान् । अकच्चिति इति किम् । कच्चिजीवति ॥

संभावनेऽलमिति चेत् सिद्धाप्रयोगे ३ । ३ । १५४ ॥

अलमर्थोऽत्र प्रौढिः संभावनमित्यलमिति च प्रथमया सप्तम्या
च विपरिणम्यते । संभावने लिङ् । तच्चेत्संभावनमलमिति सिद्धा-
प्रयोगे सति । अपि गिरिं शिरसा भिन्धात् । सिद्धाप्रयोगे किम् ।
अलं कृष्णो हस्तिनं हनिष्यति ॥

विभाषा धातौ संभावनवचनेऽयदि ३ । ३ । १५५ ॥

पूर्वसूत्रमनुवर्तते । संभावनेऽर्थे धातावुपपदे उक्तेऽर्थे लिङ् वा नतु
यच्छब्दे । पूर्वेण नित्ये प्राप्ते वचनम् । संभावयामि भुञ्जीत मो-
क्ष्यते वा भवान् । अयदि किम् । संभावयामि यद्भुञ्जीथास्त्वम् ॥

हेतुहेतुमतोर्लिङ् ३ । ३ । १५६ ॥

वा कृष्णं नमेचेत्सुखं यायात् । कृष्णं नंस्यति चेत्सुखं यास्यति ।
भविष्यत्येवेष्यते नेह । हन्तीति पलायते ॥

इच्छार्थेषु लिङ्लोटौ ३ । ३ । १५७ ॥

इच्छामि भुञ्जीत भुङ्गां वा भवान् । एवं कामये प्रार्थय इत्या-
दियोगे बोध्यम् ॥

कामप्रवेदन इति वक्तव्यम् ❀ ॥

नेह । इच्छन्करोति ॥

लिङ् च ३ । ३ । १५९ ॥

समानकर्तृकेषु इच्छार्थेषु लिङ् । भुञ्जीयेतीच्छति ॥

इच्छार्थेभ्यो विभाषा वर्तमाने ३ । ३ । १६० ॥

लिङ् पक्षे लट् । इच्छेत् इच्छति । कामयेत् कामयते । विधि-
निमंत्रणे इति लिङ् । विधौ-यजेत । निमन्त्रणे-इह भुञ्जीत भवान् ।
आमन्त्रणे-इहासीत । अधीष्टे-पुत्रमध्यापयेद्भवान् । संप्रश्ने-किं
भो वेदमधीयीय उत तर्कम् । प्रार्थने-भो भोजनं लभेय । एवं लोट् ॥

इति १३३ अंशाः ।

प्रैपातिसर्गप्राप्तकालेषु कृत्याश्च ३ । ३ । १६३ ॥

प्रैपो विधिः । अतिसर्गः कामचारातुज्ञा । भवता यष्टव्यम् ।
भवान्यजताम् । चकारेण लोटोऽनुकर्षणं प्राप्तकालार्यम् ॥

लिङ् चोर्ध्वमौहूर्तिके ३ । ३ । १६४ ॥

प्रैपादयोऽनुवर्तन्ते । मुहूर्तादूर्ध्वं यजेत यजताम् यष्टव्यम् ॥

स्मे लोट् ३ । ३ । १६५ ॥

पूर्वसूत्रस्य विषये । लिङ्ः कृत्यानां चापवादः । ऊर्ध्वं मुहूर्ता-
यजता स्म ॥

अधीष्टे च ३ । ३ । १६६ ॥

स्म उपपदेऽधीष्टे लोट् । त्वं स्माध्यापय ॥

लिङ्च्यदि ३ । ३ । १६८ ॥

यच्छन्द उपपदे कालसमयवेलासु च लिङ् । कालः समयो
वेला वा यद्गुञ्जीत मवान् ॥

अहं कृत्यतृचश्च ॥

चाहिङ् । त्वं कन्यां वहेः ॥

शकि लिङ् च ३ । ३ । १७२ ॥

शक्तौ लिङ् चात्कृत्याः । भारं त्वं वहेः । माडि लुङ् । मा
कार्पीः । कथं मा भवतु मा मविष्यतीति । नायं माङ् । किंतु
माशब्दः ॥

धातुसंबन्धे प्रत्ययाः ३ । ४ । १ ॥

धात्वर्थानां संबन्धे यत्र काले प्रत्यया उक्तास्ततोऽन्यत्रापि
स्युः । तिङ्वाच्यक्रियायाः प्राधान्यात्तदनुरोधेन गुणभूतक्रिया-
वाचिभ्यः प्रत्ययाः । वसन्ददर्श । भूते लट् । अतीतवासकर्तृकं
दर्शनमर्थः । सोमयाज्यस्य पुत्रो भविता । सोमेन यक्ष्यमाणो यः
पुत्रस्तत्कर्तृकं भवन्म ॥

क्रियासमभिहारे लोट्लोटौ हिस्वौ वा च तध्वमोः ३ । ४ । २ ॥

पौनःपुन्ये भृशार्थे च द्योत्ये धातोर्लोट् तस्य च हिस्वौ ।
तिङ्गामपवादः । तौ च हिस्वौ क्रमेण परस्मैपदात्मनेपदसंज्ञौ च ।
तध्वमोर्विषये तु हिस्वौ वा । पुरुषैकवचनसंज्ञे तु नानयोरति-
दिश्येते । हिस्वविधानसामर्थ्यात् । तेन सकलपुरुषवचनविषये
परस्मैपदिभ्यो हिः कर्तरि आत्मनेपदिभ्यः स्वी भावकर्मकर्तृपु ॥

समुच्चयेऽन्यतरस्याम् ३ । ४ । ३ ॥

अनेकक्रियासमुच्चये द्योत्ये प्रागुक्तं वा ॥

यथाविध्यनुप्रयोगः पूर्वास्मिन् ३ । ४ । ४ ॥

आद्ये लोट्प्रधाने लोट्प्रकृतिभूत एव धातुरनुप्रयोज्यः ॥

समुच्चये सामान्यवचनस्य ३ । ४ । ५ ॥

समुच्चये लोडिर्धा सामान्यार्थस्य धातोरनुप्रयोगः । अनुप्रयोगायथायथं लडादयस्तिवादयश्च । ततः संख्याकालयोः पुरुष-विशेषार्थस्य चाभिव्यक्तिः ॥

क्रियासमभिहारे द्वे वाच्ये ❀ ॥

याहि याहीति याति । पुनः पुनरतिशयेन वा यानं ह्यन्तस्यार्थः । एककर्तृकं वर्तमानं यानं यातीत्यस्य इतिशब्दस्त्वभेदान्वये तात्पर्यं ग्राहयति । एवं यातः । यान्ति । यासि । यायः । याथ । गात-यातेति । यूयं याथ याहि याहीत्ययासीत् यास्यति वा । अधी-ष्वाधीष्वेत्यधीते । ध्वंविषये पक्षेऽधीध्वमधीध्वमिति । यूयमधीधो । समुच्चये तु सक्रून् पिव । धानाः खादेत्यभ्यवहरति । अन्नं भुंक्षी । दाधिकमास्वादयस्वेत्यभ्यवहरते । तध्वमोस्तु पिषत खादतेत्यभ्य-वहरथ । भुंघ्वमास्वदध्वमित्यभ्यवहरध्वम् । पक्षे हिस्वो । अथ समुच्चयमानविशेषाणामनुप्रयोगार्थेन सामान्येनाभेदान्वयः । पक्षे सक्रून् पिबति धानाः खादति । अन्नं भुङ्क्ते दाधिकमारया-यते । एतेन पुरीमवस्कन्द लुनीहि नन्दनं मुपाण रत्नानि हराम-राङ्गनाः । विगृह्य चक्रे नमुचिद्विषा वली य इत्यमस्वास्थ्यमदर्शितं दिवः ॥ इति व्याख्यातम् । अवस्वन्दनलवनादिरूपा भूताना-तनपरोक्षा एककर्तृका अस्वास्थ्यक्रियेत्यर्थात् । इह पुनःपुनश्चा-न्देत्यादिरर्थ इति व्याख्यानं भ्रममूलकमिव । द्वितीयसूत्रं क्रियास-मभिहार इत्यस्याननुवृत्तेः लोडन्तस्य द्विषापत्तेश्च । पूर्णमद-त्यादि मध्यमपुरुषैकवचनमित्यपि केषां च भ्रम एव । पुन-संज्ञे इह नेत्युक्तत्वात् ॥

दनं भोक्ष्येथे । भोक्ष्यध्वे । भोक्ष्ये । भोक्ष्यावहे । भोक्ष्यामहे ।
मन्यसे । मन्येये । मन्यध्वे । इत्यादिरर्थः ॥ इति लकारार्थप्रकरणम् ॥
इति १३४ अंशाः ।

तद्धिताः ४ । १ । ७६ ॥

वक्ष्यमाणाः प्रत्ययास्तद्धितसंज्ञाः ॥

समर्थानां प्रथमाद्वा ४ । १ । ८२ ॥

इदं पदत्रयमधिक्रियते प्राग्दिशः इति यावत् । सामर्थ्यं परि-
निष्ठितत्वम् । कृतसंधिकार्यत्वमिति यावत् ॥

प्राग्दीव्यतोऽण् ४ । १ । ८३ ॥

तेन दीव्यति इत्यतः प्रागणधिक्रियते ॥

अश्वपत्यादिभ्यश्च ४ । १ । ८४ ॥

एभ्योऽण् स्यात्प्राग्दीव्यतीष्वर्थेषु । वक्ष्यमाणस्य ण्यस्याप-
वादः ॥

दित्यदित्यादित्यपत्युत्तरपदाण्यः ४ । १ । ८५ ॥

दित्यादिभ्यः पत्युत्तरपदाच्च प्राग्दीव्यतीष्वर्थेषु ण्यः स्याद-
णोऽपवादः । दैत्यः । अदितेरादित्यस्य वादित्यः प्राजापत्यः ।
यमाच्च इति काशिकायाम् । याम्यः । पृथिव्या जाञौ । पार्थिवा
पार्थिवी । देवाद्यञौ । दैव्यं दैवम् । वहिपष्टिलोपो यञ्च । बाह्यः ।
ईकञ्च । वाहीकः । स्थाम्नोऽकारः । अश्वत्थामः । पृपोदरादि-
त्वात्सस्य तः ॥

भवार्थे तु लुगवाच्यः ❀ ॥

अश्वत्थामा । लोमोऽपत्येषु बहुष्वकारः । बाह्यादीओऽपवादः ।
उडुलोमाः उडुलोमान् । बहुषु किम् । औडुलोमिः । गोरजादि-
प्रसङ्गे यत् । गव्यम् । अजादिप्रसङ्गे किम् । गोभ्यो हेतुभ्य आ-
गतं गोरूप्यम् । गोमयम् ॥

उत्सादिभ्योऽञ् ४ । १ । ८६ ॥

औत्सः ॥

अग्निकलिभ्यां ढग्वक्तव्यः ❀ ॥

अग्नेरपत्याद्याग्नेयम् । कालेयम् ॥ इत्यपत्यादिविकारान्तार्थसा-
धारणाः प्रत्ययाः ॥

स्त्रीपुंसाभ्यां नञ्प्रभौ भवनात् ४ । १ । ८७ ॥

धान्यानां भवने इत्यतः प्रागर्थेषु स्त्रीपुंसाभ्या क्रमानञ्प्रभौ ।
स्त्रैणः । पौंसः । वत्यर्थे न । स्त्रीपुंवच्च इति ज्ञापकात् । स्त्रीवत् ।
पुंवत् ॥

तस्यापत्यम् ॥

उपगोरपत्यमौपगवः । तस्येदमित्यपत्येऽपि बाधनार्थं कृतं भ-
वेत् । उत्सर्गः शेष एवासौ वृद्धान्यस्य प्रयोजनम् ॥ योगविभागस्तु,
भानोरपत्यं भानवः । कृतसन्धेः किम् । सौत्थितिः । अकृतव्यूह-
परिभाषयासाद्युत्थितिर्माभूत् । समर्थपरिभाषया नेह । वस्त्रमुपगो-
रपत्यं चैत्रस्य । प्रथमात् किम् । अपत्यवाचकात्पष्ठथर्थे मा भूत् ।
वाग्रहणाद्वाक्यमपि । देवयज्ञि इति सूत्रादन्यतरस्या ग्रहणानुवृत्तेः ।
समासोऽपि उपग्वपत्यम् । जातित्वान्डीप् । औपगवी । आश्व-
पतः । दैत्यः । औत्सः । स्त्रैणः । पौंसः । अत इञ् । दाक्षिः । वा-
ह्यादिभ्यश्च । बाहविः । औदुलोमिः । आकृतिगणोऽयम् ॥

सुधातुरकङ् च ४ । १ । ९७ ॥

चादिञ् । सुधातुरपत्यं सौधातकिः ॥

व्यासवरुडनिपादचाण्डालविम्बानां चेति वक्तव्यम् ❀ ॥

वैयासकिः । वारुडकिरित्यादि ॥

शिवादिभ्योऽण् ४ । १ । ११२ ॥

गोत्रे इति निवृत्तम् । शिवस्यापत्यं शैवः । गाङ्गः । पक्षे ति-
कादित्वात्किञ् । गाङ्गायनिः । शुभ्रादित्वाद्दृक् । गाङ्गेयः ॥

अवृद्धाभ्यो नदीमानुपीभ्यस्तत्रामिकाभ्यः ४ । १ । ११३ ॥

अवृद्धाभ्यो नदीमानुषीनामभ्योऽण् । ढकोऽपवादः । यामुनः ।
 नार्मदः । चिन्तिताया अपत्यं चैन्तितः । अवृद्धाभ्यः किम् ।
 वासवदत्तेयः । नदी इत्यादि किम् । वैनतेयः । तन्नामिकाभ्यः किम् ।
 शोमनाया अपत्यं शौमनेयः ॥

ऋष्यन्धकवृष्णिकुरुभ्यश्च ४ । १ । ११४ ॥

ऋषयो मन्त्रद्रष्टारः । वासिष्ठः । वैश्वामित्रः । अन्धकेभ्यः—श्वा-
 फल्कः । वृष्णिभ्यः—वासुदेवः आनिरुद्धः शौरिः । इति बाह्वादि-
 त्वादिञ् । कुरुभ्यः—नाकुलः । साहदेवः । इज एवाय मपवादो
 मध्येऽपवादन्वायात् । अत्रिशब्दात्तु परत्वाद् ढक् । आत्रेयः ॥

मातुरुत्संख्यासंभद्रपूर्वायाः ४ । १ । ११५ ॥

संख्यादिपूर्वस्य मातृशब्दस्योदादेशः अण्प्रत्ययश्च । रपरत्वम् ।
 द्वैमातुरः । पाणमातुरः । सांमातुरः । भाद्रमातुरः । आदेशार्थं
 वचनम् । प्रत्ययस्तूत्सर्गेण सिद्धः स्त्रीलिङ्गनिर्देशोऽर्थापेक्षः । तेन
 धान्यमातुर्न । संख्या इति किम् । सौमात्रः । शुभ्रादित्वाद्द्वैमात्रेयः ॥

कन्यायाः कनीन च ४ । १ । ११६ ॥

ढकोऽपवादोऽण् । तत्संनियोगेन कनीनादेशश्च । कानीनो
 व्यासः । कर्णश्च अनूढाया एवापत्यमित्यर्थः ॥

स्त्रीभ्यो ढक् ४ । १ । १२० ॥

स्त्रीप्रत्ययान्तेभ्यो ढक् । वैनतेयः । बाह्वादित्वात्सौमित्रिः ।
 शिवादित्वात् सापन्नः ॥

द्व्यचः ४ । १ । १२१ ॥

द्व्यचः स्त्रीप्रत्ययान्तादपत्ये ढक् । तन्नामिकाणोऽपवादः । दा-
 त्तेयः । पार्थ इत्यत्र तु तस्येदम् इत्यण् । शिवादित्वादिति तु
 तत्त्वम् ॥

इतश्चानिभः ४ । १ । १२२ ॥

इकारान्ताद्व्यचोऽपत्ये ढक् न त्विजन्तात् । दीलेयः । नैधेयः ।
 आत्रेयः ॥

कल्याण्यादीनामिन्द् ४ । १ । १२६ ॥

एपामिन्डादेशः ढक्च । काल्याणिनेयः । वान्धाकिनेयः ॥

कुलटाया वा ४ । १ । १२७ ॥

इनद्मात्रं विकल्प्यते । ढक् तु नित्यः । पूर्वणैव कीलदिनेयः ।
कौलटेयः । सती भिक्षुक्यत्र कुलटा या तु व्यभिचारार्थं कुलान्य-
दति तस्याः क्षुद्राभ्यो वा इति पक्षे ढक् । कौलटेरः ॥

हृद्गसिन्ध्वन्ते पूर्वपदस्य च ७ । ३ । १९ ॥

हृदाघन्ते पूर्वोत्तरपदयोगचामादेरचो वृद्धिर्भिति णिति किति
च । मुहदोऽपत्यं सौहार्दः । सुमगाया अपत्यं सौभागिनेयः ।
सक्तुप्रधानाः सिन्धवः सक्तुसिन्धवः तेषु भवः साक्तुसिन्धवः ॥

चटकाया ऐरक् ४ । १ । १२८ ॥

चटकस्येति वाच्यम् ❀ ॥

लिङ्गविशिष्टपरिभाषया स्त्रिया अपि । चटकस्य चटकाया वा-
पत्यं चाटकेरः ॥

स्त्रियामपत्ये लुग्वक्तव्यः ❀ ॥

तयोरेव ऋपत्यं चटका । अजादित्वाट्टाप ॥

गोधाया ढक् ४ । १ । १२९ ॥

गौधेरः । शुभ्रादित्वात्पक्षे ढक् । गौधेयः ॥

आरगुदीचाम् ४ । १ । १३० ॥

गौधारः । रका सिद्ध आकारोच्चारणमन्यतो विधानार्थम् । ज-
डस्यापत्यं जाडारः । पण्डस्यापत्यं पाण्डारः ॥

इति १३५ अंशाः ।

क्षुद्राभ्यो वा ४ । १ । १३१ ॥

अङ्गदीनाः शीलहीनाश्च क्षुद्रास्ताभ्यो वा ढक् । पक्षे ढक् ।
काणेरः काणेयः । दासेरः दासेयः ॥

पितृष्वसुश्छण् ४ । १ । १३२ ॥

अणोऽपवादः । पितृष्वस्त्रीयः ॥

ढकि लोपः ४ । १ । १३३ ॥

पितृष्वसुरन्तलोपो ढकि । अत एव ज्ञापकाद् ढक् । पितृष्वसेयः ॥

मातृष्वसुश्च ४ । १ । १३४ ॥

पितृष्वसुर्यदुक्तं तदस्यापि । मातृष्वस्त्रीयः । मातृष्वसेयः ॥

गृष्ट्यादिभ्यश्च ४ । १ । १३६ ॥

ढञ् । अण्ढकोरपवादः । गाँष्ट्यः । मित्रयोरपत्यम् ऋष्यणि प्राप्ते ढञ् ॥

केकयमित्रयुप्रलयानां यादेरियः ७ । ३ । २ ॥

एपां यकारादेरियादेशः ञिति णिति किति च तद्धिते परे । इति इयादेशे प्राप्ते ॥

दाण्डिनायनहास्तिनायनाथर्षणिकजैह्लाशिनेयवाशि-
नायनिभ्रौणहत्यधैवत्यसारखैक्ष्वाकमैत्रेयहिरण्मयानि ६ ।
४ । १७४ ॥

एतानि निपात्यन्ते इति युलोपः । मैत्रेयः । मैत्रेयौ ॥

यस्कादिभ्यो गोत्रे २ । ४ । ६३ ॥

एभ्योऽपत्यप्रत्ययस्य लुक् तत्कृते बहुत्वे न तु स्त्रियाम् । मित्रयवः ॥

अत्रिभृगुकुत्सवसिष्ठगोतमाङ्गिरोभ्यश्च २ । ४ । ६५ ॥

एभ्यो गोत्रप्रत्ययस्य लुक् तत्कृते बहुत्वे न तु स्त्रियाम् । अ-
त्रयः । भृगवः । कुत्साः । वसिष्ठाः । गोतमाः । अङ्गिरसः ॥

राजश्वशुराद्यत् ४ । १ । १३७ ॥

राज्ञो जातावेवेति वाच्यम् ❀ ॥

ये चाभावकर्मणोः ६ । ४ । १६८ ॥

यादौ तद्धिते परेऽन्यप्रकृत्या नतु भावकर्मणोः । राजन्यः । श्व-
शुर्यः । जातिग्रहणाच्छूद्रादावुत्पन्नो राजनः ॥

अन् ६ । ४ । १६७ ॥

अणि अन्यप्रकृत्या इति टिलोपो न । अभावकर्मणोः किम् ।
राज्ञः कर्म भावो वा राज्यम् ॥

ब्राह्मोऽजातौ ६ । ४ । १७१ ॥

योगविभागोऽत्र कर्त्तव्यः । ब्राह्मः इति निपात्यतेऽनपत्येऽणि
ब्राह्मं हविः । ततो जातौ अपत्ये जातावणि ब्रह्मणष्टिलोपो न ।
ब्रह्मणोऽपत्यं ब्राह्मणः । अपत्ये किम् । ब्राह्मी औपधिः ॥

क्षत्राहः ४ । १ । १३८ ॥

क्षत्रियः । जातौ इत्येव । क्षात्रिरन्यः ॥

कुलात्खः ४ । १ । १३९ ॥

कुलीनः । तदन्तादपि उत्तरसूत्रे अपूर्वपदात् इति लिङ्गात् ।
आहचकुलीनः ॥

अपूर्वपदादन्यतरस्यां यदृकभौ ४ । १ । १४० ॥

कुलात् इत्येव पक्षे खः । कुल्यः कौल्यकः कुलीनः । पदग्रहणं
किम् । बहुकुल्यः बाहुकुल्यकः बहुकुलीनः ॥

महाकुलादश्वभौ ४ । १ । १४१ ॥

अन्यतरस्याम् इत्यनुवर्तते पक्षे खः । माहाकुलः माहाकुलीनः
महाकुलीनः ॥

दुष्कुलाङ्क ४ । १ । १४२ ॥

पूर्ववत्पक्षे खः । दीष्कुलेयः दुष्कुलीनः ॥

स्वसुश्लः ४ । १ । १४३ ॥

स्वस्त्रीयः ॥

भ्रातुर्व्यञ्च ४ । १ । १४४ ॥

चाच्छः । अणोऽपवादः । भ्रातृध्यः भ्रात्रीयः ॥

व्यन्सपत्ने ४ । १ । १४५ ॥

भ्रातुर्व्यन् अपत्ये प्रकृतिप्रत्ययसमुदायेन शत्रौ वाच्ये । भ्रातृव्यः शत्रुः । पाप्मना भ्रातृव्येणेति तूपचारात् ॥

मनोर्जातावभ्यतौ पुक्च ४ । १ । १६१ ॥

समुदायार्थो जातिः । मानुषः मनुष्यः ॥

अपत्यं पौत्रप्रभृतिगोत्रम् ४ । १ । १६२ ॥

अपत्यत्वेन विवाक्षितं पौत्रादिगोत्रसंज्ञम् ॥

जीवति तु वंश्ये युवा ४ । १ । १६३ ॥

वंश्ये पित्रादौ जीवति पौत्रादेर्यदपत्यं चतुर्थादि तद्युवसंज्ञमेव नतु गोत्रसंज्ञम् ॥

भ्रातरि च ज्यायसि ४ । १ । १६४ ॥

ज्येष्ठे भ्रातरि जीवति कनीयांश्चतुर्थादिर्युवसंज्ञो वा ॥

वान्यस्मिन्सपिण्डे स्थविरतरे जीवति ४ । १ । १६५ ॥

भ्रातुरन्यस्मिन्सपिण्डे स्थविरतरे जीवति पौत्रप्रभृतेरपत्यं जीवदेव युवसंज्ञं वा । एकं जीवतिग्रहणमपत्यस्य विशेषणम् । द्वितीयं सपिण्डस्य तरन्निर्देश उभयोरुत्कर्षार्थः । स्थानेन वयसा चोत्कृष्टे पितृव्ये मातामहभ्रातरि वा जीवति । गार्ग्यस्यापत्यं गार्ग्यायणः गार्ग्यो वा । स्थविर इति किम् । स्थानवयोन्यूने गार्ग्य एव । जीवति इति किम् । मृते मृतो वा गार्ग्य एव ॥

वृद्धस्य च पूजायामिति वाच्यम् ❀ ॥

गोत्रस्यैव वृद्धसंज्ञा प्राचाम् । गोत्रस्य युवसंज्ञा पूजायां गम्यमानायाम् । तत्रभवान् गार्ग्यायणः । पूजायाम् इति किम् । गार्ग्यः ॥

यूनश्च कुत्सायां गोत्रसंज्ञेति वाच्यम् ❀ ॥

गार्ग्यो जाल्मः । कुत्सायामिति किम् । गार्ग्यायणः ॥

एको गोत्रे ४ । १ । १६३ ॥

गोत्र एक एवापत्यप्रत्ययः । उपगोर्गोत्रापत्यमौपगवः ।
गार्ग्यः । नाडायनः ॥

गोत्राद्यून्यस्त्रियाम् ४ । १ । ९४ ॥

यून्यपत्ये गोत्रप्रत्ययान्तादेवापत्यप्रत्ययः । स्त्रियां तु न युव-
संज्ञा । गर्गस्य युवापत्यं गार्ग्यायणः । स्त्रियां गोत्रत्वादेक एव
प्रत्ययः ॥

नडादिभ्यः फक् ४ । १ । ९९ ॥

गोत्रे इत्येव । नाडायनः । चारायणः । अनन्तरो नाडिः ॥

अनृष्यानन्तर्ये विदादिभ्योऽञ् ४ । १ । १०४ ॥

एभ्योऽङ्गोत्रे । ये त्वत्रानृषयः पुत्रादयस्तेभ्य आनन्तर्ये सूत्रे
स्वार्थे ष्यञ् । विदस्य गोत्रापत्यं वैदः । अनन्तरो वैदिः । वा-
हादेराकृतिगणत्वादिञ् । पुत्रस्यापत्यं पौत्रः । दौहित्रः ॥

गर्गादिभ्यो यञ् ४ । १ । १०५ ॥

गोत्रे इत्येव । गार्ग्यः । वात्स्यः ॥

यभिभोश्च ४ । १ । १०१ ॥

गोत्रे यौ यभिभौ तदन्तात्फक् । अनाति इत्युक्तेः । आपत्यस्य
इति यलोपो न । गार्ग्यायणः । दाक्षायणः ॥

इति १३६ अंशाः ।

यभभोश्च २ । ४ । ६४ ॥

गोत्रे यद्यन्तमञ्जन्तं च तदवयवयोरेतयोर्लुक् तत्कृते बहुत्वे नतु
स्त्रियाम् । गर्गोः । वत्साः । विदाः । उर्वाः । तत्कृते इति किम् ।
प्रियगार्ग्यः । स्त्रियां तु गार्ग्यः स्त्रियः । गोत्रे किम् । द्वेष्याः ।
औत्साः । प्रवराध्यायप्रसिद्धमिह गोत्रम् । तेनह न । पौत्राः ।
दौहित्राः ॥

जनपदशब्दात् क्षत्रियादञ् ४ । १ । १६८ ॥

जनपदक्षत्रिययोर्वाचकादजपत्ये । दाण्डिनायन इति सूत्रे
निपातनाट्टिलोपः । ऐक्षाकः । ऐक्षाकौ ॥

क्षत्रियसमानशब्दाज्जनपदात्तस्य राजन्यमपत्यवत् ❀ ॥

तद्राजमाचक्षणस्तद्राज इत्यन्वर्थसंज्ञासामर्थ्यात् । पञ्चालाना
राजा पाञ्चालः ॥

पूरोरण्वक्तव्यः ❀ ॥

पौरवः । पाण्डोडर्चण् । पाण्डचः ॥

साल्वेयगान्धारिभ्यां च ४ । १ । १६९ ॥

आभ्यामपत्येऽञ् । वृद्धेत् इति ज्यडोऽपवादः । साल्वेयः ।
गान्धारः । तस्य राजन्यप्येवम् ॥

द्व्यभगधकलिङ्गसूरमसादण् ४ । १ । १७० ॥

अभोऽपवादः । द्व्यच् । आङ्गः । वाङ्गः । सोह्लः । मागधः ।
कालिङ्गः । सौरमसः । तस्य राजन्यप्येवम् ॥

वृद्धेत्कोसलाजादाज्यङ् ४ । १ । १७१ ॥

घृद्धात् । आम्बष्ठचः । सौवीर्यः । इत् आवन्त्यः । कोसल्यः ।
अजादस्यापत्यमाजाद्यः ॥

कुरुनादिभ्यो ण्यः ४ । १ । १७२ ॥

कौरव्यः । नैपध्यः । स नैपधस्यार्थपतेः इत्यादौ तु शैपिकोऽण् ॥

साल्वावयवप्रत्यग्रथकलकूटाश्मकादिभू ४ । १ । १७३ ॥

साल्वो जनपदस्तदवयवा उदुम्बरादयस्तेभ्यः प्रत्यग्रथादिभ्य-
स्त्रिभ्यश्च इञ् । अओऽपवादः । औदुम्बरिः । प्रात्यग्रथिः । कालकू-
टिः । आश्मकिः । राजन्यप्येवम् ॥

ते तद्राजाः ४ । १ । १७४ ॥

अजादय एतन्सज्ञा स्युः ॥

तद्राजस्य बहुषु तेनैवाऽस्त्रियाम् २ । ४ । ६२ ॥

बहुष्वर्थेषु तद्राजस्य लुक् तदर्थकृते बहुत्वे नत् स्त्रियाम् ।

इक्षाकवः । पञ्चालाः । इत्यादि । कथं तर्हि कौरव्याः पशवः ।
तस्यामेव रघोः पाण्ड्याः इति च कौरव्ये पाण्ड्ये च साधव इति
समाधेयम् । रघूणामन्वर्यं वक्ष्ये । निरुध्यमाना यदुभिः कथंचित्
इति तु रघुयदुशब्दयोस्तदपत्ये लक्षणया ॥

कम्बोजाल्लुक १४ । १ । १७५ ॥

अस्मात्तद्राजस्य लुक । कम्बोजः । कम्बोजौ ॥

कम्बोजादिभ्य इति वक्तव्यम् ❀ ॥

चोलः । शकः । द्व्यजलक्षणस्याणो लुक । केरलः । यवनः । अजो-
लुक । कम्बोजाः । समरे इति पाठः सुगमः । दीर्घपाठे तु कम्बो-
जोऽभिजनो येषामित्यर्थः । सिन्धुतक्षशिलादिभ्योऽणौ इत्यण् ॥

स्त्रियामवन्तिकुन्तिकुरुभ्यश्च ४ । १ । १७६ ॥

तद्राजस्य लुक । अवन्ती । कुन्ती । कुरुः ॥

अतश्च ४ । १ । १७७ ॥

तद्राजस्याकारस्य स्त्रियां लुक । गूरसेनी । मत्री । कथं मात्री-
सुतौ इति द्वस्व एव पाठः इति हरदत्तः । भर्गादित्वं वा कल्प्यम् ॥

न प्राच्यभर्गादियौधेयादिभ्यः ४ । १ । १७८ ॥

एभ्यस्तद्राजस्य न लुक । पाञ्चाली वैदर्भी । आङ्गी । वाङ्गी ।
मागधी । ऐते प्राच्याः । भार्गी । कारूपी । केकयी । केकयीत्यत्र तु
जन्यजनकभावलक्षणे पुंयोगे ङीप् । एवं देवकीत्यत्राप्याहुः । जप-
त्यप्रत्यये ङीप् संज्ञापूर्वकत्वाद्द्व्यचभाव इति परे । युधा । शुका ।
आभ्यां द्व्यचः इति ढक् । ततः स्रांथे । पश्चादियौधेयादिभ्योऽणौ
इत्यण् । शार्ङ्गखाद्यत्रः इति ङीन् । अतश्च इति लुकि तु ढगन्तत्वा-
न्ङीप्युदात्तनिवृत्तिस्वरः । यौधेयी । शौकेयी ॥ इत्ययत्याधिकारः ॥

तेन रक्तं रागात् ४ । २ । १ ॥

रज्यतेऽनेनेति रागः । कपायेण रक्तं वस्त्रं कापायम् । माञ्जिष्टम् ।
रागात् किम् । देवदत्तेन रक्तं वस्त्रम् ॥

नील्या अन् ❀ ॥

नील्या रक्तं नीलम् ॥

पीतात्कन् * ॥

पीतकम् ॥

हरिद्रामहारजनाभ्यामञ्ज * ॥

हारिद्रम् । माहारजनम् ॥

नक्षत्रेण युक्तः कालः ४ । २ । ३ ॥

* पुष्पेण युक्तं पौषमहः । पौषी रात्रिः ॥

लुब्धविशेषे ४ । २ । ४ ॥

पूर्वेण विहितस्य लुप् । पष्ठिदण्डात्मककालस्यावान्तरविशेषश्चेन्न गम्यते । अथ पुष्पः । कथं तर्हि पुष्पयुक्ता पौर्णमासी पौषी इति । विभाषा फाल्गुनीश्रवणाकार्तिकीचैत्रीभ्य इति निर्देशेन पौर्णमास्यामयं लुब्धेति ज्ञापितत्वात् । श्रवणशब्दात्तु अत एव लुब्धयुक्तवद्भावाभावश्च । अबाधकान्यपि निपातनानि । श्रावणी ॥

परिवृतो रथः ४ । २ । १० ॥

वस्त्रैः परिवृतो वासो रथः । रथः किम् । वस्त्रेण परिवृतः कायः । समन्ताद्द्वेषितः परिवृत उच्यते । तेनेह न । छत्रैः परिवृतो रथः ॥

पाण्डुकम्बलादिनिः ४ । २ । ११ ॥

पाण्डुकम्बलेन परिवृतः पाण्डुकम्बली । पाण्डुकम्बलशब्दो राजास्तरणवर्णकम्बलस्य वाचकः । मत्वर्थीयेनैव सिद्धे वचनमणो निवृत्त्यर्थम् ॥

द्वैपयैयाघ्रादञ्ज ४ । २ । १२ ॥

द्वीपिनो विकारो द्वैपम् । तेन परिवृतो द्वैपो रथः । एवं वैयाघ्रः ॥

स्थण्डिलाच्छयितरि व्रते ४ । २ । १५ ॥

तत्र इत्येव । समुदायेन चेद्व्रतं गम्यते । स्थण्डिले शेते स्थाण्डिलो मिथुः ॥

इति १३७ अंशाः ।

संस्कृतं भक्षाः ४ । २ । १६ ॥

सप्तम्यन्तादण् संस्कृतेऽर्थे । यत्संस्कृतं भक्षाश्चेत्ते स्युः । भ्राष्ट्रे संस्कृता भ्राष्ट्रा यवाः ॥

द्विगोर्लुगनपत्ये ४ । १ । ८८ ॥

द्विगोर्निमित्तं यस्ताद्धितोऽजादिरनपत्यार्थः प्राग्दीव्यतीयस्तस्य लुक् । अष्टसु कपालेषु संस्कृतः अष्टाकपालः पुरोडाशः ॥

शूलोखाद्यत् ४ । २ । १७ ॥

अणोऽपवादः । शूले संस्कृतं शूल्यं मांसम् । उखा पात्रविंशेषः तस्यां संस्कृतमुख्यम् ॥

दध्नष्टक् ४ । २ । १८ ॥

दध्नि संस्कृतम् दाधिकम् ॥

उदश्वितोऽन्यतरस्याम् ४ । २ । १९ ॥

ठक् पक्षेऽण् ॥

इसुसुक्तान्तात्कः ७ । ३ । ५१ ॥

इस् उस् उक् त एतदन्तात्परस्य ठस्य कः । उदकेन श्वयति वर्धत इत्युदश्वित् तत्र संस्कृत औदश्वित्कः । औदश्वितः इसुसोः प्रतिपदोक्तयोर्ग्रहणत्वेद् । आशिषा चरत्याशिपिकः । उपा चरत्यौपिकः ॥

दोष उपसंख्यानम् ❀ ॥

दोभ्यां चरति दौष्कः ॥

क्षीरादृञ् ४ । २ । २० ॥

अत्र संस्कृतं इत्येव संबध्यते नतु भक्षा इति । तेन यवाग्वामपि भवति । क्षैरेयी ॥

सास्मिन्पौर्णमासीति ४ । २ । २१ ॥

इतिशब्दात् संज्ञायाम् इति लभ्यते । संज्ञायामिति काचित्कः पाठस्तु प्रामादिकः । पौषी पौर्णमास्यस्मिन्पौषो मासः ॥

आग्रहायण्यश्वत्थाट्टक् ४ । २ । २२ ॥

अग्रे हायनमस्या इत्याग्रहायणी । प्रज्ञादेराकृतिगणत्वादण् ।
पूर्वपदात्संज्ञायाम् इति णत्वम् । आग्रहायणी पौर्णमास्यस्मिन्ना-
ग्रहायणिको मासः । अश्वत्थेन युक्ता पौर्णमास्यश्वत्थः । निपात-
नात्पौर्णमास्यामपि लृक् । आश्वत्थिकः ॥

विभाषा फाल्गुनीश्रवणाकार्तिकीचैत्रीभ्यः ४ । २ । २३ ॥

एभ्यश्च पक्षेऽण् । फाल्गुनिकः फाल्गुनो मासः । श्रावणिकः
श्रावणः । कार्तिकिकः कार्तिकः । चैत्रिकः चैत्रः ॥

सास्य देवता ४ । २ । २४ ॥

इन्द्रो देवतास्येति ऐन्द्रं हविः । पाशुपतम् । बार्हस्पतम् ।
तस्यमानद्रव्य उद्देश्यविशेषो देवतामन्त्रः । स्तुत्या च ऐन्द्रो
मन्त्रः । आग्नेयो वै ब्राह्मणो देवतया इति तु शैपिकेऽर्थे । सर्वत्राग्नि
इति ढक् ॥

कस्येत् ४ । २ । २५ ॥

कशब्दस्येदादेशः प्रत्ययसंन्नियोगेन । यस्य इति लोपात्पर-
त्वादादिवृद्धिः । को ब्रह्मा देवतास्य कायं हविः । श्रीदेवतास्य
श्रायम् । शतरुद्रादश्च । चाच्छः । शतं रुद्रा देवता अस्य शत-
रुद्रियं शतरुद्रीयम् । घच्छयोर्विधानसामर्थ्यात् द्विगोलुगनपत्ये
इति न लृक् ॥

महेन्द्रादाणौ च ४ । २ । २९ ॥

चाच्छः । महेन्द्रियं हविः माहेन्द्रं महेंद्रीयम् ॥

सौमाद्व्यण् ४ । २ । ३० ॥

सौम्यम् । टित्वान्डीप् । सौमी ऋक् ॥

वाय्वृतुपिपुपसो यत् ४ । २ । ३१ ॥

वायव्यम् । ऋतव्यम् । रीदृतः यस्येति च । पिप्यम् । उपस्यम् ॥

पूर्णमासादण् वक्तव्यः ❀ ॥

पूर्णा मासोऽस्यां वर्त्तते इति पूर्णमासी तिथिः ॥

पितृव्यमातुलमातामहपितामहाः ४ । २ । ३६ ॥

एते निपात्यन्ते । पितुर्भ्रातरि व्यत् । पितुर्भ्राता पितृव्यः । मा-
तुर्दुलच् । मातुर्भ्राता मातुलः । मातृपितृभ्यां पितरि डामहच् ।
मातुः पिता मातामहः । पितुः पिता पितामहः । मातरि पिथ ।
मातामही । पितामही ॥

अवेर्दुग्धे सोढदूसमरीसचो वक्तव्याः ❀ ॥

सकारपाठसामर्थ्यान्न पः । अविंसोढम् । अविदूसम् । अविमरी-
सम् तिलान्निष्फलात्पिञ्जपेजौ । तिलपिञ्जः । तिलपेजः । वन्ध्य-
स्तिल इत्यर्थः । पिञ्जश्छन्दसि डिश्च । तिलिपिञ्जः ॥

तस्य समूहः ४ । २ । ३७ ॥

अत्र अचित्तादनुदात्तादेर्गोत्रात् केदारादिप्रतिपदाच्च पृथक् प्र-
त्यया वक्ष्यन्ते तान्यदिहित्योदाहरणीयम् । काकानां समूहः काकम् ।
वाकम् ॥

भिक्षादिभ्योऽण् ४ । २ । ३८ ॥

भिक्षाणां समूहो भैक्षम् । गर्भिणीनां समूहो गर्भिणम् । इह
भस्याडे इति पुंवद्भावे कृते इनण्यनपत्ये तेन नस्तद्धिते इति टिलोपो
न । युवतीनां समूहो यौवनम् । शत्रन्तादनुदात्तादेरञि, यौवतम् ॥

गोत्रोक्षोश्रोरभ्रराजराजन्यराजपुत्रवत्समनुष्याजाद्बुञ्

४ । २ । ३९ ॥

एभ्यः समूहे बुञ् । लौकिकमिह गोत्रं तच्चापत्यमात्रम् ।
युवोरनाकौ । ग्लुञ्चुकायनीनां समूहो ग्लौञ्चुकायनकम् । औक्षक-
मित्यादि । आपत्यस्य च इति यलोपे प्राप्ते प्रकृत्या अके राज-
न्यमनुष्ययुवानः । राजन्यकम् । मानुष्यकम् ॥

वृद्धाच्चेति वक्तव्यम् ❀ ॥

वार्द्धकम् ॥

केदाराद्यञ्च ४ । २ । ४० ॥

चाहुञ् । कैदार्यं कैदारकम् ॥

गणिकाया यभिति वक्तव्यम् ❀ ॥

गाणिक्यम् ॥

ठक्वचिनञ्च ४ । २ । ४१ ॥

चात्केदारादपि । क्वचिनां समूहः कावचिकम् । कैदारिकम् ॥

ब्राह्मणमाणववाडवाद्यत् ४ । २ । ४२ ॥

ब्राह्मण्यम् । माणव्यम् । वाडव्यम् ॥

पृष्ठादुपसंख्यानम् ❀ ॥

पृष्ठ्यम् ॥

ग्रामजनवन्धुभ्यस्तल् ४ । २ । ४३ ॥

ग्रामता । जनता । वन्धुता ॥

गजसहायाभ्यां चेति वक्तव्यम् ❀ ॥

गजता । सहायता । अद्गः सः क्रतो । अहीनः । अहर्गणसा-
ध्यमुत्पातः ऋतुमित्यर्थः । क्रतो किम् । आद्गः । इह खण्डिकादि-
न्वाद्यम् । अद्गत्तोरेव इति नियमाद्विडो न ॥

पश्वा णस् वक्तव्यः ❀ ॥

सिति च १ । ४ । १६ ॥

गिति परे पूर्व पदगंक्षम् । अमत्वादीर्गुणो न । पर्शूनां समूहः
पार्श्वम् ॥

अनुदात्तादेरञ् ४ । २ । ४४ ॥

साप्ततम । माय्यम् ॥

चरणेभ्यो धर्मवत् ४ । २ । ४६ ॥

पाठकम् । छान्दोग्यम् ॥

अचित्तदस्तिधेनोष्टक ४ । २ । ४७ ॥

साक्तुकम् । हास्तिकम् । धेनुकम् ॥

केशाश्वाभ्यां यञ्छावन्यतरस्याम् ४ । २ । ४८ ॥

पक्षे ठगणौ । कैश्यं केशिकम् । अश्वीयम् आश्वम् ॥

पाशादिभ्यो यः ४ । २ । ४९ ॥

पाश्या । तृण्या । धूम्या । वन्या । वात्या ॥

खलगोरथात् ४ । २ । ५० ॥

खल्या । गव्या । रथ्या ॥

इनित्रकट्यचश्च ४ । २ । ५१ ॥

खलादिभ्यः क्रमात् । खलिनी । गोत्रा । रथकट्या ॥

खलादिभ्य इनिर्वक्तव्यः ❀ ॥

डाकिनी । कुटुम्बिनी । आकृतिगणोऽयम् ॥

इति १३८ अंशाः ।

तदस्यां प्रहरणमिति क्रीडायां णः ४ । २ । ५७ ॥

दण्डः प्रहरणमस्यां क्रीडायां दाण्डा । मौष्टा ॥

घञः सास्यां क्रियेति भः ४ । २ । ५८ ॥

घञन्तात्क्रियावाचिनः प्रथमान्तादस्यामिति सप्तम्यर्थे स्त्रीलिङ्गे

अप्रत्ययः । घञः इति कृद्ग्रहणाद्गतिकारकपूर्वस्यापि ग्रहणम् ॥

श्येनतिलस्य पाते भे ६ । ३ । ७१ ॥

श्येनतिल एतयोर्भुभागमः अप्रत्ययपरे पातशब्द उत्तरपदे ।

श्येनपातोऽस्यां वर्तते श्येनपाता मृगया । तिलपातोऽस्यां वर्तते

तैलपाता स्वधा । श्येनतिलस्य किम् । दण्डपातोऽस्यां तिथी

वर्तते दाण्डपाता तिथिः । तदधीते तद्वेद ॥

ऋतूक्थादिसूत्रान्ताट्टक् ४ । २ । ६० ॥

ऋतुविशेषवाचिनामेवेह ग्रहणं तेभ्यो मुख्यायैभ्यो वेदितरि

तत्प्रतिपादकग्रन्थपरेभ्यस्त्वध्येतरि । आग्निष्टोमिकः । वाजपेयिकः ।

उक्तं सामविशेषः तल्लक्षणपरो ग्रन्थविशेषो लक्षणयोक्तृम् । तदधीते वेद वा आधिक्यः । मुख्यार्थात्तुक्त्यशब्दादृगर्णां नेष्येते । न्यायम्—नैयायिकः । वृत्तिम्—वार्तिकः । लोकायतम्—लौकायतिक इत्यादि ॥

सूत्रान्तात्त्वकल्पादेरेवेप्यते ❀ ॥

सांग्रहसूत्रिकः । अकल्पादेः किम् । कल्पसूत्रः ॥

विद्यालक्षणकल्पान्ताच्चेति वक्तव्यम् ❀ ॥

वायसविद्यिकः । गौलक्षणिकः । आश्वलक्षणिकः । पाराशरकल्पिकः ॥

अङ्गक्षत्रधर्मत्रिपूर्वाद्विद्यान्तान्नेति वक्तव्यम् ❀ ॥

आङ्गविद्यः । क्षात्रविद्यः । धर्मविद्यः । त्रिविधा विद्या त्रिविद्या तामधीते वेद वा त्रैविद्यः ॥

आख्यानाख्यायिकेतिहासपुराणेभ्यश्च ❀ ॥

यवक्रीतमाधिकृत्य कृतमाख्यानमुपचाराद्यवक्रीतम् । तदधीते वेति वां यावक्रीतिकः । वासवदत्तामधिकृत्य कृता आख्यायिका वासवदत्ता । अधिकृत्य कृते ग्रन्थे इत्यर्थे वृद्धाच्छः । तस्य लुवाख्यायिकाभ्यो बहुलम् इति लुप् । ततोऽनेन ठक् । वासवदत्तिकः ऐतिहासिकः । पुराणिकः ॥

सर्वादेः सादेश्च लुग्वक्तव्यः ❀ ॥

सर्ववेदानधीते सर्ववेदः । सर्वतन्त्रः । सर्वार्तिकः । द्विगोर्लुक् इति लुक् । द्वितन्त्रः ॥

इकन्पदोत्तरपदाच्छतपष्टेः पिकन्पथः ॥

पूर्वपदिकः । उत्तरपदिकः । शतपथिकः । शतपथिकी । पष्टिपथिकः । पष्टिपथिकी ॥

क्रमादिभ्यो वुन् ४ । २ । ६३ ॥

क्रमकः । क्रमपदाशिक्षामीमांसाक्रमादिः ॥

प्रोक्ताल्लुक् ४ । २ । ६४ ॥

प्रोक्तार्थकप्रत्ययात्परस्याध्येतृवेदितृप्रत्ययस्य लुक् । पणनं
पणः । घञर्थे कविधानम् इति कः । सोऽस्यास्तीति पणी तस्य
गोत्रापत्यं पाणिनः ॥

गाथिविदधिकेशिगणपणिनश्च ६ । ४ । १६५ ॥

एतेऽणि प्रकृत्या इति टिलोपो न । ततो यूनि इत् । पाणिनिः ।
पाणिनिना प्रोक्तं पाणिनीयम् । घृद्धाच्छः इत्यत्र इत्यण तु न ।
गोत्रे य इञ्जतदन्तादिति वक्ष्यमाणत्वात् । ततोऽध्येतृवेदिनणो लुक्
स्वरे स्त्रियां च विशेषः । पाणिनीयः पाणिनीया ॥

सूत्राच्च कोपधात् ४ । २ । ६५ ॥

सूत्रवाचिनः ककारोपधादध्येतृवेदितृप्रत्ययस्य लुक् । अप्रोक्तार्थ
आरम्भः अष्टावध्यायाः परिमाणमस्याष्टकं पाणिनेः सूत्रम् ।
तदधीयते विदन्ति वा अष्टकाः ॥

छन्दोब्राह्मणानि च तद्विषयाणि ४ । २ । ६६ ॥

छन्दांसि ब्राह्मणानि च प्रोक्तप्रत्ययान्तानि तद्विषयाणि अध्ये-
तृवेदितृप्रत्ययं विना न प्रयोज्यानीत्यर्थः । कठेन प्रोक्तमधीयते
कठाः । वैशम्पायनान्तेवासित्वाणिनिः । तस्य कठचरवात् इति
लुक् । ततोऽण् । तस्य प्रोक्ताल्लुक् ॥

तदस्मिन्नस्तीति देशे तन्नाम्नि ४ । २ । ६७ ॥

उदुम्भराः सन्त्यस्मिन्देग औदुम्भरः ॥

तेन निर्वृत्तम् ४ । २ । ६८ ॥

कुशाम्बेन निर्वृत्ता कीशाम्बी नगरी ॥

तस्य निवासः ४ । २ । ६९ ॥

शिचीनां निवासो देशः शैवः ॥

अदूरभवश्च ४ । २ । ७० ॥

विदिशाया अदूरम्बं नगरं वैदिशम् । चक्राणेण प्रागुक्तास्त्रयोऽ-
र्थाः सानिधाप्यन्ते तेन वक्ष्यमाणप्रत्ययानां चातुर्गणित्वं मिथ्यानि ॥

जनपदे लुप् ४ । २ । ८१ ॥

जनपदे वाच्ये चातुरर्थिकस्य लुप् ॥

लुपि युक्तवद्व्यक्तिवचने १ । २ । ५१ ॥

लुपि सति प्रकृतिवद्विद्वचने । पञ्चालानां निवासो जनपदः
पञ्चालाः । कुरवः । अङ्गाः । वङ्गाः । कलिङ्गाः ॥

विशेषणानां चाजातेः १ । २ । ५२ ॥

लुप्रर्थस्य विशेषणानामपि तद्वद्विद्वचने स्तो जातिं वर्जयित्वा ।
पञ्चाला रमणीयाः । गोदौ रमणीयौ । अजातेः किम् । पञ्चाला
जनपदः । गोरी ग्रामः । हरीतक्यादिषु व्यक्तिः । हरीतक्याः
फलानि हरीतक्यः ॥

खलतिकादिषु वचनम् ❀ ॥

खलतिकस्य पर्वतस्यादूरमवानि खलतिकं वनानि ॥

मनुष्यलुपि प्रतिषेधः ❀ ॥

मनुष्यलक्षणं लुप्रर्थे विशेषणानां न । लुवन्तस्य तु भवती-
त्यर्थः । चञ्चा अभिरूपः ॥

इति १३९ अंशाः ।

वरणादिभ्यश्च ४ । २ । ८२ ॥

अजनपदार्थे आरम्भः । वरणानामदूरमवं नगरं वरणा ॥

शकेराया वा ४ । २ । ८३ ॥

अस्माद्यातुरर्थिकस्य वा लुप् ॥

ठक्ठौ च ४ । २ । ८४ ॥

शर्कराया पर्तान्नः । वक्ष्यमाणे कुमुदादौ वगहादौ च पाठसाम-
र्थ्यान्पक्षे ठक्ठौ । वाप्रहणमामर्थ्यत्पक्षे आत्सर्गिकेऽण् तस्य
लुप्रिषण्वः । षट् रूपाणि । शर्करा शर्करं शर्करिकं शर्करीयं
शर्करिकं शर्करिकम् ॥

कुमुदनडवेतसेभ्यो इतुप् ४ । २ । ८७ ॥

कुमुद्धान् । नड्वान् । वेतस्वान् । आद्ययोः शयः इत्यन्त्ये मादु-
पधायाः इति वक्ष्यमाणेन वः ॥

महिपाञ्चेति वक्तव्यम् ❀ ॥

-महिष्मान्नाम देशः ॥

नडशादाड्डलच् ४ । २ । ८८ ॥

नड्डलः । शादो जम्बालघासयोः इत्यमरः । शाद्लः ॥

शिखाया वलच् ४ । २ । ८९ ॥

शिखावलम् ॥ इति चातुरर्थिकाः ॥

शेषे ४ । २ । ९२ ॥

अपत्यादिचतुरर्थ्यन्तादन्योऽर्थः शेषस्तत्राणादयः । चक्षुषा
गृह्यते चाक्षुषं रूपम् । श्रावणः शब्दः । औपनिपदः पुरुषः ।
दृपदि पिष्टा दार्पदाः सक्तवः । उलूखले क्षुण्ण औलूखलो यावक् ।
अश्वैरुह्यत आश्वो रथः । चतुर्भिरुह्यते चातुरं शकटम् । चतुर्दश्यां
दृश्यते चातुर्दशं रक्षः । शेषे इति लक्षणं चाधिकारश्च । तस्य
विकार इत्यतः प्राक्छेपाधिकारः ॥

राष्ट्रावारपाराद्वखौ ४ । २ । ९३ ॥

आभ्यां क्रमाद्वखौ शेषे । राष्ट्रियः । अवारपारीणः ॥

अवारपाराद्विगृहीतादपि विपरीताञ्चेति वक्तव्यम् ❀ ॥

अवारीणः । पारीणः । पारावारीणः । इह प्रकृतिविशेषाद्वादय-
ष्ट्युट्युलन्ता । प्रत्यया उच्यन्ते । तेषां जातादयोऽर्थविशेषाः
समर्थविभक्तयश्च वक्ष्यन्ते ॥

ग्रामाद्यखभौ ४ । २ । ९४ ॥ .

ग्राम्यः ग्रामीणः ॥

कुलकुक्षिग्रीवाभ्यः श्वास्यलंकारेषु ४ । २ । ९६ ॥

कौलेयकः श्वा कौलोऽन्यः । कौक्षेयकोऽसिः कौक्षोऽन्यः । त्रैवे-
यकोऽलंकारः त्रैवोऽन्यः ॥

नद्यादिभ्यो ढक् ४ । २ । ९७ ॥

नादेयम् । माहेयम् । वाराणसेयम् ॥

दक्षिणापश्चात्पुरसस्त्यक् ४ । २ । ९८ ॥

दक्षिणा इत्याजन्तमव्ययम् । दाक्षिणात्यः । पाश्चात्यः । पौरस्त्यः ॥

कापिश्याः ष्फक् ४ । २ । ९९ ॥

कापिश्यां जातादि कापिशायनं मधु कापिशायनी द्राक्षा ॥

द्युप्रागपागुदक्प्रतीचो यत् ४ । २ । १०१ ॥

दिव्यम् । प्राच्यम् । अवाच्यम् । उदीच्यम् । प्रतीच्यम् ॥

अव्ययात्त्यप् ४ । २ । १०४ ॥

अमेहकृतीतिभ्य एव । अमान्तिकसहायार्थयोः । अमात्यः ।
इहत्यः । कृत्यः । ततस्त्यः । तत्रत्यः । परिगणनं किम् । उपरि-
ष्ठाद्भव औपरिष्ठः । अव्ययानां ममात्रे ढिलोपः । अनित्योऽयं
बहिषष्टिलोपविधानात् । तेनेह न । आरातीयः । शाश्वतीयः ॥

त्यन्नेर्ध्रुव इति वक्तव्यम् ❀ ॥

नित्यः ॥

निसो गते ❀

ह्रस्वात्तादौ तद्धिते ८ । ३ । १०१ ॥

ह्रस्वादिणः परस्य सस्य षः तादौ तद्धिते । निर्गतो वर्णाश्रमे-
भ्यो निष्ठघश्चाण्डालादिः । अरण्याण्णः । आरण्याः सुमनसः ॥
दूरादेत्यः । दूरेत्यः । उत्तरादाहृत् । औत्तराहः ॥

ऐपमोह्यः श्वसोऽन्यतरस्याम् ४ । २ । १०५ ॥

एभ्यस्त्वन्वा पक्षे वक्ष्यमाणा ट्युट्चुर्ल । ऐपमत्स्यम् ऐपम-
स्वनम् । ह्रस्व्यं ह्रस्वनम् । श्वस्व्यं श्वस्तनम् । पक्षे शोऽस्तिकं
वक्ष्यते । णीट्पस्याचामादिस्तदृद्धम् । त्यदादीनि च ॥

वृद्धाच्छः ४ । २ । ११४ ॥

शालीयः । मालीयः । तदीयः ॥

एङ् प्राचां देशे १ । १ । ७५ ॥

एङ् । यस्याचामादिस्तद्वदसंज्ञं वा देशाभिधाने । एणीपचनीयः
गौनर्दीपः । भोजकरीयः । पक्षेऽणि ऐणीपचनः । गौनर्दः ।
भोजकटः । एङ् किम् । आहिच्छत्रः । कान्यकुब्जः ॥

भवतष्टकसौ ४ । २ । ११५ ॥

वृद्धाद्भवत एतौ भावत्कः । जश्त्वम् । भवदीयः । वृद्धात्
इत्यनुवृत्तेः । शत्रन्तादणेव । भावतः ॥

काश्यादिभ्यष्ट्भिठौ ४ । २ । ११६ ॥

इकार उच्चारणार्थः । काशिकी काशिका । वैदिकी वैदिका ॥
आपदादिपूर्वपदात्कालान्तात् । आपदादिराकृतिगणः । आप-
त्कालिकी आपत्कालिका ॥

नगरात्कुत्सनप्रावीण्ययोः ४ । २ । १२८ ॥

नगरशब्दाद्बुञ् कुत्सने प्रावीण्ये च गम्ये । नागरकश्चरः
शिल्पी वा । कुत्सन इति किम् । नागरा ब्राह्मणाः ॥

अरण्यान्मनुष्ये ४ । २ । १२९ ॥

बुञ् । अरण्याणः इत्यस्यापवादः ॥

पथ्यध्यायन्यायविहारमनुष्यहस्तिष्विति वाच्यम् ❀ ॥

आरण्यकः पन्था । अध्यायो न्यायो विहारो मनुष्यो हस्ती वा ॥

वा गोमयेषु ❀ ॥

आरण्यका आरण्या वा गोमयाः ॥

गहादिभ्यश्च ४ । २ । १३८ ॥

छः । गहीयः । मुखपार्श्वतसौर्लोपश्च । मुखतीयम् । पार्श्वतीयम् ।
अव्ययाना भमात्रे टिलोपस्यानित्यता ज्ञापयितुमिदम् । कुग्ज-

नस्य परस्य च । जनकीयम् । परकीयम् । देवस्य च । देवकीयम् ।
स्वस्य च । स्वकीयम् ॥

राज्ञः क च ४ । २ । १४० ॥

वृद्धत्वाच्छे सिद्धे तत्संनियोगेन कादेशमात्रं विधीयते । राज-
कीयम् ॥

पर्वताच्च ४ । २ । १४३ ॥

पार्वतीयः ॥

विभाषा मनुष्ये ४ । २ । १४४ ॥

मनुष्यभिन्नेऽर्थे पर्वताच्छे वा पक्षेऽण् । पर्वतीयानि पार्वतानि
वा फलानि । अमनुष्ये किम् । पार्वतीयो मनुष्यः ॥

युष्मदस्मदोरन्यतरस्यां खञ्च ४ । ३ । १ ॥

चाच्छः पक्षेऽण् । युवयोः युष्माकं वा अयं युष्मदीयः ।
अस्मदीयः ॥

तस्मिन्नणि च युष्माकास्माकौ ४ । ३ । २ ॥

युष्मदस्मदोरेतावादेशौ खञ्यणि च । यौष्माकीणः । आस्मा-
कीनः । यौष्माकः । आस्माकः ॥

तवकममकावेकवचने ४ । ३ । ३ ॥

एकार्थवाचिनोर्युष्मदस्मदोस्तवकममकौ खञ्यणि च । तव-
कीनः तवकः । मामकीनः । मामकः । छे तु प्रत्ययोत्तरपदयोश्च ।
त्वदीयः । मदीयः । उत्तरपदे त्वत्पुत्रः । मत्पुत्रः ॥

मध्यान्मः ४ । ३ । ८ ॥

मध्यमः ॥

असांप्रतिके ४ । ३ । ९ ॥

मध्यशब्दादकारप्रत्ययः सांप्रतिकेऽर्थे । उत्कर्षोपकर्षहीनो मध्यो
वैयाकरणः । मध्यं दारु । नातिह्रस्वं नातिदीर्घमित्यर्थः ॥

इति १४० अंशाः । इति चतुर्थोऽध्यायस्य द्वितीयः पादः ।

कालाट्टञ् ४ । ३ । ११ ॥

कालवाचिभ्यष्टञ् । मासिकम् । सांवत्सरिकम् । सायंप्रातिकः ।
पौनःपुनिकः । कथं तर्हि शार्वरस्य तमसो निषिद्धये इति कालि-
दासः । अनुदितौ पसरग इति भारविः । समानकालीनम् ।
प्राक्कालीनमित्यादि च । अपभ्रंशा एवते इति प्रामाणिकाः । तत्र
जातः इति यावत्कालाधिकारः ॥

श्वसस्तुद् च ४ । ३ । १५ ॥

श्वसशब्दाद्वञ्वा तस्य तुडागमश्च ॥

द्वारादीनां च ७ । ३ । ४ ॥

द्वारस्वरस्वाध्यायव्यल्कशस्वास्तिस्वरस्फ्यकृतस्वादुष्टदुश्चश्चन्स्व
एपां न वृद्धिरैजागमश्च । शौवस्तिकम् ॥

संधिवेलाद्यृतुनक्षत्रेभ्योऽण् ४ । ३ । १६ ॥

संधिवेलादिभ्य ऋतुभ्यो नक्षत्रेभ्यश्च कालवृत्तिभ्योऽण् । संधि-
वेलायां भवं सांधिवेलम् । त्रैष्मम् । तैपम् । संधिवेला संध्या अ-
मावस्या त्रयोदशी चतुर्दशी पौर्णमासी प्रतिपत् । संवत्सरात्फल-
वर्णनोः । सांवत्सरं फलं पर्वं वा सांवत्सरम् । सांवत्सरिकमन्यत् ॥

प्रावृष एण्यः ४ । ३ । १७ ॥

प्रावृषेण्यः ॥

वर्षाभ्यष्टक् ४ । ३ । १८ ॥

वर्षासु साधु वार्षिकं वासः । कालात्साधुपुण्यत्पच्यमानेषु
इति साध्वर्थे ॥

सर्वत्राण्च तलोपश्च ४ । ३ । २२ ॥

हेमन्तादण् तलोपश्च वेदलोकयोः । चकारात्पक्षे ऋत्वण् । हेम-
नम् । हेमन्तम् ॥

सायंचिरंप्राहेप्रगेऽव्ययेभ्यष्ट्युट्युलो तुद् च ४ । ३ । २३ ॥

सायभित्यादिभ्यश्चतुर्भ्योऽय्येभ्यश्च कालवाचिभ्यष्ट्युटञ्चलौ
तयोस्तुट् च । तुटः प्रागनादेशः । अनद्यतन इत्यादिनिर्देशात् ।
सायंतनम् । चिरंतनम् । प्राह्वप्रगयेरेदन्तत्वं निपात्यते । प्राह्वेतनम् ।
प्रगेतनम् । दोपातनम् । दिवातनम् ॥

चिरपरुत्परारिभ्यस्तौ वक्तव्यः ❀ ॥

चिरत्नम् । परुत्नम् । परारित्नम् । अग्रादिपश्चाद्धिमच् ।
अग्रिमम् । आदिमम् । पश्चिमम् । अन्ताच्च । अन्तिमम् ॥

विभाषा पूर्वाह्वापराह्वाभ्याम् ४ । ३ । २४ ॥

आभ्या ट्युटञ्चलौ वा स्तस्तयोस्तुट् च पक्षे ठञ् । पूर्वाह्वेतनम् ।
अपराह्वेतनम् । घकालतेनेषु इत्यलुक् । पूर्वाह्वः । सोढोऽस्थेति वि-
ग्रहे तु पूर्वाह्वेतनम् । अपराह्वेतनम् । पौर्वाह्विकम् । आपराह्विकम् ॥

तत्र जातः ४ । ३ । २५ ॥

सप्तमीसमर्थाज्जात इत्यर्थेऽणादयो घादयश्च । सुप्ते जातः
सौमनः । औत्सः । राष्ट्रियः । अवारपारीण इत्यादि ॥

प्रावृषष्टक् ४ । ३ । २६ ॥

एण्यस्यापवादः । प्रावृषि जातः प्रावृषिकः ॥

संभूते ४ । ३ । ४१ ॥

सुप्ते संभवति सौमनः ॥

कोशाङ्गु ४ । ३ । ४२ ॥

कौशेर्यं वस्त्रम् ॥

कालात्साधुपुष्प्यत्पच्यमानेषु ४ । ३ । ४३ ॥

हेमन्ते साधुर्हेमन्तः प्राकारः । वसन्ते पुष्प्यन्ति वासन्त्यः
कुन्दलताः । शरदि पच्यन्ते शारदाः शालयः ॥

उप्ते च ४ । ३ । ४४ ॥

हेमन्त उप्यन्ते हेमन्ता यवाः ॥

आश्वयुज्या युञ् ४ । ३ । ४५ ॥

ठञोऽपवादः । आश्वयुज्यामुता आश्वयुजका मापाः ॥

ग्रीष्मवसन्तादन्यतरस्याम् ४ । ३ । ४६ ॥

पक्षे ऋत्वण् । ग्रीष्मकं ग्रीष्मम् । वासन्तकं वासन्तम् ॥

तत्र भवः ४ । ६ । ५३ ॥

सुप्ते भवः सौम्रः । राष्ट्रियः ॥

दिगादिभ्यो यत् ४ । ३ । ५४ ॥

दिश्यम् । वर्ग्यम् ॥

शरीरावयवाच्च ४ । ३ । ५५ ॥

दन्त्यम् । कर्ण्यम् ॥

दृतिकुक्षिकलशिवस्त्यस्त्यहेर्दृञ् ४ । ३ । ५६ ॥

दाँतयम् । कौक्षेयम् । कलिशिर्घटस्तत्र भवं कालशेयम् ॥

ग्रीवाभ्योऽण्व ४ । ३ । ५७ ॥

चाङ्गञ् । ग्रीवेयं ग्रीवम् ॥

गम्भीराभ्यः ४ । ३ । ५८ ॥

गम्भीरे भवं गाम्भीर्यम् ॥

पञ्चजनादुपसंख्यानम् ❀ ॥

पाञ्चजन्यः ॥

अव्ययीभावाच्च ४ । ३ । ५९ ॥

परिमुखं भवं पारिमुख्यम् । परिमुख्यादिभ्य एवेप्यते नेह ।
औपकूलः ॥

अन्तःपूर्वपदादृञ् ४ । ३ । ६० ॥

अव्ययीभावात् इत्येव । वेदमन्यन्तरन्तर्वेदमम् । तत्र भवमा-
न्तर्वेदिकम् । आन्तर्गणिकम् ॥

अध्यात्मादेष्टुभिप्यते ❀ ॥

अध्यात्मं भवमाध्यात्मिकम् ॥

अनुशतिकादीनां च ७ । ३ । २० ॥

एषांमुभयपदवृद्धिः त्रिति णिति किति च । आधिर्दविकम् ।
आधिर्भौतिकम् । ऐहलौकिकम् । पारलौकिकम् । अध्यात्मादिर-
नुशतिकादिश्चाकृतिगणः ॥

जिह्वामूलाद्गुलेऽद्यः ४ । ३ । ६२ ॥

जिह्वामूलीयम् । अद्गुलीयम् ॥

कर्णललाटात्कनलंकारे ४ । ३ । ६५ ॥

कर्णिका । ललाटिका ॥

तत आगतः ४ । ३ । ७४ ॥

सुप्तादागतः सौघः ॥

विद्यायोनिबंधेभ्यो बुञ् ४ । ३ । ७७ ॥

औपाध्यायकः । पैतामहकः ॥

ऋतपुञ् ४ । ३ । ७८ ॥

बुञोऽपवादः । हौत्कम् । मात्कम् ॥

पितुर्यञ्च ४ । ३ । ७९ ॥

चाट् ॥ रीङ्गतः यस्य इति लोपः । पिञ्च्यं पैत्कम् ॥

नञः शुचीश्वरक्षेत्रज्ञकुशलनिपुणानाम् ७ । ३ । ३० ॥

नञः परेषां शुच्यादिपञ्चानामादिरचो वृद्धिः पूर्वपदस्य तु वा
विदादौ परे आशीचं अशीचम् । अनैश्वर्यं अनैश्वर्यम् । आक्षेत्रज्ञं
अक्षेत्रज्ञम् । आकौशलं अकौशलम् । अनैपुणं अनैपुणम् ॥

प्रभवति ४ । ३ । ८३ ॥

ततः इत्येव । हिमवतः प्रभवति हैमवती गङ्गा ॥

विदूराञ्च्यः ४ । ३ । ८४ ॥

विदूरात्प्रभवति वैदूर्यो मणिः ॥

अधिकृत्य कृते ग्रन्थे ४ । ३ । ८७ ॥

तत इत्येव । शारीरकमाधिकृत्य कृतो ग्रन्थः शारीरकीयः ।
शारीरकं भाष्यमिति त्वभेदोपचारात् ॥

शिशुकन्दयमसभद्वन्द्वेन्द्रजननादिभ्यश्छः ४।३।८८॥

शिशूनां कन्दनं शिशुकन्दः । तमधिकृत्य कृतो ग्रन्थः शिशु-
कन्दीयः । यमस्य सभा यमसभम् । ह्रीवत्वं निपातनात् । यमस-
भीयः । किरातार्जुनीयम् । इन्द्रजननादिराकृतिगणः ॥

इति १४१ अंशाः ।

सोऽस्य निवासः ४ । ३ । ८९ ॥

सुघ्नो निवासोऽस्य सौघ्नः ॥

अभिजनश्च ४ । ३ । ९० ॥

सुघ्नोऽभिजनोऽस्य सौघ्नः । यत्र स्वयं वसति स निवासः । यत्र
पूर्वरूपितं सोऽभिजनः इति विवेकः ॥

तेन प्रोक्तम् ४ । ३ । ९०१ ॥

पाणिनिना प्रोक्तं पाणिनीयम् ॥

तित्तिरिवरतन्तुखण्डिकोखाच्छण् ४ । ३ । ९०२ ॥

छन्दो ब्राह्मणानि इति तद्विषयता । तित्तिरिणा प्रोक्तमधीयते
तैत्तिरीयाः ॥

काश्यपकौशिकाभ्यामृषिभ्यां णिनिः ४ । ३।९०३॥

काश्यपेन प्रोक्तमधीयते काश्यपिनः ॥

कलापिवैशम्पायनान्तेवासिभ्यश्च ४ । ३ । ९०४ ॥

कलाप्यन्तेवासिभ्यः । हरिद्वणा प्रोक्तमधीयते हाग्द्रिणिः ।
वैशम्पायनान्तेवासिभ्य आलम्बिनः ॥

शौनकादिभ्यश्छन्दसि ४ । ३।९०६ ॥

छन्दस्यभिधेय एभ्यो णिनिः । शौनकेन प्रोक्तमधीयते शौन-
किनः ॥

कठचरकाल्लुक् ४ । ३ । १०७ ॥

आभ्यां प्रोक्तप्रत्ययस्य लुक् । कठेन प्रोक्तमधीयते कठाः ।
चरकाः ॥

पाराशर्यशिलालिभ्यां भिक्षुनटसूत्रयोः ४ । ३ । ११० ॥

पाराशर्येण प्रोक्तं भिक्षुसूत्रमधीयते पाराशरिणो भिक्षवः ।
शैलालिनो नटाः ॥

कर्मन्दकृशाश्वदिनिः ४ । ३ । १११ ॥

भिक्षुनटसूत्रयोः इत्येव । कर्मन्देन प्रोक्तमधीयते कर्मन्दिनो भि-
क्षवः । कृशाश्विनो नटाः ॥

तेनैकदिक् ४ । ३ । ११२ ॥

सुदाम्ना अद्रिणा एकदिक्सौदामनी ॥

तसिश्च ४ । ३ । ११३ ॥

स्वरादिपाठादव्ययत्वम् । पीलुमूलेन एकदिक् पीलुमूलतः ॥

उरसो यच्च ४ । ३ । ११४ ॥

चात्तसिः । अणोऽपवादः । उरसैकदिगुरस्यः । उरस्तः ॥

उपज्ञाते ४ । ३ । ११५ ॥

तेन इत्येव । पाणिनिनोपज्ञातं पाणिनीयम् ॥

कृते ग्रन्थे ४ । ३ । ११६ ॥

वाररुचिना कृतो वाररुचो ग्रन्थः ॥

संज्ञायाम् ४ । ३ । ११७ ॥

तेन इत्येव । अग्रन्थार्थमिदम् । माक्षिकाभिः कृतं माक्षिकं मधु ॥

धुद्राभ्रमरवटरपादपादञ् ४ । ३ । ११९ ॥

तेन कृते संज्ञायाम् । धुद्राभिः कृतं क्षीद्रम् । भ्रामरम् । वाट-
रम् । पादपम् ॥

तस्येदम् ॥

उपगोरिदमीपगवम् ॥

इन्द्राहुन्वैरमैथुनिकयोः ४ । ३ । १२५ ॥

काकोल्लिका । कुत्सकुशिकिका ॥

वैरे देवासुरादिभ्यः प्रतिषेधः ❀ ॥

देवासुरम् ॥

गेत्रचरणाहुञ् ४ । ३ । १२६ ॥

औपगवकम् ॥

चरणाद्धर्मात्राययोरिति वक्तव्यम् ❀ ॥

काठकम् । समाप्ताः शैपिकाः ॥

तस्य विकारः ४ । ३ । १३४ ॥

अश्मनो विकारे टिलोपो वक्तव्यः ❀ ॥

अश्मनो विकार आश्मः । भास्मनः । मार्तिकः ॥

अवयवे च प्राण्यौपधिवृक्षेभ्यः ४ । ३ । १३५ ॥

चादिकारे । मयूरस्थावयवो विकारो वा मायूरः । मौरं काण्डं
भस्म वा । पैप्पलम् ॥

विल्वादिभ्योऽण् ४ । ३ । १३६ ॥

धैल्वम् ॥

कोपधाच्च ४ । ३ । १३७ ॥

अण् अत्रोऽपवादः । तर्कुं तार्कवम् । तैत्तिडीम् ॥

त्रपुजतुनोः पुक् ४ । ३ । १३८ ॥

आभ्यामण् विकारे एतयोः पुगागमश्च । प्राणुपम् । जातुपम् ॥

ओरञ् ४ । ३ । १३९ ॥

दैवदारवम् । भाद्रदारवम् ॥

मयङ्गैतयोर्भापायामभक्ष्याच्छादनयोः ४ । ३ । १४३ ॥

प्रकृतिमात्रान्मयद्वा विकारावयवयोः । अश्ममयम् । आश्म-
नम् । अमक्ष्य इत्यादि किम् । मौद्गः सूपः । कार्पासमाच्छादनम् ॥

नित्यं वृद्धशरादिभ्यः ४ । ३ । १४४ ॥

आम्नमयम् । शर्ममयम् ॥

एकाचो नित्यम् ❀ ॥

त्वद्मयम् । वाद्मयम् । कथं तर्हि आप्थं अम्मयम् इति
तस्येदम् इत्यण्णंतात्स्वार्थे ष्यञ् ॥

गोश्च पुरीषे ४ । ३ । १४५ ॥

गोः पुरीषं गोमयम् ॥

पिष्टाच्च ४ । ३ । १४६ ॥

मयद् विकारे । पिष्टमयं भस्म । कथं पैष्टी सुरेति सामान्यवि-
वक्षाया तस्येदम् इत्यण् ॥

संज्ञायां कन् ४ । ३ । १४७ ॥

पिष्टात् इत्येव । पिष्टस्य विकारविशेषः पिष्टकः । पूपोऽपूपः
पिष्टकः इत्यमरः ॥

क्रीतवत्परिमाणात् ४ । ३ । १५६ ॥

प्राग्बहतेष्टक् इत्यारभ्य क्रीतार्थे ये प्रत्यया येनोपाधिना परि-
माणाद्विहितास्ते तथैव विकारेऽतिदिश्यन्ते । अणादीनामपवादः ।
निष्केण क्रीतं नैष्किकम् । एवं निष्कस्य विकारोऽपि नैष्किकः ।
शतस्य विकारः शत्यः शतिकः ॥

एण्या ढञ् ४ । ३ । १५९ ॥

ऐणेयम् । एणस्य तु ऐणम् ॥

गोपयसोर्यन् ४ । ३ । १६० ॥

गव्यम् । पयस्यम् ॥

द्रोश्च ४ । ३ । १६१ ॥

ह्रृक्षस्तस्य विकारोऽव्यवो वा द्रव्यम् ॥

माने वयः ४ । ३ । १६२ ॥

द्रोः इत्येव । ह्रवधम् । यौतवं ह्रवयं पाठ्यमिति मानार्थकं त्रयम् ।
इत्यमरः ॥

फले लुक् ४ । ३ । १६३ ॥

विकारावयवप्रत्ययस्य लुक् फले ॥

लुक् तद्धितलुकि १ । २ । ४९ ॥

तद्धितलुकि सत्युपसर्जनस्त्रीप्रत्ययस्य लुक् इति ङीपो लुक् ।
आमलक्याः फलमामलकम् ॥

पुक्षादिभ्योऽण् ४ । ३ । १६४ ॥

विधानसामर्थ्यान्न लुक् । छाक्षम् ॥

न्यग्रोधस्य च केवलस्य ७ । ३ । १०५ ॥

अस्य न वृद्धिरेजागमश्च । नेयग्रोधम् ॥

जम्बू वा ४ । ३ । १६५ ॥

जम्बूशब्दात्फलेऽण्वा । जाम्बवम् । पक्षे औरङ्ग तस्य लुक् ।
जम्बूः ॥

लुप् च ४ । ३ । १६६ ॥

जम्बूवाः फलप्रत्ययस्य लुब्बा लुपि युक्तरत् । जम्बूवाः फलं
जम्बूः ॥

फलपाकशुषामुपसंख्यानम् ❀ ॥

त्रीहयः । मुद्गाः ॥

पुष्पमूलेषु बहुलम् ॥

मल्लिकायाः पुष्पं मल्लिका । जात्याः पुष्पं जाती । विदार्या मूलं
विदारी । बहुलग्रहणान्नेह । पाटलानि पुष्पाणि । माल्वानि मूला-
नि । बाहुलकात्कचिल्लुक् । अशोकम् । करवीरम् ॥

हरीतक्यादिभ्यश्च ४ । ३ । १६७ ॥

एभ्यः फलप्रत्ययस्य लुप् ॥

हरीतक्यादीनां लिङ्गमेव प्रकृतिवत् ॥

हरीतक्याः फलानि हरीतक्यः ॥

कंसीयपरशव्ययोर्यभौ लुक्च ४ । ३ । १६८ ॥

कंसीयपरशव्यशब्दाभ्यां यञ्जौ छ्यतोश्च लुक् । कंसाय हितं कंसीयम् । तस्य विकारः कांस्यम् । परशवे हितं परशव्यम् । तस्य विकारः पारशवः ॥ इति प्राग्दीव्यतीयाः समाप्ताः ॥

इति १४२ अंशाः ।

प्राग्ग्रहतेष्टक् ४ । ४ । १ ॥

तद्ग्रहतीत्यतः प्राक् ङगधिक्रियते ॥

तदाहेति माशब्दादिभ्य उपसंख्यानम् ❀ ॥

माशब्दः कारि इति य आह स माशब्दिकः ॥

स्वागतादीनां च ७ । ३ । ७ ॥

ऐञ्ज । स्वागतमित्याह । स्वागतिकः । स्वाध्वरिकः स्वाङ्गस्यापत्यं स्वाङ्गिः । व्यङ्गस्यापत्यं व्याङ्गिः । व्यङ्गस्यापत्यं व्याङ्गिः । व्यवहारेण चरति व्यावहारिकः । स्वपती साधु स्वापतेयम् ॥

आहौ प्रभूतादिभ्यः ॥

प्रभृतमाह प्राभूतिकः । पार्याप्तिकः ॥

पृच्छतौ सुस्नातादिभ्यः ॥

सुस्नातं पृच्छति सौस्नातिकः । सौखशायनिकः । अनुगतिकादिः ॥

गच्छतौ परदारादिभ्यः ॥

पारदारिकः । गौरुतल्पिकः ॥

तेन दीव्यति खनति जयति जितम् ४ । ४ । २ ॥

अक्षैर्दीव्यति आक्षिकः । अभ्या खनति आभ्रिकः । अक्षैर्जयति
आक्षिकः । अक्षैर्जितमाक्षिकम् ॥

संस्कृतम् ४ । ४ । ३ ॥

दध्ना संस्कृतं दाधिकम् । मारिचिकम् ॥

तरति ४ । ४ । ५ ॥

उडुपेन तरति औडुपिकः ॥

नौ ब्यचष्टन् ४ । ४ । ७ ॥

नाविकः । घटिकः । बाहुभ्यां तरति बाहुका स्त्री ॥

चरति ४ । ४ । ८ ॥

तृतीयान्ताद्गच्छतिभक्षयतीत्यर्थयोष्टक् । हस्तिना चरति हा-
स्तिकः । शाकटिकः । दध्ना भक्षयति दाधिकः ॥

वेतनादिभ्यो जीवति ४ । ४ । १२ ॥

वेतनेन जीवति वैतनिकः । धानुष्कः ॥

वस्त्रक्रयविक्रयाट्टन् ४ । ४ । १३ ॥

वस्त्रेण मूलेन जीवति वास्त्रिकः । क्रयविक्रयग्रहणं संघातविगृ-
हीतार्थम् । क्रयविक्रयिकः । क्रयिकः । विक्रयिकः ॥

आयुधाच्छ च ४ । ४ । १४ ॥

चाट्टन् । आयुधेन जीवति आयुधीयः आयुधिकः ॥

निर्वृत्तेऽक्षद्यूतादिभ्यः ४ । ४ । १९ ॥

अक्षद्यूतेन निर्वृत्तमाक्षद्यूतिकं वैरम् । कत्रेर्मम् नित्यम् । कृत्रिमम् ।
पक्त्रिमम् । भावप्रत्ययान्तादिमप् । पात्रिमम् । त्यागिमम् ॥

अपमित्ययाचिताभ्यां कक्कनौ ४ । ४ । २१ ॥

अपमित्येति त्यवन्तम् । अपमित्य निर्वृत्तमापमित्यकम् ।
याचितेन निर्वृत्तं याचितकम् ॥

लवणाल्लुक् ४ । ४ । २४ ॥

लवणेन संसृष्टो लवणः स्रपः । लवणं शाकम् ॥

मुद्गादण् ४ । ४ । २५ ॥

मौद्ग ओदनः ॥

व्यञ्जनैरुपसिक्ते ४ । ४ । २६ ॥

ठक् । दध्ना उपसिक्तं दाधिकम् ॥

ओजःसहोऽम्भसा वर्तते ४ । ४ । २७ ॥

ओजसा वर्तते ओजसिकः शूरः । साहसिकश्चौरः । आम्भसि-
को मत्स्यः ॥

तत्प्रत्यनुपूर्वमीपलोमकूलम् ४ । ४ । २८ ॥

द्वितीयान्नादस्माद्दर्त्त इत्यस्मिन्नर्थे ठक् । क्रियाविशेषणत्वा-
द्वितीया । प्रतीपं वर्तते प्रातीपिकः । आन्वीपिकः । प्रातिलोमिकः
आनुलोमिकः । प्रातिकूलिकः । आनुकूलिकः ॥

परिमुखं च ४ । ४ । २९ ॥

परिमुखं वर्तते पारिमुखिकः । चात्पारिपार्श्विकः ॥

प्रयच्छति गर्ह्यम् ४ । ४ । ३० ॥

द्विगुणार्थं द्विगुणं तत्प्रयच्छति द्वैगुणिकः । त्रैगुणिकः ॥

वृद्धेर्वृधुपिभावो वक्तव्यः ॐ ॥

वार्धुपिकः ॥

कुसीददशैकादशात्पृष्ठचौ ४ । ४ । ३१ ॥

गर्ह्यार्थाभ्यामाभ्यामेतौ स्तः प्रयच्छतीत्यर्थे । कुसीदं वृद्धिस्त
दर्थं द्रव्यं कुसीदं तत्प्रयच्छतीति कुसीदिकः कुसीदिकी । एकाद-
शार्थत्वादेकादश ते च ते वस्तुतो दश चेति विश्रहेऽकारः समा-
सान्त ईह्व सृत्रे निमात्यते । दशैकादशिकः । दशैकादशिकी
दशैकादशान्प्रयच्छतीत्युत्तमर्ण एवेहापि तद्वितार्थः ॥

शब्ददुर्दुरं करोति ४ । ४ । ३४ ॥

शब्दं करोति शाब्दिकः । दार्दुरिकः ॥

पक्षिमत्स्यमृगान्हन्ति ४ । ४ । ३५ ॥

स्वरूपस्य पर्यायाणां विशेषाणां च ग्रहणम् । मत्स्यपर्यायेषु
मीनस्यैव । पक्षिणो हन्ति पाक्षिकः । शाकुनिकः । मायूरिकः ।
मात्स्यिकः । मैनिकः । शाकुलिकः । मार्गिकः । दारिणिकः ।
सारङ्गिकः ॥

धर्मं चरति ४ । ४ । ४१ ॥

धार्मिकः ॥

अधर्माच्चेति वक्तव्यम् ❀ ॥

आधार्मिकः ॥

समवायान्समवैति ४ । ४ । ४३ ॥

सामवायिकः । सामूहिकः ॥

परिपदो ष्यः ४ । ४ । ४४ ॥

परिपदं समवैति पारिष्यः ॥

सेनाया वा ४ । ४ । ४५ ॥

ष्यः पक्षे ठक् । सेन्याः सेनिकाः ॥

शिल्पम् ४ । ४ । ५५ ॥

मृदङ्गवादनं शिल्पमस्य मार्दङ्गिकः ॥

मण्डुकझञ्जरादन्यतरस्याम् ४ । ४ । ५६ ॥

मण्डुकवादनं शिल्पमस्य माण्डुकः माण्डुकिकः । शार्शरः
शार्शरिकः ॥

प्रहरणम् ४ । ४ । ५७ ॥

तदस्य इत्येव । अस्तिः प्रहरणमस्य आस्तिकः । धानुष्कः ॥

परश्वधाट्टञ्च ४ । ४ । ५८ ॥

पारश्वधिकः ॥

शक्तियष्टचोरीककृ ४ । ४ । ५९ ॥

शाक्तीकः । चाष्टीकः ॥

इति १४३ अंशाः ।

अस्तिनास्तिदिष्टं मतिः ४ । ४ । ६० ॥

तदस्य इत्येव । अस्ति परलोक इत्येवं मतिर्यस्य स आस्तिकः ।
नास्तीतिमतिर्यस्य स नास्तिकः । दिष्टमिति मतिर्यस्य स दैष्टिकः ॥

शीलम् ४ । ४ । ६१ ॥

अपूपमक्षणं शीलमस्य आपूपिकः ॥

छत्रादिभ्यो णः ४ । ४ । ६२ ॥

गुरोर्दोषाणामावर्णं छत्रं तच्छीलमस्य छात्रः ॥

कर्मस्ताच्छील्ये ६ । ४ । १७२ ॥

कर्म इति ताच्छील्ये णे टिलोपो निपात्यते । कर्मशीलः
कर्मः । नस्ताद्धिते इत्येव सिद्धे अण्कार्यं ताच्छीलिके णेऽपि । तेन
चौरी तापसीत्यादि सिद्धम् । ताच्छील्ये किम् । कर्मणः ॥

तत्र नियुक्तः ४ । ४ । ६९ ॥

आकरे नियुक्त आकारिकः ॥

अगारान्ताट्टन् ४ । ४ । ७० ॥

देवागारे नियुक्तो देवागारिकः ॥

प्राग्विताद्यत् ४ । ४ । ७५ ॥

तस्मै हितम् इत्यतः प्राग्यदधिक्रियते ॥

तद्बहति रथयुगप्रासङ्गम् ४ । ४ । ७६ ॥

रथं बहति रथ्यः । युग्यः । वत्सानां दमनकाले स्फुन्धे यत्काष्ठमा-
सज्यते स प्रासङ्गः तं बहति प्रासङ्ग्यः ॥

धुरो यद्दकौ ४ । ४ । ७७ ॥

हाले च इति दीर्घं प्राप्ते न भकुर्धुराम् । धुर्यः धौरियः ॥

खः सर्वधुरात् ४ । ४ । ७८ ॥

सर्वधुरं वहतीति सर्वधुरीणः ॥

एकधुराद्भृक् च ४ । ४ । ७९ ॥

एकधुरं वहति एकधुरीणः एकधुरः ॥

शकटादण् ४ । ४ । ८० ॥

शकटं वहति शकटो गौः ॥

हलसीराद्भृक् ४ । ४ । ८१ ॥

हलं वहति हालिकः । सैरिकः ॥

संज्ञायां जन्या ४ । ४ । ८२ ॥

जनी बधूः तां वहति प्रापयति जन्या ॥

धनगणं लब्धा ४ । ४ । ८४ ॥

तृन्नन्तमेतत् । धनं लब्धा धन्यः । गणं लब्धा गण्यः ॥

वशंगतः ४ । ४ । ८६ ॥

वश्यः परेच्छानुचारी ॥

संज्ञायां धेनुप्या ४ । ४ । ८९ ॥

धेनुशब्दस्य पुगागमो यप्रत्ययश्च स्वार्थे निपात्यते संज्ञायाम् ।

धेनुप्या बन्धके स्थिता इत्यमरः ॥

गृहपतिना संयुक्ते ष्यः ४ । ४ । ९० ॥

गृहपतिर्यजमानस्तेन संयुक्तो गार्हपत्योऽग्निः ॥

नौवयोधर्मविपमूलमूलसीतातुलाभ्यस्तार्थतुल्यप्राप्य-

वध्यानाम्यसमसमितसमितेषु ४ । ४ । ९१ ॥

नावा तार्थं नाव्यम् । वयसा तुल्यो वयस्यः । धर्मेण प्राप्यं

धर्म्यम् । विपेण वध्यो विष्यः । मूलेनानाम्यं मूल्यम् । मूलेन समो

मूल्यः । सीतया समितं सीत्यं क्षेत्रम् । तुलया संमितं तुल्यम् ॥

धर्मपथ्यर्थन्यायादनपेते ४ । ४ । ९२ ॥

धर्मादनपेतं धर्म्यम् । पथ्यम् । अर्थ्यम् । न्याय्यम् ॥

छन्दसो निर्मिते ४ । ४ । ९३ ॥

छन्दसा निर्मितं छन्दस्यम् । इच्छया कृतमित्यर्थः ॥

उरसोऽण् च ४ । ४ । ९४ ॥

चाद्यत् । उरसा निर्मितः पुन औरसः उरस्यः ॥

हृदयस्य प्रियः ४ । ४ । ९५ ॥

हृद्यो देशः । हृदयस्य हृद्रेख इति हृदादेशः ॥

तत्र साधुः ४ । ४ । ९८ ॥

अग्रे साधुः अग्र्यः । सामसु साधुः सामन्यः । ये चाभावकर्म-
णोः इति प्रकृतिभावः । कर्मण्यः । शरण्यः ॥

प्रतिजनादिभ्यः खञ् ४ । ४ । ९९ ॥

प्रतिजनं साधुः । प्रातिजनीनः । सायुगीनः । सार्वजनीनः ।
वैश्वजनीनः ॥

भक्ताणः ४ । ४ । १०० ॥

भक्ते साधवो भक्ताः शालयः ॥

परिपदो ण्यः ४ । ४ । १०१ ॥

पारिपद्यः । परिपद इति योगविभागाण्णोऽपि । पारिपदः ॥

पथ्यतिथिवसतिस्वपतेर्दञ् ४ । ४ । १०४ ॥

पथि साधु पाथेयम् । आतिथेयम् । वसनं वसतिस्तत्र साधुर्वा-
सतेषी रात्रिः । स्वापतेयं धनम् ॥

सभाया यः ४ । ४ । १०५ ॥

सभ्यः ॥

समानतीर्थेवासी ४ । ४ । १०७ ॥

साधुः इति निवृत्तम् । वसतीति वासी । समाने तीर्थे गुरौ वस-
तीति सतीर्थ्यः ॥

समानोदरे शयित ओ चोदात्तः ४ । ४ । १०८ ॥

समाने उदरे शयितः स्थितः समानोदर्यो भ्राता ॥

सोदराद्यः ४ । ४ । १०९ ॥

सोदर्यः । अर्थः प्राग्वत् ॥ इति प्राग्घृतीयाः ॥

प्राक् क्रीताच्छः ५ । १ । १ ॥

तेन क्रीतम् इत्यतः प्राक्प्रोऽधिक्रियते ॥

उगवादिभ्यो यत् ५ । १ । २ ॥

प्राक् क्रीतादित्येव । उवर्णान्ताद्गवादिभ्यश्च यत् । छस्यापवादः ॥

तस्मै हितम् ५ । १ । ५ ॥

वत्सेभ्यो हितो वत्सीयो गोधुक् । शङ्खे हितं शङ्खव्यं दारु ।
गव्यम् । हविष्यम् ॥

शरीरावयवाद्यत् ५ । १ । ६ ॥

दन्त्यम् । कण्ठ्यम् ॥

नस्त्रासिकायाः * ॥

नस्यम् । नाभ्यम् ॥

ये च तद्धिते ६ । १ । ६१ ॥

यादौ तद्धिते परे शिरःशब्दस्य शीर्षनादेशः । शीर्षण्यः ।
तद्धिते किम् । शिर इच्छति शिरस्यति ॥

वा केशेषु * ॥

शीर्षण्याः शिरस्या वा केशाः ॥

अतिशीर्ष इति वाच्यम् * ॥

अजादौ तद्धिते शिरसः शीर्षादेशः । स्थूलशिरस इदं स्थोल-
शीर्षम् ॥

खलयवमापतिलवृषपत्रहणश्च ५ । १ । ७ ॥

खलाय हितं खल्यम् । यव्यम् । माप्यम् । तिल्यम् । वृष्यम् ।
ब्रह्मण्यम् । चाद्रथ्या ॥

अजाविभ्यां थ्यन् ५ । १ । ८ ॥

अजथ्या । यूथिः । अविथ्या ॥

आत्मन्विश्वजनभोगोत्तरपदात्खः ५ । १ । ९ ॥

आत्माधानौ खे ६ । ४ । १६९ ॥

एतौ खे प्रकृत्या । आत्मने हितमात्मनीनम् । विश्वजनीनम् ॥

कर्मधारयादेवेप्यते ॥

पष्ठीतत्पुरुषाद्दुर्वीद्वेश्च छ एव । विश्वजनीयम् ॥

पञ्चजनादुपसंख्यानम् ❀ ॥

पञ्चजनीनम् ॥

सर्वजनादृञ् स्वश्च ❀ ॥

सार्वजनिकः सर्वजनीनः ॥

महाजनादृञ् ❀ ॥

माहाजनिकः । मातृभोगीणः । पितृभोगीणः । राजभोगीणः ॥

आचार्यादणत्वं च ❀ ॥

आचार्यभोगीणः ॥

सर्वपुरुषाभ्यां णठभो ५ । १ । १० ॥

सर्वाणो वेति वक्तव्यम् ❀ ॥

गर्वम्भे हितं गर्व मर्वायम् ॥

पुरुषाद्भविकारसमूहतेनकृतेषु ॥

माप्यनारप्रयोगात्तन्तयस्य द्वन्द्वमध्ये निवेशः । पुरुषस्य वधः
पौरुष्यः । नस्थेदम् इत्याणि प्राप्ते पुरुषस्य प्रियारः पौरुष्यः । प्राणि-
रजनादिभ्योऽत्र इत्यत्रि प्राप्ते सप्तद्वेष्याणि प्राप्ते ष्कारिणोऽपि

परितः पौरुषेयवृता इव इति माघः । तेन कृते ग्रन्थेऽणि प्राप्ते अग्रन्थे
तु प्रासादादावप्राप्त एवेति विवेकः ॥ छयतोः पूर्णोऽवधिः ॥
इति १४४ अंशाः ।

प्राग्वतेष्टञ् ५ । १ । १८ ॥

तेन तुल्यम् इति वतिं वक्ष्यति ततः प्राक् ठजधिक्रियते ॥

आर्हाद्गोपुच्छसंख्यापरिमाणदृक् ५ । १ । १९ ॥

तदर्हाति इत्येतदभिव्याप्य ठजधिकारमध्ये ठजोऽपवादप्रगधिक्रि-
यते गोपुच्छादीन् वर्जयित्वा ॥

असमासे निष्कादिभ्यः ५ । १ । २० ॥

आर्हात् इत्येतत् तेन क्रीतम् इति यावत्सप्तदशसंख्यामनुवर्तते ।
निष्कादिभ्योऽसमासे ठक् आर्हीषेष्वाथेषु । नैष्किकम् । समासे
तु ठञ् ॥

परिमाणान्तस्याऽसंज्ञाशाणयोः ७ । ३ । १७ ॥

उत्तरपदवृद्धिः जिदादौ । परमनैष्किकः । असंज्ञा इति किम् ।
पञ्च कलापाः परिमाणमस्य पाञ्चकलापिकम् । तदस्य परिमाणम् ।
इति ठञ् । असमासग्रहणं ज्ञापकं भवति इत्यतः प्राक्तदन्तविधिः
इति । तेन सुगव्यम् यवापूप्यमित्यादि ॥

इत् ऊर्ध्वं तु संख्यापूर्वपदानां तदन्तग्रहणं प्राग्वते-
रिप्यते तच्चालुकि ॥

पारायणिकः । द्वैपारायणिकः । अलुकि इति किम् । द्वाभ्यां
शूर्पाभ्यां क्रीतं द्विशूर्पम् । द्विशूर्पेण क्रीते शूर्पादञ् मा भूत् किंतु
ठञ् । द्विशूर्पिकम् ॥

शताच्च ठन्यतावशते ५ । १ । २१ ॥

शतेन क्रीतं शतिकं शत्यम् । अशते किम् । शतं परिमाणमस्य
शतकः संघः । इह प्रत्ययार्थो वस्तुतः प्रकृत्यर्थान्न भिद्यते । तेन
ठन्यतो न किंतु कनेव । असमासे इत्येव । द्विशतेन क्रीतं द्विशतकम् ॥

संख्याया अतिशदन्तायाः कन् ५ । १ । २२ ॥

संख्यायाः कन् आर्हीयेऽर्थे न तु त्यन्तशदन्तायाः । पञ्चमिः
क्रीतः पञ्चकः बहुकः । त्यन्तायास्तु साप्ततिकः । शदन्तायाः चा-
त्वारिंशत्कः ॥

वतोरिडा ५ । १ । २३ ॥

वत्वन्तात्कन् इडा । तावतिकः तावत्कः ॥

विंशतित्रिंशद्भ्यां इन्नसंज्ञायाम् ५ । १ । २४ ॥

योगविभागः कर्तव्यः । आभ्या कन् । असंज्ञायां तु इन्नकनोऽ-
पवादः । विंशकः । त्रिंशकः । संज्ञायां तु विंशतिकः । त्रिंशतिकः ॥

शतमानविंशतिकसहस्रवसनादण् ५ । १ । २७ ॥

एभ्योऽण् । ठञ्ठक्कनामपवादः । शतमानेन क्रीतं शतमानम् ।
विंशतिकम् । साहस्रम् । वासनम् ॥

अध्यर्धपूर्वाद्दिगोलुङ्गसंज्ञायाम् ५ । १ । २८ ॥

अध्यर्धपूर्वाद्दिगोश्च परस्यार्हीयस्य लृक् । अध्यर्धकंसम् । द्विकं-
सम् । संज्ञायां तु पाञ्चकलापिकम् ॥

विभाषा कार्पापणसहस्राभ्याम् ५ । १ । २९ ॥

लुम्बा । अध्यर्धकार्पापणम् । अध्यर्धकार्पापणिकम् । द्विकार्पा-
पणम् । द्विकार्पापणिकम् । औपसंख्यानिकस्य टिठनो लृक् । प-
क्षेऽध्यर्धप्रणिकम् । द्विप्रतिकम् । अध्यर्धसहस्रम् । अध्यर्धसाहस्रम् ।
द्विसहस्रं । द्विसाहस्रम् । इह ठञ्वादयस्त्रयोदश प्रत्ययाः प्रकृता-
स्तेषां ममर्थविभक्तयोऽर्थाश्चाकाङ्क्षितास्त इदानीमुच्यन्ते ॥

तेन क्रीतम् ५ । १ । ३७ ॥

ठञ् । गोपुच्छेन क्रीतं गौपुच्छिकम् । साप्ततिकम् । प्रास्थि-
कम् । ठक् । नैष्किकम् ॥

तस्य निमित्तं संयोगोत्पातौ ५ । १ । ३८ ॥

संयोगः संबन्धः उत्पातः । शुमाशुमसृचकः । शतिकः शत्यो

वा । धनपतिसंयोगः शतयं शतिकम् । दक्षिणाक्षिस्पन्दनं शतरय
निमित्तमित्यर्थः ॥

वातपित्तश्लेष्मभ्यः शमनकोपनयोरुपसंख्यानम् ॥

वातस्य शमनं कोपनं वा वातिकम् । पित्तिकम् । श्लेष्मिवम् ॥

संनिपाताच्चेति वक्तव्यम् ॥

सांनिपातिकम् ॥

गोद्व्यचोऽसंख्यापरिमाणाश्वादेर्यत् ५ । १ । ३९ ॥

गोर्निमित्तं संयोग उत्पातो वा गव्यः । द्व्यचः । ध यः ।
यशस्यः । स्वर्ग्यः । गोद्व्यचः किम् । विजयस्य वैजयिकः । असं-
ख्या इत्यादि किम् । पञ्चानाम् । पञ्चकम् । सप्तकम् । प्रास्थिकम् ।
खारीकम् । अश्वादि । आश्विकम् । आश्विकम् ॥

ब्रह्मवर्चसादुपसंख्यानम् ॥

ब्रह्मवर्चस्यम् ॥

पुत्राच्छ च ५ । १ । ४० ॥

चायत् । पुत्रीयः पुत्र्यः ॥

सर्वभूमिपृथिवीभ्यामणभौ ५ । १ । ४१ ॥

सर्वभूमेर्निमित्तं संयोग उत्पातो वा सार्वभौमः पार्थिवः । सर्व-
भूमिशब्दोऽनुशक्तिकादिषु पठ्यते ॥

तस्येश्वरः ५ । १ । ४२ ॥

तत्र विदित इति च ५ । १ । ४३ ॥

सर्वभूमेरीश्वरः सर्वभूमौ विदितो वा सार्वभौमः पार्थिवः ॥

लोकसर्वलोकाद्वृत् ५ । १ । ४४ ॥

तत्र विदितः इत्यर्थः । लौकिकः । अनुशक्तिकादित्वादुभयपद-
वृद्धिः । सार्वलौकिकः ॥ ।

तस्य वापः ५ । १ । ४५ ॥

उप्यतेऽस्मिन्निति वापः क्षेत्रम् । प्रस्थस्य वापः प्रास्थिकम् ।
द्रौणिकं । खारीकम् ॥

तदस्मिन्वृद्ध्यायलाभशुल्कोपदा दीयते ५।१।४७ ॥

वृद्धिर्दीयत इत्यादि क्रमेण प्रत्येकं संबन्धादेकवचनम् । पञ्चा-
स्मिन् वृद्धिः । आयः । लाभः । शुल्कम् । उपदा वा । दीयते ।
पञ्चकः । शतिकः । शत्यः । साहस्रः । उत्तमर्णेन मूलातिरिक्तं
ग्राह्यं वृद्धिः । ग्रामादिषु स्वामिग्राह्यो भाग आयः । विक्रेत्रा मूल्याद-
धिकं ग्राह्यं लाभः । रक्षानिवेशो राजभागः शुल्कः । उत्कोच उपदा ॥

चतुर्थर्थ उपसंख्यानम् ❀ ॥

पञ्चास्मै वृद्ध्यादिर्दीयते पञ्चको देवदत्तः । सममब्राह्मणे
दानम् इतिवदधिकरणत्वविवक्षा वा ॥

तदस्य परिमाणम् ५।१।५७ ॥

प्रस्थं परिमाणमस्य प्रास्थिको राशिः ॥

संख्यायाः संज्ञासंघसूत्राध्ययनेषु ५।१।५८ ॥

पूर्वसूत्रमनुवर्तते ॥

तत्र संज्ञायां स्वार्थे प्रत्ययो वाच्यः ❀ ॥

यद्वा द्वेकयोरितिवत्संख्यामात्रवृत्तेः परिमाणानि प्रत्ययः ।
पञ्चैव पञ्चकाः शकुनयः । पञ्च परिमाणमेवामिति वा संघे पञ्चकः ।
सूत्रेऽष्टकं पाणिनीयम् । संघशब्दस्य प्राणिसमूहे रूढत्वात्सूत्रं
पृथगुपात्तम् । पञ्चकमध्ययनम् ॥

इति १४५ अंशाः ।

स्तोमे ङविधिः ❀ ॥

पञ्चदश मन्त्राः परिमाणमस्य पञ्चदशः । सप्तदशः । एक-
विंशः । सोमयागेषु छन्दोगैः क्रियमाणा पृष्ट्यादिसंज्ञिका । स्तुतिः
स्तोमः ॥

पङ्क्तिविंशतित्रिंशच्चत्वारिंशत्पञ्चाशत्पष्टिसप्तत्यशी-
तिनवतिशतम् ५ । १ । ५९ ॥

एते रूढिशब्दा निपात्यन्ते ॥

तदर्हति ५ । १ । ६३ ॥

लब्धुं योग्यो भवतीत्यर्थे द्वितीयान्ताढजादयः । श्वेतच्छत्रम-
र्हति श्वेतच्छत्रिकः ॥

शीर्षच्छेदाद्यच्च ५ । १ । ६५ ॥

शिरश्छेदं नित्यमर्हति शीर्षच्छेद्यः शीर्षच्छेदिकः । यटकोः
सन्नियोगेन शिरसः शीर्षभावो निपात्यते ॥

दण्डादिभ्यो यत् ५ । १ । ६६ ॥

एभ्यो यत् । दण्डमर्हति दण्डचः । अर्घ्यः । वध्यः ॥

कडङ्करदक्षिणाच्छ च ५ । १ । ६९ ॥

चाद्यत् । कडं करोतीति विग्रहेऽत एव निपातनात्खच् । कडंकरं
मापमुद्रादिकाष्टमर्हतीति कडंकरियो गौः कडंकर्यः । दक्षिणाम-
र्हतीति दक्षिणीयः दक्षिण्यः ॥

यज्ञत्विग्भ्यां घस्रभौ ५ । १ । ७१ ॥

यथासंख्यम् । यज्ञमृत्विजं वार्हति यज्ञियः । आर्त्विजीनो यजमानः ॥

यज्ञत्विग्भ्यां तत्कर्माहर्तीत्युपसंख्यानम् ❀ ॥

यज्ञियो देशः । आर्त्विजीन ऋत्विक् ॥ इत्यार्हीयाः ॥ अतः
परं ठञेव ॥

पारायणतुरायणचान्द्रायणं वर्तयति ५ । १ । ७२ ॥

पारायणं वर्तयति पारायणिकश्छात्रः । तुरायणं यज्ञविशेषः ।
तं वर्तयति तोरायणिको यजमानः । चान्द्रायणिकः ॥

संशयमापन्नः ५ । १ । ७३ ॥

संशयविषयीभूतोऽर्थः साशयिकः ॥

पथः प्कन् ५ । १ । ७५ ॥

पो हीपर्यः । पन्यानं गच्छति पथिकः पथिकी ॥

पन्थोण नित्यम् ५ । १ । ७६ ॥

पन्यानं नित्यं गच्छति पान्यः पान्या ॥

कालात् ५ । १ । ७८ ॥

व्युष्टादिभ्योऽण् इत्यतः प्रागाधिकारोऽयम् ॥

तेन निर्वृत्तम् ५ । १ । ७९ ॥

अत्रा निर्वृत्तमादिकम् ॥

तमधीष्टो भूतो भूतो भावी ५ । १ । ८० ॥

अधीष्टः सत्कृत्य व्यापारितः । भूतो वे

स्वसत्तया व्याप्तकालः । भावी तादृश ए

मधीष्टो मासिकोऽध्यापकः । मासं

मासं भूतो मासिको व्याधिः । पा

पष्टिकाः पष्टिरात्रेण पष्टिषु ५ । १ । ८१ ॥

बहुवचनमत्तन्त्रम् । प

रात्रशब्दलोपश्च निपात्यं यो वाच्यन्ते ५ । १ । ८२ ॥

तत्र च दीयते क्रात्रवृष्टौ धान्यविशेषः । द

प्रावृषि दीयते कार्ये परि ॥

धिकारः ॥ वगर्थं भववत् ५ । १ । ८३ ॥

तस्मै प्रभवति सा वा प्रावृषेण्यम् । शान्दम् ॥

संतापाय प्रभवति सां

योगाद्यच्च ५ । १ । तापादिभ्यः ५ । १ । ९० ॥

चादृश् । योगाय प्रमंवांापिकः । सांश्रामिकः ॥

कर्मण उकञ् ५ । १ । ९० ॥

कर्मणे प्रभवति कार्मुकम् ॥ १ । ९० ॥

१ । ९० ॥ १ । ९० ॥ १ । ९० ॥

समयस्तदस्य प्राप्तम् ५ । १ । १०४ ॥

समयः प्राप्तोऽस्य सामयिकम् ॥

ऋतोरण् ५ । १ । १०५ ॥

ऋतुः प्राप्तोऽस्य आर्तवम् ॥

उपवस्त्रादिभ्य उपसंख्यानम् ❀ ॥

उपवस्ता प्राप्तोऽस्य औपवस्त्रम् । प्राशिता प्राप्तोऽस्य प्राशित्रम् ॥

कालाद्यत् ५ । १ । १०७ ॥

कालः प्राप्तोऽस्य काल्यं शीतम् ॥

प्रयोजनम् ५ । १ । १०९ ॥

तदस्य इत्येव । इन्द्रमहः प्रयोजनमस्य ऐन्द्रमहिकम् । प्रयोजनं
फलं कारणं च ॥

एकागारिकट् चौरै ५ । १ । ११३ ॥

एकमसहायमगारं प्रयोजनमस्य मुमुषिपोः स एकागारिकश्चौरः ॥

आकालिकडाद्यन्तवचने ५ । १ । १११ ॥

समानकालावाद्यन्तौ यस्येत्याकालिकः । समानकालस्याकाल
आदेशः । आशु विनाशीत्यर्थः । पूर्वदिने मध्याह्नादादुत्पद्य दि-
नान्तरे तत्रैव नश्वर इति वा ॥

आकालाट्टंश्च ❀ ॥

आकालिका विद्युत् ॥ इति ठञ् अधिकारः ॥

तेन तुल्यं क्रिया चेद्वृत्तिः ५ । १ । ११५ ॥

ब्राह्मणेन तुल्यं ब्राह्मणवदधीते । क्रिया चेत् इति किम् । गुण-
तुल्ये मा भूत् । पुत्रेण तुल्यः स्थूलः ॥

तत्र तस्येव ५ । १ । ११६ ॥

मथुरायामिव मथुरावत्सुध्ने प्राकारः । चैत्रस्येव चैत्रवन्मैत्रस्य
गावः ॥

तदर्हम् ५ । १ । ११७ ॥

विधिमर्हति विधिवत्पूज्यते । क्रियाग्रहणं मण्डूकप्लुत्यानुवर्तते
तेनेह न । राजानमर्हति छत्रम् ॥

तस्यभावस्त्वतलौ ५ । १ । ११९ ॥

प्रकृतिजन्यबोधे प्रकारो भावः । गोर्भावो गोत्वं गोता । त्वान्तं
ह्रीवम् । तलन्तं स्त्रियाम् ॥

आ च त्वात् ५ । १ । १२० ॥

ब्रह्मणस्त्व इत्यतः प्राक्त्वतलावधिक्रियेते । अपवादैः सह समा-
वेशार्थं गुणवचनादिभ्यः कर्माणि विधानार्थं चेदम् । चकारो नञ्स्न-
ञ्भ्यामपि समावेशार्थः । स्त्रिया भावः स्त्रैणं स्त्रीत्वं स्त्रीता ।
पौंसं पुंस्त्वं पुंस्ता ॥

न नपूर्वात्तत्पुरुपादचतुरसंगतलवणवट्युधकतरसल-
सेभ्यः ५ । १ । १२१ ॥

इतः परं ये भावप्रत्ययास्ते नञ्त्तत्पुरुपात्रं चतुरादीन् वर्जयि-
त्वा । अपतित्वम् । अपटुत्वम् । नञ्पूर्वात् किम् । वार्हस्पत्यम् । त-
त्पुरुपात् किम् । नास्य पटवः सन्वीत्यपटुस्तस्य भाव आपटवम् ।
अन्नतुर इति किम् । आचतुर्यम् । आसंगत्यम् । आलवण्यम् ।
आवट्यम् । आयुध्यम् । आकत्यम् । आरस्यम् । आलस्यम् ॥

पृथ्वादिभ्य इमनिज्वा ५ । १ । १२२ ॥

वावचनमणादिसमावेशार्थम् ॥

र ऋतो हलादेर्लघोः ६ । ४ । १६१ ॥

हलादेर्लघोर्ऋकारस्य रः इष्टमेयस्सु ॥

टेः ६ । ४ । १६५ ॥

भस्य टेलोपः इष्टमेयस्सु । पृथीर्भावः प्रथिमा पार्थवम् । अदि-
मा मार्दवम् ॥

वृर्णट्टादिभ्यः प्यञ्च ५ । १ । १२३ ॥

चादिमनिच । शौक्ल्यं शुक्लिमा । दाढ्यम् । पृथुमृदुभृगुकृश-
दृढपरिवृढानामेव रत्वम् । द्रढिमा । पो ङीपर्यः । औचिती ।
याथाकामी ॥

इति १४६ अंशाः ।

गुणवचनब्राह्मणादिभ्यः कर्मणि च ॥

चाद्भावे । जडस्य कर्म भावो वा जाड्यम् । मूढस्य भारः
कर्म वा मौढ्यम् । ब्राह्मण्यम् ॥

अर्हतो नुम् च ❀ ॥

अर्हतो भावः कर्म वा आर्हन्त्यम् आर्हन्ती । ब्राह्मणादिराकृ-
तिगणः ॥

यथातथयथापुरयोः पर्यायेण ७ । ३ । ३१ ॥

नञः परयोरेतयोः पूर्वोत्तरपदयोः पर्यायेणादेरचो वृद्धिर्निदा-
दौ । अयथातथाभाव आयथातथ्यं अयथातथ्यम् । आयथापुर्यं
अयथापुर्यम् । आपादसमाप्तेर्भाविकर्माधिकारः ॥

चतुर्वर्णादीनां स्वार्थ उपसंख्यानम् ❀ ॥

चत्वारो वर्णाश्चातुर्वर्ण्यम् । चातुराश्रम्यम् । त्रैस्वर्यम् । पाद्गु-
ण्यम् । सैन्यम् । सान्निध्यम् । सामीप्यम् । औपम्यम् । त्रिलोक्य-
मित्यादि । सर्वे वेदाः सर्ववेदास्तानधीते सर्ववेदः । सर्वादेः इति
लुक् । स एव सर्ववेद्यः ॥

चतुर्वेदस्योभयपदवृद्धिश्च ❀ ॥

चतुरो वेदानधीते चतुर्वेदः स एव चातुर्वेद्यः । चतुर्वेद्यस्य इ-
ति पाठान्तरम् । चतुर्वेद्य एव चातुर्वेद्यः ॥

स्तेनाद्यन्न लोपश्च ५ । १ । १२५ ॥

न इति संघातग्रहणम् । स्तेनचौर्ये पचाद्यच् । स्तेनस्य भावः
कर्म वा स्तेयम् । स्तेनात् इति योगं विभज्य स्तैन्यामिति व्यज-
न्तमपि केनिदिच्छन्ति ॥

सख्युर्ध्वः ५ । १ । १२६ ॥

सख्युर्भावः कर्म वा सख्यम् ॥

दूतवणिग्भ्यां च ❀ ॥

दूतस्य भावः कर्म वा दूत्यम् । वणिज्यम् इति काशिका ।
माधवस्तु वणिज्याशब्दः स्वभावात्स्त्रीलिङ्गः भाव एव चात्र प्रत्ययो
नतु कर्मणि इत्याह । भाष्ये तु दूतवणिग्भ्या च इति नास्त्येव ।
ब्राह्मणादित्वाद्वाणिज्यमपि ॥

कपिज्ञात्योर्दक् ५ । १ । १२७ ॥

कापेयम् । ज्ञातेयम् ॥

पत्यन्तपुरोहितादिभ्यो यक् ५ । १ । १२८ ॥

सेनापत्यम् । पौरोहित्यम् ॥

राजाऽसे ❀ ॥

राजशब्दोऽसमासे यकं लभत इत्यर्थः । राज्ञो भावः कर्म वा
राज्यम् । समासे तु ब्राह्मणादित्वात्प्यञ् । आधिराज्यम् ॥

प्राणभृज्जातिवयोवचनोद्गात्रादिभ्योऽञ् ५ । १ । १२९ ॥

प्राणभृज्जातिः । आश्वम् । औष्रम् । वयोवचनम् । कौमारम् ।
केशोरम् । औत्तात्रम् । औन्नेत्रम् । सौष्ठवम् । दौष्ठवम् ॥

हायनान्तयुवादिभ्योऽण् ५ । १ । १३० ॥

द्वैहायनम् । त्रैहायनम् । यौवनम् । स्थाविरम् ॥

श्रोत्रियस्य यलोपश्च ❀ ॥

श्रीत्रम् । कुशलचपलनिपुणपिशुनकुतूहलक्षेत्रज्ञा युवादिषु ब्रा-
ह्मणादिषु च पठ्यन्ते । कौशल्यं कौशलमित्यादि ॥

इगन्ताच्च लघुपूर्वात् ५ । १ । १३१ ॥

शुचेर्भावः कर्म वा शौचम् । मौनम् । रुधं काव्यम् । कविशब्दस्य

१ । २ ॥
मोपधाद्द्वरूपोत्तमाहुञ् ५ । १ । १३२ ॥

रामणीयकम् । आभिधानीयकम् ॥

सहायाद्वा ❀ ॥

साहाय्यं साहायकम् ॥

द्वन्द्वमनोज्ञादिभ्यश्च ५ । १ । १३३ ॥

शैष्योपाध्यायिका । मानोज्ञकम् ॥

गोत्रचरणाच्छाघात्याकारतद्वेतेषु ५ । १ । १३४ ॥

अत्याकारोऽधिक्षेपः । तद्वेतस्ते गोत्रचरणयोर्भावकर्मणी
प्राप्तः अवगतवान्वा । गार्गिकया श्लाघते । गार्ग्यत्वेन विकृत्यत
इत्यर्थः । गार्गिकयात्याकुरुते । गार्गिकामवेतः ॥

होत्राभ्यश्छः ५ । १ । १३५ ॥

होत्राशब्दोऽत्र ऋत्विग्वाची स्त्रीलिङ्गः । बहुवचनादिशेषग्रहणम् ।
अच्छावाकस्य भावः कर्म वा अच्छावाकीयम् । मैत्रावरुणीयम् ॥

ब्रह्मणस्त्वः ५ । १ । १३६ ॥

होत्रावाचिनो ब्रह्मशब्दात्त्वः । छस्यापवादः । ब्रह्मत्वं नेति वाच्ये
त्ववचनं तलो वाधनार्थम् । ब्राह्मणपर्यायाद्ब्रह्मच्छब्दात्तु त्वतलो ।
ब्रह्मत्वं ब्रह्मता ॥ इति नञ्स्नधधिकारः ॥

धान्यानां भवने क्षेत्रे खञ् ५ । २ । १ ॥

भवन्त्यास्मिन्निति भवनम् । मुद्रानां भवनं क्षेत्रं मौद्गीनम् ॥

वीहिशाल्योर्ढक् ५ । २ । २ ॥

वैहेयम् । शालेयम् ॥

यवयवकपष्टिकाद्यत् ५ । २ । ३ ॥

यवानां भवनं क्षेत्रं यव्यं यवक्यम् । पष्टिक्यम् ॥

विभाषा तिलमापोमाभङ्गाणुभ्यः ५ । २ । ४ ॥

यद्वा पक्षे खञ् । तिल्यं तैलीनम् । माप्यं मापीणम् । उम्यं
औमीनम् । भङ्ग्यं भाङ्गीनम् । अणव्यं आणवीनम् ॥

समांसमां विजायते ५ । २ । १२ ॥

यलोपोऽवशिष्टविभक्तरलुक् च पूर्वपदे निपात्यते । समासमीना
गौ । समासमीना सार्वथ प्रतिवर्ष प्रसूयते इत्यमरः ॥

खप्रत्ययानुत्पत्तौ यलोपो वा वक्तव्यः ५ ॥

समासमा विजायते समाया समायां वा ॥

अद्यश्चीनावष्टुधे ५ । २ । १३ ॥

अद्य श्चो वा विजायते अद्यश्चीना वडवा । आसन्नप्रमयेत्यर्थः ।
केचित्तु विजायत इति नानुवर्तयन्ति । अद्यश्चीनं मरणम् । आसन्न-
मित्यर्थः ॥

आगवीनः ५ । २ । १४ ॥

आङ्पूर्वाद्गोः कर्मकरे सप्रत्ययो निपात्यते । गोप्रत्ययर्षणपर्यन्तं
यः कर्म करोति स आगवीनः ॥

अनुग्वलंगामी ५ । २ । १५ ॥

अनुगु गोः पश्चात्पर्याप्तं गच्छति अनुगवीनो गोपालः ॥

अध्वनोः यत्खौ ५ । २ । १६ ॥

अध्वानमलं गच्छति अध्वन्यः अध्वनीनः ॥

ये चाभावकर्मणोः ॥

आत्माध्वानौ खे इति सूत्राभ्या प्रकृतिभावः ॥

अभ्यमित्राच्छ च ५ । २ । १७ ॥

चाद्यत्खौ । अभ्यमित्रीयः अभ्यमिन्यः अभ्यमित्रीणः । अमि-
त्राभिमुखं सुप्तु गच्छतीत्यर्थः ॥

गोष्ठात्खभूतपूर्वे ५ । २ । १८ ॥

गोष्ठो भूतपूर्वः । गोष्ठीनो देशः ॥

अश्वस्यैकाहगमः ५ । २ । १९ ॥

एकाहेन गम्यत इत्येकाहगम आश्वीनोऽभ्या ॥

शालीनकौपीने अधृष्टाकार्ययोः ५ । २ । २० ॥

शालाप्रवेशमर्हति शालीनोऽधृष्टः । कूपपतनमर्हति कौपीनं
पापम् । तत्साधनत्वात्तद्द्रोप्यत्वात्पुरुषलिङ्गमपि तत्संबन्धात्तदा-
च्छादनमपि ॥

व्रातेन जीवति ५ । २ । २१ ॥

व्रातेन शरीरायासेन जीवति नतु बुद्धिवैभवेन स व्रातीनः ॥

साप्तपदीनं सख्यम् ५ । २ । २२ ॥

सप्तभिः पदैरवाप्यते साप्तपदीनम् ॥

हैयंगवीनं संज्ञायाम् ५ । २ । २३ ॥

ह्योगोदोहस्य ह्यिङ्गुादेशो विकारार्थे स्वश्च निपात्यते । दुह्यत
इति दोहः क्षीरम् । ह्योगोदोहस्य विकारो हैयङ्गवीनं नवनीतम् ॥

तस्य पाकमूले पीलवादिकर्णादिभ्यः कुण्वजाहचौ
५ । २ । २४ ॥

पीलूनां पाकः पीलुकुणः । कर्णस्य मूलं कर्णजाहम् ॥

पक्षत्तिः ५ । २ । २५ ॥

मूलग्रहणमात्रमनुवर्तते । पक्षस्य मूलं पक्षतिः ॥

तेन वित्तश्चुचुप्रचणपौ ५ । २ । २६ ॥

यकारः प्रत्यययोरादौ लुप्तनिर्दिष्टेन चस्य नेत्संज्ञा । विद्यया
वित्तो विद्यश्चुचुः विद्याचणः ॥

विनभ्यां नानाभौ न सह ५ । २ । २७ ॥

असहायं पृथग्भावे वर्तमानाभ्यां स्वार्थे प्रत्ययौ । विना । नाना ॥

वेः शालच्छङ्कटचौ ५ । २ । २८ ॥

क्रिपाविशिष्टसाधनवार्धकात् स्वार्थे । विस्तृतम् । विशालम् ।
विशङ्कटम् ॥

संप्रोदश्च कटच् ५ । २ । २९ ॥

संकटम् । प्रकटम् । उत्कटम् ॥

अलावूतिलोमाभङ्गाभ्यो रजस्युपसंख्यानम् ❀ ॥

अलावूनां रजः अलावूकटम् ॥

गोष्ठजादयः स्थानादिषु पशुनामभ्यः ❀ ॥

गवां स्थानं गोगोष्ठम् ॥

संधाते कटञ्च ॥

अवीनां संधातोऽविकटः ॥

विस्तारे पटञ्च ❀ ॥

अविपटः ॥

द्वित्वे गोयुगञ्च ❀ ॥

द्वायुगौ उग्रगोयुगम् ॥

पद्वत्वे पद्मवञ्च ❀ ॥

अश्वपद्मवम् ॥

स्नेहे तैलञ्च ❀ ॥

तिलतैलम् । सर्पतैलम् ॥

भवने क्षेत्रे शाकटशाकिनौ ❀ ॥

इक्षुशाकटम् । इक्षुशाकिनम् ॥

अवात्कुटारञ्च ५ । २ । ३० ॥

चात्कटञ्च । अवाचीनोऽवकुटारः । अवकटः ॥

नते नासिकायाः संज्ञार्यां टीट्भ्नाटज्भ्रटञ्चः ५ । २ । ३१ ॥

अवात् इत्येव । नतं नमनम् । नासिकाया नतं अवटीटम्

अवनाटम् अवभ्रटम् । तद्योगान्नासिकावटीटा । पुरुषोऽप्यवटीटः ॥

नेर्विडज्विरीसचौ ५ । २ । ३२ ॥

निविडम् । निविरीसम् ॥

इनचिपटञ्चिकचि च ५ । २ । ३३ ॥

नेः इत्येव । नासिकाया नतेऽभिधेये इन्द्रिपटचौ प्रत्ययौ प्रकृ-
तेश्चिकचीत्यादेशौ च ॥

कप्रत्ययचिकादेशौ च वक्तव्यौ ❀ ॥

चिकिनम् । चिपिटम् । चिकम् ॥

क्लिन्नस्य चिल्पिलश्चास्य चक्षुपी ❀ ॥

क्लिन्ने चक्षुपी अस्य चिल्लः । पिल्लः ॥

चुल् च ❀ ॥

चुल्लः ॥

उपाधिभ्यां त्यक्त्रासत्रारूढयोः ५ । २ । ३४ ॥

संज्ञायाम् इत्यनुवर्तते । पर्वतस्यासन्नं स्थलमुपत्यका । आरूढं
स्थलमधित्यका ॥

कर्मणि घटोऽठञ् ५ । २ । ३५ ॥

घटत इति घटः । पचाद्यञ् । कर्मणि घटते कर्मठः पुरुषः ॥

तदस्य संजातं तारकादिभ्य इतञ् ५ । २ । ३६ ॥

तारकाः संजाता अस्य तारकितं नभः । आकृतिगणोऽयम् ॥

प्रमाणे द्वयसद्द्वन्मात्रचः ५ । २ । ३७ ॥

तदस्य इत्यनुवर्तते । ऊरु प्रमाणमस्य ऊरुद्वयसम् ऊरुद्वयम्
ऊरुमात्रम् ॥

प्रमाणे लः ❀ ॥

शमः । द्विष्टिः । वितस्त्रिनः ॥

द्विगोर्नित्यम् ❀ ॥

द्वै शर्मा प्रमाणमस्य द्विशमम् ॥

प्रमाणपरिमाणाभ्यां संख्यायाश्चापि संज्ञये मात्रज्व

५० ❀ ॥

शममात्रम् । प्रथमात्रम् । पञ्चमात्रम् ॥

वत्वन्तात्स्वार्थे द्वयसज्मात्रचौ बहुलम् ❀ ॥

तावदेव तावद्द्वयसम् । तावन्मात्रम् ॥

पुरुषहस्तिभ्यामण्च ५ । २ । ३८ ॥

पुरुषः प्रमाणमस्य पौरुषं पुरुषद्वयसम् । हास्तिनं हस्तिद्वयसम् ॥

यत्तदेतेभ्यः परिमाणे वतुप् ५ । २ । ३९ ॥

यत्परिमाणमस्य यावान् । तावान् । एतावान् ॥

किमिदंभ्यां बोधः ५ । २ । ४० ॥

आभ्यां वतुप्स्याद्भ्यस्य च घः । कियान् । इयान् ॥

किमः संख्यापरिमाणे डति च ५ । २ । ४१ ॥

चाद्दतुप् तस्य च वस्य घः । काः संख्या येपान्ते कति कियन्तः ॥

संख्याया अवयवे तयप् ॥

पञ्चतयम् ॥

द्वित्रिभ्यां तयस्यायञ्चा ॥

द्वयं द्वियतम् । त्रयं त्रियतम् ॥

उभादुदात्तो नित्यम् ५ । २ । ४४ ॥

उभशब्दात्तयपोऽयञ् स चाद्युदात्तः । उभयम् । वृत्तिविषये सर्वत्र नित्यम् । उभयसुखम् ॥

इति १४८ अंशाः ।

तदस्मिन्नधिकमिति दशान्ताडुः ५ । २ । ४५ ॥

एकादशाधिका अस्मिन्नेकादशं शतम् ॥

शतसहस्रयोरेवेप्यते ❀ ॥

नेह । एकादशाधिका अस्यां विंशतौ ॥

प्रकृतिप्रत्ययार्थयोः समानजातीयत्व एवेप्यते ❀ ॥

नेह । एकादश मापा अधिका अस्मिन्सुवर्णशते ॥

अथ पूर्वखण्डोक्तसंख्यापूरणप्रकरणशेषः ॥

बहुपूगगणसंघस्य तिथ्युक् ५ । २ । ५२ ॥

इति पूगसंघघोरसंख्यात्वेऽप्यत एव डद् । बहुतिथ इत्यादि ॥

वथोरिथ्युक् ५ । २ । ५३ ॥

इति । यावतिथः ॥

नित्यं शतादिमासार्धमाससंवत्सराच्च ५ । २ । ५७ ॥

शतस्य पूरणः शततमः । एकशततमः । मासादेरत एव डद् ।
मासतमः ॥

पष्ट्यादेश्वासंख्यादेः ५ । २ । ५८ ॥

पष्टितमः । संख्यादेस्तु विंशत्यादिभ्यः इति विकल्प एव ।
एकपष्टः एकपष्टितमः इति ॥

तत्र कुशलः पथः ५ । २ । ६३ ॥

बुन् । पथि कुशलः पथिकः ॥

स्वाङ्गेभ्यः प्रसिते ५ । २ । ६६ ॥

कन् केशेषु प्रसितः केशकः केशरचनातत्परः ॥

उदराट्टगाद्युने ५ । २ । ६७ ॥

अविजिगीषौ ठक् । कनोऽपवादः । बुभुक्षयात्यन्तपीडित उदरे
प्रसित औदरिकः । आद्युने किम् । उदरकः । उदरपरिमार्जनादौ
प्रसक्त इत्यर्थः ॥

तन्त्रादचिरापहते ५ । २ । ७० ॥

तंत्रकः पटः । प्रत्यग्र इत्यर्थः ॥

ब्राह्मणकोष्णिके सज्ञायाम् ५ । २ । ७१ ॥

आयुधजीविनो ब्राह्मणा यस्मिन्देशे स ब्राह्मणकः । अल्पमन्त्रं
यस्यां सा उष्णिका यवागृः । अन्नशब्दस्योष्णादेशो निपात्यते ॥

शीतोष्णाभ्यां कारिणि ५ । २ । ७२ ॥

शीतं करोतीति शीतकोऽलसः । उष्णं करोतीत्युष्णकः शी-
घ्रकारी ॥

अधिकम् ५ । २ । ७३ ॥

अध्याह्नशब्दात्कनुत्तरपदलोपश्च ॥

अनुकाभिकाभीकः कमिता ५ । २ । ७४ ॥

अन्वभिभ्या कन्नभेः पाक्षिको दीर्घश्च । अनुकामयते अनुकः ।
अभिकामयतेऽभिकः अभीकः ॥

पार्श्वेनान्विच्छति ५ । २ । ७५ ॥

अनृजुरुपायः पार्श्वं तेनान्विच्छति पार्श्वकः ॥

अयःशूलदण्डाजिनाभ्यां उक्ठौ ५ । २ । ७६ ॥

तीक्ष्ण उपायोऽयःशूलं तेनान्विच्छति आयःशूलिकः साह-
सिकः । दण्डाजिनं दम्भः तेनान्विच्छति दाण्डाजिनिकः ॥

शृङ्खलमस्य बन्धनं करभे ५ । २ । ७७ ॥

शृङ्खलकः करभः ॥

उत्क उन्मनाः ५ । २ । ८० ॥

उद्गतमनस्कवृत्तेरुच्छब्दात्स्वार्थे कन् उत्कः उत्कण्ठितः ॥

कालप्रयोजनाद्रोगे ५ । २ । ८१ ॥

कालवचनात्प्रयोजनवचनाच्च कन् रोगे । द्वितीयेऽहनि भवो
द्वितीयको ज्वरः । प्रयोजनं कारणं रोगस्य फलं वा । विषपुष्पैर्ज-
नितो विषपुष्पकः । उष्णं कार्यमस्य उष्णकः । रोगे किम् ।
द्वितीयो दिवसोऽस्य ॥

श्रोत्रियंश्छन्दोऽधीते ५ । २ । ८४ ॥

श्रोत्रियः । वा इत्यनुवृत्तेश्छान्दसः ॥

श्राद्धमनेन भुक्तमिनिठनौ ५ । २ । ८५ ॥

श्राद्धी श्राद्धिकः ॥

पूर्वादिनिः ५ । २ । ८६ ॥

पूर्व कृतमनेन पूर्वी ॥

सपूर्वाच्च ५ । २ । ८७ ॥

कृतपूर्वी ॥

इष्टादिभ्यश्च ५ । २ । ८८ ॥

इष्टमनेन इष्टी । अधीती ॥

छन्दसि परिपन्थिपरिपरिणौ पर्यवस्थातरि ५ । २ । ८९ ॥

लोके तु परिपन्थिगब्दो न न्याय्यः ॥

अनुपद्यन्वेष्टा ५ । २ । ९० ॥

अनुपदमन्वेष्टा गवामनुपदी ॥

साक्षाद्दृष्टि संज्ञायाम् ५ । २ । ९१ ॥

साक्षाद्दृष्टा साक्षी ॥

क्षेत्रियच्च परक्षेत्रे चिकित्स्यः ५ । २ । ९२ ॥

क्षेत्रियो व्याधिः । शरीरान्तरे चिकित्स्यः अप्रतिकार्य इत्यर्थः ॥

इन्द्रियमिन्द्रलिङ्गमिन्द्रदृष्टमिन्द्रसृष्टमिन्द्रजुष्टमिन्द्र-

दत्तमिति वा ५ । २ । ९३ ॥

इन्द्र आत्मा तस्य लिङ्गं करणेन कर्तुरनुमानात् । इतिशब्दः प्रकारार्थः । इन्द्रेण दुर्जयामिन्द्रियम् ॥

अथ मत्वर्थायप्रकरणशेषः । भूमनिन्दाप्रशंसासु नित्ययोगेऽ-
तिशायने सम्बन्धेऽस्ति विवक्षायां भवन्ति मत्वुवाच्यः ॥ अस्तिवि-
वक्षायां ये मत्वुवाच्यो विधीयन्ते ते भूमादिषु विषयेषु भवन्तीति
वार्तिकार्थः । भृश्रि-गोमात्र । यवमान् । निन्दायाम्-ककुदावर्तिनी
कन्या । प्रशंसा-रूपवान् । नित्ययोगे क्षीरिणो वृक्षाः । अति-
॥५५॥-उदरणी कन्या । संसर्गः । दण्डी-संसर्गः संयोगः तेन

दण्डीति संयुक्त दण्ड एवोच्यते नतु गृहावस्थितदंडोऽपि । वसोः
सम्प्रसारणम् । विदुष्पान् । तसौ मत्वर्थे इति मत्वम् ॥

गुणवचनेभ्यो मतुपो लुगिष्टः ❀ ॥

शुद्धो गुणोऽस्यास्तीति शुद्धः पटः । कृष्णः ॥

संज्ञायाम् ८ । २ । ११ ॥

मतोर्मस्य वः । अहीवती । मुनीवती । शरादीनां च इति दीर्घः ॥

आसन्दीवदष्टीवच्चक्रीवत्कक्षीवद्भ्रुमण्वच्चर्मण्वती ८ । २ । १२

एते पद् संज्ञायां निपात्यन्ते । आसनशब्दस्यासन्दीभावः ।

आसन्दीवान् ग्रामः । अन्यत्रासनवान् । अस्थिशब्दस्याष्टीभावः ।

अष्टीवान् । अस्थिमानन्यत्र । चक्रशब्दस्य चक्रीभावः । चक्री-

वान्नाम राजा । चक्रवानन्यत्र । कक्ष्यायाः संप्रसारणम् । कक्षीवा-

न्नामर्षिः । कक्ष्यावानन्यत्र । लवणशब्दस्य रुमण्भावः । रुमण्वान्नाम

पर्वतः । लवणवानन्यत्र । चर्मणो नलोपाभावो णत्वं च । चर्मण्वती

नाम नदी । चर्मवत्यन्यत्र ॥

उदन्वानुदधौ च ८ । २ । १३ ॥

उदकस्योदन्भावो मतावुदधौ संज्ञायां च । उदन्वान्तमुद्ग

ऋषिश्च ॥

राजन्वान्सौराज्ये ८ । २ । १४ ॥

राजन्वती भृः । राजवानन्यत्र ॥

इति १४९ अंशाः ।

सिध्मादिभ्यश्च ५ । २ । १७ ॥

लज्वा । सिध्मलः सिध्मवान् । अन्यतरस्यां ग्रहणं मतुप्समुच्च-

यार्थं नतु प्रत्ययविकल्पार्थम् । तेनाकारान्तेभ्य इनिठनौ न ॥

वातदन्तवलललाटगलानामूढ च ❀ ॥

वानूलः ॥

अर्णवः ॥

गाण्ड्यजगात्संज्ञायाम् ५ । २ । ११० ॥

ह्रस्वदीर्घयोर्यणा तन्त्रेण निर्देशः । गाण्डिवम् । गाण्डीवमर्जु-
नस्य धनुः । अजगधं पिनाकः ॥

काण्डाण्डादीरन्नीरचौ ५ । २ । १११ ॥

काण्डीरः । आण्डीरः ॥

रजःकृष्यासुतिपरिपदो बलच् ५ । २ । ११२ ॥

रजस्वला स्त्री । कृषीबलः । बले इति दीर्घः । आमुतीबलः ।
शौण्डिकः । परिपद्वलः । पर्पत् इति पाठान्तरम् । पर्पद्वलम् ॥

अन्येभ्योऽपि दृश्यते ॥

भ्रातृबलः । शत्रुबलः । बले इत्यत्र संज्ञायाम् इत्यनुवृत्तेर्नह दीर्घः ॥

दन्तशिखात्संज्ञायाम् ५ । २ । ११३ ॥

दन्ताबलो हस्ती । शिखाबलः केकी ॥

ज्योत्स्नातमिस्राशृङ्गिणोर्जस्विन्नूर्जस्वलगोमिन्मलिन-
मलीमसाः ५ । २ । ११४ ॥

मत्वर्थे निपात्यन्ते । ज्योतिष उपधालोपो नश्च प्रथमः । ज्यो-
त्स्ना । तमस उपाधाया इत्वं रश्च । तमिस्रा । स्त्रीत्वमतन्त्रम् । तमि-
न्मम् । शृङ्गादिनच् । शृङ्गिणः । ऊर्जसो बलच् । तेन बाधा मा भू-
दिति विनिरपि । ऊर्जस्वी ऊर्जस्वलः । ऊर्जोऽसुगाम इति वृत्तिस्तु
चिन्त्या । ऊर्जस्वती इतिवदसुन्नन्तेनैवोपपत्तेः । गोशब्दान्मिनिः ।
गोमा । मलशब्दादिनच् । मलिनः । ईमसश्च । मलीमसः ॥

अत इनिठनौ ५ । २ । ११५ ॥

दण्डी दण्डिकः । एकस्वरात् कृतो जातेः मत्सम्याश्च न तौ स्मृ-
तौ । एकाक्षरात्-स्वान् । कृतः-काक्वान् । जातेः-व्याघ्रवान् ।
सप्तम्यां-दण्डोऽस्त्यस्या सा दण्डवती शाला । कचित्कृतो जाते-
श्चापि भवति । कार्पी कार्पिकः । तण्डली तण्डुलिकः ॥

व्रीह्यादिभ्यश्च ५ । २ । ११६ ॥

व्रीही व्रीहिकः । नच सर्वेभ्यो व्रीह्यादिभ्य इतिठनाधिप्येते । किं
तर्हि शिखामालासंज्ञादिभ्य इतिः । यवखदादिभ्य इकः । अन्येभ्य
उभयम् ॥

तुन्दादिभ्य इलञ्च ५ । २ । ११७ ॥

चादिनिठनी मतुप् च । तुन्दिलः तुन्दी तुन्दिकः तुन्दवान् ।
उदरपिचण्डयवव्रीहि ॥

स्वाङ्गाद्विवृद्धौ ❀ ॥

विवृद्धुपाधिकात्स्वाङ्गवाचिन इलजादयः । विवृद्धौ कर्णौ यस्य
स कर्णिलः कर्णौ कर्णिकः कर्णवान् ॥

रूपादाहतप्रशंसयोर्यप् ५ । २ । १२० ॥

आहतं रूपमस्यास्तीति रूप्यः कार्पापणः । प्रशस्तं रूपमस्या-
स्तीति रूप्यो गौः । आहत इति किम् । रूपवान् ॥

अन्येभ्योऽपि दृश्यते ❀ ॥

हिम्याः पर्वताः । गुण्या ब्राह्मणाः । अस्मायेति विनिः क्लिन्न-
न्तत्त्वात्कुः । सग्वी ॥

आमयस्योपसंख्यानं दीर्घश्च ❀ ॥

आमयात्री ॥

शृङ्गवृन्दाभ्यामारकन् ❀ ॥

शृङ्गारकः । वृन्दारकः ॥

फलवर्हाभ्यामिनञ्च ❀ ॥

फालिनः । बार्हिणः ॥

हृदयाच्चालुरन्यतरस्याम् ❀ ॥

इवठनी मतुप् च । हृदयालुः हृदयी हृदयिकः हृदयवान् ॥

इति १५० अंशाः । इति चतुर्थ्याध्यायस्य तृतीयः पादः ।

शीतोष्णतृप्रेभ्यस्तदसहने ❀ ॥

शीतं न सहते शीतालुः । उष्णालुः । स्फायितश्चि इति रक् ।
तृपः पुरोडाशः । तं न सहते तृपालुः । तृपं दुःखम् इति माधवः ॥

हिमाच्चैलुः ❀ ॥

हिमं न सहते हिमेलुः ॥

वलादूलः ❀ ॥

वलं न सहते वलूलः ॥

वातात् समूहे च ❀ ॥

वातं न सहते वातस्य समूहो वा वातूलः ॥

तप्पर्वमरुद्भ्याम् ❀ ॥

पर्वतः । मरुत्तः ॥

ऊर्णाया युम् ५ । २ । १२३ ॥

सित्वात्पदत्वम् । ऊर्णायुः । अत्र छन्दसि इति केचिदनुवर्तयन्ति ।
युक्तं चैतत् । अन्यथा हि अहंशुभमोः इत्यत्रैवोर्णाग्रहणं कुर्यात् ॥

वाचो गिमनिः ५ । २ । १२४ ॥

वाग्मी गदयवान् ॥

आलजाटचौ बहुभापिणि ५ । २ । १२५ ॥

कुत्सित इति वक्तव्यम् । कुत्सितं बहु भापते वाचालः वा-
चाटः । यस्तु सम्यग्बहु भापते स वाग्मीत्येव ॥

स्वामिन्नैश्वर्ये ५ । २ । १२६ ॥

ऐश्वर्यवाचकात्स्वशब्दान्मत्वर्थे आमिनश्च । स्वामी ॥

अर्शादिभ्योऽत्र ५ । २ । १२७ ॥

अर्शास्यस्य विद्यन्ते अर्शासः । आकृतिगणोज्यम् ॥

द्वन्द्वोपतापगर्हात्प्राणिस्थादिनिः ५ । २ । १२८ ॥

द्वन्द्वः । कटकलपिनी । शङ्खपुरिणी । उपतापो रोगः ।

कुष्ठी । किलासी । गर्ह्यं निन्द्यम् । कुरुदावर्ती । काकतालुकी ।
प्राणिस्थात् किम् । पुष्पफलवान् घटः ॥

प्राण्यङ्गान्न ❀ ॥

पाणिपादवती । अतः इत्येव । चित्रकललाटिकावती । सिद्धे
प्रत्यये पुनर्वचनं ठनादिबाधनार्थम् ॥

वातातीसाराभ्यां कुक् च ५ । २ । १२९ ॥

चादिनिः । वातकी । अतीसारकी ॥

रोगे चायमिष्यते ❀ ॥

नेह वातवती गुहा ॥

पिशाचाच्च ॥

पिशाचकी ॥

वयसि पूरणात् ५ । २ । १३० ॥

पूरणप्रत्ययान्तान्मत्वर्थे इनिः वयसि चोत्थे । मासः संवत्सरो
वा पञ्चमोऽस्यास्तीति पञ्चम्युप्ः । ठन्वाधनार्थमिदम् । वयसि
किम् । पञ्चमवान् ग्रामः ॥

सुखादिभ्यश्च ५ । २ । १३१ ॥

इनिर्मत्वर्थे । सुखी । दुःखी ॥

मालाक्षेपे ❀ ॥

माली ॥

धर्मशीलवर्णान्ताच्च ५ । २ । १३२ ॥

धर्माद्यन्तादिनिर्मत्वर्थे । ब्राह्मणधर्मी । ब्राह्मणशीली । ब्राह्मण-
वर्णी ॥

हस्ताज्जातौ ५ । २ । १३३ ॥

हस्ती । जातौ किम् । हस्तवान्पुरुषः ॥

वर्णाद्ब्रह्मचारिणि ५ । २ । १३४ ॥

वर्णां ॥

पुष्करादिभ्यो देशे ५ । २ । १३५ ॥

पुष्कारिणी पद्मिनी । देशे किम् । पुष्करवाङ्करी ॥

बाहूरुपूर्वपदाद्बलात् * ॥

बाहुवली । ऊरुवली ॥

सर्वादेश्च * ॥

सर्वधनी । सर्ववीर्जा ॥

अर्थाच्चाऽसंनिहिते * ॥

अर्थी । संनिहिते तु अर्थवान् ॥

तदन्ताच्च * ॥

धान्यार्थी । हिरण्यार्थी ॥

बलादिभ्यो मतुवन्यतरस्याम् ५ । २ । १३६ ॥

बलवान् बली । उत्साहवान् उत्साही ॥

संज्ञायां मन्माभ्याम् ५ । २ । १३७ ॥

मन्मन्तान्मान्ताधिनिर्मत्वर्थे । प्रथिमिनी । दामिनी । होमिनी । सोमिनी । संज्ञाया किम् । सोमवान् ॥

कंशंभ्यां वभयुस्तितुतयसः ५ । २ । १३८ ॥

कम् शम् इति मान्ती । कम् इत्युदकमुखयोः । शम् इति सुखे । आभ्या सप्त प्रत्ययाः । युस्यसोः सकारः पदत्वार्थः । कंवः । कंमः । कंयुः । कंतिः । कंतुः । कंतः । कंयः । शंवः । शंमः । शंयुः । शंतिः । शंतुः शंतः । शंयः । अनुस्वारस्य वकल्पिकः परसवर्णः । वकारयकारपरस्यानुनासिका ययी ॥

तुन्दिबलिवटेर्भः ५ । २ । १३९ ॥

शृटा नामिस्तुन्दिः । मूर्धन्योपधोऽयम् इति माधवः । तुन्दिमः । तिन्दिमः । वटिमः । पामादित्वाद्दलिनोऽपि ॥

अहंशुभमोर्युम् ५ । २ । १४० ॥

अहम् इति मान्तमव्ययमहंकारे । शुभभिति शुभे । अहंयुः अहं-
कारवान् । शुभंयुः शुभान्वितः ॥

प्राग्दिशो विभक्तिः ५ । ३ । १ ॥

दिक्छब्देभ्य इत्यतः प्राग् वक्ष्यमाणाः प्रत्यया विभक्तिमंजाः ॥
अथ स्वार्थिकाः प्रत्ययाः । समर्थानाम् इति प्रथमात् इति च
निवृत्तम् । वा इति त्वनुवर्तत एव ॥

किंसर्वनामबहुभ्योऽद्यादिभ्यः ५ । ३ । २ ॥

किमः सर्वनाम्नो बहुशब्दाच्चेति प्राग्दिशोऽधिक्रियते ॥

इदम् इश् ५ । ३ । ३ ॥

प्राग्दिशीये परे । इशोऽपवादः ॥

एतेतौ रथोः ५ । ३ । ४ ॥

इदम् एत इत इत्येता स्तः रेफ्यकारादौ प्राग्दिव्यतीये परे ॥

एतदोऽन् ५ । ३ । ५ ॥

योगविभागः कर्तव्यः । एतदः । एतेर्ता स्तो रथोः । अन् । एतदः
इत्येव । जनेकाल्त्वात्सर्वादेशः । नलोपः प्रातिपदिकान्तस्य ॥

सर्वस्य सोऽन्यतरस्यां दि ५ । ३ । ६ ॥

प्राग्दिशीये टकारादौ प्रत्यये परे सर्वस्य सो वा ॥

पञ्चम्यास्तसिल् ५ । ३ । ७ ॥

पञ्चम्यन्तेभ्यः किमादिभ्यस्तसिल् वा ॥

कु तिहोः ७ । २ । १०४ ॥

किमः कु स्यात् तादौ हादौ च विभक्तौ परतः । कुतः क्म्मान् ।
यतः । ततः । अतः । इतः । अमुतः । बहुतः । व्यादेस्तु द्वाभ्याम् ॥

तसेश्च ५ । ३ । ८ ॥

किंसर्वनामबहुभ्यः परस्य तसेस्तमिलादेशः । स्वार्थं विभक्त्यर्थं
च वचनम् ॥

पर्यभिभ्यां च ५ । ३ । ९ ॥

आभ्यां तसिल् ॥

सर्वोभयार्थाभ्यामेव ❀ ॥

परितः सर्वत इत्यर्थः । अभितः । उभयत इत्यर्थः ॥

सप्तम्यास्त्रल् ५ । ३ । १० ॥

कुत्र । यत्र । तत्र । बहुत्र ॥

इदमो हः ५ । ३ । ११ ॥

त्रलोऽपवादः । इशादेशः । इह ॥

किमोऽत् ५ । ३ । १२ ॥

वाग्रहणमपकृष्यते । सप्तम्यन्तात्किमोऽद्वा पक्षे त्रल् ॥

क्वाऽति ७ । २ । १०५ ॥

किमः कादेशः अति । क । कुत्र ॥

वाऽह च च्छन्दसि ५ । ३ । १३ ॥

कुह स्यः । कुह जग्मथुः ॥

इतराभ्योऽपि दृश्यन्ते ५ । ३ । १४ ॥

पञ्चमीसप्तमीतरविभक्त्यन्तादपि तसिलादयो दृश्यन्ते । दृशि-
ग्रहणाद्भवदादियोग एव । समवान् । ततोभवान् । तत्रमवान् ।
तंभवन्तम् । ततोभवन्तम् । तत्रभवन्तम् एवं दीर्घायुः । देवानां-
मियः । आयुष्मान् ॥

सर्वैकान्यर्कियत्तद् काले दा ५ । ३ । १५ ॥

सप्तम्यन्तेभ्यः कालार्थेभ्यः स्वार्थे दा । सर्वस्मिन् काले सदा ।
सर्वदा । एकदा । अन्यदा । यदा । कदा । तदा । काले किम् ।
सर्वत्र देशे ॥

इदमोर्हिल् ५ । ३ । १६ ॥

सप्तम्यन्तात्काले इत्येव । हस्यापवादः । अस्मिन् काले एतर्हि ।
काले किम् । इह देशे ॥

अधुना ५ । ३ । १७ ॥

इदमः सप्तम्यन्तात्कालवाचिनः स्वार्थेऽधुनाप्रत्ययः । इत् ।
स्य इति लोपः । अधुना ॥

इति १५१ अंशाः ।

दानीं च ५ । ३ । १८ ॥

इदानीम् ॥

तदो दा च ५ । ३ । १९ ॥

तदा तदानीम् । तदो दावचनमनर्थकं विहितत्वात् ॥

अनद्यतनेर्हिलन्यतरस्याम् ५ । ३ । २१ ॥

कर्हि कदा । यर्हि यदा । तर्हि तदा । एतस्मिन्काल एतर्हि ॥

सद्यः परुत्परार्यैपमः परेद्यव्यद्यपूर्वेद्युरन्येद्युरन्यतरेद्यु-
तरेद्युरपरेद्युरधरेद्युरुभयेद्युरुत्तरेद्युः ५ । ३ । २२ ॥

एते निपात्यन्ते । समानस्य समावो यश्चाहनि । समानेऽहनिः
द्यः । पूर्वपूर्वतरयोः परः । उदारी च संवत्सरे । पूर्वस्मिन् वत्सरे
त् । पूर्वतरे वत्सरे परारि । इदम इत् समसण् प्रत्ययश्च । संवत्स-
। अस्मिन्संवत्सरे ऐपमः । परस्मादेद्यव्यहनि परस्मिन्नहनि परे-
वि । इदमोऽश्च यश्च । अस्मिन्नहनि अद्य । पूर्वादिभ्योऽष्टभ्योऽहन्ये-
म् । पूर्वादिभ्योऽष्टभ्योऽहन्ये-
त्तोरुभयेद्युः ॥

द्युश्चोभयाद्भक्तव्यः ❀ ॥

उभयद्युः ॥

प्रकारवचने थाल् ५ । ३ । २३ ॥

प्रकारवृत्तिभ्यः किमादिभ्यस्थाल् स्वार्थे । तेन प्रकारेण
था । यथा ॥

इदमस्थमुः ५ । ३ । २४ ॥

थालोऽपवादः ॥

एतदो वाच्यः ❀ ॥

अनेन एतेन वा प्रकारेण इत्यम् ॥

किमश्च ५ । ३ । २५ ॥

केन प्रकारेण कथम् ॥

इति १५२ अंशः ।

दिक्छन्देभ्यः सप्तमीपञ्चमीप्रथमाभ्योऽदिग्देशकाले-
ष्वस्तातिः ५ । ३ । २७ ॥

सप्तम्याद्यन्तेभ्यो दिशि ह्रस्वेभ्यो दिग्देशकालवृत्तिभ्यः स्वा-
थेऽस्तातिप्रत्ययः ॥

पूर्वाधरावराणामसि पुरधवश्चैपाम् ५ । ३ । ३९ ॥

एभ्योऽस्तात्यथेऽसिप्रत्ययः । तद्योगे चैपां क्रमात् पुरः अध-
अव् इत्यादेशाः ॥

अस्ताति च ५ । ३ । ४० ॥

अस्तातौ परे पूर्वादीनां पुरादयः । पूर्वस्यां पूर्वस्याः पूर्वा वा
दिक् पुरः पुरस्तात् । अधः अधस्तात् । अवः अवस्तात् ॥

विभापाऽवरस्य ५ । ३ । ४१ ॥

अवरस्यास्तादौ परेऽन् स्पाद्वा । अवस्तात् अवस्तात् । एवं
देशे काले च । दिशि ह्रस्वेभ्यः किम् । ऐद्रधां वसति । सप्तम्याद्य-
न्तेभ्यः किम् । पूर्व आरभं गतः । दिगादिवृत्तिभ्यः किम् । पूर्व-
स्मिन् शुरो वसति । अस्ताति च इति ज्ञापकादसिस्तातिं न
वाधते ॥

दक्षिणोत्तराभ्यामतसुच ५ । ३ । २८ ॥

अस्तातेरपवादः । दक्षिणतः । उत्तरतः ॥

विभापा परावराभ्याम् ५ । ३ । २९ ॥

परतः । अवरतः । परस्तात् । अवरस्तात् ॥

अञ्चेलुक् ५ । ३ । ३० ॥

अञ्चत्यन्तादिकछन्दादस्तातेर्लुक् । लुक्ताद्धितलुकि । प्राच्यां प्राच्याः प्राची वा दिक् प्राक् । उदक् । एवं देशे काले च ॥

उपर्युपरिष्ठात् ५ । ३ । ३१ ॥

अस्तातेर्विषये ऊर्ध्वशब्दस्योपादेशः रिलिष्ठातिली च प्रत्ययौ । उपरि उपरिष्ठाद्वा वसति आगतो रमणीयं वा ॥

पश्चात् ५ । ३ । ३२ ॥

अपरस्य पश्चभाव आतिश्च प्रत्ययोऽस्तातेर्विषये ॥

उत्तराधरदक्षिणादातिः ५ । ३ । ३४ ॥

उत्तरात् । अधरात् । दक्षिणात् ॥

एनवन्यतरस्यामदूरेऽपञ्चम्याः ५ । ३ । ३५ ॥

उत्तरादिभ्य एनन्वा स्यादवध्यवधिमतोः सामीप्ये पञ्चम्यन्तं विना । उत्तरेण । अधरेण । दक्षिणेन । पक्षे यथास्वं प्रत्ययाः । इह केचिदुत्तरादीनननुवर्त्य दिक्छन्दमात्रादेनपमाहुः । पूर्वेण ग्रामम् । अपरेण ग्रामम् ॥

दक्षिणादाच्च ५ । ३ । ३६ ॥

अस्तातेर्विषये । दक्षिणा वसति । अपञ्चम्याः इत्येव । दक्षिणादागतः ॥

आहि च दूरे ५ । ३ । ३७ ॥

दक्षिणादूरे आहिः स्यात् चादाच्च । दक्षिणाहि दक्षिणा ॥

उत्तराच्च ५ । ३ । ३८ ॥

उत्तराहि उत्तरा ॥

संख्याया विधार्थे धा ५ । ३ । ४२ ॥

चतुर्धा । पञ्चधा ॥

अधिकरणविचाले च ५ । ३ । ४३ ॥

द्रव्यस्य संख्यान्तरापादने संख्याया धा । एकं राशिं पञ्चधा कुरु ॥

एकाद्धो ध्यमुभन्यतरस्याम् ५ । ३ । ४४ ॥

एकध्यम् एकधा ॥

द्विन्योश्च धमुञ् ५ । ३ । ४५ ॥

आभ्या धा इत्यस्य धमुञ् वा । द्वैधं द्विधा । त्रैधं त्रिधा । धमुञ्न्तात् स्वार्थे ङदर्शनम् । पथि द्वैधानि ॥

एधाञ्च ५ । ३ । ४६ ॥

द्वेधा । त्रैधा ॥

याप्ये पाशाप् ५ । ३ । ४७ ॥

कुत्सितो भिपक् भिपक्पाशः ॥

एकादाकिनिच्चासहाये ५ । ३ । ५२ ॥

घात्कन्लुकी । एकः एकाकी एककः ॥

भूतपूर्वे चरट् ५ । ३ । ५३ ॥

आढ्यो भूतपूर्व आढ्यचरः । अनिशायने । लघुतमः लघिष्ठः ॥

अजादी गुणवचनादेव ५ । ३ । ५८ ॥

इष्टलीयसुनी । गुणवचनादेव । प्रथिष्ठः प्रथीघान् । नेह । पाच-
कतरः । पाचकतमः ॥

तुश्छन्दसि ५ । ३ । ५९ ॥

एन् । वृजन्तादिष्टलीयसुनी ॥

तुरिष्ठेमेयःसु ६ । ४ । १५४ ॥

वृशब्दस्य लीपः इष्टेमेयःसु परोषु । अतिशयेन कर्ता करिष्ठः । दोरीपसी धेनुः ॥

प्रशस्यस्य थः ५ । ३ । ६० ॥

अस्य श्रादेशः अजाघोः ॥

प्रकृत्यैकाच् ६ । ४ । १६३ ॥

इष्ठादिष्वेकाच् प्रकृत्या । श्रेष्ठः श्रेयान् ॥

ज्य च ५ । ३ । ६१ ॥

प्रशस्यस्य ज्यादेशः इष्टेयसोः । ज्येष्ठः ॥

ज्यादादीयसः ६ । ४ । १६० ॥

आदेः परस्य । ज्यायान् ॥

वृद्धस्य च ५ । ३ । ६२ ॥

ज्यादेशः अजाघोः । ज्येष्ठः ज्यायान् ॥

अन्तिकवाढयोर्नेदसाधौ ५ । ३ । ६३ ॥

अजाघोः । नेदिष्ठः नेदीयान् । साधिष्ठः साधीयान् ॥

स्थूलदूरयुवह्रस्वक्षिप्रक्षुद्राणां यणादिपरं पूर्वस्य च

गुणः ६ । ४ । १५६ ॥

एषां यणादिपरं लुप्यते पूर्वस्य च गुण इष्ठादिषु । स्यविष्ठः ।
दविष्ठः । यविष्ठः । द्वासेष्ठः । क्षेपिष्ठः । क्षोदिष्ठः । एवमीयस ।
ह्रस्वक्षिप्रक्षुद्राणां पृथ्वादित्वाद्भासेमा । क्षेपिमा । क्षोदिमा ॥

प्रियस्थिरस्फिरोरुवहुलगुरुवृद्धत्प्रदीर्घवृन्दारकाणां

प्रस्थस्फवर्बहिर्गर्वापिन्द्राघिवृन्दाः ६ । ४ । १५७ ॥

प्रियादीनां क्रमात् प्रादयः स्युरिष्ठादिषु । मेष्ठः । स्येष्ठः । स्फेष्ठः ।
वरिष्ठः । बहिष्ठः । गरिष्ठः । बर्पिष्ठः । प्रापिष्ठः । द्राघिष्ठः । वृ-
न्दिष्ठः । एवमीयसुन् । प्रेयान् । प्रियोरुवहुलगुरुदीर्घाणां पृथ्वा-
दित्वात्प्रेमेत्यादि ॥

बहोर्लोपो भू च बहोः ६ । ४ । १५८ ॥

बहोः परस्योरिमेयसोर्लोपः बहोश्च । भूरादेशः । भूमा भूयान् ॥

इष्टस्य यिद् च ६ । ४ । १५९ ॥

वहोः परस्य इष्टस्य लोपः यिडागमश्च । भृयिष्ठः ॥

युवाल्पयोः कनन्यतरस्याम् ५ । ३ । ६४ ॥

एतयोः कनादेशो वा इष्टेयसोः । कनिष्ठः कनीयान् । पक्षे । य-
विष्ठः । अलिपष्ठ इत्यादि ॥

विन्मतोलुक् ५ । ३ । ६५ ॥

विनो मत्पुपश्च लुक् इष्टेयसोः अतिशयेन स्रग्वी स्रजिष्ठः स्रजी-
यान् । अतिशयेन त्वग्वान् त्वचिष्ठः त्वचीयान् ॥

प्रशंसायां रूपम् ५ । ३ । ६६ ॥

सुवन्तात्तिडन्ताच्च । प्रशस्तः पटुः पटुरूपः । प्रशस्तं पचति
पचातिरूपम् ॥

ईपदसमाप्तौ कल्पन्देश्यदेशीयरः ५ । ३ । ६७ ॥

ईपदूनो विद्वान् विद्वत्कल्पः । यशस्कल्पम् । यजुःकल्पम् ।
विद्वद्देश्यः । विद्वद्देशीयः । पचतिकल्पम् ॥

विभाषा सुपो बहुचपुरस्तात् ५ । ३ । ६८ ॥

ईपदसमाप्ति विशिष्टेऽर्थे सुवन्ताद्बहुज्वात्स च प्रागेव नतु परतः ।
ईपदूनः पटुर्वहुपटुः । पटुकल्पः । सुपः किम् । यजतिकल्पम् ॥

प्रकारवचने जातीयर् ५ । ३ । ६९ ॥

प्रकारवति चापम् । थाल्तु प्रकारमात्रे । पटुप्रकारः । पटुजातीयः ॥

प्रागिवात्कः ५ । ३ । ७० ॥

इवे प्रतिकृती इत्यतः प्राक्काधिकारः ॥

अव्ययसर्वनाम्नामकच्च प्राक्कटेः ५ । ३ । ७१ ॥

तिडश्च इत्यनुवर्तते ॥

कस्य च दः ५ । ३ । ७२ ॥

कान्ताव्ययस्य दकारीन्तादेशः अकच ॥

अज्ञाते ५ । ३ । ७३ ॥

कस्यायमश्वोऽश्वकः । उच्चकैः । नीचकैः । सर्वकैः । विश्वकैः ॥

ओकारसकारभकारादौ सुपि सर्वनाम्रष्टेः प्रागकच् ॥

अन्यत्र तु सुवन्तस्य टेः प्रागकच् ॥ युवकयोः । आवकयोः ।
युष्मकासु । अस्मकासु । युष्मकाभिः । अस्मकाभिः । ओकार
इत्यादि किम् । त्वयका । मयका ॥

अकच्प्रकरणे तूष्णीमः काम्यक्तव्यः ॥

मित्वादन्त्यादचः परः । तूष्णीकामास्ते ॥

शीले कोमलोपश्च ॥

तूष्णींशीलस्तूष्णीकः । पचतकि जल्पतकि।धक्ति हिरकुत् ॥

कुत्सिते ५ । ३ । ७४ ॥

कुत्सितोऽश्वोऽश्वकः ॥

संज्ञायां कन् ५ । ३ । ७५ ॥

कुत्सिते कन् तदन्तेन चेतसंज्ञा गम्यते । शूद्रकः । राधकः ।
स्वरार्थं वचनम् ॥

अनुकम्पायाम् ५ । ३ । ७६ ॥

पुत्रकः । अनुकम्पितः पुत्र इत्यर्थः ॥

नीतौ च तद्युक्तात् ५ । ३ । ७७ ॥

सामदानादिरूपा नीतिस्तस्यां गम्यमानायामनुकम्पायुक्तात्क-
प्रत्ययः । हन्त ते धानकाः । गुडकाः । एहाकि । अद्दाकि । पूर्व-
णानुकम्प्यमानात्प्रत्ययः । अनेन तु परम्परासंबन्धेऽपीति विशेषः ॥

वह्वचो मनुष्यनाम्रष्टज्वा ५ । ३ । ७८ ॥

पूर्वसूत्रद्वयविषये ॥

घनिलचौ च ५ । ३ । ७९ ॥

तत्रैव ॥

ठाजादादूर्ध्वं द्वितीयादचः ५ । ३ । ८३ ॥

अस्मिन्प्रकरणे यष्टोऽज्ञादिप्रत्ययश्च तस्मिन् प्रत्यये परे प्रकृते-

द्वितीयादच ऊर्ध्वं सर्वं लुप्यते । अनुकम्पितो देवदत्तो देविकः
 देवियः देविलः देवदत्तकः । अनुकम्पितो वायुदत्तो वायुकः । ठग्रहण-
 मुको द्वितीयत्वे कविधानार्थम् । वायुदत्तकः वायुकः पितृकः ॥

चतुर्थादच ऊर्ध्वस्य लोपो वाच्यः ❀ ॥

अनुकम्पितो बृहस्पतिदत्तो बृहस्पतिकः ॥

अनजादौ च विभापा लोपो वक्तव्यः ❀ ॥

देवदत्तकः देवकः ॥

लोपः पूर्वपदस्य च ❀ ॥

दत्तिकः दत्तियः दत्तिलः दत्तकः ॥

विनापि प्रत्ययं पूर्वोत्तरपदयोर्वा लोपो वाच्यः ❀ ॥

देवदत्तः दत्तः देवः । सत्यमामा मामा सत्या ॥

उवर्णाल्ल इलस्य च ❀ ॥

भानुदत्तः भानुलः ॥

ऋवर्णादपि ❀ ॥

सवित्रियः सवितृलः । चतुर्थादनजादौ च लोपः पूर्वपदस्य च ।
 अप्रत्यये तथैवेष्ट उवर्णाल्ल इलस्य च । ल इति लोपसंज्ञा प्राचाम् ॥

जातिनाम्नः कन् ५ । ३ । ८१ ॥

मनुष्यनाम्नः इत्येव । जातिशब्दो यो मनुष्यनामधेयस्तस्मात्कन्
 स्यादनुकम्पायां नीतौ च । सिंहकः । शरभकः । रासभकः ॥

द्वितीयं सन्ध्यक्षरं चेत्तदादेर्लोपो वक्तव्यः ❀ ॥

कहोडः । कहिकः ॥

एकाक्षरपूर्वपदानामुत्तरपदलोपो वक्तव्यः वाचाशी-
 यस्य ❀ ॥

वागाशीर्दत्तः वाधिकः । कथं पडङ्गुलिदत्तः पडिक इति पषष्ठा-
 जादिवचनारिसद्धम् ॥

अल्पे ५ । ३ । ८५ ॥

अल्पं तैलं तैलकम् ॥

ह्रस्वे ५ । ३ । ८६ ॥

ह्रस्वो वृक्षो वृक्षकः ॥

संज्ञायां कन् ५ । ३ । ८७ ॥

ह्रस्वहेतुका या संज्ञा तस्यां गम्यमानायां कन् । पूर्वस्यापवादः ।

वंशकः । वेणुकः ॥

कुटीशमीशुण्डाभ्यो रः ५ । ३ । ८८ ॥

ह्रस्वा कुटी कुटीरः । शमीरः । शुण्डारः ॥

कुत्वा डुपच् ५ । ३ । ८९ ॥

ह्रस्वा कुतूः कुतुपः । कुतूः कृत्तेः सेहपात्रं ह्रस्वा सा कुतुपः

पुमान् । इत्यमरः ॥

कासूगोणीभ्यां ष्टश्च ५ । ३ । ९० ॥

आयुधविशेषः कासूः । ह्रस्वा सा कासूतरी । गोणीतरी ॥

वत्सोक्षाश्वर्षभेभ्यश्च तनुत्वे ३ । ५ । ९१ ॥

वत्सतरः । द्वितीयं वयः प्राप्तः । उक्षतरः । अश्वतरः । ऋषमतरः ।

मृत्तिनिमित्ततनुत्व एवायम् ॥

क्रियत्तदोर्निर्धारणे द्वयोरेकस्य डतरच् ५ । ३ । ९२ ॥

अनयोः कतरो वैष्णवः । यतरः । ततरः । महाविभापया कः ।

यः । सः ॥

वा बहूनां जातिपरिग्रहे डतमच् ५ । ३ । ९३ ॥

बहूना मध्ये एकस्य निर्धारणे डतमज्वा । जातिपरिग्रहे इति

भत्याख्यातमाकरे । कतमो भवता कठः । यतमः ततमः । वाग्र-

हणमकजर्थम् । यकः । सकः । महाविभापया यः । सः । किमोऽ-

किं । इति डतरज्जि । कतरः ॥

एकाच्च प्राचाम् ५ । ३ । ९४ ॥

डतरच डतमच्च । अनयोरेकतरो भैत्रः । एषामेकतमः ॥

अवक्षेपणे कन् ५ । ३ । ९५ ॥

व्याकरणकेन गर्वितः । येनेतरः कुत्स्वते तदिहोदाहरणम् । स्वतः
कुत्सितं तु कुत्सिते इत्यस्य ॥ इति प्राग्विधीयाः ॥

इति १५३ अंशाः ।

इवे प्रतिकृतौ ५ । ३ । ९६ ॥

कन् । अश्व इव प्रतिकृतिः अश्वकः । प्रतिकृतौ किम् । गौरिव
गवयः ॥

संज्ञायां च ५ । ३ । ९७ ॥

इवार्थे कन् समुदायश्चेत्संज्ञा । अप्रतिकृत्यर्थमारम्भः । अश्वसद-
शस्य संज्ञा अश्वकः । उप्रकः ॥

लुम्मनुष्ये ५ । ३ । ९८ ॥

संज्ञाया चेति विहितस्य कनो लुप् मनुष्ये वाच्ये । चञ्चा तृण-
मयः पुमान् । चञ्चैव मनुष्यश्चञ्चा । वार्धिका ॥

जीविकार्थे चापण्ये ५ । ३ । ९९ ॥

जीविकार्थे यदविक्रीयमाणं तस्मिन्वाच्ये कनो लुप् । वासुदेवः ।
शिवः । स्कन्दः । देवलकानां जीविकार्यासु देवप्रतिकृतिष्पिदम् ।
अपण्ये किम् । हस्तिकान्विक्रीणीति ॥

शिलाया ढः ५ । ३ । १०२ ॥

शिलायाः इति योगविभागाङ्गजपीत्येके । शिलेव शिलेयं
शैलेयम् ॥

शाखादिभ्यो यत् ५ । ३ । १०३ ॥

शाखेव शाख्यः । मुख्यः । जघनमिव जघन्यः । अग्र्यः ।
५५ ॥

द्रव्यं च भव्ये ५ । ३ । १०४ ॥

द्रव्यमयं ब्राह्मणः ॥

कुशाग्राच्छः ५ । ३ । १०५ ॥

कुशाग्रमिव कुशाग्रीया बुद्धिः ॥

समासाच्च तद्विपयात् ५ । ३ । १०६ ॥

इवार्थविपयात्समासाच्छः । काकतालीयो देवदत्तस्य वधः । इह काकतालसमागमसदृशश्चोरसमागम इति समासार्थः । तत्प्रयुक्तः काकमरणसदृशस्तु प्रत्ययार्थः । अजाकृपाणीयः । अतर्कितोपनत इति फलितोऽर्थः ॥

पादशतस्य संख्यादेर्वाप्सायां वुन् लोपश्च ५ । ४ । १ ॥

लोपवचनमनैमित्तिकत्वार्थम् अतो न स्यानिवत् । पादः पत् । तद्वितार्थ इति समासे कृते प्रत्ययः । वुन्नन्तं स्त्रियामेव । द्वौ द्वौ पादौ ददाति द्विपदिकाम् । द्विशतिकाम् । पादशतग्रहणमनर्थकमन्यत्रापि दर्शनत् । द्विमोदकिकाम् ॥

दण्डव्यवसर्गयोश्च ५ । ४ । २ ॥

वुन् । अवीप्सार्थमिदम् । द्वौ पादौ दण्डितः द्विपदिकां द्विशतिकां व्यवसृजति । ददातीत्यर्थः ॥

स्थूलादिभ्यः प्रकारवचने कन् ५ । ४ । ३ ॥

जातीयरोऽपवादः । स्थूलकः । अणुकः ॥

अनत्यन्तगतौ क्तात् ५ । ४ । ४ ॥

छिन्नकम् । भिन्नकम् । अभिन्नकम् ॥

न सामिवचने ५ । ४ । ५ ॥

सामिपर्याय उपपदे क्तान्तात्तन्न कन् । सामिकृतम् । अर्धकृतम् । अनत्यन्तगतेरिह प्रकृत्यैवाभिधानात्पूर्वेण कन्न प्राप्तः । इदमेव निषेधसूत्रमत्यन्तस्वार्थिकमपि कन्न ज्ञापयति । बहुतरकम् ॥

बृहत्या आच्छादने ५ । ४ । ६ ॥

कद्र । द्वौ प्रावारोत्तरासङ्गौ समौ बृहतिका तथा । इत्यमरः ।
आच्छादने किम् । बृहतीछन्दः ॥

अपडक्षाशितंग्वलंकर्मालंपुरुषाध्युत्तरपदात्त्वः ५ । ४ । ७ ॥

स्वार्थे । अपडक्षीणो मन्त्रः । द्वाभ्यामेव कृत इत्यर्थः । आशिता
गावोऽस्मिन्निति आशितंगवीनमरण्यम् । निपातनात्पूर्वस्य मुम् ।
अलं कर्मणे अलंकर्मिणः । अलंपुरुषीणः । ईश्वराधीनः । नित्योऽयं
त्वः । उत्तरसूत्रे विभापाग्रहणात् । अन्येऽपि केचित्स्वार्थिकाः ।
प्रत्यया नित्यमिष्यन्ते ॥

तमवादयः प्राक्कनः । ज्यादयः प्राग्बुनः । आमादयः प्राङ्-
यटः । बृहती जात्यन्ताः समासान्ताश्च इति ॥

विभापाञ्चरदिक्स्त्रियाम् ५ । ४ । ८ ॥

अदिक्स्त्रीवृत्तेरश्चत्यन्तात्प्रातिपदिकात् खो वा स्वार्थे । प्राक्
प्राचीनम् प्रत्यक् प्रतीचीनम् । अवाक् अवाचीनम् । निकृष्टप्रतिकृ-
ष्टावरेफयाप्यावमाधमाः । इत्यमरः । अर्बन्तमश्चतीति अर्वाक् अर्वा-
चीनम् । अदिक् स्त्रियां किम् । प्राची दिक् । उदीची दिक् । दि-
ग्ग्रहणं किम् । प्राचीना ब्राह्मणी । स्त्रीग्रहणं किम् । प्राचीनं ब्रामा-
दात्राः ॥

जात्यन्ताच्छ बन्धुनि ५ । ४ । ९ ॥

ब्राह्मणजातीयः । बन्धुनि किम् । ब्रह्मणजातिः शोभना । जा-
तेर्व्यञ्जकं द्रव्यं बन्धु ॥

स्थानान्ताद्विभापा सस्थानेनेति चेत् ५ । ४ । १० ॥

सस्थानेन तुल्येन चेत् स्थानान्तमर्थेवदित्यर्थः । पितृस्थानीयः
पितृस्थानः । सस्थानेन किम् । गोः स्थानम् ॥

अनुगादिनष्टक् ५ । ४ । १३ ॥

अनुगदतीत्पनुगादी स एवानुगादिकः ॥

विसारिणो मत्स्ये ५ । ४ । १६ ॥

अण् । विसारिणः । मत्स्ये इति किम् । विसारी देवदत्तः ।
कृत्वमुच्चसुर्चो प्रागुक्तो । पञ्चकृत्वो भुङ्क्ते । द्विर्भुङ्क्ते । सकृद्भुङ्क्ते ॥

विभापावहोर्धाऽविप्रकृष्टकाले ५ । ४ । २० ॥

अविप्रकृष्ट आसन्नः । बहुधा दिवसस्य भुङ्क्ते । आसन्नकाले किम् ।
बहुकृत्वो मासस्य भुङ्क्ते ॥

तत्प्रकृतवचने मयद् ५ । ४ । २१ ॥

प्राचुर्येण प्रस्तुतं प्रकृतं तस्य वचनं प्रतिपादनम् । भावेऽधिक-
रणे वा ल्युट् । आद्ये प्रकृतमन्नमन्नमयम् । अपूपमयम् । यवागृमयी ।
द्वितीयेऽन्नमयो यज्ञः । अपूपमयं पर्वे ॥

समूहवच्च बहुषु ५ । ४ । २२ ॥

सामूहिकाः प्रत्यया अतिदिश्यन्ते चान्मयद् । मोदकाः प्रकृताः
मौदकिकं मोदकमयम् । शाण्डुलिकं शण्डुलीमयम् । द्वितीयेऽर्थे
मौदकिको यज्ञः मोदकमयः ॥

अनन्तावसथेतिहभेपजाञ्ज्यः ५ । ४ । २३ ॥

अनन्त एवानन्त्यम् । आवसथ एवावसथ्यम् । इति ह इति
निपातसमुदायः । ऐतिह्यम् । भेपजमेव भैपज्यम् ॥

देवतान्तात्तादर्थ्ये यत् ५ । ४ । २४ ॥

तदर्थ एव तादर्थ्यम् । स्वार्थे ष्यञ् । अग्निदेवतार्थे इदमग्निदे-
वत्यम् । पितृदेवत्यम् ॥

पादार्धाभ्यां च ५ । ४ । २५ ॥

पादार्थमुदकं पाद्यम् । अर्घ्यम् ॥

नवस्य नू आदेशो त्नप्तनप्खाश्च प्रत्यया वक्तव्याः ॥

नूत्नं नूतनं नवीनम् ॥

नश्च पुराणे प्रात् ॥

पुराणार्थे वर्तमानात्प्रशब्दान्नो वक्तव्यः । चात्पूर्वोक्ताः । प्रणं-
प्रत्नं । प्रतनं प्रीणम् ॥

भागरूपनामभ्यो धेयः ❀ ॥

भागधेयम् । रूपधेयम् । नामधेयम् ॥

आग्नीध्रसाधारणादञ् ❀ ॥

आग्नीध्रम् । साधारणम् । छियां ङीप् । आग्नीध्री । साधारणी ॥

अतिथेभ्यः ५ । ४ । २६ ॥

तादर्थ्ये इत्येव । अतियय इदमातिथ्यम् ॥

देवात्तल् ५ । ४ । २७ ॥

देव एव देवता ॥

अवेः कः ५ । ४ । २८ ॥

अविरेवाधिकः ॥

यावादिभ्यः कन् ५ । ४ । २९ ॥

याव एव यावकः । मणिकः ॥

विनयादिभ्यष्टक् ५ । ४ । ३४ ॥

विनय एव वैनायिकः । सामयिकः ॥

उपायो ह्रस्वत्वं च ❀ ॥

औपयिकः ॥

वाचो व्याहृतार्थायाम् ५ । ४ । ३५ ॥

संदिष्टार्थायां वाचि विद्यमानाद्वाक्छन्दात् स्वार्थे ठक् च । संदे-
शवाग् वाचिकं स्यात् । इत्यमरः ॥

तद्युक्तात्कर्मणोऽण् ५ । ४ । ३६ ॥

मैव कर्मणम् । वाचिकं श्रुत्वा क्रियमाणं कर्मेत्यर्थः ॥

ओः ज्ञातौ ५ । ४ । ३७ ॥

त्येऽण् । औपधं पिबति । अजातौ किम् । औपधयः धात्रे
॥ ॥

प्रज्ञादिभ्यश्च ५ । ४ । ३८ ॥

प्रज्ञ एव प्राज्ञः । प्राज्ञी स्त्री । देवतः । बान्धवः ॥

मृदस्तिकन् ५ । ४ । ३९ ॥

मृदेव मृत्तिका ॥

सरुनौ प्रशंसायाम् ५ । ४ । ४० ॥

रूपपोऽपवादः । प्रशस्ता मृन्मृत्सा मृत्सा । उत्तरसूत्रे अन्यतरस्यां ग्रहणान्नित्योऽयम् ॥

इति १५४ अंशः ।

बह्वल्पार्थाच्छस्कारकादन्यतरस्याम् ॥

बहूनि ददाति बहुशः । अल्पगः ॥

बह्वल्पार्थान्मङ्गलामङ्गलवचनम् ❀ ॥

नेह । बहूनि ददात्यनिष्टेषु । अल्पानि ददान्याभ्युदायिकेषु ॥

संख्यैकवचनाच्च वीप्सायाम् ५ । ४ । ४३ ॥

द्वौ द्वौ ददाति द्विशः । मापं मापं मापशः । प्रस्यगः । परिमाणशब्दावृत्तावेकार्था एव । संख्यैकवचनात् किम् । घटं घटं ददाति । वीप्सायां किम् । द्वौ ददाति । कारकात् इत्येव । द्व्योर्द्वयोः स्वामी ॥

प्रतियोगे पञ्चम्यास्तसिः ५ । ४ । ४४ ॥

प्रतिना कर्मप्रवचनीयेन योगे या पञ्चमी विहिता तदन्तात्तमिः । प्रद्युम्नः कृष्णतः प्रति ॥

आद्यादिभ्य उपसंख्यानम् ❀ ॥

आदौ आदितः । मध्यतः । अन्ततः । पृष्ठतः । पार्श्वतः । आकृतिगणोऽयम् । स्वरेण स्वरतः । वर्णतः ॥

अपादाने चाहीयरुहोः ५ । ४ । ४५ ॥

अपादाने चा पञ्चमी तदन्तात्तसिः । आमादागच्छति ग्रामतः । अहीयरुहोः किम् । स्वर्गाढीयते । पर्वतादवरोहति । अभृततद्रापे च्विः ॥

भागरूपनामभ्यो धेयः ❀ ॥

भागधेयम् । रूपधेयम् । नामधेयम् ॥

आग्नीध्रसाधारणाद्ञ् ❀ ॥

आग्नीध्रम् । साधारणम् । स्त्रिया ङीप् । आग्नीध्री । साधारणी ॥

अतिथेऽर्थः ५ । ४ । २६ ॥

तादर्थ्ये इत्येव । अतिथय इदमातिथ्यम् ॥

देवात्तल् ५ । ४ । २७ ॥

देव एव देवता ॥

अवेः कः ५ । ४ । २८ ॥

अविरेवाविकः ॥

यावादिभ्यः कन् ५ । ४ । २९ ॥

याव एव यावक' । मणिकः ॥

विनयादिभ्यष्टक् ५ । ४ । ३४ ॥

विनय एव वैनयिकः । सामयिक' ॥

उपायो ह्रस्वत्वं च ❀ ॥

औपयिकः ॥

वाचो व्याहृतार्थायाम् ५ । ४ । ३५ ॥

सदिष्टार्थाया वाचि विद्यमानाद्वाक्छब्दात् स्वार्थे ठक् च । संदेशवाग् वाचिकं स्यात् । इत्यमरः ॥

तद्युक्तात्कर्मणोऽण् ५ । ४ । ३६ ॥

कर्मैव कर्मणम् । वाचिकं श्रुत्वा क्रियमाणं कर्मेत्यर्थ' ॥

ओपधेरजातौ ५ । ४ । ३७ ॥

स्वार्थेऽण् । औपधं पितृति । अजातौ किम् । ओपधय. क्षेत्रे ह्रदा ॥

प्रज्ञादिभ्यश्च ५ । ४ । ३८ ॥

प्रज्ञ एव प्राज्ञः । प्राज्ञी स्त्री । देवतः । बान्धवः ॥

मृदस्तिकन् ५ । ४ । ३९ ॥

मृदेव मृत्तिका ॥

सरुनौ प्रशंसायाम् ५ । ४ । ४० ॥

रूपपोऽपवादः । प्रशस्ता मृन्मृत्सा मृत्सा । उत्तरसूत्रे अन्यतरस्यां ग्रहणान्नित्योऽयम् ॥

इति १५४ अंशाः ।

बह्वल्पार्थाच्छस्कारकादन्यतरस्याम् ॥

बहूनि ददाति बहुशः । अल्पशः ॥

बह्वल्पार्थान्मङ्गलामङ्गलवचनम् * ॥

नेह । बहूनि ददात्यनिष्टेषु । अल्पानि ददान्याभ्युदायिकेषु ॥

संख्यैकवचनाच्च वीप्सायाम् ५ । ४ । ४३ ॥

द्वौ द्वौ ददाति द्विशः । मापं मापं मापशः । प्रस्थशः । परिमाणशब्दावृत्तावैकार्था एव । संख्यैकवचनात् किम् । घटं घटं ददाति । वीप्सायां किम् । द्वौ ददाति । कारकोत् इत्येव । द्वयोर्द्वयोः स्वामी ॥

प्रतियोगे पञ्चम्यास्तसिः ५ । ४ । ४४ ॥

प्रतिना कर्मप्रवचनीयेन योगे या पञ्चमी विहिता तदन्तात्तसिः । प्रद्युम्नः कृष्णतः प्रति ॥

आद्यादिभ्य उपसंख्यानम् * ॥

आदौ आदितः । मध्यतः । अन्ततः । पृष्ठतः । पार्श्वतः । आकृतिगणोऽयम् । स्वरेण स्वरतः । वर्णतः ॥

अपादाने चाहीयरुहोः ५ । ४ । ४५ ॥

अपादाने या पञ्चमी तदन्तात्तसिः । आमादागच्छति ग्रामतः । अहीयरुहोः किम् । स्वर्गाङ्गीयते । पर्वतादवरोहति । अभूततद्भावे च्विः ॥

अव्ययस्य च्वावीत्वं न ❀ ॥

दोषाभूतमहः । दिवाभूता रात्रिः । एतच्च अव्ययीभावश्चेत्यत्र भाष्य उक्तम् ॥

क्यच्चव्योश्च ६ । ४ । १५२ ॥

हलः परस्यापत्ययकारस्य लोपः क्ये च्वा च परतः । गार्गीभवति । च्वा च शुचीभवति । पटूस्यात् । अव्ययस्य दीर्घत्वं न इति केचित् । तन्निर्मूलम् । स्वस्ति स्यात् इति तु महाविभाषया च्वेरभावात्सिद्धम् । स्वस्ती स्यात् इत्यपि पक्षे स्यादिति चेदस्तु । यदि नेष्यते तर्ह्यनभिधानात् च्विरेव नोत्पद्यत इत्यस्तु । रीदृत् मात्री करोति ॥

अरुर्मनश्चक्षुश्चेतोरहोरजसां लोपश्च ५ । ४ । ५१ ॥

एषां लोपः च्विश्च । अरुं करोति । उन्मनीस्यात् उच्चक्षुं करोति । विचेती करोति । विरही करोति । विरजी करोति ॥

विभाषा साति कात्स्न्ये ५ । ४ । ५२ ॥

च्विषिषये सातिर्वा साकल्ये ॥

सात्पदाद्योः ८ । ३ । १११ ॥

सस्य पत्वं न स्यात् । दधि सिञ्चति । अनुस्वदते कृत्स्नं शस्त्रमग्निः संपद्यतेऽग्निमाद्भवति अग्नीभवति । महारिभाषया वाक्यमपि । कात्स्न्ये किम् । एकदेशेन शुक्लीभवति पटः ॥

अभिविधौ संपदा च ५ । ४ । ५३ ॥

संपदा कृभ्वस्तिभिश्च योगे सातिर्वा व्याप्तौ । पक्षे कृभ्वस्ति-योगे च्विः । संपदा तु वाक्यमेव । अग्निसात्संपद्यते अग्निसाद्भवति । शस्त्रम् अग्नीभवति । जलसात्संपद्यते जलीभवति लवणम् । एकस्या व्यक्तेः सर्वावयवावच्छेदेनान्यथाभावः कात्स्न्यम् । बहूनां व्य-
-त्तीनां किञ्चिदवयवावच्छेदेनान्यथात्वं त्वभिविधिः ॥

गीनवचने ५ । ४ । ५४ ॥

सातिः कृभ्वस्तिभिः संपदा च योगे । राजसात्करोति । राज-
सात्संपद्यते । राजाधीनमित्यर्थः ॥

देये त्रा च ५ । ४ । ५५ ॥

तदधीने देये त्रा स्यात्सातिश्च । कृभ्वादियोगे विप्राधीनं देयं
करोति विप्रत्राकरोति । विप्रत्रासंपद्यते । पक्षे विप्रसात्करोति । देये
क्विम् । राजसाद्भवति राष्ट्रम् ॥

देवमनुष्यपुरुषपुरुत्मर्येभ्यो द्वितीयासप्तम्योर्बहुलम्
५ । ४ । ५६ ॥

एभ्यो द्वितीयान्तेभ्यः सप्तम्यन्तेभ्यश्च त्रा । देवत्रावन्दे रभे वा ।
बहुलोक्तेरन्यत्रापि । बहुत्राजीवतो मनः ॥

अव्यक्तानुकरणाद् व्यजवरार्धादनितौ डाच् ५ । ४ । ५७ ॥
द्यच् । अवरं न्यूनं नतु ततो न्यूनम् । अनेकाच् इति यावत्ताद-
शमर्धं यस्य तस्माद्डाच् कृभ्वस्तिभिर्योगे ॥

डाचि विवक्षिते द्वे बहुलम् ❀ ॥

नित्यमात्रेडिते डाचीति वक्तव्यम् ❀ ॥

डाच्परं यदात्रेडितं तस्मिन्परे पूर्वपरयोर्वर्णयोः पररूपं स्यात् ।
इति तकारपकारयोः पकारः । पटपटाकरोति । अव्यक्तानुकरणात्
क्विम् । ईपत्करोति । व्यजवरार्धात् क्विम् । श्रत्करोति । अवर इति
क्विम् । खरटखरटाकरोति । त्रपटत्रपटाकरोति । अनेकाचः इत्येव
सूत्रयितुमुचितम् । एवं हि डाचीति परसप्तम्येव द्वित्वे सुवचेत्य-
वधेयम् । अनितौ क्विम् । पटितिकरोति ॥

कृभो द्वितीयतृतीयशम्बवीजात्कृषौ ५ । ४ । ५८ ॥

द्वितीयादिभ्यो डाच् कृञ एव योगे कर्षणेऽर्थे । बहुलोक्तेरव्य-
क्तानुकरणादन्यस्य डाचि न द्वित्वम् । द्वितीयं तृतीयं कर्षणं करोति
द्वितीयाकरोति तृतीयाकरोति । शम्बशब्दः प्रतिलोमे । अनुलोमं

कृष्टं क्षेत्रं पुनः प्रतिलोमं कर्षति शम्नाकरोति । बीजेन सह कर्षति वीजाकरोति ॥

संख्यायाश्च गुणान्तायाः ५ । ४ । ५९ ॥

कृजो योगे कृषौ डाच् । द्विगुणाकरोति क्षेत्रम् । क्षेत्रकर्मकं द्विगुणं कर्षणं करोतीत्यर्थः ॥

समयाच्च यापनायाम् ५ । ४ । ६० ॥

कृषौ इति निवृत्तम् । कृजो योगे डाच् । समयाकरोति । कालं यापयतीत्यर्थः ॥

सपत्रनिष्पत्रादतिव्यथने ५ । ४ । ६१ ॥

सपत्राकरोति मृगम् । सपुद्गशम्प्रवेशेन सपत्रं करोतीत्यर्थः । निष्पत्राकरोति । सपुद्गस्य शरस्यापरपार्श्वे निर्गमनान्निष्पत्रं करोतीत्यर्थः । अनिव्यथने किम् । सपत्रं निष्पत्रं वा करोति भूतलम् ॥

निष्कुलान्निष्कोपणे ५ । ४ । ६२ ॥

निष्कुलाकरोति दाडिमम् । निर्गतं कुलमन्तरवयवाना समूहो यस्मादिति बहुव्रीहेर्डाच् ॥

सुखप्रियादानुलोम्ये ५ । ४ । ६३ ॥

सुखाकरोति प्रियाकरोति गुरुम् । अनुकूलाचरणेनानन्दयतीत्यर्थः ॥

दुःखात्प्रतिलोम्ये ५ । ४ । ६४ ॥

दुःखाकरोति । स्वामिनं पीडयतीत्यर्थः ॥

शूलात्पाके ५ । ४ । ६५ ॥

शूलाकरोति मांसम् । शूलेन पचतीत्यर्थः ॥

सत्यादशपथे ५ । ४ । ६६ ॥

सत्याकरोति भाण्डं वाणिह्यं । क्रैतव्यामिति तथ्यं करोतीत्यर्थः । शपथे तु सत्यं करोति विप्रः ॥

मद्रात्परिवापणे ५ । ४ । ६७ ॥

मद्रशब्दो मङ्गलार्थः । परिवापणं मुण्डनम् । मद्राकरोति । मा-
ङ्गल्यमुण्डनेन संस्करोतीत्यर्थः ॥

भद्राच्चेति वक्तव्यम् ❀ ॥

भद्राकरोति । अर्थः प्राग्बत् । परिवापणे किम् । भद्रं करोति ॥
इति तद्धिताः ॥

इति १५५ अंशाः ।

स्त्रियामित्यधिकृत्य ॥

अजाद्यतष्टाप् ॥

अजाद्युक्तिर्डीपो डीपश्च वाधनाय । अजा । अत' सद्वा ।
अजादिभिः स्त्रीत्वस्य विशेषणान्नेह । पञ्चाजी । द्विगो. इति डीप् ।
अत्र हि समासार्थसमाहारनिष्ठं स्त्रीत्वम् । अजा । एडका । अश्वा ।
चटका । मूपिका । एषु जातिलक्षणो डीप् प्राप्तः । वाला । वत्सा ।
होढा । मन्दा । विलाता । एषु वयसि प्रथमे इति डीप् प्राप्तः ॥

संभस्त्राजिनशणपिण्डेभ्यः फलात् ❀ ॥

संफला । भस्त्रफला । डचापो' इति ह्रस्वः ॥

सदृक्काण्डप्रान्तशतैकेभ्यः पुष्पात् ❀ ॥

सत्पुष्पा । प्राक्पुष्पा । प्रत्यक्पुष्पा ॥

शूद्रा चामहत्पूर्वाजातिः ❀ ॥

पुंयोगे तु शूद्री । अमहत्पूर्वा किम् । महाशूद्री । कुश्वा । उ-
ष्णिहा । देवविशा । ज्येष्ठा । कनिष्ठा । मध्यमेति पुंयोगेऽपि कौ-
किला । जातावपि ॥

मूलान्नभः ❀ ॥

अमूला । ऋन्नेभ्यो डीप् । कर्त्रा । दण्डिनी ॥

उगितश्च ४ । १ । ६ ॥

पचन्ती । भवन्ती । दीव्यन्ती । अत्र प्रागुक्तञ्चुम् संग्रहपद्य-
मनुसन्धेयम् । भांती । भाती । अदती । जुह्वती । सुन्वती । तुंद-
न्ती । तुदती । रुन्धती । तन्वती । क्रीणन्ती । क्रीणती । भविष्यन्ती
भविष्यती उगिदचामिति सूत्रेऽग्रहणेन धातोश्चेद्गुणित्कार्यं तर्ह्य-
श्चतेरेव इति नियम्यते । तेनेह न । उखास्रत् । क्षिप् । अनदिताम्
इति नलोपः । पर्णध्वत् । अश्चतेस्तु स्यादेव । प्राची । प्रतीची ॥

वनो र च ४ । १ । ७ ॥

वन्नन्तात्तदन्ताच्च प्रातिपदिकात् स्त्रियां ङीप् रश्चान्तादेशः ।
वन्निति द्वनिष्कानिष्कानिष्कां सामान्यग्रहणम् । प्रत्ययग्रहणे यस्मात्स
विहितस्तदादेस्तदन्तस्य ग्रहणम् । तेन प्रातिपदिकविशेषणात्तद-
न्तान्तमपि लभ्यते । सुत्वानमतिक्रान्ता अतिसुत्वरी । अतिधीवरी ।
शर्वरी ॥

वनो न हश् इति वक्तव्यम् ❀ ॥

हशन्ताद्भातोर्विहितो यो वन् तदन्तात्तदन्तान्ताच्च प्रातिपदि-
कान् ङीच् रश्च नेत्यर्थः । ओणृ अपनयने । वनिप् । विह्वनोः
इत्यात्वम् । अवावा ब्राह्मणी राजयुधा ॥

बहुव्रीहौ वा ❀ ॥

बहुधीवरी बहुधीवा पक्षे डाव्वक्ष्यते ॥

पादोऽन्यतरस्याम् ४ । १ । ८ ॥

पाच्छब्दः कृतसमासान्तस्तदन्तात्प्रातिपदिकान्ङीष्वा । द्विपदी
द्विपाद् ॥

टावृचि ४ । १ । ९ ॥

ऋषि वाच्यायां पादन्ताद्याप् । द्विपदा ऋक् । एकपदा ॥

न पद्स्वस्त्रादिभ्यः ॥

पश्च । चतस्रः । पश्च इत्यग्र नलोपे कृतेऽपि षणान्ता पद् इति

पदसंज्ञां प्रति नलोपः सुप्स्वर इति नलोपस्यासिद्धत्वात् । न पद-
स्वस्त्रादिभ्यः इति न टाप् ॥

मनः ४ । १ । ११ ॥

मन्नन्तान्न डीप् । सीमा । सीमानौ ॥

अनो बहुव्रीहेः ४ । १ । १२ ॥

अन्नन्ताद्बहुव्रीहेर्न डीप् । बहुयज्वा । बहुयज्वानौ ॥

डाबुभाभ्यामन्यतरस्याम् ४ । १ । १३ ॥

सूत्रद्वयोपात्ताभ्यां डाब्वा । सीमा । सीमे । सीमानौ । दामा ।
दामे । दामानौ । न पुंसि दाम इत्यमरः । बहुयज्वा । बहुयज्वं ।
बहुयज्वानौ ॥

अन उपधालोपिनोऽन्यतरस्याम् ४ । १ । २८ ॥

अन्नन्ताद्बहुव्रीहेरुपधालोपिनो वा डीप् पक्षे डाब्डीन्निषेधा ।
बहुराज्ञी । बहुराज्ञ्यौ । बहुराजे । बहुराजानौ । प्रत्ययस्थात्कात्पूर्व-
स्येत्युक्तम् । सर्विका । कारिका । अतः किम् । नौका । प्रत्यय-
स्थात् किम् । शक्नोतीति शका । असुपः किम् । बहुपरिभाजका
नगरी । कात् किम् । नन्दना । पूर्वस्य किम् । परस्य मा भृत् ।
कटुका । तपरः किम् । राका । आपि किम् । कारकः ॥

मामकनरकयोरुपसंख्यानम् ❀ ॥

मामिका । नरान् कायतीति नरिका ॥

त्यक्त्यपोश्च ❀ ॥

दाक्षिणात्यिका । इहत्यिका ॥

न यासयोः ७ । ३ । ४५ ॥

यत्तदोरस्येन्न । यका । सका । यकाम् । तकाम् ॥

त्यक्नश्च निषेधः ❀ ॥

अधित्यका । उपत्यका ॥

आशिपि वुनश्च न ❀ ॥

जीवका । भवका ॥

उत्तरपदलोपे च ❀ ॥

देवदातिका देवका ॥

क्षिपकादीनां च न ❀ ॥

क्षिपका । ध्रुवका । कन्यका । चटका ॥

तारका ज्योतिषि ❀ ॥

अन्यत्र तारिका ॥

वर्णका तान्तये ❀ ॥

अन्यत्र वर्णिका ॥

वर्तका शकुनौ प्राचाम् ❀ ॥

उदीचां तु वर्तिका ॥

अष्टका पितृदेवत्ये ❀ ॥

अष्टिकान्या ॥

सूतकापुत्रिकावृन्दारकाणां वेति वक्तव्यम् ❀ ॥

इह वा अ इति च्छेदः । कात्पूर्वस्याकारादेशो वेत्यर्थः । तेन पुत्रिकाशब्दे डीन इवर्णस्य पक्षेऽकारः । अन्यत्रेत्वबाधनार्थमकारस्यैव पक्षेऽकारः । सूतिका सूतकेत्यादि ॥

उदीचामातः स्थाने यकपूर्वायाः ७ । ३ । ४६ ॥

यकपूर्वस्य स्त्रीप्रत्ययाकारस्य स्थाने योऽकारस्तस्य कात्पूर्वस्थे-
द्वा आपि परे । केणः इति ह्रस्वः । आर्यका आर्यिका । चटकका
चटकिका । आतः किम् । सांकाश्ये 'भवा सांकाश्रियका । यक
इति किम् । अश्विका । स्त्रीप्रत्यय इति किम् । शुभं यातीति
शुभंयाः । अज्ञाता शुभंयाः शुभंयिका । धात्वन्तयकोस्तु नित्यम् ।
शुनयिका । सुपाकिका ॥

इति १५६ अंशाः ।

भस्त्रैपाजाज्ञास्वानुपूर्वाणामपि ७ । ३ । ४७ ॥

स्वेत्यन्तं लुप्तपष्ठीकं षट्म । एषामत इद्वा । तदन्तविधिर्नैव सिद्धे
ननुपूर्वाणामपीति स्पष्टार्थम् । भस्त्राग्रहणमुपसर्जनार्थम् । अन्यस्य
तूत्तरसूत्रेण सिद्धम् । एषा द्वा एतयोस्तु सपूर्वयोर्नैत्वम् । अन्तर्व-
र्तिर्नी विभक्तिमाश्रित्य असुपः इति प्रतिषधात् । अनेपका । पर-
मैपका । अद्वके । परमद्वके । स्वशब्दग्रहणं संज्ञोपसर्जनार्थम् । इह
हि आतः स्थाने इत्यनुवृत्तं स्वशब्दस्यैवातो विशेषणम् । नतु द्वैप-
योरसंभवात् । नाप्यन्येषामव्यभिचारात् । स्वशब्दस्वनुपसर्जनमा-
त्मीयवाची अकजर्हः । अर्थान्तरे तु न स्त्री । संज्ञोपसर्जनीभृतस्तु
कप्रत्ययान्तत्वाद्भवत्युदाहरणम् । एवं चात्मीयायां स्विका परम-
स्विकेति । नित्यमेवेत्वम् । निर्भस्त्रका निर्भस्त्रिका । एषका एषिका ।
कृतपत्वनिर्देशान्नेह विकल्पः । एतिके एतिकाः । अजका अजि-
का । जका जिका । द्विके द्वके । निःस्वका निःस्विका ॥

अभाषितपुंस्काच्च ७ । ३ । ४८ ॥

आदाचार्याणाम् ७ । ३ । ४९ ॥

गङ्गिका गङ्गाका गङ्गका । उक्तपुंस्कात्तु शुभ्रिका । बहुव्रीहेर्भा-
षितपुंस्कत्वात्ततो विहितस्य नित्यम् । अज्ञाता अखट्टा अस-
द्विका । शैपिके कपि तु विकल्प एव ॥

अनुपसर्जनात् ४ । १ । १४ ॥

अधिकारोऽयम् । वृनस्तिः इत्यभिव्याप्य । अयमैव स्त्रीप्रत्ययेषु
तदन्तविधिं ज्ञापयति । टिड्ढाणञ् इत्यादि । कुरुचरी । उपसर्ज-
नत्वान्नेह । बहुकुरुचग । नदद् नदी । वक्ष्यमाणेत्यत्र टित्त्वाद्गु-
त्त्वाच्च ङीप्प्राप्तः यासुतो डित्वेन लाश्रयमनुबन्धकार्यं नादेशानाम्
इति ज्ञापनान्न भवति । श्रः ज्ञानचः गित्वेन कचिदनुबन्धका-
र्येऽप्यनलिवधाविति निषेधज्ञापनाद्वा । सौपर्णयी । ऐन्त्री । आत्सी ।
ऊरुद्वयसी । ऊरुद्वयी । ऊरुमात्री । पञ्चतयी । आक्षिकी । लाव-
णिकी । यादृशी । इत्वरी । ताच्छीलिके णेऽपि चोरी ॥

नभस्नभीकक्रव्युंस्तरुणतलुनानामुपसंख्यानम् ❀ ॥

स्त्रैणी । पौंस्त्री । शाक्तीकी । आढ्यंकरणी । नरुणी । तलुनी ॥

यभश्च ४ । १ । १६ ॥

यञन्तात्स्त्रिया ङीप् । अकारलोपे कृते ॥

हलस्तद्धितस्य ६ । ४ । १५० ॥

हल उत्तरस्य तद्धितयकारस्योपधाभृतस्य लोपः इति परे । गार्गी ॥

अनपत्याधिकारस्थान्न ङीप् ❀ ॥

द्वीपे भवा द्वैप्या । अधिकारग्रहणाच्चेह । देवस्यापत्यं देव्या ।

देवाद्यञ्चौ इति हि यञ्माग्दीव्यतीयो न त्वपत्याधिकारपठितः ॥

प्राचां ष्फस्तद्धितः ४ । १ । १७ ॥

यञन्तात्ष्फो वा स्त्रियाम् । स च तद्धितः । ष इत् । तद्धितान्त-

त्वात्प्रातिपदिकत्वम् । ष्फेणोक्तोऽपि स्त्रीत्वे पित्वसामर्थ्यात् पित्तौरा-

दिभ्य इति ङीप् । गार्गीयणी ॥

सर्वत्र लोहितादिकतन्तेभ्यः ४ । १ । १८ ॥

लोहितादिभ्यः कतशब्दान्तेभ्यो यञन्तेभ्यो नित्यं ष्फः ।

लोहित्यायनी । कात्यायनी ॥

कौरव्यमाण्डूकाभ्यां च ४ । १ । १९ ॥

आभ्या ष्फ' टाण्डीपोरपवाद' । कुर्वादिभ्यो ण्यः । कौरव्या-

यणी । ढक्च मण्डूकात् इत्यण् । माण्डूकायनी ॥

आसुरेरुपसंख्यानम् ❀ ॥

आसुरायणी ॥

वयसि प्रथमे ४ । १ । २० ॥

कुमारी ॥

वयस्य चरम इति वाच्यम् ❀ ॥

वधूटी । चिरण्टी । वधूटचिरण्टशब्दौ यौवनवाचिनौ । अतः

। शिशुः ॥

कन्याया न ॐ ॥

कन्यायाः कनीन च इति निर्देशात् ॥

द्विगोः ४ । १ । २१ ॥

त्रिलोकी । द्विगोः किम् । ज्यनीका सेना ॥

अपरिमाणविस्ताचितकम्बल्येभ्यो न तद्धितलुकि

४ । १ । २२ ॥

अपरिमाणान्ताद्धिस्ताद्यन्ताद्य द्विगोर्डीप् न तद्धितलुकि सति । पञ्चभिरश्वैः क्रीता पञ्चाश्वा । आर्हीयष्टक् । अध्यर्ध इति लुक् । द्वौ विस्तौ पचति द्विविस्ता । द्र्याचिता । द्विकम्बल्या । परिमाणान्तु द्र्याचकी तद्धितलुकि किम् । समाहारे पञ्चाश्वी ॥

काण्डान्तात् क्षेत्रे ४ । १ । २३ ॥

क्षेत्रे यः काण्डान्तो द्विगुस्ततो न डीप् तद्धितलुकि द्वे काण्डे प्रमाणमस्या द्विकाण्डा क्षेत्रमक्तिः । प्रमाणे द्वयसञ् इति विहितस्य मात्रचः । प्रमाणे लो द्विगोर्नित्यम् इति लुक् । क्षेत्रे किम् । द्विकाण्डी रज्जुः ॥

पुरुपात्प्रमाणेऽन्यतरस्याम् ४ । १ । २४ ॥

प्रमाणे यः पुरुपस्तदन्ताद्विगोर्डीप्वा तद्धितलुकि । द्वौ पुरुपा प्रमाणमस्याः सा द्विपुरुपी द्विपुरुपा वा परिखा ॥

ऊधसोऽनङ् ५ । ४ । १३१ ॥

ऊधोन्तस्य बहुव्रीहेरनडादेशः स्त्रियाम् । इत्यनङि कृते ङाङ्डी-
त्रिवेधेषु प्राप्तेषु ॥

बहुव्रीहेरूधसो डीप् ४ । १ । २५ ॥

ऊधोन्ताद्बहुव्रीहेर्डीप् स्त्रियाम् । कुण्डोर्धा । स्त्रियां किम् । कुण्डोधो धेनुकम् । इहानङपि न । तद्धिर्धा स्त्रियाम् इत्युपमंख्या-
नात् ॥

मनुनिपात्यते । पतिवत्री इत्यत्र तु वृत्त्वं निपात्यते । अन्तर्वत्री ।
पतिवत्री । प्रत्युदाहरणं तु अंतरस्त्यस्यां शालायां घटः । पतिमंती
पृथिवी ॥

पत्युर्नो यज्ञसंयोगे ४ । १ । ३३ ॥

पतिशब्दस्य नकारादेशः यज्ञेन संबन्धे । वसिष्ठस्य पत्नी ।
तत्कर्तृकयज्ञस्य फलभोक्त्रीत्यर्थः । दंपत्योः सहाधिकारात् ॥

विभाषा सपूर्वस्य ४ । १ । ३४ ॥

पतिशब्दान्तस्य सपूर्वस्य प्रातिपादिकस्य नो वा । गृहस्य पतिः
गृहपतिः गृहपत्नी । अनुपसर्जनस्य इतीहोत्तरार्थमनुवृत्तमपि न
पत्युर्विशेषणं किंतु तदन्तस्य तेन बहुव्रीहावपि । दृढपत्नी दृढपतिः ।
वृषलपत्नी वृषलपतिः । अथ वृषलस्य पत्नी इति व्यस्ते कथमिति
चेत् पत्नीव पत्नीत्युपचारात् । यद्वा । आचाराक्विबन्तात्कर्तरि
किप् । अस्मिश्च पक्षे पत्नियौ पत्निय इतीयङ्विषये विशेषः ।
सपूर्वस्य किम् । गवां पतिः स्त्री ॥

नित्यं सपत्न्यादिषु ४ । १ । ३५ ॥

पूर्वविकल्पापवादः । समानस्य सभावोऽपि निपात्यते । समानः
पतिर्यस्याः सा सपत्नी । एकपत्नी । वीरपत्नी ॥

पूतक्रतोरै च ४ । १ । ३६ ॥

अस्य स्त्रियामै आदेशो ङीप् च । इयं त्रिसूत्री पुंयोग एवेष्यते ।
पूतक्रतोः स्त्री पूतक्रतायी । यया तु क्रतवः पूताः स्यात्पूतक्रतुरेव सा ॥

वृषाकप्यग्निकुसितकुसिदानामुदात्तः ४ । १ । ३७ ॥

एषामुदात्त ए आदेशः ङीप् च । वृषाकपेः स्त्री वृषाकपायी ।
हरविष्णू वृषाकपी इत्यमरः । वृषाकपायी श्रीगौर्योः इति च ।
अग्रायी । कुसितायी । कुसिदायी । कुसिदशब्दो ह्रस्वमध्यो नतु
दीर्घमध्यः ॥

मनोरौ वा ४ । १ । ३८ ॥

मनुशब्दस्यौकारादेशः उदात्तैकारश्च वा ताभ्यां संनियोगशिष्टे
 डीप् च । मनोः स्त्री मनायी मनावी मनुः ॥

वर्णादनुदात्तात्तोपधात्तो नः ४ । १ । ३९ ॥

वर्णवाची योऽनुदात्तान्तस्तोपधस्तदन्तादनुपसर्जनात्प्रातिपदि-
 काद्वा डीप् । तकारस्य नकारादेशश्च । एनी एता । रोहिणी रोहिता ।
 वर्णानां तणतिनितान्तानाम् इति फिट्सूत्रेणाद्युदात्तः । ज्येण्या च
 शलल्या इति गृह्यम् । त्रीण्येतान्यस्या इति बहुव्रीहिः । अनुदात्तात्
 किम् । श्वेता । घृतादीनां च इत्यन्तोदात्तोऽयम् । अत इत्येव ।
 शितिः स्त्री ॥

पिशङ्गादुपसंख्यानम् ❀ ॥

पिशङ्गी पिशङ्गा ॥

असितपलितयोर्न ❀ ॥

असिता । पलिता ॥

छन्दसि क्रमेके ❀ ॥

असिक्री । पलिक्री । अवदातशब्दस्तु न वर्णवाची किंतु विशु-
 द्धिवाची । तेन अवदाता इत्येव ॥

अन्यतो डीप् ४ । १ । ४० ॥

तोपधभिन्नाद्दर्णवाचिनोऽनुदात्तान्तात्प्रातिपदिकात् स्त्रियां डीप् ।
 कल्मापी । सारङ्गी । लघावन्ते द्वयोश्च बह्वचो गुरुः इति मध्योदा-
 तावेर्तो । अनुदात्तान्तात् किम् । कृष्णा । कपिला ॥

पिद्मौरादिभ्यश्च ॥

गीरी । नर्त्तकी । अनडुही । अनड्वाही ॥

पिप्पल्यादयश्च ❀ ॥

आकृतिगणोऽयम् ॥

सूर्यतिप्यागस्त्यमत्स्यानां य उपधायाः ६ । ४ । १४९ ॥

अद्भ्योपधाया यस्य लोपः स चेत्यः सूर्याद्यवयवः ॥

मत्स्यस्य ड्याम् ❀ ॥

सूर्यागस्त्ययोश्चे च ड्यां च ❀ ॥

तिप्यपुप्ययोर्नक्षत्राणि यलोप इति वाच्यम् ❀ ॥

मत्सी । मातरि पिघ इति पित्वादेव सिद्धे गंगादिषु माताम-
हीशब्दपाठादनित्यः पितां डीप् । देष्ठा ॥

जानपदकुण्डगोणस्थलभाजनागकालनीलकुशकामु-
ककवराट्टत्यमत्रावपनाकृत्रिमाश्राणास्थोल्यवर्णानाच्छा-
दनायोविकारमैथुनेच्छाकेशवेशेषु ४ । १ । ४२ ॥

एकादशभ्यः प्रातिपदिकेभ्यः क्रमादृत्त्यादिष्वर्थेषु डीप् । जा-
नपदी वृत्तिश्चेत् । अन्या तु जानपदी । उत्सादित्वादयन्तत्वेन
दिङ् इति डीप्याद्युदात्तः । कुण्डी अमत्रं चेत् । कुण्डान्या । कुडि
दाहे गुरोश्च हलः इत्यप्प्रत्ययः । यस्तु, अमृते जाजः कुण्डः इति
मनुष्यजातिवचनस्ततो जातिलक्षणो डीप् भवत्येव । अमत्रे हि
स्त्रीविषयत्वाभावादप्राप्तो डीप् विधीयते नतु नियम्यते । गोणी
आवपनं चेत् । गोणान्या । स्थली अकृत्रिमा चेत् । स्थलान्या ।
भाजी श्राणा चेत् । भाजान्या । नागी स्थूला चेत् । नागान्या ।
गजवाची नागशब्दः स्याल्यगुणयोगादन्यत्र शिलादा प्रयुक्त
उदाहरणम् । नागी शिला । सर्पवाची तु दैर्घ्यगुणयोगाद् अन्यत्र
रज्ज्वादी प्रयुक्तः प्रत्युदाहरणम् । नागा रज्जुः । काली वर्णश्चेत् ।
कालान्या । नीली अनाच्छादनं चेत् । नीलान्या । नील्या रक्ता
शाटीत्यर्थः । नीत्या अन् वक्तव्य इत्यन् । अनाच्छादनेऽपि न स-
र्वत्र किंतु नीलादोषधी नीली । प्राणिनि च नीली गाः । संजायां
वा । नीली नीला । कुशी अपोविकारश्चेत् । कुशान्या । कामुकी
मैथुनेच्छा चेत् । कामुकान्या । कवगी केशानां संनिवेशश्चेत् । कव-
रान्या । चित्रेत्यर्थः ॥

इति १५८ अंशाः ।

शोणात्प्राचाम् ४ । १ । ४३ ॥

शोणी शोणा । वोतो गुणवचनात् । मृद्वी मृदुः । उतः किम् ।
शुचिः । गुण इति किम् । आखुः ॥

खरुसंयोगोपधान्न ❀ ॥

खरुः पतिवरा कन्या । पाण्डुः ॥

वह्नादिभ्यश्च ४ । १ । ४५ ॥

एभ्यो वा ङीप् । वही बहुः ॥

कृदिकारादक्तिनः ❀ ॥

रात्रिः रात्री । सर्वतोऽक्तिन्नर्थादित्येके । शकटिः शकटी ।
अक्तिन्नर्थात् किम् । अजननिः । क्तिन्नन्तत्वाद्भास्ते विध्यर्थे पद्धति-
शब्दो गणे पठ्यते । हिमकापिहृतिषु च इति पद्भावः । पद्धतिः
पद्धती । पुंयोगादाख्यायाम् । गोपी ॥

पालकान्तान्न ❀ ॥

गोपालिका । अश्वपालिका ॥

सूर्यादेवतायां चाव्याच्यः ❀ ॥

सूर्यस्य स्त्री देवता सूर्या । देवतायां किम् । सूरि । कुन्ती मानु-
षीयम् । न केवलं दाम्पत्यलक्षण एव पुंयोगः किन्तु जन्यजनक-
लक्षणोऽपि । तेन केकयी देवकीत्यत्रापीति केचित् । परे तु दाम्प-
त्यलक्षणा एव पुंयोगः । केकयी । देवकीत्यत्र अपत्यप्रत्यये ङीप्
संज्ञापूर्वकत्वादचामादेर्न वृद्धिरित्याहुः इति प्रागुक्तम् ॥

इन्द्रवरुणभवशर्वरुद्रमृडहिमारण्ययवयवनमातुला-
चार्याणामानुक् ४ । १ । ४९ ॥

एवामानुगागमः स्यान् ङीप्च । इन्द्रादीनां षण्णां मातुलाचार्य-
योश्च पुंयोग एवेप्यते । तत्र ङीपि सिद्धे आनुगागममात्रं विधीयते ।
इतेषां चतुर्णांमुमयम् । इन्द्राणी ॥

हिमारण्ययोर्महत्त्वे ❀ ॥

महद्धिमं हिमानी । अरण्यानी ॥

यवाद्दोषे ❀ ॥

दुष्टो यवो यवानी ॥

यवनाल्लिप्याम् ❀ ॥

यवनानां लिपिर्यवनानी ॥

मातुलोपाध्याययोरानुग्वा ❀ ॥

मातुलानी मातुली । उपाध्यायानी उपाध्यायी ॥

या तु स्वयमेवाध्यापिका तत्र वा ङीप् वाच्यः ❀ ॥

उपाध्यायी उपाध्याया ॥

आचार्यादणत्वं च ❀ ॥

आचार्यस्य स्त्री आचार्यानी । पुंयोग इत्येव । आचार्या स्वयं व्याख्यात्री ॥

अर्यक्षत्रियाभ्यां वा ❀ ॥

स्वार्थे । अर्याणी अर्या । स्वामिनी वैश्या वेत्यर्थः । क्षत्रियाणी क्षत्रिया । पुंयोगे तु अर्या । क्षत्रिया । कथं ब्रह्मणी इति । ब्रह्माणमानयती जीवयतीति कर्मण्यण् ॥

क्रीतात्करणपूर्वात् ४ । १ । ५० ॥

क्रीतान्ताददन्तात्करणादेः स्त्रियां ङीप् । वस्त्रक्रीती । कचिन्न । धनक्रीता ॥

क्तादल्पाख्यायाम् ४ । १ । ५१ ॥

करणादेः क्तान्तात्स्त्रिया ङीप् अल्पत्वे द्योत्ये ॥ अभ्रलिप्ती द्यौः । अल्पाख्याया किम् । चन्दनलिप्ताङ्गना ॥

बहुव्रीहेश्वान्तोदात्तात् ४ । १ । ५२ ॥

बहुव्रीहेः क्तान्तादन्तोदात्ताददन्तात् स्त्रियां ङीप् ॥

जातिपूर्वादिति वक्तव्यम् ❀ ॥

तेन बहुनञ्मुकालमुखादेपूर्वान्न । ऊरुभिन्नी । नेह । बहुकृता ॥

जानान्तान्न ❀ ॥

दन्तजाता ॥

पाणिगृहीती भार्यायाम् ❀ ॥

पाणिगृहीतान्या ॥

अस्वाङ्गपूर्वपदाद्वा ४ । १ । ५३ ॥

पूर्वेण नित्ये प्राप्ते विकल्पोऽयम् । सुरापीती सुरापीता । अ-
न्तोदात्तात् किम् । वस्त्रच्छन्ना । अनाच्छादनात् इत्युदात्तनिषेधः ।
अत एव पूर्वेणापि न ङीप् । स्वाङ्गाद्योपसर्जनादित्यादि । अतिके-
शी अतिकेशा । संयोगोपधात् सुगुल्फा । स्वाङ्गं त्रिधा । अद्रव-
न्मूर्तिमत्स्वाङ्गं प्राणिस्थमविकारजम् । सुस्वेदा द्रवत्वात् । सुज्ञाना
अमूर्तत्वात् । सुमुखा शाला अप्राणिस्थत्वात् । सुशोफा विकारज-
त्वात् । अतस्तथं तत्र दृष्टं च । सुकेशी सुकेशा वा रथ्या । अप्राणि-
स्थस्यापि प्राणिनि दृष्टत्वात् । तेन चेत्तथायुतम् । सुस्तनी सुस्त-
ना वा प्रतिमा । प्राणिवत्प्राणिसदृशे स्थितत्वात् ॥

नासिकोदरौष्ठजङ्घादन्तकर्णशृङ्गाच्च ४ । १ । ५५ ॥

एभ्यो वा ङीप् । आद्ययोर्वह्वलक्षणो निषेधो बाध्यते ।
पुरस्तादपवादन्यायात् । ओष्ठादीनां पञ्चानां तु असंयोगोपधात्
इति पर्युदासे प्राप्ते वचनं मध्येऽपवादन्यायात् । सहनञ्क्षणस्तु
प्रतिषेधः परत्वादस्य बाधकः । तुङ्गनासिकी तुङ्गनासिकेत्यादि ।
नेह । सहनासिका । अनासिका । अत्र वृत्तिः ॥

अङ्गगात्रकण्ठेभ्यो वक्तव्यम् ❀ ॥

स्वङ्गी स्वङ्गेत्यादि । एतच्चानुक्तसमुच्चयार्थेन चकारेण संग्राह्य-
मिति केचित् । भाष्यादनुक्तत्वादप्रमाणम् इति प्रामाणिकाः ।
अत्र वार्तिकानि ॥

पुच्छाच्च ❀ ॥

सुपुच्छी सुपुच्छा ॥

कवरमणिविपशरेभ्यो नित्यम् ❀ ॥

कवरं चित्रं पुच्छं यस्याः सा कवरपुच्छी मयूरीत्यादि ॥

उपमानात्पक्षाच्च पुच्छाच्च ❀ ॥

नित्यमित्येव । उलूकपक्षा शाला । उलूकपुच्छी सेना ॥

न क्रोडादिबह्वचः ४ । १ । ५६ ॥

क्रोडादेर्वह्वचश्च स्वाङ्गान्न डीप् । कल्याणक्रोडा । अश्वानामुरः
क्रोडा । आकृतिगणोऽयम् । सुजघना ॥

इति १५९ अंशाः ।

सहनविद्यमानपूर्वाच्च ४ । १ । ५७ ॥

सहेत्यादित्रिकपूर्वान्न डीप् । सकेशा । अकेशा । विद्यमान-
नासिका ॥

नखमुखात्संज्ञायाम् ४ । १ । ५८ ॥

डीप् न । शूर्पणखा । गौरमुखा । संज्ञायां किम् । ताम्रमुखी
कन्या ॥

दिकपूर्वपदान् डीप् ४ । १ । ६० ॥

दिकपूर्वपदात्स्वाङ्गान्तात्प्रातिपदिकात्परस्य डीपो डीवादेशः ।
प्राङ्मुखी । आद्युदात्तं पदम् ॥

वाहः ४ । १ । ६१ ॥

वाहन्तात्प्रातिपदिकान्डीप् डीपेवानुवर्तते न डीप् । दित्यवाद-
च मे दित्यौही च मे ॥

सख्यशिश्वीति भापायाम् ४ । १ । ६२ ॥

इतिशब्दः प्रकारे भापायाम् इत्यस्यानन्तरं द्रष्टव्यः । उन्-
स्यापि क्वचित् । सखी । अशिश्वी । आधेनवो धुनयन्तामशिश्वीः ।
जातिरस्त्रीविषयादयोपधात् । आकृतिग्रहणा जातिः । अनुगतसं-

स्थानव्यङ्ग्येत्यर्थः । तटी । लिङ्गानां च न सर्वभाक् । सकृदाख्यातनिर्गोद्या । असर्वलिङ्गत्वे सत्येकस्यां व्यक्तौ कथनाद्यत्यन्तरे कथनं विनापि सुग्रहा जातिः इति लक्षणान्तरम् । वृषली । सत्यन्तं किम् । शुक्ला । सकृत् इत्यादि किम् । देवदत्ता । गोत्रं च चरणैः सह । अपत्यप्रत्ययान्तः शाखाध्येतृवाची चशब्दो जातिकार्यं लभत इत्यर्थः । औपगवी । कठी । वहृची । ब्राह्मणीत्यत्र तु शार्ङ्गखादिपाठान् डीना डीष्वाध्यते । जातेः किम् । मुण्डा । अस्त्रीविषयात् किम् । बलाका । अयोपधात् किम् । क्षत्रिया ॥

योपधप्रतिषेधे ह्यगवयमुकयमनुष्यमत्स्यानामप्रतिषेधः ❀ ॥

हयी । गवयी । मुकयी । हलस्तद्धितस्य इति लोपः । मानुषी ॥

मत्स्यस्य ड्याम् ❀ ॥

मत्सी ॥

पाककर्णपर्णपुष्पफलमूलवालोत्तरपदाच्च ४।१।६४ ॥

पाकाद्युत्तरपदाज्जातिवाचिनः स्त्रीविषयादपि डीप् । ओदनपाकी । शंकुकर्णी । शालपर्णी । शङ्खपुष्पी । दासीफली । दर्भमूली । गोवाली । ओपधिविशेषे रूढा एते ॥

इतो मनुष्यजातेः ४ । १ । ६५ ॥

डीप् । दाक्षी । योपधादपि । उदमेयस्यापत्यं औदमेयी । मनुष्य इति किम् । तित्तिरिः ॥

ऊङुतः ४ । १ । ६६ ॥

उकारान्तादयोपधान्मनुष्यजातिवाचिनः स्त्रियामृङ् । कुरुः । कुरुनादिभ्यो ण्यः । तस्य स्त्रियामवन्ति इत्यादिना लुक् । अयोपधात् किम् । अध्वर्युः ॥

अंप्राणिजातेश्चरज्ज्वादीनामुपसंख्यातम् ❀ ॥

* रज्ज्वादिपर्युदासादुवर्णान्तेभ्य एव । अलाब्वा । कर्कन्ध्वा । अन-

योर्दीर्घान्तत्वेषुपि नोङ् धात्वोः इति विभक्त्युदात्तत्वप्रतिषेध ऊङ्ः
फलम् । प्राणिजातेस्तु कृकवाहुः । रज्ज्यादेस्तु रज्जुः । हनुः ॥

वाह्वन्तात्संज्ञायाम् ४ । १ । ६७ ॥

स्त्रियामृङ् । भद्रवाहूः । संज्ञायां किम् । वृत्तवाहुः ॥

पङ्गोश्च ४ । १ । ६८ ॥

पंगूः ॥

श्वशुरस्योकाराकारलोपश्च ❀ ॥

चादृङ् । पुंयोगलक्षणस्य ङीपोऽपवादः । लिङ्गविशिष्टपरिमा-
या स्वादयः । श्वश्रूः ॥

ऊरूत्तरपदादौपम्ये ४ । १ । ६९ ॥

उपमानवाचिपूर्वपठमूरूत्तरपदं यत्प्रातिपदिकं तस्मादृङ् ।
करभोरूः ॥

संहितशफलक्षणवामादेश्च ४ । १ । ७० ॥

अनौपम्यार्थं सूत्रम् । संहितोरूः । सैव शफोरूः । शर्का सुरा
ताविव संश्लिष्टत्वाद्दुपचारात् । लक्षणशब्दादर्श आद्यत्र । लक्षणोरूः ।
वामोरूः ॥

सहितसहाभ्यां चेति वक्तव्यम् ❀ ॥

हितेन सह साहिती ऊरू यस्याः सा सहितोरूः । संहिते इति
सहो ऊरू यस्याः सा सहोरूः । यदा विद्यमानवचनस्य सहशब्दस्य
ऊर्वतिशयप्रतिपादनाय प्रयोगः ॥

संज्ञायाम् ४ । १ । ७२ ॥

कञ्चुकमण्डल्वोः संज्ञायां स्त्रियामृङ् । कट्टुः । कमण्डलुः । संज्ञायां
किम् । कट्टुः । कमण्डलुः । अचञ्चुदोऽर्थवचनम् ॥

शार्ङ्गैरवाद्यभो ङीन् ४ । १ । ७३ ॥

शार्ङ्गैरवादेश्चो योऽकारस्तदन्ताद्य जातिवाचिनो ङीन् । शार्ङ्ग-
खी वेदी । जातेः इत्यनुवृत्तेः पुंयोगे ङीपेव ॥

स्थानव्यङ्ग्येत्यर्थः । तटी । लिङ्गानां च न सर्वभाक् । सकृदाख्यातनिर्ग्राह्या । असर्वलिङ्गत्वे सत्येकस्या व्यक्तौ कथनाद्व्यत्यन्तरे कथनं विनापि सुग्रहा जातिः इति लक्षणान्तरम् । वृपली । सत्यन्तं किम् । शुक्ला । सकृत् इत्यादि किम् । देवदत्ता । गोत्रं च चरणैः सह । अपत्यप्रत्ययान्तः शाखाध्येवृवाची चशब्दो जातिकार्यं लभत इत्यर्थः । औपगवी । कठी । बह्वृची । ब्राह्मणीत्यत्र तु शार्ङ्गखादिपाठान् डीना डीष्वाध्यते । जातेः किम् । मुण्डा । अस्त्रीविषयात् किम् । बलाका । अयोपधात् किम् । क्षत्रिया ॥

योपधप्रतिपेधे ह्यगवयमुकयमनुष्यमत्स्यानामप्रतिपेधः * ॥

हयी । गवयी । मुकयी । हलस्तद्धितस्य इति लोपः । मानुषी ॥

मत्स्यस्य ङ्याम् * ॥

मत्सी ॥

पाककर्णपर्णपुष्पफलमूलवालोत्तरपदाच्च ४।१।६४ ॥

पाकाद्युत्तरपदाज्जातिवाचिनः स्त्रीविषयादपि ङीप् । ओदनपाकी । शंकुकर्णी । शालपर्णी । शङ्खपुष्पी । दासीफली । दर्भमूली । गोवाली । ओपधिविशेषे रूढा एते ॥

इतो मनुष्यजातेः ४ । १ । ६५ ॥

ङीप् । दाक्षी । योपधादपि । उदमेयस्यापत्यं औदमेयी । मनुष्य इति किम् । तित्तिरिः ॥

उडुतः ४ । १ । ६६ ॥

उकारान्तादयोपधान्मनुष्यजातिवाचिनः स्त्रियामृद् । कुरुः । कुरुनादिभ्यो ण्यः । तस्य स्त्रियामवन्ति इत्यादिना लुक् । अयोपधात् किम् । अध्वर्युः ॥

अप्राणिजातेश्चरज्जवादीनामुपसंख्यानम् * ॥

* रज्जवादिपर्युदासादुवर्णान्तेभ्य एव । अलाब्वा । कर्कन्ध्वा । अन-

योर्दीर्घान्तत्वेऽपि नोङ् धात्वोः इति विभक्त्युदात्तत्वप्रतिषेध ऊङ्ः
फलम् । प्राणिजातेस्तु कृकवाङुः । रज्ज्वादेस्तु रज्जुः । इतुः ॥

वाह्वन्तात्संज्ञायाम् ४ । १ । ६७ ॥

खियामृङ् । भद्रवाङ् । संज्ञायां किम् । वृत्तवाङ् ॥

पङ्गोश्च ४ । १ । ६८ ॥

पंगूः ॥

श्वशुरस्योकाराकारलोपश्च ❀ ॥

चादृङ् । पुंयोगलक्षणस्य ङीपोऽपवादः । लिङ्गविशिष्टपरिमा-
पया स्वादयः । श्वश्रूः ॥

ऊरूत्तरपदादौपम्ये ४ । १ । ६९ ॥

उपमानवाचिपूर्वपदमूरूत्तरपदं यत्प्रातिपदिकं तस्मादृङ् ।
करभोरूः ॥

संहितशफलक्षणवामादेश्च ४ । १ । ७० ॥

अनौपम्यार्थं सूत्रम् । संहितोरूः । सैव शफोरूः । शर्का सुरा
तापिव संश्लिष्टत्वादुपचारात् । लक्षणशब्दादर्श आद्यत् । लक्षणोरूः ।
वामोरूः ॥

सहितसहाभ्यां चेति वक्तव्यम् ❀ ॥

हितेन सह सहितौ ऊरू यस्याः सा सहितोरूः । संहिते इति
सहौ ऊरू यस्याः सा सहोरूः । यद्वा विद्यमानवचनस्य सहशब्दस्य
ऊर्वतिशयप्रतिपादनाय प्रयोगः ॥

संज्ञायाम् ४ । १ । ७२ ॥

कञ्चुकमण्डल्वोः संज्ञायां खियामृङ् । कटूः । कमण्डलूः । संज्ञायां
किम् । कटुः । कमण्डलुः । अच्छन्दोऽर्थं वचनम् ॥

शार्ङ्गखाद्यनो ङीन् ४ । १ । ७३ ॥

शार्ङ्गखादेरनो योऽकारस्तदन्ताय जातिवाचिनो ङीन् । शार्ङ्ग-
खी षधी । जातेः इत्यनुवृत्तेः पुंयोगे ङीप्त्वे ॥

नृनरयोर्वृद्धिश्च ❀ ॥

इति गणसूत्रम् । नारी ॥

यङश्चाप् ४ । १ । ७४ ॥

यङन्तात् स्त्रियां चाप् । यङ्प्यङोः सामान्यग्रहणम् । आम्ब-
ष्ट्या । कारीपगन्ध्या ॥

पाद्यभश्चान्वाच्यः ❀ ॥

पातिमाण्या ॥

आवत्याच्च ४ । १ । ७५ ॥

अस्माच्चाप् । यञश्च इति ङीपोऽपवादः । अवटशब्दो गर्गादिः ।
आवट्या ॥

तद्धिताः ❀ ॥

आपञ्चमसमाप्तेराधिकारोऽयं प्रागुक्तः ॥

यूनस्तिः ४ । १ । ७७ ॥

युवन्शब्दात्तिप्रत्ययः स च तद्धितः । लिङ्गविशिष्टपीरभाषया
सिद्धे तद्धिताधिकार उत्तरार्थः । युवतिः । अनुपसर्जनादित्येव ।
बहवो युवानो यस्यां सा बहुयुवा । युवतीति तु यौतेः शत्रन्ता-
न्ङीपि बोध्यम् ॥ इति स्त्रीप्रत्ययाः ॥

इति १६० अंशाः ।

इति चतुर्थोऽध्यायस्य चतुर्थः पादः ॥

चतुर्थोऽध्यायः समाप्तः । इति द्वितीय खण्डस्य द्वितीयो भागः ।

पूर्णा द्वितीयः खण्डोऽयं श्रीशानुग्रहतः सुखम् ।

संपूर्णकल्पा व्युत्पत्तिं छात्राणां विदधात्यसौ ॥ १ ॥

इति श्रीमद्भट्टोजिदीक्षितकृतसिद्धान्तकौ-

मुदीप्रतिविम्बभूतायाः सुगमकौमुद्या

द्वितीयः खण्डः समाप्तः ॥ २ ॥